

जिनभारती-संग्रह

(जिनवाणी-संग्रह)

संकलन-सम्पादन :

ब्र. प्रदीप शास्त्री पीयूष

910, संजीवनी नगर, गढ़ा, जबलपुर म.प्र.

9826144654, 9424914146

सहयोग :

पं. कोमल प्रसाद शास्त्री, कोटा, पं. राजेश शास्त्री, गढ़ा, जबलपुर

पं. सुमत प्रकाश जैन, जयपुर (राज.), पं. महेश चन्द्र शास्त्री, आगरा

प्रकाशक :

श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर (म. प्र.)

अ. भा. जैन विद्वत्-शास्त्रि-परिषद् संस्थान, (रजि.)

श्री दिगम्बर जैन शास्त्रि-परिषद् (रजि.)

साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जैन संस्थान, जबलपुर (म. प्र.)

सैंतालीसवाँ संस्करण 6600 प्रतियाँ, 14.07.2021 विक्रय मूल्य 100.00

:- कृति

: जिनभारती-संग्रह

:- संकलन-सम्पादन

: ब्र. प्रदीप शास्त्री पीयूष

910, संजीवनी नगर, गढ़ा, जबलपुर (म.प्र.)

9826144654, 9424914146

:- सहयोग

: पं. कोमल प्रसाद शास्त्री, कोटा, पं. राजेश शास्त्री जबलपुर

पं. सुमतप्रकाश जैन, जयपुर, पं. महेश चन्द्र जैन, आगरा

:- सैंतालीसवाँ संस्करण: 6600 प्रतियाँ (14.07.2021)

(सन् 1996 से 2021 तक 3,25,200 प्रतियाँ प्रकाशित)

मूल्य : 100.00

मुद्रण सहयोग - योगेश जैन, त्रीनगर दिल्ली-35

:- प्रकाशक : - श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर (म.प्र.)

अ. भा. जैन विद्वत्-शास्त्रि-परिषद् संस्थान (रजि.)

श्रीदिगम्बर जैन शास्त्रि-परिषद् (रजि.)

साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जैन संस्थान, जबलपुर (म. प्र.)

910, संजीवनी नगर, गढ़ा, जबलपुर (म. प्र.) 09826144654, 09424914146

:- आचार्य श्री विद्यासागर-विनीत-अक्षय साहित्य संस्थान, श्री दि. जैन मन्दिर, मलकापुर, जिला - बुलढाणा (महा.) 443101 मो. न. 9422180761, 8275056210, 9860281877

:- सर्वोदय जैन विद्यापीठ/सिद्धायतन, खुरई रोड़, सागर (म. प्र.) 06261799710

:- ब्र. अनिल जैन, उदासीन आश्रम, तुकोगंज, इन्दौर (म. प्र.) 09425478846

:- ब्र. जिनेश मलैया, पंचबालयति मन्दिर, विजय नगर, इन्दौर (म. प्र.) 08319247278

:- प्रदीप बुक स्टाल/चाँदनी स्टेशनरी

शिन्दे की छावनी, लश्कर, ग्वालियर (म. प्र.) 09770475002, 8959970026

:- प्रतिष्ठाचार्य पं. कोमल प्रसाद शास्त्री, कोटा

5-ई-23 तलवण्डी, कोटा (राज.) 09414488691, 09462842314

:- श्रीमती उषा जैन - सुमतप्रकाश जैन (वरिष्ठ अभियन्ता, सेवानिवृत्त)

401- समृद्धि रेसीडेन्सी, पंचशील नगर, ब्लाक बी, माकड वाली रोड़, अजमेर (राज.)

9413300610, 9460105884, 7976583649

:- पं. महेश चन्द्र जैन

30 पुष्प-पुञ्ज, सरलाबाग कालोनी, आगरा, 09359793508, 08630313001

:- ब्र. स्वतन्त्र जैन

रीना आयरन स्टोर, कोतवाली के पास, टीकमगढ़ (म. प्र.) 09424346034

:- संदीप जैन, प्रबन्धक - श्री चन्द्रप्रभ दि. जैन अतिशय क्षेत्र मन्दिर, बरनावा

जिला - बागपत (उ. प्र.) 9634900959, 8923194918

:- एड. प्रकाश सिंघई

हनुमानगंज, तेलीयान मौहल्ला, भोपाल मो. 09009959228, 09893602829

समर्पण

जो तीर्थंकर महावीर की
परम्परा के
समुज्ज्वल नक्षत्र हैं,
जिनका अद्भूत जीवन
अध्यात्म की पवित्र प्रेरणा
प्रदान करता है,
जिनके विचार भूले भटके
जीवन राहियों का
पथ-प्रदर्शन करते हैं,
उन्हीं श्रद्धालोक के देवता,
विश्ववन्द्य, संत शिरोमणी, परमपूज्य आचार्य गुरुवर
श्री विद्यासागर जी महाराज के
छप्पनवें संयम पदारोहण वर्ष की
पावन बेला में
उनके पवित्र कर कमलों में
सादर
सविनय
समर्पित.....। 30.06.2023
-ब्र. प्रदीप शास्त्री पीयूष
9826144654, 9424914146
(iii)

आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज की जीवन झाँकी

पूर्वनाम : बाल ब्र. विद्याधर अष्टगे
जन्म : 10 अक्टूबर 1946, शरद पूर्णिमा
जन्मस्थान : सदलगा, जिला-बेलगाँव कर्नाटक
पिता : श्रीमलप्पा जी (समाधिस्थ-मुनि श्री 108 मल्लिसागर जी महाराज)
माता : श्रीमती श्रीमन्ती जी (समाधिस्थ-आर्यिका 105 समयमति माता जी)
ब्रह्मचर्यव्रत : 1967 में आचार्य श्री 108 देशभूषण जी महाराज से
मुनिदीक्षा : 30 जून 1968 (समाधिस्थ- आचार्य श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज से) अजमेर (राज.) में
आचार्यपद : 22 नवम्बर 1972
शिक्षा : हाईस्कूल कन्नड़ माध्यम से

परिचय के गवाक्ष से

नाम : प्रदीप कुमार जैन पीयूष
जन्म : 04 अगस्त 1967
जन्मस्थान : ग्वालियर (म. प्र.)
पिता : स्व. सेठ श्रीटीकाराम जी जैन, नायक (जैसवाल)
माता : श्रीमती बादामी देवी जैन
शिक्षा : एम. ए. संस्कृत से, साहित्य से आचार्य
ब्रह्मचर्यव्रत : 01 जून 1987 ललितपुर (उ. प्र.) में
सप्तम-प्रतिमा : 30 जून 2012 डूंगरपुर (छ. ग.) में
भाई तीन बड़े : महेश चन्द्र-सुरेशचन्द्र-भगवान दास जैन
बहिन तीन बड़ी : श्रीमती हेमलता-सुमन-प्रभा जैन

(iv)

हार्दिक सद्भावना

आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने रयणसार ग्रन्थ में श्रावक के कर्तव्यों का निर्देश करते हुए लिखा है-

दाणं पूया मुखं, सावयधम्मे ण सावया तेण विणा।

झाणज्झयणं मुखं, जदि धम्मे तं विणा तहा सो वि।।

अर्थात् - श्रावक धर्म में दान और पूजा मुख्य कर्तव्य कहे हैं, इनके विना गृहस्थ श्रावक नहीं कहलाता, इसी प्रकार मुनि धर्म में ध्यान और अध्ययन मुख्य हैं, इनके विना मुनि की प्रतिष्ठा नहीं। जिन भक्ति के अभाव में मुक्ति-मन्दिर का द्वार नहीं खुलता, जैसा कि श्री वादिराज मुनि महाराज “एकीभाव-स्तोत्र” अपरनाम “कल्याण कल्पद्रुम” में कहते हैं-

शुद्धे ज्ञाने, शुचिनि चरिते, सत्यपि त्वय्यनीचा,

भक्तिर्नो चे-दनवधिसुखा-वञ्चिका कुञ्चिकेयम्।

शक्योद्घाटं, भवति हि कथं, मुक्तिकामस्य पुंसो-

मुक्तिद्वारं, परिदृढमहा-,मोहमुद्राकवाटम्।।13।।

अर्थात् - शुद्ध ज्ञान और पवित्र चरित्र के विद्यमान रहते हुए भी यदि आप में, असीम सुख प्राप्त कराने वाली कुञ्जी स्वरूप यह उत्कृष्ट भक्ति नहीं हो तो निश्चय से मोक्ष के अभिलाषी पुरुष के जिस पर मोहरूपी सुदृढ़ ताले से बन्द किवाड़ लगे हुए हैं, ऐसा मोक्ष का द्वार किस प्रकार खोला जा सकता है? अर्थात् किसी प्रकार नहीं।

जिनभारती-संग्रह (जिनवाणी-संग्रह) नामक ग्रन्थ का प्रकाशन “श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला”, जबलपुर द्वारा कराया गया है। इसमें **ब्र. प्रदीप शास्त्री पीयूष जी** ने प्रारम्भ से लेकर शान्ति विसर्जन तक सभी नित्य उपयोग में आने वाले उपयोगी अर्थों का तथा चौबीस विधान रूप पूजाओं तथा दिग्बन्धन आदि अति महत्वपूर्ण

सामग्रियों आदि का संकलन किया है, साथ ही आवश्यक पुण्यवर्धक-पाठ, भक्तामर-स्तोत्र, सहस्रनाम स्तोत्र आदि का संकलन किया है। इस एक ग्रन्थ में ही विधान आदि कराने की विधि होने से श्रद्धालु भव्य जीवों की आवश्यकताएँ पूर्ण होंगी।

ब्र. प्रदीप शास्त्री पीयूष जी की धार्मिक रुचि प्रशंसनीय है। जिनवाणी के प्रचार-प्रसार में सहयोग करने वाले व्यक्तियों के प्रति मेरी सद्भावनाएँ सदा रहती हैं।

विनीत- साहित्याचार्य डॉ. पन्नालाल जैन

(राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित)

श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर के गौरव-सदस्य	
1. ब्र. पं. रतनलाल शास्त्री, इन्दौर	27. श्रीमती चन्द्रकान्ता दोसी, अरधुना,
2. डॉ. ब्र. भैया राकेश शास्त्री, सागर	28. विमल कुमार जैन, मिर्जापुर उ.प्र.
3. ब्र. भैया संजय पनागर, इन्दौर	29. अमर चन्द जैन, कोतमा, शहडोल
4. बाबा ब्र. नेमिचन्द जैन, कोटा	30. सुनील जैन, देवकुञ्ज, मेरठ
5. पं. कोमल प्रसाद शास्त्री, कोटा	31. प्रदीप कुमार जैन, पी. एन. सी. आगरा
6. सुमत प्रकाश जैन (वीफ इन्जी. रि.) जयपुर	32. दिलीप-राजीव जैन, कमला नगर आगरा
7. पं. शिवचरण लाल, मैनपुरी	33. चन्दाबाबू-मनोज कुमार जैन, आगरा
8. पं. महेश चन्द्र शास्त्री, सरलाबाग, आगरा	34. लखपत सिंह जैन, कमला नगर, आगरा
9. पं. सुरेश जैन सरल, जबलपुर	35. श्रीमती पिस्ता देवी-लालचन्द जैन, आगरा
10. डॉ. पं. नेमिचन्द जैन, जबलपुर	36. श्रीमती सुधा-खेमचन्द जैन, आगरा
11. पं. पदमचन्द्र जैन, कस्वाथाना, बारां	37. सिंघई शिखर चन्द जैन, आगरा
12. इंजी. पं. परमानन्द जैन, जबलपुर	38. विजय कुमार जैन, कमला नगर, आगरा
13. पं. राजेश शास्त्री, गढ़ा, जबलपुर	39. श्रीमती रश्मि-विजय कुमार जैन, आगरा
14. श्रीमती पुष्पा गुलाब चन्द शाह मुम्बई	40. श्रीमती रेनु-माधवी जैन, पी. एन. सी
15. अंजनादेवी जैन ध.प. श्रीसुरेशचन्द जैन, राउलकेला ओडिशा	41. श्रीमती कस्तूरी देवी रूपचन्द, इन्दौर
16. ज्ञानचन्द्र संजय जैन, बंसल परिवार, आर. के. पुरम, कोटा	42. सरिता रूपचन्द जैन, इन्दौर
17. स्व. लक्ष्मी चन्द्र जी कलादेवी जी मोदी पिपरई	43. सन्तोष कुमार जैन, जगदलपुर
18. नरेन्द्र कुमार डाह्यालाल शाह, मुम्बई	44. डॉ. सुनील जैन, डिण्डौरी
19. श्रीमती प्रतिभा जैन, मुम्बई	45. अनिल जैन अन्नू भैया, डिण्डौरी
20. डॉ. अनुज जैन, देववन्द, सहारनपुर	46. इन्जी. अनिल जैन, आधारताल, जब.
21. प्रमोद कुमार जैन, ठेकेदार, देववन्द	47. सुनील कुमार-संजीव कुमार, शामली
22. रामकुमार योगेश कुमार जैन, दिल्ली	48. श्रीमती अनीता-भूषण जैन, शामली
23. श्रीमती विनोद जैन प्रवक्ता, बडोत	49. सतेन्द्र-अमित कुमार जैन, शामली
24. डॉ. श्रेयांस शालनी जैन, फरीदाबाद	50. श्रीमती शशी-सुन्दर लाल जैन, शामली
25. राजेश जैन आकुल, शिवनगर, जब.	51. जितेन्द्र कुमार जैन, एडवोकेट, शामली
26. सागरमल दोसी, अरधुना, बांसवाड़ा	52. स्व. श्रीमती प्रभा रानी जैन की स्मृति में धर्मपत्नी सुरेश चन्द जैन, पेण्ड्रा रोड़
	53. दाताराम-वीना जैन, बल्लबगढ़

साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जैन संस्थान परिचय

पूज्य 105 कुल्लुक गणेशप्रसाद जी वर्णी जी को जैन जगत् में सिरमौर की दृष्टि से देखा जाता है। उन्होंने ज्ञान और अध्यात्म के क्षेत्र में जो अलख जगाई है, उस अलख को इस पञ्चमकाल में शायद ही कोई पूरा कर सके। वाराणसी में संस्कृत महाविद्यालय खुलवाने के बाद आप उस विद्यालय के छात्र और शिक्षक के रूप में विख्यात हुए। कालान्तर में उन्होंने सागर, जबलपुर, खुरई, खतौली आदि बीसों नगरों में भी संस्कृत महाविद्यालयों की स्थापना कराई। सागर महाविद्यालय में अनेक मेधावी छात्रों का प्रवेश हुआ, जिन्हें वर्णी जी ने पढ़ाई की विशेष सुविधाएँ एवं अन्य पठन-सामग्री भी उपलब्ध कराई, जिसके फलस्वरूप “**डॉ. पं. श्री पन्नालाल जी साहित्याचार्य**” जैसे अनेक विद्वान् समाज को प्राप्त हुये, जिन्होंने अपनी विद्वत्ता से समाज को एक नई दिशा प्रदान की।

सम्प्रति समूचे जैन जगत् में शताधिक विद्वान्, वर्णी जी की शिष्य परम्परा में जैन-जैनेत्तर समाज को नई दिशा प्रदान कर रहे हैं। अतीत में भी वर्णी जी के शिष्यों की एक अलग पहिचान थी। जिनमें “**डॉ. पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य**” जैसे अनेक विद्वान् समाज के सिरमौर बने।

साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जी का समर्पण

वर्णी जी की तरह पण्डित जी ने भी जिस विद्यालय से शिक्षा प्राप्त की उसी विद्यालय में ही अपना सारा जीवन लगा दिया। बावन वर्ष से भी अधिक समय उन्होंने संस्कृत महाविद्यालय सागर को दिया, जहाँ अध्यापक से प्राचार्य तक के अनेक पदों पर सुशोभित हुये। शनैः शनैः उनकी शिक्षण-प्रणाली पर उन्हें अनेक राष्ट्रीय और सामाजिक पुरस्कार प्राप्त हुए। जिनमें सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रपति पुरस्कार है, जो उन्हें सन् 11.11.1969 में तात्कालिक राष्ट्रपति व्ही. व्ही. गिरी जी के हाथों प्राप्त हुआ था।

(vii)

पण्डित जी का योगदान

साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जी द्वारा शताधिक संस्कृत ग्रन्थों का हिन्दी-अनुवाद, संस्कृत ग्रन्थों का प्रणयन एवं सम्पादन का कार्य सम्पन्न किया। जिनमें आदिपुराण, हरिवंश-पुराण, उत्तर-पुराण आदि अनेक ग्रन्थ सम्प्रति हमारे मध्य उपलब्ध हैं।

सिद्धक्षेत्र कुण्डलपुर की पावन भूमि पर जहाँ आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ससंघ विराजमान थे। आष्टाह्निक महापर्व चल रहा था, चतुर्दशी की अर्धरात्रि में 9 मार्च 2001 को सबके श्रद्धेय-विद्वद्गत्त जिनवाणी के लघुनन्दन पण्डित जी सा. इस नश्वर देह का परित्याग कर दिवंगत हो गये। समूचा जैन समाज उनके दिवंगत होने के समाचार को सुनकर स्तब्ध रह गया। अनेक लोगों के शिर पर करुणा और सहजता की छाया समाप्त हो गई।

पण्डित जी की सेवाएँ और जिनवाणी के प्रति किया गया उनका श्रम कहीं उनके नश्वर शरीर के साथ ही समाप्त न हो जाये अतः संस्कारधानी जबलपुर में साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जैन संस्थान की स्थापना की गई।

संस्थान की कार्य प्रणाली

संस्थान द्वारा ग्रीष्मकालीन/शीतकालीन सत्र में या अन्य समयों पर बृहद् स्तर पर शिक्षण/प्रशिक्षण शिविर का आयोजन नगर-नगर में किया जाता है। पर्युषण-पर्व अथवा अन्य धार्मिक अनुष्ठान के लिये विद्वान् की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है।

संस्थान द्वारा साहित्य का प्रकाशन एवं संरक्षण किया जाता है। विद्वानों को भी प्रशिक्षण दिया जाता है। अतः ज्ञानदान में अपने धन का उपयोग कर अपने मानव जन्म को सार्थक करें।

(viii)

ज्ञानदान सर्वश्रेष्ठ दान - परपदार्थों से मोहभाव को दूर करके आत्मा के स्वरूप को पहिचान कर जो अनन्त संसार का विनाश कर देता है, उस ज्ञानदान के बराबर तो दान ही क्या? आज साहित्य प्रचार और शिक्षा दान की आवश्यकता है।

आपकी संस्थान के प्रति उदारता : -

परम संरक्षक शिरोमणि	51,000
परम संरक्षक	31,000
संरक्षक	15,000
आजीवन गौरव सदस्य	11,000
जिनवाणी रखने हेतु अलमारी	7,000
जिनवाणी में एक रुपये के सहयोग हेतु	6600
जिनवाणी में पचास पैसे के सहयोग हेतु	3300
जिनवाणी में पच्चीस पैसे के सहयोग हेतु	1650
जिनवाणी में दस पैसे के सहयोग हेतु	660

उपर्युक्त राशि का दान आप किसी भी प्रसंग पर कर सकते हैं। जैसे-जन्मदिवस, शादी की वर्षगांठ, अपने पूर्वजों की पुण्यतिथि इत्यादि।

नोट : ग्यारह हजार से अधिक का दान देने वाले दान दातारों का नाम सभी प्रकाशन साहित्य में गौरव-सदस्य के रूप में आजीवन प्रकाशित होता रहेगा। जिनवाणी के प्रचार प्रसार में सहयोग संस्थान के नाम ड्राफ्ट/चैक द्वारा भेजकर कर सकते हैं।

ड्राफ्ट/चैक निम्न नाम से भिजवायें-

साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जैन संस्थान

910, संजीवनी नगर, गढ़ा, जबलपुर (म. प्र.)

0761-2610520, 2610331, 9424914146, 9826144654

श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर

म.प्र. का उल्लेखनीय अवदान

वर्तमान युग के मंगल प्रभात में अपनी बहुमुखी प्रतिभा, चरित्र एवं साधना से नव प्रकाश का सन्देश देकर दिव्य पुञ्ज के रूप में स्वयं प्रकट कर एवं अपने सुयोग्य शिष्यों को गुरु कुम्हार-शिष्य कुम्भ की भाँति भली प्रकार प्रशिक्षित कर सम्पूर्ण भारतवर्ष के सुदूर कोनों को करने वाले महामनीषी युगपुरुष का नाम है पूज्य क्षुल्लक 105 श्री गणेश प्रसाद वर्णी जी महाराज, उनके सहस्राधिक शिष्यों में अनेक उच्चकोटी के विद्वान् समुचे भारतवर्ष में जैनधर्म की ध्वजपताका फहरा रहे हैं। उन सभी विद्वानों का नामोल्लेख करने में, मैं असमर्थ हूँ। परन्तु उन विद्वानों में से एक विद्वान् को मैं विस्मृत भी नहीं कर सकता, जिनका नाम है- श्रद्धेय “साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जैन”, सागर (म. प्र.), जो समाज के सिरमौर थे। जिनकी शान्त-छवी, सहज-सरल और निष्पक्ष विद्वान् के रूप में साधुगणों के मध्य जानी गई। श्रद्धेय पं. जी सा. ने अनेक ब्रह्मचारी भाईओं को जैन-दर्शन के सैद्धान्तिक-व्याकरण-न्याय ग्रन्थों का अध्ययन करा कर, उन्हें मुनि बनने की उच्च शिक्षा दी। जिसके फलस्वरूप पं. जी सा. से शिक्षा प्राप्त कर - बाल ब्र. चन्द्रशेखर जी, बाल ब्र. अरविन्द जी, बाल ब्र. आनन्द जी, बाल ब्र. पवन जी, बाल ब्र. कमल जी आदि अनेक ब्रह्मचारी भाईओं ने दैगम्बरी जिन-दीक्षा ले कर क्रमशः **मुनि श्री 108 प्रवचनसागर जी महाराज, मुनि श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज, मुनि श्री 108 शान्तिसागर जी महाराज, मुनि श्री 108 निर्दोषसागर जी महाराज, मुनि श्री 108 निर्लोभसागर जी महाराज** की संज्ञा **सन्त शिरोमणी आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज** के श्रीकर-कमलों द्वारा प्राप्त की।

श्रद्धेय पं. जी द्वारा शिष्यत्व गृहीत ब्रह्मचारी भी अपनी प्रतिभा, बुद्धि और ऊर्जा का उपयोग संस्कृति संरक्षण एवं धर्मप्रभावना ही में कर रहे हैं, ऐसे ही एक धर्म प्रभावक, देव-शास्त्र-गुरुभक्त जिनवाणी प्रसारक ब्रह्मचारी भैया जी द्वारा अपने प्रवचनों व प्रशिक्षण से तो समाज को उपकृत एवं कृतार्थ कर ही रहे हैं, एक ऐसे भी प्रकाशन की स्थापना में सफल हो गये हैं जिसके द्वारा प्रकाशित उपयोगी साहित्य लागत मूल्य से कम कीमत में स्वाध्याय प्रेमियों एवं धर्मानुरागियों को उपलब्ध कराया। अद्यतन शताधिक सुन्दर एवं प्रतिदिन लाभकारी कृतियों का प्रकाशन इस संस्थान जिसका नाम है-
“श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला”, जबलपुर।

ज्ञान परम्परा को हासोन्मुख होने से बचाने का समय पूर्व उठाया गया यह एक स्तुत्य पग है। शिष्य द्वारा विकास का एक गुरुतर कार्य सम्पन्न हुआ। सत्य भी है जब समुद्र की उताल तरंगों के साथ सूर्य के प्रकाश का समन्वय होता है तो शत-शत मेघ खण्डों का आविर्भाव होता है, जब बादलों की वाष्पता में वायुमण्डल की आर्द्रता का संयोग होता है तो बूंदों के रूप में प्रवाहित होने वाले जल स्रोत का निर्माण होता है और धरती की शुष्कता में मेघ की तरलता का समन्वय होता है तो हरे-भरे पौधों का जन्म होता है।

गुरु के आशीष और शिष्य के समर्पण से ही संस्कृति जीवन्त एवं ऊर्जस्वित रही है। संस्कृति का मूल यही समन्वय ही रहा है। जब शिल्पकार बिखरे हुए पत्थरों को सुसमन्वित रूप में जोड़ देता है तो भव्य भवन तैयार हो जाता है। मूर्तिकार और चित्रकार की लकीरों और रेखाओं का वह रूप जो समन्वय स्थापित कर देता है तो वह मूर्ति और चित्र की संज्ञा से अभिहित हो जाता है जब दो पंक्तियाँ मात्रा, अक्षर, भाव, भाषा से समन्वित हो कर भाव बुद्धि और परिश्रम से अर्थ गुम्पित हो जाती है तो सार्थक साहित्य बन जाता है। ऐसा ही किया है ब्र. भैया जी ने भी। अपने गुरु की कृपा से अमृत नहीं अमृतत्व प्राप्त कर रहे हैं। इन उपयोगी प्रकाशनों में है बालकों के ज्ञान विकास हेतु सर्वोपयोगी प्रश्नोत्तर प्रदीप-1-2-3-4, द्रव्य-संग्रह प्रश्नोत्तर

प्रदीप, छहढाला प्रश्नोत्तर प्रदीप, जिनभारती संग्रह (जिनवाणी संग्रह, जो दो लाख सैंतीस हजार छह सौ प्रतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं), नित्य-पूजा, जिन-पूजा, जिन-अर्चना, धर्म-ध्यान, तत्त्वार्थ-सूत्र, तिलोय-पण्णत्ति प्रश्नोत्तर प्रदीप, गोम्मटसार जीवकाण्ड प्रश्नोत्तर प्रदीप, गोम्मटसार कर्मकाण्ड प्रश्नोत्तर प्रदीप, रत्नकरण्डक श्रावकाचार, समयसार गुटका, इष्टोपदेश गुटका, कातन्त्र-रूपमाला पूर्वार्द्ध (प्रथम - द्वितीय - तृतीय - चतुर्थ भाग,), कातन्त्र-रूपमाला उत्तरार्द्ध (प्रथम - द्वितीय - तृतीय - चतुर्थ भाग), (संस्कृत व्याकरण) इत्यादि लगभग 150 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

बालकों के विकास के लिये सर्वोपयोगी प्रश्नोत्तर प्रदीप में प्रश्नोत्तर का चयन मनोवैज्ञानिक ढंग से क्रमानुरूप किया गया है। इसमें संकलनकर्ता का बुद्धि कौशल एवं श्रम परिलक्षित है तथा बच्चों को धर्म का प्रारम्भिक ज्ञान प्रदान करने में सक्षम है। छहढाला कालजयी एवं सरस रचना को प्रश्नोत्तर के रूप में प्रस्तुत करने से इस मधुर गीता सदृश कृति को आत्मसात करने में सुविधा हो गयी है। जिनभारती संग्रह (जिनवाणी संग्रह), नित्य-पूजा, जिन-पूजा, जिन-अर्चना प्रतिदिन श्रावकों की आवश्यकता की पूर्ति करती है। प्रातः, पूजा हेतु सरलता से लाने, ले जाने व रखने में उपयुक्त है इसमें नित्य नियम पूजाओं के साथ सभी आवश्यक स्तोत्रों सहित संकलित करने से कृति की गुणवत्ता में अतिरिक्त श्रीवृद्धि हुई है। ब्र. भैया जी साधुवाद के एवं प्रशंसा के भी पात्र हैं, जिन्होंने अपने अथक प्रयास से प्रकाशन समिति का गठन करके जन-जन को लाभान्वित किया, अल्प-अवधि में ही इस संगठन का प्रयास सराहा जा रहा है। समाज को इस समिति से बहुत अपेक्षाएँ हैं। और समिति को भी समाज से अपेक्षाएँ हैं।

अतः इस ज्ञानयज्ञ में तन-मन-धन से सहयोग कर पुण्य का अर्जन करें। समिति द्वारा जिनभारती-संग्रह (जिनवाणी संग्रह) का प्रत्येक संस्करण 6600 प्रतियों के रूप में प्रकाशित होता है। यदि आप अपनी ओर से जिनवाणी प्रकाशन में एक रुपये का मूल्य कम कराना चाहते हैं तो आप

6600 रुपये का सहयोग कर सकते हैं, यदि आप पचास पैसे का मूल्य कम कराना चाहते हैं तो आप 3300 रुपये का सहयोग कर सकते हैं, यदि आप पच्चीस पैसे का मूल्य कम कराना चाहते हैं तो आप 1650 रुपये का सहयोग कर सकते हैं। यदि आपके द्वारा उपर्युक्त राशि में से किसी भी राशि का सहयोग किया जाता है तो आपके नाम का उल्लेख जिनवाणी संग्रह में किया जायेगा। यदि आपके द्वारा गौरव सदस्य के रूप में 11,000 या अधिक का सहयोग किया जाता है तो सभी प्रकाशन साहित्य में आपका नाम गौरव-सदस्य के रूप में आजीवन प्रकाशित होता रहेगा।

आपकी समिति के प्रति उदारता : -

परम संरक्षक शिरोमणि	51,000
परम संरक्षक	31,000
संरक्षक	15,000
आजीवन गौरव सदस्य	11,000
जिनवाणी रखने हेतु अलमारी	7,000
जिनवाणी में एक रुपये के सहयोग हेतु	6600
जिनवाणी में पचास पैसे के सहयोग हेतु	3300
जिनवाणी में पच्चीस पैसे के सहयोग हेतु	1650
जिनवाणी में दस पैसे के सहयोग हेतु	660

नोट : जिनवाणी के प्रचार प्रसार में सहयोग समिति के नाम ड्राफ्ट/चैक द्वारा खाते में जमा कर सकते हैं।

ड्राफ्ट/चैक निम्न नाम से जमा करें-

श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर
भारतीय स्टेट बैंक के खाता क्रमांक-11489835668
एस. बी. आई. एन. 0001445

सम्पादकीय

परमात्मत्व प्राप्ति के लिए गृहस्थ के लिये प्राथमिक प्रयत्न पूजा है। आत्म-स्वरूप देखने के लिये अर्हत्-सिद्ध की प्रतिमा रूपी दर्पण की आवश्यकता है। वर्तमान पर्याय में अपने राग-द्वेष आदि विकारों को दूर करने की प्रेरणा हमें वीतराग प्रतिमा से प्राप्त होती है, क्योंकि अर्हन्त, सिद्ध के साक्षात् दर्शन तो इस काल में सम्भव नहीं। अतः उनकी मूर्ति के द्वारा उनकी (मूर्तिमान् की) आराधना की जाती है।

समवशरण में अर्हन्त प्रभु जिस प्रकार नासाग्रदृष्टि, शान्त, निर्विकार और प्रसन्न विराजमान थे। अथवा कोई तीर्थकर पद्मासन या कोई खड्गासन से सिद्ध हुए हैं, उनकी उस अवस्था की पाषाण या सर्व धातु की ध्यानस्थ मूर्ति प्रतिष्ठा मन्त्रों से प्रतिष्ठित कराकर मन्दिर की वेदी पर विराजमान की जाती है। उस प्रतिमा के द्वारा भक्तजन परमात्मा के दर्शन-पूजा कर शान्तिलाभ करते हैं। प्रतिमा उन देव की प्रतीक है जो आत्मध्यान द्वारा कर्मबन्ध तोड़कर मुक्त हुए हैं।

श्रावक के दैनिक कर्तव्यों में पूजा और दान प्रमुख हैं। जैसा कि आचार्य श्री पद्मनन्दी जी ने लिखा है-

देवपूजा गुरुपास्तिः, स्वाध्यायः संयमस्तपः।

दानं चेति गृहस्थानां, षट्कर्माणि दिने दिने।।

अर्थात् गृहस्थ के देवपूजा, गुरु उपासना, स्वाध्याय, संयम, तप और दान ये षट् कर्म हैं, जो प्रतिदिन गृहस्थ द्वारा किये जाते हैं। इनमें भी आचार्य श्रीकुन्दकुन्द स्वामी कहते हैं-

दाणं पूया मुख्यं, सावयधम्मे ण सावया तेण विणा।

अर्थात् श्रावक धर्म में दान और पूजा मुख्य कर्तव्य हैं, उनके बिना गृहस्थ श्रावक नहीं कहलाते। अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, दिगम्बर साधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनालय और जिन-प्रतिमा इन नव देवों में से केवल जिन-प्रतिमा का अभिषेक किया जा सकता है। अतः वीतराग के

आकर्षण के हेतु सूरिमन्त्र आदि से प्रतिष्ठित वीतराग प्रतिमा का अभिषेक और उसका स्वच्छ छत्रे से प्रोक्षण/प्रक्षाल करने के पश्चात् उस प्रतिमा के सामने थाली में केशर से स्वस्तिक बनाकर नवदेवों की अष्ट द्रव्यों से अर्चना करनी चाहिये। इस “जिनभारती-संग्रह” नामक जिनवाणी में उक्त नवदेवों की ही पूजा पृथक्-पृथक् संकलित है। अर्हन्त, सिद्ध देव हैं। आचार्य, उपाध्याय और साधु गुरु हैं। जिनागम/जिनवाणी सरस्वती है। दशलक्षण, रत्नत्रय और सोलहकारण जिनधर्म हैं।

मूलाचार, तिलोय-पण्णत्ती, षट्खण्डागम टीका धवला, आदिपुराण आदि प्राचीन ग्रन्थों में जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल और अर्घ इन द्रव्यों से पूजा करने का उल्लेख मिलता है। यथा-

सुरभिसलिलधारागन्धपुष्पाक्षताद्यैरयजत सप्रदीपैश्च धूपैः ॥ आदि पु. ॥ 117-51

“अर्थात्- तत्पश्चात् उन्हीं भरत महाराज ने बड़ी भारी भक्ति से सुगन्धित जल की धारा, गन्ध, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल, और अर्घ से समाधि को प्राप्त हुए/आत्मध्यान में लीन हुए और मोक्ष प्राप्ति रूप अपने कार्य में सदा सावधान रहने वाले, मोहनीय कर्म के विजेता भगवान् वृषभदेव की पूजा की।”

पूजा में स्थापना सत्य प्रमुख है। गोम्मटसार के अनुसार दस प्रकार के सत्य में स्थापना सत्य का अभिप्राय यह है कि पाषाण या धातु की प्रतिष्ठित मूर्ति साक्षात् अर्हन्त, सिद्ध की मानी जाती है। मन्दिर को समवशरण, वेदी को गन्धकुटी, पूजक को इन्द्र, जल को क्षीरसागर का जल, अक्षत को मोतियों का पुञ्ज, पीले चावलों को मन्दार, चमेली आदि पुष्प, सफेद चिटक को विविध व्यञ्जन, पीली चिटक को रत्नदीपक, बादाम, लोंग को आम्रादिक फल मानकर स्थापना निक्षेप के आधार पर संकल्प रूप में पूजा की जाती है।

वीतराग प्रतिमा का अभिषेक जन्मकल्याणक का नहीं, अपितु अर्हन्त दशा का है। अतः जन्मकल्याणक का मंगलपाठ न बोलकर अभिषेक पाठ

या अभिषेक मन्त्र पढ़ना चाहिए। नित्य, आष्टाह्निक, चतुर्मुख, कल्पद्रुम, इन्द्रध्वज ये पूजा के पाँच भेद हैं। पूजा के अभिषेक, आह्वानन, स्थापना, सन्निधिकरण अष्टद्रव्य चढ़ाना और शान्तिपाठ व विसर्जन ये छह अंग होते हैं।

जिन-प्रतिमा को देखकर उसके अवलम्बन द्वारा अपनी बुद्धि और हृदय में वीतराग के स्वरूप के दृष्टि में लाने और क्रमशः मन, वचन, काय की एकाग्रता के लिये आह्वानन, स्थापन एवं सन्निधिकरण मन्त्र बोलकर उनके संकेत रूप में ठोणा में पुष्पों का क्षेपण करना चाहिए। उक्त आह्वाननादि क्रिया से किसी भी चिह्न वाली प्रतिमा के सामने नवदेवताओं में से सबकी पूजा की जा सकती है। उद्देश्य वीतराग का है। चिह्न व प्रातिहार्य युक्त प्रतिमा अर्हन्त की और बिना चिह्न व प्रातिहार्य की सिद्ध प्रतिमा होती है।

पूजा निष्काम भावना से करने पर स्वयमेव विशिष्ट फल मिलता है। पापकर्मों का निरोध और पुण्य कर्मों का बन्ध होता है तथा संवर निर्जरा भी होती है। अतः याचना का भाव त्याग करके ही आराधना करनी चाहिए।

श्री जिन पूजा, आराधना शुभ परिणति का मुख्य साधन है। आज के युग में सांसारिक झंझटों में फँसे हुए गृहस्थों के लिये आत्म-हितकारी सुलभ साधन जुटाना अत्यन्त आवश्यक एवं उपादेय है। प्रतिदिन भक्ति भावपूर्वक निर्मल भावों से श्री जिनेन्द्रदेव की पूजा, आराधना या उपासना करना अपने स्वयं के उत्थान का साधन है और भव-भ्रमण के छुटकारे की दिशा में सही प्रयत्न है। “जिनभारती-संग्रह” के बाबनवें संस्करण को संवर्धित एवं संशोधित करके नये परिवेश में प्रस्तुत करते हुए मैं अत्यधिक प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ।

आशा है सभी साधर्मी जन यथाशक्ति इसका सदुपयोग कर अपना गार्हस्थ्य जीवन सफल बनायेंगे।

910, संजीवनी नगर, गढ़ा, जबलपुर **विनम्र -ब्र. प्रदीप शास्त्री पीयूष**
9826144654, 9424914146

प्रकाशकीय

जैन साहित्य का प्रकाशन प्रायः यत्र तत्र स्थानों से होता रहता है। साहित्य प्रकाशन कराने वाले साहित्य का प्रकाशन करा तो देते हैं, परन्तु साहित्य का सही वितरण नहीं हो पाता, या तो साहित्य को निःशुल्क वितरित किया जाता है अथवा मूल्य अत्यधिक होता है। निःशुल्क होने से जनसामान्य तक न पहुँच कर, साहित्य कुछ खास लोगों तक सीमित रह जाता है। साथ ही अधिक मूल्य होने से सामान्य श्रावक की क्रय-शक्ति के बाहर हो जाता है।

साहित्य व्यवस्थित ढंग से सभी को सुलभ हो व शुद्ध मुद्रण से युक्त साहित्य सहजता से श्रद्धालु श्रावक तक पहुँच सके, एतदर्थ **आचार्य श्री गुरुवर श्रीविद्यासागर जी महाराज** के शिष्य **बाल ब्र. प्रदीप शास्त्री पीयूष जी** ने “**श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला**”, जबलपुर की स्थापना सन् 1995 में अन्तिम शासन नायक भगवान् महावीर स्वामी के जन्मकल्याणक महोत्सव की पावन बेला में करायी। समिति का मुख्य उद्देश्य प्रकाशित साहित्य श्रावक-जन को लागत मूल्य से कम मूल्य पर उपलब्ध कराना है।

सर्वप्रथम सर्वोपयोगी प्रश्नोत्तर प्रदीप भाग - 1-2, व भाग-3 का प्रकाशन समिति द्वारा किया गया। उक्त साहित्य के प्रकाशनार्थ अर्थ सहयोग देववन्द निवासी श्रीमती शशी गोयल के सुपुत्र डॉ. श्री अनुज गोयल जी ने किया। क्रमशः द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ संस्करण हेतु भी अर्थ सहयोग दिया। विगत बीस वर्षों से जब भी पुस्तक की आवश्यकता होती है, उन्हीं के द्वारा अर्थ सहयोग कर प्रकाशित कराया जाता है। सम्प्रति श्रीमती शशी गोयल जी की स्मृति में उसका प्रकाशन होता है।

समिति द्वारा सामान्य ज्ञान हेतु वस्तुनिष्ठ प्रश्नपत्र प्रकाशन कर घर-घर उस कृति को भेजा जा रहा है। यदि आप तक वह प्रश्न-पत्र नहीं पहुँच रहा हो तो समिति से सम्पर्क कर प्राप्त कर सकते हैं।

(xvii)

शुभ मुहूर्त में साहित्य प्रकाशन का मंगलाचरण हुआ। दानदातारों के सहयोग से विगत बीस वर्ष की अवधि में समिति द्वारा लगभग 150 ग्रन्थ अनेक संस्करण सहित प्रकाशित कराये गये।

कालजयी प्रकाशित ग्रन्थ -

हिन्दी अनुवादित- कातन्त्र-रूपमाला, जैनेन्द्र-महावृत्ति (दोनों व्याकरण)

संकलित/सम्पादित : - जिनभारती संग्रह (जिनवाणी संग्रह, तीन लाख पच्चीस हजार दो सौ प्रतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं), नित्य-पूजा, जिन-पूजा, जिन-अर्चना, धर्म-ध्यान, तत्त्वार्थ-सूत्र, द्रव्य-संग्रह प्रश्नोत्तर प्रदीप, छहढाला प्रश्नोत्तर प्रदीप, तिलोय-पण्णत्ति प्रश्नोत्तर प्रदीप, गोम्मटसार जीवकाण्ड प्रश्नोत्तर प्रदीप, गोम्मटसार कर्मकाण्ड प्रश्नोत्तर प्रदीप, सर्वोपयोगी प्रश्नोत्तर प्रदीप-1-2-3-4, रत्नकरण्डक श्रावकाचार, समयसार गुटका, इष्टोपदेश गुटका, कातन्त्र-रूपमाला पूर्वार्द्ध (प्रथम - द्वितीय - तृतीय - चतुर्थ भाग,), कातन्त्र-रूपमाला उत्तरार्द्ध (प्रथम - द्वितीय - तृतीय - चतुर्थ भाग), (संस्कृत व्याकरण) इत्यादि लगभग 150 ग्रन्थों का प्रकाशन सम्भव हुआ। आगे भी पुरुषार्थ जारी है।

समिति द्वारा बहुतसा ऐसा साहित्य प्रकाशित हुआ है, जो प्रत्यक्षतः जीवन निर्वाण की शिक्षा देता है।

हमें हर्ष है कि बहुचर्चित जिनभारती-संग्रह जिनवाणी-संग्रह पृष्ठ 704 को संवर्धित एवं संशोधित करके नये संस्करण के रूप में प्रस्तुत करते हुए हम अत्यन्त गौरव एवं प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं।

समस्त साहित्य के प्रकाशन हेतु भाई श्री योगेश जैन, त्रीनगर, दिल्ली-35 का सहयोग अविस्मरणीय है। एतदर्थ समिति उनकी आभारी है।

अध्यक्ष	महामन्त्री	कोषाध्यक्ष
मनोज जैन बड़कुल	अमित जैन	अरुण जैन

(xviii)

श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर के गौरव-सदस्य

54. सुरेश चन्द्र-विनोद कुमार, बल्लबगढ़
55. सुरेश-भरत जैन, बल्लबगढ़
56. देवेन्द्र-गौरव जैन, बल्लबगढ़
57. सुरारिलाल-लता जैन, बल्लबगढ़
58. संजय-ममता जैन, बल्लबगढ़
59. अनुज-सीमा जैन, बल्लबगढ़
60. चन्द्र प्रकाश-मनीष जैन, बल्लबगढ़
61. दीपक-प्रियंका जैन, बल्लबगढ़
62. महेन्द्र-विनोद-चेतन जैन, इटावा राज.
63. दुर्लभ चन्द्र बरमुड़ा परिवार, इटावा
64. स्व. केशवलाल हलकचन्द्र शाह, तलोद
65. शाह विपिन भाई, मुकेश भाई, तलोद
66. ज्ञानचन्द्र-सुनील जैन, मनेन्द्रगढ़ छ.ग.
67. प्रकाश चन्द्र जैन, मनेन्द्रगढ़ छ.ग.
68. अजित कुमार जैन, मनेन्द्रगढ़ छ.ग.
69. जितेन्द्र कुमार अशोक जैन, नहटौर
70. राजीव कुमार जैन, नहटौर
71. जितेन्द्र कुमार अंकुर जैन, नहटौर
72. श्रेयांस कुमार जैन, नहटौर
73. विनय कुमार-कामनी जैन, नहटौर
74. सुकेश कुमार जैन, नहटौर
75. श्रीमती नूतन-अनन्त जैन, नहटौर
76. विजय-अजय कुमार जैन, नहटौर
77. नीरज कुमार-वन्दना जैन, नहटौर
78. जैन महिला मण्डल, नहटौर
79. कान्तीलाल पन्नालाल धीरावत, घाटोल
80. कोरावत धनपाल वजेचन्द्र जी, परतापुर
81. मोदी अशोक कुमार-मंजूला, परतापुर
82. भैयावत भरत-राघवेश-विकास-नितेश
83. जयन्तीलाल लक्ष्मीचन्द्र दोसी, दाहनुरोड़
84. अशोक कुमार - मंजू जैन, भिलाई, दुर्ग
85. राजीव-उषा जैन, भिलाई, दुर्ग छ.ग.
86. केसरी लाल ललित कुमार हरसोरा
87. विनय कुमार गुणमाला जैन, दौराया
88. मुकेश-अनीता जैन, सेक्टर-9 फरीदाबाद
89. नेमीचन्द्र-शशी जैन, सेक्टर-4आर, फरीदाबाद
90. श्रीमती अमिता जैन, सेक्टर-10 फरीदाबाद
91. सुहास त्रिलोक चन्द्र चंवर, मलकापुर
92. जैन समाज विकास ट्रस्ट, मलकापुर
93. दीपक कुमार पवन कुमार जैन, आर्यपुरा, सञ्जी मण्डी, दिल्ली
94. श्रीमती उषा-सुमत प्रकाश जैन, जयपुर
95. इंजी. अर्चना-दिनेश जैन, अमेरिका
96. डॉ. रचना-डॉ. मनीष जैन, अजमेर
97. डॉ. आशुतोष-इंजी. नेहा जैन, अमेरिका
98. राकेश जैन, परदा वाले, आगरा

99. शिखर चन्द्र शिखर वाले, आगरा
100. दीपक जैन, सरलाबाग, आगरा
101. निर्मलाबाई तिलोकचन्द्र चवरे मलकापुर
102. विमलचन्द्र कस्तूरचन्द्र निरखे मलकापुर
103. सौ. निर्मला विमलचन्द्र, सन्देश निरखे
104. श्रीमती धनाबाई सितलसा, सुहास चवरे
105. श्रीमती वीणा मोहनकुमार बांडे, चन्द्रपुर
106. प्रियकारिणी महिला मण्डल, मलकापुर
107. प. यू. आचार्य श्री विद्यासागर नवयुवक सेवादल, मलकापुर
108. प्रदीप कुमार वीना जैन, नोएडा
109. डॉ. के. जैन, अध्यक्ष, नोएडा
110. अतुल्य कुमार जैन, नोएडा
111. पवन कुमार आनन्द आदेश पंकज जैन, राउलकेला
112. विमलकुमार अशोककुमार, राउलकेला
113. दिगम्बर जैन महिला मण्डल, राउलकेला
114. निरंजना रविप्रकाश जैन, इन्दौर
115. रविप्रकाश रूपचन्द्र जैन, इन्दौर
116. अविनाश-वन्दना जैन, खण्डवा
117. सुश्री चन्दनवाला अनन्तलाल जैनी बुरहान.
118. प्रेमचन्द्र हरकचन्द्रसा जैन, खण्डवा
119. मनीष कुमार आनन्द कुमार जैन, खण्डवा
120. राज कुमार शुभम जैन, खण्डवा
121. विजयाबाई तोतालाल पहाड़िया, खण्डवा
122. श्रीमती नैनश्री सन्तोष कुमार जैन, खण्डवा
123. विमलचन्द्र मनोरमा जैन, ग्वालियर
124. रूपचन्द्र सन्तोषकुमारी जैन, आर. के. पुरम
125. चन्द्रेश-सीमा जैन, हरसोरा, आर. के. पुरम
126. ललित-अंजना हरसोरा, आर. के. पुरम
127. अमित-निधि जैन, आर. के. पुरम, कोटा
128. सुनील-शर्मिला जैन, आर. के. पुरम, कोटा
129. सन्तोष-इन्द्रा जैन, आर. के. पुरम, कोटा
130. अनिल-अंजना पाटनी, आर. के. पुरम
131. इन्जी. पी. सी.-मञ्जु जैन, आर. के. पुरम
132. बाबूलाल-विमला जैन, आर. के. पुरम
133. राकेश-सन्ध्या जैन, आर. के. पुरम, कोटा
134. राकेश-बीना सामरिया, आर. के. पुरमकोटा
135. प्रेमचन्द्र-उषा जैन, कोट्या, आर. के. पुरम
136. अजीत-निधि जैन, शाहगढ़, आर. के. पुरम
137. सुरेश कुमार कासलीवाल, आर. के. पुरम
138. प्रेमचन्द्र-सुलोचना जैन, आर. के. पुरम
139. ज्ञानचन्द्र-निर्मल कुमार, आर. के. पुरम
140. माणकचन्द्र-चन्द्रकान्ता, आर. के. पुरम
141. सुरजमल-कान्ता जैन, आर. के. पुरम
142. पारस-शकुन्तला, अंकित-दिपांशी, आर. के. पुरम

(xix)

श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर के गौरव-सदस्य

143. हेमन्त-आशा, रूपेश-प्रियंका जैन, आर. के. पुरम
144. ज्ञानचन्द्र-श्रद्धा जैन जैन, विनायका वाले
145. पवनकुमार-जयन्ती पाटोदी, आर. के. पुरम
146. राजेश-मिनी जैन, खटोड, आर. के. पुरम
147. महेन्द्रकुमार-अंजना जैन, आर. के. पुरम
148. महेन्द्रकुमार-अंजना जैन, आर. के. पुरम
149. दीपक जैन, एगो इंडस्ट्रीज, शामली
150. नवीन-कुमुद जैन, शामली
151. श्रीमती मंजू स्व. श्रीसुखमाल जैन, शामली
152. ब्र. सुनील जैन भगत जी, शामली
153. सुभाष चन्द्र - र्मिला जैन, राउलकेरा
154. आदेश जैन, राउलकेरा
155. निर्मल कुमार जैन, भोलवाड़ा
156. कीर्तिकुमार जैन, रायपुर, छ. ग.
157. श्री 1008 श्रीमहावीर दिगम्बर जैन मन्दिर समिति, सरलाबाग, दयालबाग, आगरा
158. श्रीमन-अनीता जैन, दयालबाग, आगरा
159. प्रमोद कुमार जैन, सरलाबाग, आगरा
160. दिनेश कुमार जैन, सरलाबाग, आगरा
161. प्रमोद कुमार जैन, सरलाबाग, आगरा
162. राजाबाबू जैन, सरलाबाग, आगरा
163. विनय कुमार जैन, सरलाबाग, आगरा
164. पदमचन्द्र जैन, सरलाबाग, आगरा
165. सुभाष चन्द्र जैन, सरलाबाग, आगरा
166. रमेश चन्द्र जैन, सरलाबाग, आगरा
167. सचिन जैन, सरलाबाग, आगरा
168. राकेश कुमार जैन, सरलाबाग, आगरा
169. देवेन्द्र विजय जैन, सरलाबाग, आगरा
170. श्रेयांस, अरिहन्त जैन, सरलाबाग, आगरा
171. पारस कुमार जैन, सरलाबाग, आगरा
172. रवीन्द्र -अर्चना जैन, सरलाबाग, आगरा
173. प्रियेश - पारुल जैन, सिएटल-अमेरिका
174. राहुलेन्द्र चन्द्र, सरलाबाग, आगरा
175. अमित-श्रीमती रेखा जैन, सरलाबाग, आगरा
176. संजीव कुमार जैन, सरलाबाग, आगरा
177. मनीष (लवली) जैन, सरलाबाग, आगरा
178. श्रीमती सुनीता जैन, सरलाबाग, आगरा
179. श्रीमुकेश बाबू जैन, सरलाबाग, आगरा
180. अजीत कुमार, जयनगर, इन्दौर
181. नन्दलाल जैन, बगड़ परिवार, कोटा
182. चतुर्भुज जैन, छतरपुर (म.प्र.) भारत
183. श्रीमती चन्द्रकान्ता जैन, छतरपुर, भारत
184. चक्रेश जैन, टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत
185. श्रीमती सविता जैन, टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत

186. सुश्री अमीशी जैन, टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत
187. अमितोष जैन, टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत
188. मनोज मोदी, इन्दौर (म.प्र.) भारत
189. श्रीमती सुमनलता मोदी, इन्दौर, भारत
190. अंश मोदी, इन्दौर, (म.प्र.) भारत
191. अंशिका मोदी, इन्दौर, (म.प्र.) भारत
192. राजेश कुमार जैन, लंदन, यू. के.
193. श्रीमती मीता जैन, लंदन, यू. के.
194. सुश्री अनन्या जैन, लंदन, यू. के.
195. अरिहन्त जैन, लंदन, यू. के.
196. ब्रिजेश कुमार जैन, बैंगलुरु (कर्नाटक) भारत
197. श्रीमती शिल्पी जैन, बैंगलुरु (कर्नाटक) भारत
198. सुश्री आद्या जैन, बैंगलुरु (कर्नाटक) भारत
199. अदय्य जैन, बैंगलुरु (कर्नाटक) भारत
200. निर्मल कुमार सुषमा जैन, अनूपनगर, इन्दौर
201. नन्दलाल जैन, बगड़ा, महावीर नगर 1, कोटा
202. श्रीमती विमलेश जैन, शैलेश जैन, रेणु जैन, अंश, वंश जैन, न्यू गुमानपुरा, कोटा
203. शान्ति जैन ठा, छावनी, कोटा
204. रूपचन्द्र कमला शाह, राजीव गांधी नगर, कोटा
205. अशोक कुमार-दीपक-पौष काला, बड़नगर
206. चम्पालाल भागचन्द्र जी काला, बड़नगर
207. सरोज जी, अशोक जी वेद, बड़नगर
208. इन्दरमल सुनीलकुमार कासलीवाल, बड़नगर
209. आदर्श महिला मण्डल, बड़नगर
210. रूपादेवी प्रियंका शाह, बड़नगर
211. चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन तेरापंथी बड़ा मन्दिर
212. पं. इन्द्रसेन जैन, सहारनपुर
213. पं. सुखमाल - सन्ध्या जैन, सहारनपुर
214. विपिन जैन एस. बी. आई, सहारनपुर
215. राजीव जैन सरार्फ, सहारनपुर
216. विपिन जैन, चांदी वाले, सहारनपुर
217. अनिल जैन(एडवोकेट) संगीता जैन, सहारनपुर
218. व्रती श्रावक, (सी. ए.) अनिल जैन, सहारनपुर
219. सुमन जैन सरार्फ, सहारनपुर
220. मनीष -मनीषा जैन, (अहं योग) सहारनपुर
221. श्री कमल जैन, कमल मेडीकल, सहारनपुर
222. अशोक जैन पी.एन. बी., सहारनपुर
223. संजीव जैन आद्वी, (महामन्त्री जैन पंचान) सहारनपुर
224. संदीप - अंजली जैन महावीर कालोनी, सहारनपुर
225. मोहित वन्दित जैन, (आरा मशीन वाले) सहारनपुर
226. जिनधर्मप्रभावना मण्डल, जैन बाग - सहारनपुर
227. श्रीराजीव जैन, पेपरमील, जैन बाग, सहारनपुर
228. नेमिचन्द्र जैन, चण्डीगढ़

(xx)

कहाँ-क्या	कहाँ-क्या
खण्ड प्रथम-सामान्य जानकारी	तिलककरण मंत्र - 36
शास्त्र स्वाध्याय का प्रारम्भिक	दिग्बन्धन विधि - 36
मंगलाचरण - 1	रक्षा मंत्र - 37
जिनवाणी स्तुति - 4	शान्ति मंत्र - 38
शास्त्र स्तुति - 4	पात्र-अंग शुद्धि मंत्र - 38
शास्त्र भक्ति - 5	क्षेत्र आज्ञा एवं भूमि शुद्धि मंत्र - 38
शास्त्र स्तुति - 5	रक्षा सूत्र मंत्र - 38
तीर्थकर परिचय - 6	यज्ञोपवीतधारण मंत्र - 38
देवदर्शन विधि - 8	मंगल कलश स्थापना का मंत्र - 39
देव स्तुति - 11	दीप स्थापना मंत्र - 40
दर्शन पाठ - 12	सकलीकरण - 40
श्री पार्श्वनाथ स्तुति - 13	सिद्धयंत्र स्थापना मंत्र - 41
समाधि भावना - 14	सिद्धयंत्राभिषेक मंत्र - 41
ध्यान दीजिए मन्दिर में न करने योग्य कार्य - 15	लघुतम शान्तिधारा - 41-ए
शास्त्रसभा में न करने योग्य कार्य- 18	माघनन्दिमुनिकृत अभिषेक-पाठ: -42
गुरु के समीप न करने योग्य कार्य- 18	पंचामृत- अभिषेक पाठ - 46
अभक्ष्य वर्णन - 19	लघु शान्तिधारा - 49
पंचमंगल पाठ - 20	बृहत् शान्तिधारा - 52
जलाभिषेक वा प्रक्षाल पाठ - 29	विनय पाठ - 56
मंगलपञ्चकम् - 32-ए	भजन श्री... - 57-बी
प्राकृत सिद्ध-भक्ति - 33	पूजा पीठिका - 58
खण्ड द्वितीय-दैनिक क्रिया	पूजा प्रतिज्ञा पाठ - 62
श्री मंगलाष्टक स्तोत्रम् - 34	स्वस्ति मंगल पाठ - 64
जल शुद्धि मंत्र - 36	परमर्षि स्वस्ति मंगल पाठ - 65
हस्त-प्रक्षालन मंत्र - 36	देव-शास्त्र-गुरु पूजन - 67
अमृत स्नान मंत्र - 36	

अर्धावली - 75	श्री रविव्रत-पूजा - 162
आचार्य श्री का अर्घ - 82	श्री बाहुबलि पूजन - 166
समुच्चय महार्घ - 82	निर्वाण क्षेत्र पूजा - 171
शान्तिपाठ भाषा - 83	सप्तर्षि-पूजा - 173
विसर्जन पाठ - 87	सरस्वती-पूजा - 177
जिन-स्तुति - 88	श्रीसिद्धयन्त्र या विनायकयन्त्र पूजन - 180
शान्तिपाठ: (संस्कृत) - 89	मानस्तम्भ पूजन - 185
लघु चैत्यभक्ति - 91	नवग्रह अरिष्टनिवारक पूजन - 188
खण्ड तृतीय- अन्य पूजाएँ	नवग्रहशान्ति स्तोत्र - 194
समुच्चय पूजन - 93	नवग्रह के जाप्य - 195
नवदेवता पूजन - 97	श्रीसम्मेदाचल पूजन बडी - 196
पंच-परमेष्ठी पूजन - 101	सम्मेद शिखर टोंकों के अर्घ - 204
देवशास्त्रगुरुपूजन	आचार्य श्री विद्यासागर पूजन- 211
केवल रवि किरणों... - 104	हवन की विधि - 215
देवशास्त्रगुरुपूजन संस्कृत की - 109	पुण्याहवाचन - 224
णमोकार महामन्त्र पूजन - 116	अथ शान्तिस्तव - 226
विद्यमान श्री बीस तीर्थकर पूजन-121	खण्ड चतुर्थ - तीर्थकर पूजाएँ
अकृत्रिमचैत्यालय पूजन - 123	श्री आदिनाथपूजन - 229
सिद्धचक्र पूजन हिन्दी - 129	श्री अजितनाथपूजन - 233
श्री सिद्ध पूजन (संस्कृत) - 133	श्री संभवनाथपूजन - 238
श्री सिद्ध भगवान् स्तुति - 138	अभिनन्दननाथपूजन - 243
समुच्चय चौबीसी जिनपूजा - 139	श्री सुमतिनाथपूजन - 248
श्रीशान्तिनाथ जिनपूजा - 142	श्री पद्मप्रभपूजन - 253
पंच बालयति तीर्थकर पूजा - 146	श्री सुपार्श्वनाथपूजन - 258
श्री पार्श्वनाथ जिन पूजा (पुष्पेन्द्र कृत) - 150	श्री चन्द्रप्रभ पूजन - 264
श्रीअहिच्छत्रपार्श्वनाथ पूजन - 155	श्री पुष्पदन्त पूजन - 269

श्री शीतलनाथपूजन	- 273	खण्ड षष्ठ - चालीसैं
श्री श्रेयांसनाथपूजन	- 278	श्रीआदिनाथ चालीसा - 371
श्री वासुपूज्यपूजन	- 283	श्रीपद्मप्रभ चालीसा - 373
श्री विमलनाथपूजन	- 287	चन्द्रप्रभ चालीसा - 375
श्री अनन्तनाथपूजन	- 292	श्रीचन्द्रप्रभ चालीसा त्रिजारा - 378
श्री धर्मनाथपूजन	- 296	श्रीपुष्पदंत चालीसा - 380
श्री शान्तिनाथपूजन	- 300	श्रीवासुपूज्य चालीसा - 381-ए
श्री कुन्धुनाथ पूजन	- 305	श्रीशान्तिनाथ चालीसा - 382
श्री अरनाथ पूजन	- 310	श्रीकुन्धुनाथ चालीसा - 386
श्री मल्लिनाथ पूजन	- 314	श्रीअरनाथ चालीसा - 388
श्री मुनिसुव्रतनाथपूजन	- 320	श्रीमल्लिनाथ चालीसा - 390
श्री नमिनाथपूजन	- 324	श्रीमुनिसुव्रतनाथ चालीसा - 391-ए
श्री नेमिनाथ पूजन	- 329	श्रीपार्श्वनाथ चालीसा - 392
श्री पार्श्वनाथ पूजन	- 333	महावीर चालीसा - 394
श्री महावीर पूजन	- 333-ई	णमोकार-चालीसा - 396
खण्ड पंचम- पर्व पूजाएँ		खण्ड सप्तम - संस्कृत स्तोत्रादि
सोलहकारण पूजन	- 334	पञ्चगुरु भक्ति - 398
सोलहकारण के अर्घ	- 337	सुप्रभात-स्तोत्रम् - 399
पंचमेरु पूजन	- 340	गोम्मटेस-थुदि - 401
नन्दीश्वरद्वीप पूजन	- 343	पार्श्वनाथ स्तोत्र - 402
दशलक्षणधर्म-पूजा	- 347	दृष्टाष्टकस्तोत्रम् - 403
रत्नत्रय-पूजन	- 353	अद्याष्टकस्तोत्रम् - 405
सम्यग्दर्शन-पूजन	- 355	महावीराष्टकस्तोत्रम् - 406
सम्यग्ज्ञान-पूजन	- 357	भक्तामर स्तोत्रम् - 408
सम्यक्चारित्र-पूजन	- 359	कल्याण मन्दिर स्तोत्रम् - 416-ए
क्षमावाणी पूजन	- 362	एकीभाव स्तोत्रम् - 416-आई
रक्षाबन्धन पर्व-पूजन	- 366	विषापहार-स्तोत्रम् - 416-एन
		जिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्रम् - 416-आर
		तत्त्वार्थसूत्रम् - 417

श्रीजिनसहस्रनाम स्तोत्रम्	- 431	दुःखहरण विनती	- 536
भावना द्वात्रिंशतिका	- 447	भक्तामर-महिमा	- 538
खण्ड अष्टम - हिन्दी-स्तोत्रादि		लघु प्रतिक्रमण	- 540
स्तुति (सकल ज्ञेय ज्ञायक)	- 450	खण्ड नवम - आरती आदि	
स्तुति (अहो जगत गुरु)	- 452	बाहुबली स्वामी की आरती	- 544
गुरु स्तुति (ते गुरु मेरे मन बसो)-453		महावीर स्वामी की आरती	- 545
निर्वाणकाण्ड (भाषा)	- 454	पार्श्वनाथ की आरती	- 546
मस्तकाभिषेक	- 456	शान्तिनाथ की आरती	- 547
गोमटेश अष्टक (आचार्य श्री विद्यासागर		चन्द्रप्रभ की आरती	- 548
जी द्वारा विरचित)	- 458	पद्मप्रभ की आरती	- 548
स्वयम्भूस्तोत्र- दोहा थुदि	- 460	सिद्धचक्र का पाठ	- 549
स्वयम्भू स्तोत्र भाषा	- 464	वर्द्धमान की आरती	- 550
दर्शन पाठ	- 466	पंच परमेष्ठी की	- 551
आराधना पाठ	- 468	आचार्य श्री की आरती	- 552
आत्म-कीर्तन	- 469	खण्ड दशम- अन्य उपयोगी	
मेरी भावना	- 470	जाप्य-मन्त्र	- 553
बारह भावना	- 472	भारत के प्रमुख जैन तीर्थ-क्षेत्र	- 556
वैराग्य भावना	- 473	संक्षिप्त सूतक विधि	- 563
आलोचना पाठ	- 476	भक्ष्य पदार्थों की मर्यादा	- 565
बारह भावना	- 480	प्रमुख जैन पर्व	- 566
संकट मोचन विनती	- 484-बी	आचार्य-वन्दना	- 567
भक्तामरस्तोत्र (भाषा)	- 485	अथ अठाई रासा	- 569
भक्तामर स्तोत्र (भाषा)	- 492	बड़े बाबा पूजन	- 574
सामायिक पाठ	- 501	श्रीभक्तामर-विधान पूजन	- 581
सामायिक पाठ (भाषा)	- 504	शान्ति-कुन्धु-अर पूजन	- 594
समाधि मरण बड़ा (भाषा)	- 510	षड्जिन पूजन	- 599
समाधि मरण (भाषा)	- 520	नित्यमह समुच्चय पूजन	- 605
छहढाला	- 522	चन्द्र-शान्ति-महावीर पूजन	- 613

शास्त्र स्वाध्याय का प्रारम्भिक मंगलाचरण

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ जय जय जय नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सब्बसाहूणं॥

ओकारं बिन्दुसंयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।

कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः॥

अविरल-शब्दघनौघ-प्रक्षालित-सकलभूतल-कलंकाः।

मुनिभि-रुपासित- तीर्थाः सरस्वती हरतु नो दुरितम्॥

अज्ञान-तिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जन-शलाकया।

चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

श्री परमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरवे नमः सकलकलुष-विध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं भव्य-जीवमनः प्रतिबोध-कारकमिदं शास्त्रं श्री (ग्रन्थ का नाम) नामधेयं, अस्य मूलग्रन्थकर्तारः श्री सर्वज्ञदेवास्तदुत्तर-ग्रन्थकर्तारः श्रीगणधर-देवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचोऽनुसार मासाद्य श्री (आचार्य का नाम) आचार्येण विरचितं, श्रोतारः सावधानतया शृण्वन्तु।

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।

मंगलं कुन्दकुन्दार्यो, जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्॥

सर्व मंगल-मांगल्यं, सर्वकल्याणकारकम्।

प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं, जयतु शासनम्॥

(1)

अर्थ:- (बिन्दुसंयुक्तं) बिन्दु सहित (ओकारं) ओकार को (योगिनः) योगी (नित्यं) सर्वदा (ध्यायन्ति) ध्याते हैं (कामदं) मनोवांछित वस्तु को देने वाले (चैव) और (मोक्षदं) मोक्ष को देने वाले (ओंकाराय) ओंकार को (नमो नमः) बार बार नमस्कार हो। (अविरल-शब्द-घनौघ-प्रक्षालित-सकल-भूतलकलंकाः) घने शब्द (दिव्यध्वनि) रूपी मेघ-समूह से जिसने संसार सम्बन्धी समस्त पापरूपी मैल को धो दिया है (मुनिभिरुपासित-तीर्थाः) मुनिगण जिसकी तीर्थ के रूप में उपासना करते हैं ऐसी (सरस्वती) जिनवाणी (नः) हमारे (दुरितम्) पापों को (हरतु) नष्ट करे॥

(येन) जिसने (अज्ञान-तिमिरांधानां) अज्ञानरूपी अन्धेरे से अन्धे हुये जीवों के (चक्षुः) नेत्र (ज्ञानाञ्जनशलाकया) ज्ञान-रूपी अंजन की सलाई से (उन्मीलितं) खोल दिये हैं (तस्मै) उस (श्रीगुरवे) श्री गुरु को (नमः) नमस्कार हो।

(सकल-कलुष-विध्वंसकं) समस्त पापों का नाश करने वाला (श्रेयसां) कल्याणों का (परिवर्धकं) बढ़ाने वाला (धर्म-सम्बन्धकं) धर्म से सम्बन्ध रखने वाला (भव्यजीवमनः प्रतिबोधकारकम्) भव्यजीवों के मन को प्रतिबुद्ध-सचेत करने वाला (इदं) यह (शास्त्रं) शास्त्र श्री (यहाँ पर उस शास्त्र का नाम लेना चाहिए जिसकी वचनिका करनी है। यथा आदिपुराण) (नामधेयं) नाम का है।

(अस्य) इसके (मूलग्रन्थकर्तारः) मूल ग्रन्थ रचयिता (श्री सर्वज्ञ-देवाः) श्री सर्वज्ञदेव हैं (तदुत्तरग्रन्थकर्तारः) उनके बाद ग्रन्थों को गूँथने वाले (श्री गणधरदेवाः) गणधरदेव हैं (प्रतिगणधरदेवाः) उनके

(2)

पश्चात् मुख्य आचार्य हैं (तेषां) उनके (वचोऽनुसारं) वचनों के अनुसार (आसाद्य) लेकर (श्री आचार्येण) श्री...आचार्य ने (यहाँ जिस ग्रन्थ के जो कर्ता हों उन आचार्य का नाम लेना चाहिये।) (विरचितं) रचा है।

(भगवान् वीरः) महावीर स्वामी (मंगलं) मंगल के कर्ता हो, (गौतमो गणी) गौतम गणधर (मंगलं) मंगल के कर्ता हो, (कुन्दकुन्दार्यः) कुन्दकुन्द स्वामी आचार्य (मंगलं) मंगलकारी हो तथा (जैनधर्मः) जैनधर्म (मंगलं) मंगलदायी (अस्तु) होवे। (श्रोतारः) हे श्रोताओं! (सावधानतया) सावधानी से/ध्यान लगाकर (शृण्वन्तु) सुनिये।

(सर्वमंगल-मांगल्यं) सभी मंगलों में मंगल स्वरूप (सर्वकल्याण-कारकम्) सभी कल्याणकों को करने वाला (सर्वधर्माणां) सभी धर्मों में (प्रधानं) प्रधान (जैनं) जैन (शासनम्) शासन (जयतु) जयवन्त हो।

नोट:- बाद में ग्रन्थ का मंगलाचरण पढ़कर स्वाध्याय करना चाहिये।

स्वाध्याय के लिये उपयोगी कुछ ग्रन्थ

कथाग्रन्थ - पद्मपुराण, हरिवंशपुराण, आदिपुराण, उत्तरपुराण, पांडवपुराण, पार्श्वपुराण, जीवन्धर चरित्र, प्रबुध्म चरित्र, महावीर पुराण आदि।

अन्य ग्रन्थ - द्रव्य संग्रह, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय, परमात्म-प्रकाश, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, समयसार, अष्टपाहुड़, त्रिलोकसार, सर्वार्थसिद्धि आदि।

नोट :- स्वाध्याय के बाद जिनवाणी स्तुति पढ़नी चाहिए।

जिनवाणी स्तुति

वीर हिमाचल तैं निकसी गुरु गौतम के मुख कुण्ड ढरी है।
मोह-महाचल भेद चली, जग की जड़ता-तप दूर करी है॥
ज्ञान पयोनिधि माँहि रली, बहु भंग तरंगनि सों उछरी है।
ता शुचि शारद-गंगनदी-प्रति में अंजुरी करि शीश धरी है॥
या जग-मन्दिर में अनिवार-अज्ञान-अन्धेर छयो अति भारी।
श्रीजिनकी ध्वनि दीपशिखा सम जो नहिं होत प्रकाशन हारी॥
तो किस भाँति पदारथ-पाँति कहाँ लहते, रहते अविचारी।
या विधि संत कहैं धनि हैं धनि हैं जिन बैन बड़े उपकारी॥

जा वाणी के ज्ञान ते, सूझे लोक अलोक।
सो वाणी मस्तक चढ़ो, सदा देत हूँ धोक॥
हे जिनवाणी भारती, तोय जपूँ दिन रैन।
जो तेरी शरणा गहे, सो पावे सुख चैन॥

शास्त्र स्तुति

हे शारदे माँ, हे शारदे माँ, अज्ञानता से मुझे तार देना।
मुनियों ने जानी, गुणियों ने समझी, शास्त्रों की भाषा, आगम की वाणी॥
हम भी तो जानें, हम भी तो समझें, विद्या का फल तो हमें माँ तु देना।हे॥
तू ज्ञानदायी हमें ज्ञान दे दे, रत्नत्रयों का हमें दान दे दे।
मन से हमारे, मिटा दे अंधेरे, हमको उजालों का शिवद्वार दे माँ।हे॥
तू मोक्षदायी, है संगीत तुझ में, हर शब्द तेरा हर भाव तुझ में।
हम हैं अकेले, हम हैं अधूरे, तेरी शरण माँ हमें तार देना।
हे शारदे माँ, हे शारदे माँ, अज्ञानता से हमें तार देना॥

शास्त्र भक्ति

जिनवाणी माता दर्शन की बलहारियाँ ।।टेक।।
 प्रथम देव अरहन्त मनाऊँ, गणधर जी को ध्याऊँ।
 कुन्दकुन्द आचार्य हमारे, तिनको शीष नवाऊँ।।
 योनी लाख चौरासी माहिं, घोर महादुख पायो।
 ऐसी महिमा सुनकर माता, शरण तुम्हारी आयो।।
 जानै थाँको शरणा लीनों, अष्ट कर्म क्षय कीनों।
 जन्म मरण मिटा के माता, मोक्ष महापद दीनों।।
 ठाडे श्रावक अरज करत हैं, हे जिनवाणी माता।
 द्वादशांग चौदह पूरव की, कर दो हमको ज्ञाता।।
 जिनवाणी माता, दर्शन की बलहारियाँ ।।टेक।।

शास्त्र स्तुति

माता तु दया करके, कर्मों से छुड़ा देना।
 इतनी सी विनय तुमसे, चरणों में जगह देना।।
 संसार में भटके हैं, माया के अन्धरे में।
 कोई नहीं मेरा है, इस कर्म के रेले में।
 कोई नहीं मेरा है, तुम धीर बंधा देना।।इतनी।।
 जीवन के चौराहे पर, हम सोच रहे कब से।
 जाँऊ तो किधर जाँऊ, यह पूछ रहा मन से।।
 पथ भूल गया हूँ मैं, तुम राह दिखा देना।।इतनी।।
 लाखों को उबारा है, मुझको भी उबारो तुम।
 मझधार में है नैया, उसको भी तिरादो तुम।।
 मझधार में अटके हैं, उस पार लगा देना।।
 इतनी सी विनय तुमसे, चरणों में जगह देना।।

(5)

उत्तर-पुराण ग्रन्थानुसार तीर्थकरों की तिथि

तीर्थकर	गर्भ	जन्म	तप	केवलज्ञान	मोक्ष
1. आदिनाथ	आषाढ़वदी 2	चैत्रवदी 9	चैत्रवदी 9	फाल्गुनवदी 11	माघवदी 14
2. अजितनाथ	ज्येष्ठवदी 30	माघ सुदी 10	माघ सुदी 9	पौष सुदी 11	चैत्र सुदी 5
3. सम्भवनाथ	फाल्गुनसुदी 8	कार्तिकसुदी 15	उल्लेख नहीं	कार्तिक वदी 4	चैत्र सुदी 6
4. अभिनन्दननाथ	वैशाख सुदी 6	माघ सुदी 12	माघ सुदी 12	पौष सुदी 14	वैशाख सुदी 6
5. सुमतिनाथ	श्रावण सुदी 2	चैत्र सुदी 11	वैशाख सुदी 9	चैत्र सुदी 11	चैत्र सुदी 11
6. पद्मप्रभ	माघ वदी 6	कार्तिक वदी 13	कार्तिक वदी 13	चैत्र सुदी 15	फाल्गुन वदी 4
7. सुपाश्वरनाथ	भाद्रपद सुदी 6	ज्येष्ठ सुदी 12	ज्येष्ठ सुदी 12	फाल्गुन वदी 6	फाल्गुन वदी 7
8. चन्द्रप्रभ	चैत्र वदी 5	पौष वदी 11	पौष वदी 11	फाल्गुन वदी 7	फाल्गुन सुदी 7
9. पुष्पदन्त	फाल्गुन वदी 9	मगसिर सुदी 1	मगसिर सुदी 1	कार्तिक सुदी 2	भाद्रपद सुदी 8
10. शीतलनाथ	चैत्र वदी 8	माघ वदी 12	माघवदी 12	पौष वदी 14	आश्विन सुदी 8
11. श्रेयांसनाथ	ज्येष्ठ वदी 6	फाल्गुनवदी 11	फाल्गुनवदी 11	माघ वदी 30	श्रावणसुदी 15
12. वासुपूज्य	आषाढ़ वदी 6	फाल्गुनवदी 14	फाल्गुनवदी 14	माघ सुदी 2	भाद्रपद सुदी 14
13. विमलनाथ	ज्येष्ठ वदी 10	माघ सुदी 4, 14	माघ सुदी 4	माघ सुदी 6	आषाढ़ वदी 8
14. अनन्तनाथ	कार्तिक वदी 1	ज्येष्ठ वदी 12	ज्येष्ठ वदी 12	चैत्र वदी 30	चैत्र वदी 30
15. धर्मनाथ	वैशाख सुदी 13	माघ सुदी 13	माघ सुदी 13	पौष सुदी 15	ज्येष्ठ वदी 4
16. शान्तिनाथ	भाद्रपद वदी 7	ज्येष्ठ वदी 14	ज्येष्ठ वदी 14	पौष सुदी 10	ज्येष्ठ वदी 14
17. कुन्धुनाथ	श्रावण वदी 10	वैशाख सुदी 1	वैशाख सुदी 1	चैत्र सुदी 3	वैशाख सुदी 1
18. अरनाथ	फाल्गुन वदी 3	मगसिर सुदी 14	मगसिर सुदी 10	कार्तिक सुदी 12	चैत्र वदी 30
19. मल्लिनाथ	चैत्र सुदी 1	मगसिर सुदी 11	अगहन सुदी 11	कार्तिक वदी 2	फाल्गुन सुदी 7
20. मुनिसुव्रतनाथ	श्रावण वदी 2	उल्लेख नहीं	वैशाख वदी 10	चैत्र वदी 9	फाल्गुन वदी 12
21. नमिनाथ	आश्विन वदी 2	आषाढ़ वदी 10	आषाढ़ वदी 10	मगसिर सुदी 11	वैशाख वदी 14
22. नेमिनाथ	कार्तिक सुदी 6	श्रावण सुदी 6	श्रावण सुदी 6	आश्विन वदी 1	आषाढ़ सुदी 7
23. पार्श्वनाथ	वैशाख वदी 2	पौष वदी 11	पौष वदी 11	चैत्र वदी 13	श्रावण सुदी 7
24. वर्धमान	आषाढ़ सुदी 6	चैत्र सुदी 13	मगसिर वदी 10	वैशाख सुदी 10	कार्तिक वदी 14

(6)

तिलोय-पण्णत्ती ग्रन्थानुसार तीर्थकरों की तिथि

गर्भ	जन्म	तप	केवलज्ञान	मोक्ष	आयु
उल्लेख नहीं	चैत्रवदी 9	चैत्रवदी 9	फाल्गुनवदी 11	माघवदी 14	84 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	माघ सुदी 10	माघ सुदी 9	<u>पौष सुदी 14</u>	चैत्र सुदी 5	72 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	<u>मगसिर सुदी 15</u>	<u>मगसिर सुदी 15</u>	<u>कार्तिक सुदी 5</u>	चैत्रसुदी 6	60 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	माघ सुदी 12	माघ सुदी 12	<u>पौष सुदी 15</u>	<u>वैशाख सुदी 7</u>	50 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	<u>श्रावण सुदी 11</u>	वैशाख सुदी 9	<u>वैशाख सुदी 10</u>	<u>चैत्र सुदी 10</u>	40 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	<u>आसौजवदी 13</u>	कार्तिक वदी 13	<u>वैशाख सुदी 10</u>	फाल्गुन वदी 4	30 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	ज्येष्ठ सुदी 12	ज्येष्ठ सुदी 12	<u>फाल्गुन वदी 7</u>	<u>फाल्गुन वदी 6</u>	20 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	पौष वदी 11	पौष वदी 11	फाल्गुन वदी 7	<u>भाद्रपद सुदी 7</u>	10 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	मगसिर सुदी 1	<u>पौष सुदी 11</u>	<u>कार्तिक सुदी 3</u>	<u>आश्विन सुदी 8</u>	2 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	माघ वदी 12	माघ वदी 12	पौष वदी 14	<u>कार्तिक सुदी 5</u>	1 लाख पूर्व
उल्लेख नहीं	<u>फाल्गुनसुदी 11</u>	फाल्गुनवदी 11	<u>माघवदी 30</u>	श्रावणसुदी 15	84 लाख वर्ष
उल्लेख नहीं	<u>फाल्गुनसुदी 14</u>	फाल्गुनवदी 14	<u>माघ सुदी 15</u>	<u>फाल्गुन वदी 5</u>	72 लाख वर्ष
उल्लेख नहीं	माघ सुदी 14	माघ सुदी 4	पौष सुदी 10	<u>आषाढ सुदी 8</u>	60 लाख वर्ष
उल्लेख नहीं	ज्येष्ठ वदी 12	ज्येष्ठ वदी 12	चैत्र वदी 30	चैत्र वदी 30	50 लाख वर्ष
उल्लेख नहीं	माघ सुदी 13	<u>भाद्रपद सुदी 13</u>	पौष सुदी 15	<u>ज्येष्ठ वदी 14</u>	10 लाख वर्ष
उल्लेख नहीं	<u>ज्येष्ठ सुदी 12</u>	ज्येष्ठ वदी 4	<u>पौष सुदी 11</u>	ज्येष्ठ वदी 14	1 लाख वर्ष
उल्लेख नहीं	वैशाख सुदी 1	वैशाख सुदी 1	चैत्र सुदी 3	वैशाख सुदी 1	95 हजार वर्ष
उल्लेख नहीं	मगसिर सुदी 14	मगसिर सुदी 10	<u>कार्तिक सुदी 12</u>	चैत्र वदी 30	80 हजार वर्ष
उल्लेख नहीं	मगसिर सुदी 11	<u>मगसिर सुदी 11</u>	<u>फाल्गुन वदी 12</u>	<u>फाल्गुन वदी 5</u>	55 हजार वर्ष
उल्लेख नहीं	<u>आसौज सुदी 12</u>	वैशाख वदी 10	<u>फाल्गुन वदी 6</u>	फाल्गुन वदी 12	30 हजार वर्ष
उल्लेख नहीं	<u>आषाढ सुदी 10</u>	आषाढ वदी 10	<u>चैत्र सुदी 3</u>	वैशाख वदी 14	10 हजार वर्ष
उल्लेख नहीं	वैशाख सुदी 13	श्रावण सुदी 6	आश्विन सुदी 1	<u>आषाढ वदी 8</u>	1 हजार वर्ष
उल्लेख नहीं	पौष वदी 11	<u>माघ सुदी 11</u>	चैत्र वदी 4	श्रावण सुदी 7	100 वर्ष
उल्लेख नहीं	चैत्र सुदी 13	मगसिर वदी 10	वैशाख सुदी 10	<u>कार्तिक वदी 14</u>	72 वर्ष

(7)

देव दर्शन विधि

भगवान् के सामने जाते ही बहुत विनय के साथ हाथ जोड़कर सिर झुकावें, णमोकार मंत्र पढ़कर कोई स्तुति, स्तोत्र को (दर्शन पाठ या प्रभु पतित पावन की स्तुति) पढ़कर साथ में लाए हुए पुञ्ज चढ़ावें। फिर पृथ्वी पर अष्टांग (लेटकर) अथवा पंचांग गवासन से (घुटने के बल बैठकर दो पैर, दो हाथ, सिर पाँच अंग) नमस्कार करें यानि- गवासन से बैठकर, जुड़े हुए हाथों तथा मस्तक को पृथ्वी से लगावें-धोक देवें।

“प्रदक्षिणा”

धोक देने के बाद हाथ जोड़कर खड़े हो जावें और अच्छे स्वर में स्पष्ट शुद्ध उच्चारण के साथ संस्कृत भाषा का या हिन्दी भाषा का स्तोत्र पढ़ते हुये अपनी बायीं ओर से चलकर वेदी की धीरे-धीरे तीन परिक्रमा दें। तदनन्तर स्तोत्र पूरा कर लेने पर फिर अष्टांग या पंचांग नमस्कार पूर्वक धोक देवें।

“ध्यान रखने योग्य बातें”

दर्शन करते समय अपनी दृष्टि (निगाह) भगवान् की प्रतिमा पर ही रखें, अन्य कोई वस्तु न देखें। उस समय स्तोत्र में निमग्न होकर ऐसे तन्मय हो जायें कि मन-वचन-काय में अन्य कोई बात न आने पाये। भगवान् की मूर्ति को एकटक होकर देखें और भावना करें कि जैसी भगवान् की आकृति (मूर्ति) है वैसी ही शांति, वीतरागता, मेरी आत्मा में प्रकट हो, जैसे भगवान् सिंहासन, छत्र, चँवर आदि विभूति रखते हुए भी उससे निर्लिप्त अछूते रहे उसी तरह मैं भी सांसारिक विभूति होते हुये भी उससे निर्लिप्त रहूँ। जैसे भगवान् में समता भाव था, उनका न कोई मित्र था, न कोई शत्रु, ऐसी ही भावना मेरे हृदय में जागृत हो, इत्यादि चिन्तन करें।

परिक्रमा देते समय यदि कोई स्त्री-पुरुष धोक दे रहे हों तो उनके आगे से न निकलें, पीछे की ओर से निकलें अथवा जब तक वे धोक से न उठें तब तक खड़े रहें, आगे न बढ़ें।

(8)

दर्शन करते समय इस तरह खड़े होना या परिक्रमा करनी चाहिए जिससे दूसरे व्यक्तियों को दर्शन पूजन में विघ्न न पड़े।

दर्शन कर लेने के बाद हाथ की अँगुलियों को गंधोदक के पास रखें अन्य जल से शुद्ध कर लेने पर, चम्मच से गंधोदक लेकर अपने सिर आदि उत्तम अंगों पर लगावें और फिर गंधोदक वाली अँगुलियों को जल से धो लेवें, जिससे पवित्र गंधोदक वाली अँगुलियों का सम्पर्क किसी अन्य अपवित्र पदार्थ से न होने पावे। भगवान् की प्रतिमा के अभिषेक का जल, गंधोदक या प्रक्षाल जल कहा जाता है।

“चावल चढ़ाने का उद्देश्य”

भगवान् के सामने खाली हाथ नहीं जाना चाहिए, चढ़ाने के लिए कम से कम हाथ में चावल अवश्य लाने चाहिए। चावल चढ़ाने का अभिप्राय यही है कि जिस तरह धान से छिलका उतर जाने पर फिर धान में उगने की शक्ति नहीं रहती, उसी प्रकार भगवान् के दर्शन, भक्ति करने से मेरी आत्मा भी संसार में उगने यानी फिर जन्म लेने योग्य न रहे।

“गन्धोदक”

अरिहन्त और सिद्ध भगवान् की प्रतिमा का प्रक्षालित जल (अभिषेक का जल) भी सुगन्धित होता है, इस कारण प्रक्षाल को गन्ध-उदक-गन्धोदक यानी सुगन्धित जल कहते हैं। जैसे गुरु की चरण रज को मस्तक से लगाने पर मन में गुरु का गौरव जागृत होता है, उसी प्रकार भगवान् का अभिषेक जल-गंधोदक अपने उत्तमांग पर लगाने से भगवान् के प्रति भक्तिभाव जागृत होता है।

गंधोदक लगाते समय पढ़ना चाहिए-

निर्मलं निर्मली करणं, पवित्रं पापनाशकम्।

जिन-गंधोदकं वन्दे, ह्यष्टकर्मविनाशकम् ॥

मन्दिर के दरवाजे में प्रवेश करते ही बोलें :-

ॐ जय जय जय, निःसही, निःसही, निःसही। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।

भगवान् के सामने खड़े होकर दोनों हाथ जोड़कर बोलें :-

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।

णमो उवज्झायणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

भगवान् की तीन प्रदक्षिणा देवें। बँधी मुट्ठी से अँगूठा भीतर करके चावल के पुञ्ज चढ़ावें।

अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु ऐसे पाँचों पद बोलते हुए क्रम से बीच में, ऊपर, दाहिनी तरफ, नीचे और बायीं तरफ, ऐसे पाँच पुञ्ज चढ़ावें।

सरस्वती के सामने - ‘प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः’ ऐसे बोलकर क्रम से चार पुञ्ज लाइन से चढ़ावें।

गुरु के सामने - सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र ऐसे बोलकर क्रम से तीन पुञ्ज लाइन से चढ़ावें।

पुनः हाथ जोड़कर स्तोत्र बोलें :-

हे भगवन्! नेत्रद्वय मेरे सफल हुये हैं आज अहो

तव चरणांबुज का दर्शन कर जन्म सफल है आज अहो।

हे त्रिभुवन के नाथ! आपके दर्शन से मालूम होता।

संसार जलधि भी चुल्लू सम हो गया अहो ऐसा ॥

अर्हत्सिद्धाचार्य औ पाठक साधु महान्।

पंच परम गुरु को नमूँ, भव भव के सुखदान ॥

पुनः विधिवत् पृथ्वी तल पर मस्तक टेककर नमस्कार करें।

अर्थ- हे भगवन्! आपके चरण कमलों का दर्शन करके आज मेरे दो नेत्र सफल हो गये हैं और मेरा जन्म भी सफल हो गया है। हे तीन लोक

के नाथ ! आपके दर्शन करने से ऐसा मालूम होता है कि जो मेरा संसार समुद्र अपार था सो आज चुल्लू भर पानी के समान थोड़ा रह गया है।

अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु ये पंच परम गुरु भव-भव में सुख देने वाले हैं। मैं इनको नमस्कार करता हूँ।

देव स्तुति

प्रभु पतित पावन मैं अपावन, चरन आयो सरन जी।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरन जी॥
तुम ना पिछान्यो आन मान्यो, देव विविध प्रकार जी।
या बुद्धि सेती निज न जान्यो, भ्रम गिण्यो हितकार जी॥
भव विकट वन में कर्म बैरी, ज्ञानधन मेरो हयो।
सब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्यो॥
धन घड़ी यों धन दिवस यो, धन्य जनम मेरो भयो।
अब भाग्य मेरो उदय आयो, दरश प्रभुजी को लख लयो॥
छबि वीतरागी नग्न मुद्रा, दृष्टि नासा पै धरें।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुण जुत, कोटि रवि छवि को हरें॥
मिट गयो तिमिर मिथ्यात्म मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो उर हर्ष ऐसो भयो, मनु रंक चिन्तामणि लयो॥
दोउ हाथ जोड़ नवाऊं मस्तक, वीनऊं तुम चरण जी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारण तरण जी॥
जाँचूं नहीं सुरवास पुनि, नर-राज परिजन साथ जी।
'बुध' जाँचहूं तुम भक्ति भव-भव, दीजिये शिवनाथ जी॥

दर्शन पाठ

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम्।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम्॥
दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वंदनेन च।
न तिष्ठति चिरं पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम्॥
वीतरागमुखं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभम्।
नैकजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति॥
दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसार-ध्वान्त-नाशनम्।
बोधनं चित्त-पद्मस्य, समस्तार्थ-प्रकाशनम्॥
दर्शनं जिनचंद्रस्य, सद्धर्माभूत-वर्षणम्।
जन्म-दाह-विनाशाय, वर्धनं सुख-वारिधेः॥
जीवादि-तत्त्व-प्रतिपादकाय, सम्यक्त्व-मुख्याष्ट-गुणार्णवाय।
प्रशांत-रूपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय॥
चिदानन्दैक-रूपाय, जिनाय परमात्मने।
परमात्म-प्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः॥
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्य-भावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वरः॥
नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति॥
जिने भक्ति-र्जिने भक्ति-र्जिने भक्ति-र्दिने दिने।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे भवे॥

जिन धर्म-विनिर्मुक्तो, मा भूवं चक्रवर्त्यपि ।
स्यां चेटोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासितः ॥
जन्म-जन्मकृतं पापं, जन्म-कोटिमुपार्जितम् ।
जन्म-मृत्यु-जरा रोगो, हन्यते जिन-दर्शनात् ॥

अद्या- भवत् सफलता नयन- द्वयस्य,
देव ! त्वदीय चरणाम्बुज- वीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोक- तिलक ! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधि-रयं चुलुक- प्रमाणः ॥

॥ इति दर्शन पाठ ॥

श्री पार्श्वनाथ स्तुति

तुमसे लागी लगन, ले लो अपनी शरण, पारस प्यारा ।
मेटो मेटो जी संकट हमारा ॥ टेक ॥
निश-दिन तुमको जपूँ, पर से नेहा तजूँ, जीवन सारा ।
तेरे चरणों में बीते हमारा ॥ मेटो ॥
अश्वसेन के राज दुलारे, वामादेवी के सुत प्राण प्यारे ।
सबसे नेहा तोड़ा, जग से मुँह को मोड़ा, संयम धारा ॥ मेटो ॥
इन्द्र और धरणेन्द्र भी आये, देवी पद्मावती मंगल गाये ।
आशा पूरो सदा, दुःख नहिं पावे कदा, सेवक थारा ॥ मेटो ॥
जग के दुःख की तो परवाह नहीं है, स्वर्गसुख की भी चाह नहीं है ।
मेटो जामन-मरण, होवे ऐसा यतन, पारस प्यारा ॥ मेटो ॥
लाखों बार तुम्हें शीश नवाऊँ, जग के नाथ तुम्हें कैसे पाऊँ ।
'पंकज' व्याकुल भया, दर्शन बिन ये जिया, लागे खारा ॥ मेटो ॥

समाधि भावना

दिन रात मेरे स्वामी, मैं भावना ये भाऊँ ।
देहान्त के समय में, तुमको न भूल जाऊँ ॥
शत्रु अगर कोई हो, सन्तुष्ट उनको कर दूँ ।
समता का भाव धरकर, सबसे क्षमा कराऊँ ॥
त्यागूँ अहार पानी, औषध विचार अवसर ।
टूटे नियम न कोई, दृढ़ता हृदय में लाऊँ ॥
जागें नहीं कषायें, नहीं वेदना सतावें ।
तुमसे ही लौ लगी हो, दुर्ध्यान को भगाऊँ ॥
आतम स्वरूप अथवा, आराधना विचारूँ ।
अरहंत सिद्ध साधु, रटना यही लगाऊँ ॥
धरमात्मा निकट हों, चरचा धरम सुनावें ।
वह सावधान रखें, गाफिल न होने पाऊँ ॥
जीने की हो न बाँछा, मरने की हो न इच्छा ।
परिवार मित्र जन से, मैं राग को हटाऊँ ॥
भोगे जो भोग पहिले, उनका न होवे सुमरन ।
मैं राज्य संपदा या, पद इन्द्र का न चाहूँ ॥
रत्नत्रय का पालन, हो अन्त में समाधी ।
शिवराम प्रार्थना है, जीवन सफल बनाऊँ ॥
दिन रात मेरे स्वामी, मैं भावना ये भाऊँ ।
देहान्त के समय में, तुमको न भूल जाऊँ ॥

ध्यान दीजिए

मन्दिर जी में न करने योग्य कार्य

- : -: मंदिर में नाक, कान, आँख का मैल निकालना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में मल-मूत्र आदि नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में खाँसी, कफ आदि नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में वमन, कुल्ला आदि नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में हाथ-पैर के नख तोड़ना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में शरीर का मैल व पसीना नहीं डालना चाहिए।
- : -: मंदिर में अँगुली चटकाना, फोड़े आदि को फोड़ना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में दन्त मंजन व दाँतों में सीक नहीं करनी चाहिए।
- : -: मंदिर में घाव आदि पर पट्टी नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में शौच आदि को पहनकर गये हुए वस्त्र को पहन कर आना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में पैर पसारकर बैठना व गुप्त अंगादि नहीं दिखाना चाहिए।
- : -: मंदिर में आलस्य करना, जम्भाई लेना व छींकना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में दीवाल व खम्भे के सहारे नहीं बैठना चाहिए।
- : -: मंदिर में हाथ, पैर, शरीर दबाना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में अधोअंग (नाभि से नीचे के अंग) नहीं खुजाना चाहिए।
- : -: मंदिर में गद्दी, तकिया लगाकर नहीं बैठना चाहिए।
- : -: मंदिर में पैर पर पैर रखकर ऊँट के समान नहीं बैठना चाहिए।
- : -: मंदिर में पगड़ी साफा आदि नहीं बाँधना चाहिए।
- : -: मंदिर में स्नान, उबटन, तेल, कंघा नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में तेल तथा इत्र, सेंट नहीं लगाना चाहिए।
- : -: मंदिर में शयन करना व बैठे-बैठे ऊँघना नहीं चाहिए।

- : -: मंदिर में पंखा व रुमाल आदि से हवा नहीं करनी चाहिए।
- : -: मंदिर में आग तापना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में चमर, छत्र अपने ऊपर नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में दाढ़ी, मूँछ पर ताव नहीं देना चाहिए।
- : -: मंदिर में जूता, चप्पल, मोजा पहनकर नहीं आना चाहिए।
- : -: मंदिर में शर्त व ताश आदि लगाना व खेलना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में दर्पण में केश तिलक सँवारना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में फूलों की माला हार आदि पहनकर नहीं आना चाहिए।
- : -: मंदिर में ऊनी वस्त्र व रेशमी वस्त्र पहनकर नहीं आना चाहिए।
- : -: मंदिर में चमड़े की कोई भी वस्तु नहीं लाना चाहिए।
- : -: मंदिर में रोना, बिलखना, हिचकी लेना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में गाली, भण्ड वचन या कटुक वचन नहीं कहना चाहिए।
- : -: मंदिर में सब्जी, अनाज, पापड़ आदि नहीं सुखाना चाहिए।
- : -: मंदिर में बिना पैर धोये प्रवेश नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में पान, तम्बाकू, भाँग आदि लाना या खाना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में पक्षी आदि नहीं पालना चाहिए।
- : -: मंदिर में भोजन-पान आदि नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में औषध, चूर्ण, गोली आदि नहीं खाना चाहिए।
- : -: मंदिर में प्रसाद आदि नहीं खाना चाहिए।
- : -: मंदिर में होली आदि नहीं खेलनी चाहिए।
- : -: मंदिर में पटाखे आदि नहीं फोड़ना चाहिए।
- : -: मंदिर में बुरे संकल्प विकल्प नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में बैर व ईर्ष्या भाव नहीं रखना चाहिए।
- : -: मंदिर में खाली हाथ नहीं आना चाहिए।
- : -: मंदिर में वैद्यक ज्योतिष आदि नहीं करना चाहिए।

- : -: मंदिर में राज्यादिक के भय से छिपना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में झूठ, गर्हित, अप्रिय वचन नहीं कहना चाहिए।
- : -: मंदिर में द्रव्य जहाँ कहीं नहीं चढ़ाना चाहिए।
- : -: मंदिर में रिश्वत घूस आदि नहीं लेना चाहिए।
- : -: मंदिर में शस्त्र आदि लेकर नहीं आना चाहिए।
- : -: मंदिर में गाय, भैंस आदि बाँधना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में विवाह, सगाई सम्बन्धी चर्चा नहीं करनी चाहिए।
- : -: मंदिर में उधार लेन-देन किसी से नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में धन उपार्जन, व्यापार की चर्चा नहीं करनी चाहिए।
- : -: मंदिर में इलायची, लौंग, मसाला आदि नहीं खाना चाहिए।
- : -: मंदिर में लड़ाई-झगड़ा, क्लेश, विसंवाद नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में बिना हाथ धोये शास्त्र व गंधोदक लेना व छूना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में चढ़ा हुआ द्रव्य खरीदना-बेचना नहीं (छूना नहीं) चाहिए।
- : -: मंदिर में जुहार, मुजरा, बंदगी आदि नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में बिरादरी पंचायत सम्बन्धी मीटिंग नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में द्रव्यादि अधिक कम व कम अधिक नहीं चढ़ाना चाहिए।
- : -: मंदिर में दर्शन करते हुए व्यक्ति के सामने खड़े होकर दर्शन नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में दूसरे को बाधा हो इतना जोर से नहीं बोलना चाहिए।
- : -: मंदिर में शास्त्र, मालादि अयथायोग्य स्थान पर रखना नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में देव, शास्त्र, गुरु से ऊँचे स्थान पर नहीं बैठना चाहिए।
- : -: मंदिर में विकार उत्पन्न करने वाले चित्र लगाने एवं लगवाने नहीं चाहिए।
- : -: मंदिर में बिना शुद्ध वस्त्र पहनकर गर्भगृह में प्रवेश नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में शास्त्र, प्रतिमा आदि को नाभि के नीचे के स्थानों से

- स्पर्शित नहीं करना चाहिए।
- : -: मंदिर में नेलपॉलिश, लिपिस्टिक आदि लगाकर नहीं आना चाहिए।
- : -: मंदिर में प्रत्येक कार्य अयत्नाचारपूर्वक नहीं करना चाहिए।
- शास्त्र स्वाध्याय (सभा) में न करने योग्य कार्य**
- : -: शास्त्र को पैर पर रखकर नहीं पढ़ना चाहिए।
- : -: शास्त्र को नाभि के नीचे के अंगों से स्पर्श नहीं करना चाहिए।
- : -: शास्त्र के पन्ने हाथ में थूक लगाकर पलटना नहीं चाहिए।
- : -: शास्त्र सभा में बाद में आकर आगे नहीं बैठना चाहिए।
- : -: शास्त्र सभा में बीच में उठकर नहीं जाना चाहिए।
- : -: शास्त्र सभा में सहारा लेकर नहीं बैठना चाहिए।
- : -: शास्त्र पढ़ते समय हँसी मजाक नहीं करना चाहिए।
- : -: शास्त्र सभा में इधर-उधर की बातें नहीं करनी चाहिए।
- : -: शास्त्र की अविनय नहीं करनी चाहिए।
- गुरु के निकट न करने योग्य कार्य**
- : -: गुरु के निकट व्यर्थ की गपशप नहीं करना चाहिए।
- : -: गुरु के निकट किसी दूसरे की निन्दा नहीं करना चाहिए।
- : -: गुरु से अयतना से मत बोलो।
- : -: गुरु के समक्ष पैर पर पैर रखकर नहीं बैठना चाहिए।
- : -: गुरु के समक्ष छल-कपट नहीं करना चाहिए।
- : -: गुरु के निकट सहारा लेकर नहीं बैठना चाहिए।
- : -: हमेशा गुरु के पीछे चलना चाहिए।
- : -: गुरु से कुछ भी बात नहीं छिपाना चाहिए।
- : -: गुरु के समक्ष किसी प्रकार का भी गर्व नहीं करना चाहिए।
- : -: गुरु जी से हमेशा ऊँची दृष्टि नहीं रखनी चाहिए।

अभक्ष्य वर्णन

जो पदार्थ भक्षण करने/खाने योग्य नहीं होते हैं, उन्हें अभक्ष्य कहते हैं। इसके पाँच भेद हैं-त्रस हिंसाकारक, बहुस्थावर हिंसाकारक, प्रमादकारक, अनिष्ट और अनुपसेव्य।

1. जिस पदार्थ के खाने से त्रस जीवों का घात होता है उसे त्रसहिंसाकारक अभक्ष्य कहते हैं। जैसे-पंच उदम्बर फल, घुना अन्न, अमर्यादित वस्तु जिनमें बरसात में फफूंदी लग जाती है ऐसी कोई भी खाने की चीजें, चौबीस घण्टे के बाद मुरब्बा, अचार, बड़ी, पापड़ और द्विदल आदि के खाने से त्रस जीवों का घात होता है। दूध में या दूध से बने हुए दही में दो दाल वाले मूंग, उड़द, चना आदि की बनी चीज मिलाने से द्विदल बनता है।

2. जिस पदार्थ के खाने से अनन्त स्थावर जीवों का घात होता है, उसे स्थावरहिंसाकारक अभक्ष्य कहते हैं। जैसे-प्याज, लहसन, आलू, गाजर, मूली आदि कंदमूल तथा तुच्छ फल खाने से अनन्त स्थावर जीवों का घात होता है।

3. जिसके खाने से प्रमाद या विकार बढ़ता है वे प्रमादकारक अभक्ष्य हैं। जैसे-शराब, भाँग, तम्बाकू, गाँजा और अफीम आदि नशीली चीजें। ये स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक हैं।

4. जो पदार्थ भक्ष्य होने पर भी अपने लिए हितकर न हों वे अनिष्ट हैं। जैसे-शीतज्वर वाले को हलुआ एवं जुकाम वाले को दही, लस्सी आदि ठण्डी चीजें हितकर नहीं हैं।

5. जो पदार्थ सेवन करने योग्य न हों वे अनुपसेव्य हैं। जैसे-लार, मूत्र आदि पदार्थ

विस्तार से अभक्ष्य के बाईस भेद भी हैं-

ओला घोर बड़ा निशि भोजन, बहुबीजा बैंगन संधान।
बड़, पीपर, ऊमर, कठऊमर, पाकर फल जो होय अजान।।
कंदमूल माटी विष आमिष, मधु माखन अरु मदिरापन।
फल अतितुच्छ-तुषार चलित रस, ये बाईस अभक्ष्य बखान।।

अर्थात् ओला, दहीबड़ा, रात्रि भोजन, बहुबीजा, बैंगन, अचार (चौबीस घण्टे बाद का), बड़, पीपल, ऊमर, कठूमर, पाकर, अजानफल (जिसको हम पहचानते नहीं ऐसे कोई फल, पत्ते आदि), कंदमूल, (मूली-गाजर आदि जमीन के भीतर लगने वाले), मिट्टी, विष (शंखिया, धतूरा आदि), आमिष-मांस, शहद, मक्खन, मदिरा, अतितुच्छ फल (जिसमें बीज नहीं पडे हों ऐसे बिल्कुल कच्चे छोटे-छोटे फल), तुषार-बर्फ और चलित रस (जिनका स्वाद बिगड़ जाये ऐसे फटे हुए दूध आदि) ये सब अभक्ष्य हैं।

दही बिलोने के बाद मक्खन को निकाल कर 48 मिनट के अंदर ही गर्म कर लेना चाहिए अन्यथा वह अभक्ष्य हो जाता है। अथवा कच्चे दूध से भी जो यन्त्र से मक्खन निकाला जाता है उसमें भी कच्चे दूध की मर्यादा 48 मिनट की ही है। उसी मर्यादा के अन्दर मक्खन निकाल कर जल्दी से गर्म करके घी बना लेना चाहिए।

बाजार की बनी हुई चीजों में मर्यादा का विवेक न रहने से और अनछने जल आदि से बनाई जाने से सब अभक्ष्य हैं। अर्क, आसव (शीरा), शर्बत आदि भी अभक्ष्य हैं। चमड़े में रखे घी, हींग, पानी आदि भी अभक्ष्य हैं। इसलिए इन अभक्ष्यों का त्याग कर देना चाहिए।

पञ्च-मंगल पाठ

पणविवि पंच परमगुरु, गुरु जिन शासनो ।
सकल-सिद्धि-दातार सुविघन-विनाशनो ॥
सारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकाशनो ।
मंगल कर चउ-संघहि पाप-पणासनो ॥
पापहिं पणासन गुणहिं गरुवा, दोष अष्टादश-रहिउ ।
धरि ध्यान कर्म विनाश केवलज्ञान अविचल जिन लहिउ ॥
प्रभु पंचकल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं ।
त्रैलोक्यनाथ सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥1॥

1- गर्भकल्याणक

जाके गर्भकल्याणक धनपति आइयो ।
अवधिज्ञान-परवान सु इंद्र पठाइयो ॥
रचि नव बारह जोजन, नयरि सुहावनी ।
कनक-रयण-मणि-मंडित, मन्दिर अति बनी ॥
अति बनी पौरि पगारि परिखा, सुवन उपवन सोहये ।
नर नारि सुन्दर चतुर भेख सु, देख जन मन मोहये ॥
तहं जनकगृह छह मास प्रथमहिं, रतन-धारा बरसियो ।
पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा करहिं सबविधि हरसियो ॥2॥

सुरकुंजर-सम-कुंजर, धवल धुरंधरो ।
केहरि-केशर-शोभित, नख-सिख सुन्दरो ॥
कमला-कलस-न्हवन, दुइ दाम सुहावनी ।
रवि-ससि-मंडल मधुर, मीन जुग पावनी ॥

पावनि कनक-घट-जुगम पूरण, कमल-कलित सरोवरो ।
कल्लोल-माला-कुलित-सागर सिंहपीठ मनोहरो ॥
रमणीक अमर विमान फणिपति-भवन, भुवि छवि छाजई ।
रुचि रतन रासि दिपंत, दहन सु तेजपुंज विराजई ॥3॥
ये सखि सोलह सुपने सूती सयनही ।
देखे माय मनोहर, पश्चिम रयनही ॥
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो ।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहं भासियो ॥
भासियो फल तिहिं चिंत दम्पति परम आनन्दित भये ।
छहमास परि नवमास पुनि तहं, रयन दिन सुखसों गये ॥
गर्भावतार महत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।
भणि रूपचन्द सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं ॥4॥

2-जन्मकल्याणक

मति-श्रुत-अवधि-विराजित, जिन जब जन्मियो ।
तिहुँलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो ॥
कल्पवासि घर घंट अनाहद वज्जियो ।
जोतिष-घर हरिनाद, सहज गल गज्जियो ॥
गज्जियो सहजहिं संख भावन, भुवन सबद सुहावने ।
वितर-निलय पटु पटहिं वज्जिय, कहत महिमा क्यों बने ॥
कंपित सुरासन अवधिबल जिन-जनम निहचैं जानियो ।
धनराज तब गजराज मायामयी निरमय आनियो ॥5॥
जोजन लाख गयंद, वदन सौ निरमये ।
वदन वदन वसु दंत, दंत सर संठये ॥

सर सर सौ-पनवीस, कमलिनी छाजहीं।
 कमलिनि कमलिनि कमल पचीस विराजहीं॥
 राजहीं कमलिनि कमल, अठोतर सौ मनोहर दल बने।
 दल दलहिं अपछर नटहिं नवरस, हाव भाव सुहावने॥
 मणि कनक-किंकाणि वर विचित्र सु अमर-मण्डप सोहये।
 घन घंट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये॥6॥
 तिहिं करि हरि चढ़ि आयउ सुर-परिवारियो।
 पुरहिं प्रदच्छन दे त्रय, जिन जयकारियो॥
 गुप्त जाय जिन-जननिहिं, सुखनिद्रा रची।
 मायामई शिशु राखि तौ, जिन आन्यो सची॥
 आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न हूजिये।
 तब परम हरषित हृदय हरिने सहस लोचन पूजिये।
 पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इन्द्र, उछंग धरि प्रभु लीनऊ।
 ईशान इन्द्र सुचन्द्र छवि सिर, छत्र प्रभु के दीनऊ॥7॥
 सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुइ ढारहीं।
 शेष शक्र जयकार, शब्द उच्चारहीं॥
 उच्छव-सहित चतुरविधि सुर हरषित भये।
 जोजन सहस निन्यानवै, गगन उलंघि गये॥
 लाँघि गये सुरगिरि जहाँ पाण्डुक, वन विचित्र विराजहीं।
 पांडुक-शिला तहँ अर्द्धचन्द्र समान, मणि छवि छाजहीं॥
 जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊँची गनी।
 वर अष्ट-मंगल-कनक कलशनि सिंहपीठ सुहावनी॥8॥

रचि मणिमंडप शोभित, मध्य सिंहासनो।
 थाप्यो पूरब मुख तहँ प्रभु कमलासनो॥
 बाजहिं ताल मृदंग, वेणु वीणा घने।
 दुंदुभि प्रमुख मधुर धुनि, अवर जु बाजने॥
 बाजने बाजहिं सची सब मिल, धवल मंगल गावहीं।
 पुनि करहिं नृत्य सुरांगना, सब देव कौतक धावहीं॥
 भरि छीरसागर जल जु हाथहिं हाथ सुरगिरि ल्यावहीं।
 सौधर्म अरु ईशान इन्द्र सु कलश ले प्रभु न्हावहीं॥9॥
 वदन उदर अवगाह, कलशगत जानिये।
 एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिये॥
 सहस-अठोतर कलसा, प्रभु के सिर ढरे।
 पुनि सिंगार प्रमुख, आचार सबै करे॥
 करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहिं दयो।
 धनपतिहि सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो॥
 जन्माभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
 भणि रूपचन्द सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं॥10॥

3-तपकल्याणक

श्रम-जल-रहित शरीर, सदा सब मल-रहिउ।
 छीर वरन वर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ॥
 प्रथम सार संहनन, सरूप विराजहीं।
 सहज सुगंध सुलच्छन मंडित छाजहीं॥

छाजहिं अतुल बल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने ।
 दस सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने ॥
 आबाल काल त्रिलोकपति मन-रुचिर उचित जु नित नये ।
 अमरोपनीत पुनीत अनुपम सकल भोग विभोगये ॥
 भव-तन-भोग-विरत्त, कदाचित चिंतए ।
 धन-यौवन पिय पुत्त, कलित अनित्तए ॥
 कोउ न सरन मरन दिन, दुःख चहुँगति भरयो ।
 सुखदुख एकहि भोगत, जिय विधि-वसि परयो ॥
 पर्यो विधि वस आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो ।
 तन असुचि परतैं होय आस्रव, परिहरे तैं संवरो ॥
 निरजरा तपबल होय समकित, बिन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो ।
 दुर्लभ विवेक बिना न कबहू, परम धरम विषैं रम्यो ॥12॥
 ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया ।
 लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया ॥
 कुसुमांजलि दे चरण, कमल सिर नाइया ।
 स्वयंबुद्ध प्रभु थुतिकर, तिन समुझाइया ॥
 समुझाय प्रभु को गये निजपुर, पुनि महोच्छव हरि कियो ।
 रुचि रुचिर चित्र विचित्र सिविका कर सुनन्दन वन लियो ॥
 तहँ पंचमुट्ठी लोंच कीनों, प्रथम सिद्धनि नुति करी ।
 मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर सकल परिग्रह परिहरी ॥13॥
 मणि-मय-भाजन केश परिट्ठिय सुरपती ।
 छीर-समुद्र-जल खिप करि, गयो अमरावती ॥

तप-संयम-बल प्रभु को, मनपरजय भयो ।
 मौन सहित तप करत, काल कछु तहँ गयो ॥
 गयो कछु तहँ काल तपबल, रिद्धि वसुविधि सिद्धिया ।
 जसु धर्मध्यान-बलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया ॥
 खिपि सातवें गुण जतन बिन तहँ, तीन प्रकृति जु बुधि बढिउ ।
 करि करण तीन प्रथम सुकल-बल, खिपक-सेनी प्रभु चढिउ ॥14॥
 प्रकृति छतीस नवे, गुण-थान विनासिया ।
 दसवें सूक्ष्म लोभ, प्रकृति तहँ नासिया ॥
 सुकल ध्यानपद दूजो, पुनि प्रभु पूरियौ ।
 बारहवें-गुण सोलह, प्रकृति जु चूरियौ ॥
 चूरियौ त्रेसठ प्रकृति इह विधि, घातिया-करमनि तणी ।
 तप कियो ध्यान-पर्यन्त बारह-विधि त्रिलोक-सिरोमणी ।
 निःक्रमण-कल्याणक सु महिमा सुनत सब सुख पावहीं ।
 भणि रूपचन्द सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥15॥
 4-ज्ञानकल्याणक
 तेरहवें गुणथान सयोगि जिनेसुरो ।
 अनंत-चतुष्टय-मंडित, भयो परमेसुरो ॥
 समवसरन तब धनपति बहु-विधि निरमयो ।
 आगम-जुगति प्रमान, गगन-तल परिठयो ॥
 परिठयो चित्र विचित्र मणिमय, सभा मण्डप सोहये ।
 तिहिमध्य बारह बने कोठे, कनक सुरनर मोहये ॥
 मुनि कल्प-वासिनि अरजिका, पुन ज्योति-भौमी-व्यन्तर-तिया ।
 पुनि भवन-व्यन्तर नभग सुर नर पसुनि कोठे बेठिया ॥16॥

मध्यकुटी तीन, मणिपीठ जहाँ बने।
 गंधकुटी सिंहासन, कमल सुहावने॥
 तीन छत्र सिर सोहत त्रिभुवन मोहए।
 अन्तरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए॥
 सोहये चौसठ चमर दुरत, अशोक-तरु-तल छाजए।
 पुनि दिव्यधुनि प्रति-सबद-जुत तहँ, देव दुंदुभि बाजए॥
 सुर-पुहुपवृष्टि सुप्रभा-मण्डल, कोटि रवि छवि छाजये।
 इमि अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजये॥17॥
 दुइसै जोजन मान सुभिच्छ चहँ दिसी।
 गगन-गमन अरु प्राणी-वध नहिं अह-निसी॥
 निरुपसर्ग निराहार, सदा जगदीश ए।
 आनन चार चहँदिसि सोभित दीसए॥
 दीसय असेस विसेस विद्या, विभव वर ईसुरपना।
 छाया-विवर्जित सुद्ध फटिक समान तन प्रभु का बना॥
 नहिं नयन-पलक-पतन कदाचित् केश नख सम छाजहिं।
 ये घातिया छय-जनित अतिशय, दस विचित्र विराजहीं॥18॥
 सकल अरथमय मागधि-भाषा जानिए।
 सकल जीवगत मैत्री-भाव बखानिए॥
 सकल रितुज फलफूल, वनस्पति मन हरै।
 दरपन-सम मनि अवनि, पवन-गति अनुसरै॥
 अनुसरै, परमानन्द सबको, नारि नर जे सेवता।
 जोजन प्रमान धरा सुमार्जहिं, जहाँ मारुत देवता॥

पुन करहिं मेघकुमार गंधोदक सुवृष्टि सुहावनी।
 पद कमल तर सुर खिपहिं कमल सु धरणि ससि-सोभा बनी॥19॥
 अमल-गगन-तल अरु दिसि, तहँ अनुहारहीं।
 चतुर-निकाय देवगण, जय जयकारहीं॥
 धर्मचक्र चलै आगैं, रवि जहँ लाजहीं।
 पुनि भृंगार-प्रमुख, वसु मंगल राजहीं॥
 राजहीं चौदह चारु अतिशय, देव रचित सुहावने।
 जिनराज केवलज्ञान महिमा, अवर कहत कहा बने॥
 तब इन्द्र आय कियो महोच्छव, सभा सोभा अति बनी।
 धर्मोपदेश दियो तहाँ, उच्चरिय वानी जिनतनी॥20॥
 छुधा तृषा अरु राग, रोष असुहावने।
 जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने॥
 रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घनी।
 खेद स्वेद मद मोह, अरति चिंता गनी॥
 गनिये अठारह दोष तिनकरि रहित देव निरंजनो।
 नव परम केवललब्धि मंडिय सिव-रमनि-मनरंजनो॥
 श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
 भणि रूपचन्द सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥21॥
 5-निर्वाण कल्याणक
 केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो।
 भव्यनि प्रति उपदेश्यो, जिनवर तारिसो॥
 भव-भय-भीत भविकजन, सरणै आइया।
 रत्नत्रय-लच्छन सिवपंथ लगाइया॥

लगाइया पंथ जु भव्य पुनि प्रभु तृतीय सुकल जु पूरियो।
तजि तेरवां गुणथान जोग अजोगपथ पग धारियो।।
पुनि चौदहें चौथे सुकल बल बहत्तर तेरह हती।
इमि घाति वसुविधि कर्म पहुँच्यो, समय में पंचम गती।।22।।

लोकसिखर तनुवात, वलयमहँ संठियो।
धर्मद्रव्य बिन गमन न, जिहि आगैं कियो।।

मयन-रहित मूषोदर, अंबर जारिसो।

किमपि हीन निज तनुतैं, भयो प्रभु तारिसो।।
तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थ पर्जय छनछयी।
निश्चयनयेन, अनंतगुण, विवहार नय वसु-गुणमयी।।
वस्तुस्वभाव विभावविरहित, सुद्ध परिणति परिणयो।
चिदरूप परमानंद मंदिर, सिद्ध परमात्म भयो।।23।।

तनु-परमाणु दामिनि-वत, सब खिरगए।

रहे, शेष नखकेश-रूप, जे परिणए।।

तब हरिप्रमुख चतुरविधि, सुरगण शुभ सच्यो।

मायामयि नखकेश-रहित, जिनतनु रच्यो।।

रवि अगरचंदन प्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो।
पदपतित अगनिकुमार मुकुटानल, सुविध संस्कारियो।।
निर्वाण कल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि रूपचन्द सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं।।24।।

मैं मतिहीन भगतिवस, भावन, भाइया।

मंगल गीतप्रबन्ध, सु जिनगुण गाइया।।

जो नर सुनहि बखानहिं सुर धरि गावहीं।
मनवांछित फल सो नर, निहचै पावहीं।।
पावहीं आठो सिद्धि नवनिध, मन प्रतीत जो लावहीं।
भ्रम भाव छूटैं सकल मन के निज स्वरूप लखावहीं।।
पुनिहरहिं पातक टरहिं विघन सु होंहिं मंगल नित नये।
भणि रूपचन्द त्रिलोकपति, जिनदेव चउ-संघहिं जये।।25।।

जलाभिषेक वा प्रक्षाल पाठ

(प्रक्षाल करते समय पढ़ना चाहिये)

जय जय भगवंते सदा, मंगल मूल महान।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमौ जोरि जुगपान।।

(ढाल मंगल को, छंद अडिल्ल और गीता)

श्री जिन जग में ऐसो को बुधवंत जू।
जो तुम गुण वरननि करि पावै अंत जू।।
इंद्रादिक सुर चार ज्ञानधारी मुनी।

कहि न सकै तुम गुणगण है त्रिभुवनधनी।।

अनुपम अमित तुम गुणनि-वारिधि, ज्यों अलोकाकाश है।
किमि धरैं हम उर कोष में सौ अकथ-गुण-मणि-राश है।।
पै निजप्रयोजन सिद्धि की तुम नाम में ही शक्ति है।
यह चित्त में सरधान यातैं नाम ही में भक्ति है।।1।।

ज्ञानावरणी दर्शन, आवरणी भने।

कर्म मोहनी अन्तराय चारों हने।।

लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञान में।

इंद्रादिकके मुकुट नये सुरथान में।।

तब इन्द्र जान्यो अवधितैं, उठि सुरन-युत बंदत भयो।
 तुम पुन्यको प्रेयो हरी हवै मुदित धनपतिसौं चयो॥
 अब वेगि जाय रचौ समवसृति सफल सुरपदको करौ।
 साक्षात् श्री अरहंत के दर्शन करौ कल्मष हरौ॥2॥
 ऐसे वचन सुने सुरपति के धनपति।
 चल आयो तत्काल मोद धारे अती॥
 वीतराग छबि देखि शब्द जय जय चयौ।
 दे प्रदच्छिना बार-बार वंदत भयौ॥
 अति भक्ति-भीनी नम्र-चित हवै समवशरण रच्यौ सही।
 ताकी अनुपम शुभ गतीको, कहन समरथ कोउ नहीं॥
 प्राकार तोरण सभामंडप कनक मणिमय छाजहीं।
 नग-जड़ित गंधकुटी मनोहर मध्यभाग विराजहीं॥3॥
 सिंहासन तामध्य बन्यौ अद्भुत दिपै।
 तापर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै॥
 तीनछत्र सिर शोभित चौसठ चमर जी।
 महा भक्तियुत ढोरत हैं तहाँ अमरजी॥
 प्रभु तरन तारन कमल ऊपर, अन्तरीक्ष विराजिया।
 यह वीतराग दशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया॥
 मुनि आदि द्वादश सभा के भविजीव मस्तक नायकें।
 बहुभांति बारंबार पूजैं, नमैं गुणगण गायकें॥4॥
 परमौदारिक दिव्य देह पावन सही।
 क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं॥

जन्म जरामृति अरति शोक विस्मय नसे।
 राग रोष निद्रा मद मोह सबैं खसे॥
 श्रमबिना श्रमजलरहित पावन अमल ज्योति-स्वरूपजी।
 शरणागतनि की अशुचिता हरि, करत विमल अनूपजी॥
 ऐसे प्रभु की शान्तमुद्रा को न्हवन जलतैं करैं।
 जस भक्तिवश मन उक्ति तैं हम भानु ढिग दीपक धरैं॥5॥
 तुम तौ सहज पवित्र यही निश्चय भयो।
 तुम पवित्रता हेत नहीं मज्जन ठयो॥
 मैं मलीन रागादिक मलतैं हवै रह्यो।
 महा मलिन तन में वसु-विधि-वश दुख सह्यो॥
 बीत्यो अनंतों काल यह मेरी अशुचिता ना गई।
 तिस अशुचिता-हर एक तुम ही, भरहु बांछा चित ठई।
 अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोष-रागादिक हरौ।
 तनरूप कारा-गेहतैं उद्धार शिव वासा करौ॥6॥
 मैं जानत तुम अष्टकर्म हरि शिव गये।
 आवागमन विमुक्त राग-वर्जित भये॥
 पर तथापि मेरो मनोरथ पूरत सही।
 नय-प्रमानतैं जानि महा साता लही॥
 पापाचरण तजि न्हवन करता चित्त में ऐसे धरूँ।
 साक्षात् श्रीअरहंत का मानो न्हवन परसन करूँ॥
 ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंध तैं।
 विधि अशुभ नसि शुभबंधते हवै शर्म सब विधि तासतैं॥7॥

पावन मेरे नयन, भये तुम दरसतैं।
 पावन पानि भये तुम चरननि परसतैं॥
 पावन मन ह्वै गयो तिहारे ध्यानतैं।
 पावन रसना मानी, तुम गुण गानतैं॥
 पावन भई परजाय मेरी, भयौ मैं पूरण-धनी।
 मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी पूर्ण भक्ति नहीं बनी॥
 धन धन्य ते बड़भागि भवि तिन नींव शिव-घरकी धरी।
 वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुंभ भर भक्ती करी॥८॥
 विघन सघन-वन-दाहन-दहन प्रचंड हो।
 मोह-महा-तम-दलन प्रबल मारतण्ड हो॥
 ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि संज्ञा धरो।
 जग-विजयी जमराज नाश ताको करो॥
 आनन्द-कारण दुख-निवारण, परम-मंगल मय सही।
 मोसो पतित नहिं और तुमसो, पतित-तार सुन्यौ नहीं॥
 चिंतामणी पारस कल्पतरु, एक भव सुखकार ही।
 तुम भक्ति-नवका जे चढ़े, ते भये भवदधि-पार ही॥९॥
 दोहा
 तुम भवदधितैं तरि गये, भये निकल अविचार ।
 तारतम्य इस भक्ति को, हमैं उतारो पार॥१०॥
 ॥ इति हरजसराय कृत अभिषेक पाठ॥

मंगलपञ्चकम्

गुण-रत्न-भूषा विगत-दूषाः, सौम्य-भाव-निशा-कराः,
 सद्बोध-भानु-विभा-विभा-सित,-दिक्चया विदुषां वराः।
 निःसीम-सौख्य-समूह-मण्डित,-योग-खण्डित-रतिवराः,
 अर्हन्त इह कुर्वन्तु मंगल,-मत्र वीर-जिनेश्वराः॥१॥
 सद्ध्यान-तीक्ष्ण-कृपाण-धारा,-निहत-कर्म-कदम्बकाः,
 देवेन्द्र-वृन्द-नरेन्द्र-वन्द्याः, प्राप्त-सुख-निकुरम्बकाः।
 योगीन्द्र-योग-निरूपणीयाः, प्राप्त-बोध-कलापकाः,
 कुर्वन्तु मंगलमत्र ते, सिद्धाः सदा सुखदायकाः॥२॥
 आचार-पंचक-चरण-चारण,-चुंचवः समता-धरा,
 नाना-तपो-भर-हेतु-हापित,- कर्मकाः सुखता-कराः।
 गुप्ति-त्रयी-परि-शील-नादि,-विभूषिता वदतां वराः,
 कुर्वन्तु मंगल-मत्र ते, श्रीसूरयोऽर्जित-शंभराः॥३॥
 द्रव्यार्थ-भेद-विभिन्न-श्रुतभर,-पूर्ण-तत्त्वनिभालिनो,
 दुर्योग-योग-निरोध-दक्षाः, सकल-वर-गुण-जालिनः।
 कर्तव्य-देशन-तत्परा, विज्ञान-गौरव-शालिनः,
 कुर्वन्तु मंगल-मत्र ते, गुरु-देव-दीधिति-मालिनः॥४॥
 संयम-समित्या-वश्यक,- परिहाणि-गुप्ति-विभूषिताः,
 पंचाक्ष-दान्ति-समुद्यताः, समता-सुधा-परि-भूषिताः।
 भूपृष्ठ-विष्टर-शायिनो, विविधार्द्धि-वृन्द-विभूषिताः,
 कुर्वन्तु मंगल-मत्र ते, मुनयः सदा शम-भूषिताः॥५॥

प्राकृत सिद्ध-भक्ति

असरीरा जीवघणा, उवजुत्ता दंसणेय णाणेय।
सायार-मणायारा, लक्खणमेयं तु सिद्धाणं॥1॥
मूलोत्तर-पयडीणं, बंधोदयसत्त-कम्म-उम्मुक्का।
मंगलभूदा सिद्धा, अट्ठगुणा तीदसंसारा॥2॥
अट्ठ-वियकम्म वियला, सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठगुणा किदकिच्चा, लोयग्गणिवासिणो सिद्धा॥3॥
सिद्धा-णट्ठट्ठ-मला, विसुद्ध बुद्धीय लद्धि सग्गवावा।
तिहुअण सिरसे हरया, पसियंतु भडारया सव्वे॥4॥
गमणागमण-विमुक्के, विहडिय-कम्म-पयडि संधारा।
सासह सुह संपत्ते, ते सिद्धा वंदियो णिच्चं॥5॥
जय मंगल-भूदाणं, विमलाणं णाणदंसणमयाणं।
तइलोइसेहराणं, णमो सदा सव्व-सिद्धाणं॥6॥
सम्मत्त-णाण- दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवग्गहणं।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं॥7॥
तव सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमंसामि॥8॥

इच्छामि भंते ! सिद्धभक्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-
सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविहकम्म-विष्ण-मुक्काणं, अट्ठगुण-
संपण्णाणं, उड्ढलोय- मत्थयम्मि पयट्ठयाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं,
संजमसिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीदा-णागद-वट्ठमाण-कालत्तय-
सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अंचेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमंसामि,
दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं,
जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

श्री मंगलाष्टक-स्तोत्रम्

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र महिताः, सिद्धाश् च सिद्धीश्वरा,
आचार्या जिन-शास-नोन् नति-कराः, पूज्या उपाध्यायकाः।
श्रीसिद्धान्त-सुपाठका मुनिवरा, रत्नत्रया-राधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥1॥
श्रीमन् नम्र-सुरा-सुरेन्द्र-मुकुट-, प्रद्योत-रत्नप्रभा,
भास्वत्-पाद-नखेन्-दवः प्रवचनाम्, भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिन-सिद्ध-सूर्यनुगतास्, ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश् च पञ्च गुरवः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥2॥
सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्त-ममलं, रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्री नगराधि-नाथ-जिनपत्, युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्ति-सुधा च चैत्यमखिलं, चैत्यालयः श्रालयः,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विध-ममी, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥3॥
नाभेयादि - जिनाः प्रशस्त-वदनाः, ख्याताश् चतुर्विंशतिश्,
श्रीमन्तो भरतेश्वर-प्रभृतयो, ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु-प्रतिविष्णु-लांगल-धराः, सप्तोत्तरा विंशतिस्,
त्रैकाल्ये प्रथितास् त्रिषष्टि-पुरुषाः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥4॥
ये सर्वौषधि-ऋद्धयः सुतपसां, वृद्धिगताः पञ्च ये,
ये चाष्टांग-महा-निमित्त-कुशलाश्, चाष्टौ वियच्चारिणः।
पञ्चज्ञान-धरास् त्रयोऽपि बलिनो, ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥5॥
ज्योति-व्यन्तर-भावनामरगृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः,
जम्बूशाल्मलि-चैत्य-शाखिषु तथा, वक्षार-रूप्याद्रिषु।

इष्वाकार-गिरौ च कुण्डल-नगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिन-गृहाः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥६॥

कैलासे वृषभस्य निर्वृति-मही, वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जनपतेः, सम्मेद-शैलेर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे, नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्ध-विभवाः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥७॥

सर्पोहार-लताभवत्यसिलता, सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि-, प्रीतिं विधत्ते रिपुः।
देवा यान्ति वशं प्रसन्न मनसः, किं वा बहुब्रूमहे,
धर्मा देव-नभोऽपि वर्षति नगैः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥८॥

यो गर्भाव-तरोत्सवो भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवल-ज्ञान-भाक्।
यः कैवल्य-पुर-प्रवेश-महिमा, सम्पादितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥९॥

इत्थं श्रीजिन-मंगलाष्टक-मिदं, सौभाग्य-सम्पत्करम्,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्, तीर्थकराणामुषः।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश् च सुजनैर्-, धर्मार्थ-कामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय-रहिता, निर्वाण-लक्ष्मी-रपि॥१०॥

.....॥ इति श्रीमंगलाष्टक-स्तोत्रम्॥.....

विद्यासागर-विश्व-वन्द्य-श्रमणं, भक्त्या सदा संस्तुवे,
सर्वोच्चं यमिनं विनम्य परमं, सर्वार्थ-सिद्धि-प्रदम्।
ज्ञानध्यान-तपोभि-रक्त-मुनिपं, विश्वस्य विश्वाश्रयं,
साकारं श्रमणं विशाल-हृदयं, सत्यं शिवं सुन्दरम्॥

जल शुद्धि मंत्र - ॐ हां हीं हूं हौं हः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पद्म-महापद्म-
तिगिंछ-केसरी-पुण्डरीक-महापुण्डरीक-गंगासिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्-
धरिकान्ता-सीतासीतोदा-नारी-नरकान्ता-सुवर्ण-कूला-रूप्यकूला- रक्ता-रक्तोदा-
क्षीराम्भोनिधि-शुद्धजलं सुवर्णघटं प्रक्षालित-परिपूरितं नवरत्न-गंधाक्षत-पुष्पार्चितं
ममोदकं पवित्रं कुरु कुरु झं झं झ्रौं झ्रौं वं वं मं मं हं हं क्षं क्षं लं लं पं पं
द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा।

हस्त-प्रक्षालन मंत्र - ॐ ह्रीं असुजर सुजर भव स्वाहा हस्त-प्रक्षालनं
करोमि।

अमृत स्नान मंत्र - ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षणि अमृतं स्रावय
स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं हं इवीं क्ष्वीं
हं सः स्वाहा।

तिलककरण मंत्र -

पात्रेऽर्पितं चन्दन-मौषधीशं, शुभ्रं सुगन्धाहत-चञ्चरीकम्।
स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्य, न केवलं देहविकारहेतोः॥

ॐ हां हीं हूं हौं हः अ सि आ उ सा नमः मम यजमानस्य
सर्वांगशुद्धिहेतवः नवतिलकं करोम्यहम्।

नवस्थान - 1. शिखा, 2. मस्तक, 3. ग्रीवा, 4. हृदय, 5. दोनों भुजायें, 6.
पीठ, 7. कान, 8. नाभि, 9. हाथ।

दिग्बन्धन विधि

पूर्वदिशा में - ॐ हां, णमो अरिहंताणं, हां, पूर्वदिशा-समागतान्
विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

आग्नेयदिशा में - ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं आग्नेयदिशा-समागतान्
विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

दक्षिणदिशा में - ॐ हूं णमो आइरियाणं हूं दक्षिणदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

नैऋत्यदिशा में - ॐ हौं णमो उवज्झायाणं हौं नैऋत्यदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

पश्चिमदिशा में - ॐ हः णमो लोए सव्वसाहूणं हः पश्चिमदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

वायव्यदिशा में - ॐ हां णमो अरिहंताणं हां वायव्यदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

उत्तरदिशा में - ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं उत्तरदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

ऐशानदिशा में - ॐ हूं णमो आइरियाणं हूं ऐशानदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

अधोदिशा में - ॐ हौं णमो उवज्झायाणं हौं अधोदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

ऊर्ध्वदिशा में - ॐ हः णमो लोए सव्वसाहूणं हः ऊर्ध्वदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

सर्वदिशा में - ॐ हां हीं हूं हौं हः णमो अरिहंताणं हां हीं हूं हौं हः सर्वदिशा-समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

सर्व दिशा में रक्षा मंत्र - ॐ हूं क्षूं फट् किरिटि किरिटि, घातय घातय, परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय, सहस्रखण्डान् कुरु कुरु, परमुद्रां छिन्द छिन्द, परमंत्रान् भिन्द भिन्द, क्षां क्षः वाः वाः हूं फट् स्वाहा।

सर्व दिशा में शान्ति मंत्र - ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष-कल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वपाप-प्रणाशनाय सर्वविघ्नविनाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्वपरकृत-क्षुद्रोपद्रव-विनाशनाय सर्वक्षामडामर-विनाशनाय सर्वारिष्ट-शान्तिकराय ॐ हां हीं हूं हौं हः अ सि आ उ सा नमः माम् सर्वशान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं च कुरु कुरु स्वाहा।

पात्र अंग शुद्धि मंत्र -

शोधये सर्व-पात्राणि, पूजार्थानपि वारिभिः।

समाहितो यथाम्नायं, करोमि सकलीक्रियाम्।।

ॐ हां हीं हूं हौं हः नमोऽर्हते श्रीमते पवित्रतर-जलेन पात्रशुद्धिं करोमि स्वाहा।

क्षेत्र आज्ञा एवं भूमि शुद्धि मंत्र - ॐ हां हीं हूं हौं हः जिनगर्भगृह-क्षेत्रे धरित्री - जाग्रतावस्थायां कुरु कुरु स्वाहा।

भूमि शुद्धि मंत्र -

ओं शोधयामि भूभागं, जिनधर्माभिरुत्सवे।

काल-धौतोज्ज्वल-स्थूल, कलशापूर्ण-वारिभिः।।

ॐ ह्रीं नमः सर्वज्ञाय सर्वलोकनाथाय धर्मतीर्थनाथाय परम-पवित्रेभ्यः शुद्धेभ्यः नमः पवित्र-जलेन भूमिशुद्धिं करोमि स्वाहा।

दाहिने हाथ में रक्षा सूत्र बांधने का मंत्र - ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

यज्ञोपवीतधारण मंत्र - ॐ नमः परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्री-करणाय अहं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा।

मंगल कलश में सुपाडी आदि डालने का मंत्र - ॐ ह्रीं अर्हं अ सि
आ उ सा नमः मंगलकलशे पूंगादि-फलादि-प्रभृति-वस्तूनि प्रक्षिपामि
इति स्वाहा।

मंगल कलश के ऊपर श्रीफल रखने का मंत्र - ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षौं
क्षौं क्षः नमो अर्हते भगवते श्रीमते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

मंगल कलश स्थापना का मंत्र -

ॐ श्रीमत् अर्हत् परमेश्वरोप-दिष्ट शिष्टेष्ट-दयामूल-धर्मप्रभावक-
यष्ट-याजक-प्रभृति-भव्यजनानां सद्धर्म-श्री-बलायुः-आरोग्य-ऐश्वर्याभि-
वृद्धिरस्तु। श्रीमज्जनशासने भगवतो महति महावीर-वर्द्धमान-तीर्थकरस्य
धर्मतीर्थे श्रीमूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये मध्यलोके जम्बूद्वीपे सुदर्शन-
मेरोर्दक्षिण-भागे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे ... नगरे विविधालंकार-
मंडित-यज्ञमण्डपे हुण्डाव-सर्पिणी काले दुःखं नाम्नि पंचम-कालयुगे
प्रवर्तमाने वीरनिर्वाणसंवत्सरे मासोत्तममासे ...पक्षे तिथौ....
वासरेजिनप्रतिमायाः सन्निधौ दिगम्बर-जैनाचार्य-शान्ति-वीर-शिव-
ज्ञान-विद्यासागर-परम्परायां मुनि-आर्यिका-श्रावक-श्राविकादि-चतुर्विध-
संघ-सन्निधौ विधानोत्सवे निर्विघ्न-समाप्त्यर्थं क्रिया-शुद्ध्यर्थं, शान्त्यर्थं
पुण्याह-वाचनार्थं नवरत्नगन्ध-पुष्पाक्षतादि-बीजपूरशोभित-शुद्धप्रासुक-
जल-परिपूरित-मंगलकुम्भं मण्डपाग्रे स्वस्त्यै स्थापनं करोमि झं क्ष्वीं हं
सः स्वाहा।

नोट- यह पढ़कर मण्डल के पूर्व-उत्तर कोने में जल, अक्षत, पुष्प,
हल्दी, सुपारी, सवा रुपया, श्रीफल और पुष्प माला सहित मंगलकलश
श्रावक द्वारा स्थापित कराया जावे। इस कलश को पुण्याहवाचन कलश भी
कहते हैं।

दीप स्थापना मंत्र -

रुचिरदीप्तिकरं शुभदीपकं, सकललोक-सुखाकर-मुज्ज्वलम्।
तिमिर-जालहरं प्रकरं सदा, इह धरामि सुमंगलकं मुदा।।
ॐ अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि।

सकलीकरण

ॐ हां गमो अरिहंताणं हां अंगुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ ह्रीं गमो सिद्धाणं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः।
ॐ हूं गमो आइरियाणं हूं मध्यमाभ्यां नमः।
ॐ हौं गमो उवज्झायाणं हौं अनामिकाभ्यां नमः।
ॐ हः गमो लोए सव्वसाहूणं हः कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ॐ हां ह्रीं हूं हौं हः करतलाभ्यां नमः।
ॐ हां ह्रीं हूं हौं हः करपृष्ठाभ्यां नमः।

तदनन्तर-

ॐ हां गमो अरिहंताणं हां मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा।
यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ में शिर का स्पर्श करें।
ॐ ह्रीं गमो सिद्धाणं ह्रीं मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा।
यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से मुख का स्पर्श करें।
ॐ हूं गमो आइरियाणं हूं मम हृदयं रक्ष रक्ष स्वाहा।
यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से हृदय का स्पर्श करें।
ॐ हौं गमो उवज्झायाणं हौं मम नाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा।
यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से नाभि का स्पर्श करें।
ॐ हः गमो लोए सव्वसाहूणं हः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा।
यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से पैरों का स्पर्श करें।
ॐ हां गमो अरिहंताणं हां माम् रक्ष रक्ष स्वाहा।
यह मंत्र पढ़कर अपने शरीर का स्पर्श करें।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वस्त्रं रक्ष रक्ष स्वाहा।

यह मंत्र पढ़कर अपने वस्त्रों का स्पर्श करें।

ॐ हूं णमो आइरियाणं हूं मम पूजाद्रव्यं रक्ष रक्ष स्वाहा।

यह मंत्र पढ़कर अपनी थाली का स्पर्श करें।

ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं ह्रीं मम स्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा।

यह मंत्र पढ़कर अपने खड़े होने की जगह की ओर देखें।

ॐ हः णमो लोए सव्वसाहूणं हः सर्वजगत् रक्ष रक्ष स्वाहा।

यह मंत्र पढ़कर चुल्लू में जल लेकर सब ओर फेंके।

नोट- इस तरह सकलीकरण से अपने शरीर को कवच पहनाकर सम्पूर्ण इष्ट-पूजादि मंत्रादि को करते हुये पूजक किसी भी विघ्न-वाधित नहीं होता है।

सिद्धयंत्र स्थापना मंत्र

मध्ये तेजः ततः स्याद्, बलयमथधनुः, संख्यकोष्ठेषु पञ्च,

पूज्यान्संस्थाप्य वृते, तत उपरितने, द्वादशाम्भोरुहाणि।

तत्र स्यु-मंगलान्युत्तमशरण- पदान्, पञ्चपूज्यामरर्षीन्,

धर्मप्रख्याति भाजः त्रिभुवनपतिना, वेष्टयेदं कुशाढ्याम्।।

ॐ ह्रीं स्नपनपीठे विनायक/सिद्धयंत्रं स्थापनं करोमि स्वाहा।

चारों कोनों पर चार कलश स्थापना मंत्र - ॐ ह्रीं चतुष्कोणेषु
चतुःकलशस्थापनं करोमि।

सिद्धयंत्राभिषेक मंत्र -

स्नात्वा शुभाम्बरधरः कृतयत्नयोगात्,

यन्त्रं निवेश्य शुचि-पीठवरेऽभिषिञ्चेत्।

ॐ भूर्भुवः स्वरिह मंगल-यन्त्रमेतत्,

विघ्नौघ-वारक-महं परिषेचयामि।।

ॐ भूर्भुवः स्वरिह विघ्नौघवारकं यन्त्रं वयं परिषेचयामः।

लघुतम शान्तिधारा

ॐ नमः सिद्धेभ्यः, श्रीवीतरागाय नमः, ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं,
णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए
सव्वसाहूणं। चत्तारि मंगलं - अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं,
केवल्लि पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा - अरिहंत लोगुत्तमा,
सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवल्लि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरिहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं
पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवल्लि-पण्णत्तं धम्मं सरणं
पव्वज्जामि। ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च
कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री वृषभनाथ-तीर्थकराय नमः। ॐ ह्रीं
श्रीपाशर्वनाथजिनेन्द्राय नमः। ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः। ॐ
ह्रीं श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः। ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय नमः।
ॐ ह्रीं सुरगुरुदोषनिवारणाय अष्टजिनेन्द्राय नमः। ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंत-
जिनेन्द्राय नमः। ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय नमः। ॐ ह्रीं
अर्हं अ सि आ उ सा नमः मम सर्वग्रहशान्तिं कुरु कुरु। ॐ ह्रीं
श्रीशान्तिनाथाय नमः मम शान्तिकराय सर्वोपद्रवशान्तिं कुरु कुरु ह्रीं
नमः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कलिकुण्डदण्डस्वामिने नमः आरोग्य-परमैश्वर्यं
कुरु कुरु स्वाहा। ॐ ह्रीं वरे सुवरे अ सि आ उ सा नमः। ॐ हां ह्रीं
हूं ह्रीं हः अ सि आ उ सा नमः सर्वग्रहशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा। ॐ
ह्रीं सकल-रोगहराय श्री सन्मति देवाय नमः। ॐ ह्रीं परमशान्ति-
विधायकाय श्री शान्तिनाथाय नमः।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष-कल्मषाय दिव्यतेजो
मूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वपापप्रणाशनाय सर्वविघ्न-
विनाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय, सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रव-विनाशनाय,
सर्वक्षामडामर-विनाशनाय, सर्वारिष्ट-शान्तिकराय, ॐ हां हीं हूं हौं
हः अ सि आ उ सा नमः माम् सर्वशान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं च कुरु
कुरु। ॐ हीं नमो भगवते चिन्तामणि-पार्श्वनाथ-सप्तफणमंडिताय
श्री धरणेन्द्र-पद्मावती सहिताय मम ऋद्धिं सिद्धिं वृद्धिं सौख्यं कुरु कुरु
स्वाहा। ॐ हीं अर्हं श्री चिन्तामणिपार्श्वनाथाय नमः। ॐ हीं श्रीं अर्हं
नमः। ॐ हीं श्री सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र्येभ्यो नमः। ॐ हीं
अर्हन्मुखकमल-समुद्गताय-उत्तमक्षमा-धर्मांगाय नमः। ॐ हीं श्री दर्शन-
विशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो नमः।

ॐ हूं क्षूं फट् किरिटि किरिटि घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय
स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमंत्रान् भिन्द
भिन्द, क्षां क्षः वाः वाः हूं फट् स्वाहा।

ॐ हीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै नमो
अरहंताणं हौं सर्वशान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं च कुरु कुरु।

तव भक्तिप्रसादात् लक्ष्मीपुर-राज्यगेहपद-भ्रष्ट्रोपद्रव-दारिद्र्योप-
द्रव-स्वचक्र-परचक्रोद्-भवोपद्रव-प्रचण्ड-पवनानल-जलोद्-भवोपद्रव-
शाकिनी-डाकिनी-भूत-पिशाच-कृतोपद्रव-दुर्भिक्ष-व्यापार-वृद्धि-रहित-
उपद्रवाणां विनाशनं भवतु।

सम्पूर्ण-कल्याण-मंगल-रूप-मोक्ष-पुरुषार्थश्च भवतु। लोक-
कल्याणं भवतु स्वाहा।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र - सामान्य - तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः॥

माघनन्दिमुनिकृताभिषेक-पाठः

श्रीमन् - नतामर - शिरस्तट - रत्न - दीप्ति-
तोयाव - भासि - चरणाम्बुज - युग्म - मीशम्।
अर्हन्त - मुन्नत - पद - प्रद - माभि - नम्य,
तन्मूर्ति - षूद्य - दभिषेक - विधिं करिष्ये॥1॥

अथ पौर्वाह्णिक देव-वन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं
भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्रीपंचमहागुरु भक्तिं पुरस्सरं कायोत्सर्गं
करोम्यहम्।

(यह पढ़कर नौ बार नमोकार मन्त्र पढ़ें)

याः कृत्रिमास् तदितराः प्रतिमा जिनस्य,
संस्ना - पयन्ति पुरुहूत - मुखा - दयस्ताः।
सद्भाव - लब्धि - समयादि - निमित्त - योगात्,
तत्रैव - मुज्ज्वल - धिया कुसुमं क्षिपामि॥2॥
जन्मोत्सवादि - समयेषु यदीय कीर्तिम्,
सेन्द्राः सुराप्तमद - वारणगाः स्तुवन्ति।
तस्याग्रतो जिनपतेः परया विशुद्ध्या,
पुष्पाञ्जलिं मलय - जात - मुपाक्षिपेऽहम्॥3॥

(यह पढ़कर थाली में पुष्पाञ्जलि छोड़कर अभिषेक की प्रतिज्ञा करें)

श्रीपीठ - क्लृप्ते विशदाक्ष - तौघैः, श्रीप्रस्तरे पूर्ण-शशांक - कल्पे।
श्रीवर्तके चन्द्रमसीति वार्ता, सत्यापयन्तीं श्रियमालिखामि॥4॥
ॐ हीं अर्हं श्रीकारलेखनं करोमि।

कनकाद्रि - निभं कम्पं, पावनं पुण्य - कारणम्।
स्थापयामि परं पीठं, जिन - स्नपनाय भक्तितः॥5॥

ॐ हीं श्री पीठस्थापनं करोमि।

(यह पढ़कर अभिषेक की थाली में सिंहासन स्थापित करें)

भृंगार - चामर - सुदर्पण - पीठ - कुम्भ, -
ताल - ध्वजा - तप - निवारक - भूषिताग्रे।
वर्धस्व - नन्द - जय - पाठ - पदा - वलीभिः,
सिंहासने जिन भवन्त - महं श्रयामि॥6॥

वृषभादि - सुवीरान्तान्, जन्माप्तौ जिष्णु - चर्चितान्।
स्थापयाम्यभिषेकाय, भक्त्या पीठे महोत्सवम्॥7॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ-भगवन्निह पाण्डुकशिला पीठे सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ।

(यह मंत्र पढ़कर प्रतिमा जी विराजमान करें)

श्रीतीर्थ - कृत्स्न - पन - वर्य - विधौ सुरेन्द्रः,
क्षीराब्धि - वारिभि - रपूरय - दुग्ध - कुम्भान्।
यांस्तादृशा - निव विभाव्य यथार्हणीयान्।
संस्थापये कुसुम - चन्दन - भूषि - ताग्रान्॥8॥

शातकुम्भीय कुम्भौघान्, क्षीराब्धेस् तोयपूरितान्।
स्थापयामि जिनस्नान, चन्दनादि-सुचर्चितान्॥9॥

ॐ ह्रीं चतुःकोणेषु चतुःकलशस्थापनं करोमि।

(यह मन्त्र पढ़कर चार कोनों में चार कलश स्थापित करें)

आनन्द - निर्भर - सुर - प्रमदादि - गानैर्-
वादित्र - पूर - जय - शब्द - कल - प्रशस्तैः।
उद्गीय - मान - जगती - पति - कीर्ति - मेनां,
पीठस्थलीं वसु - विधार्चन - योल्लसामि॥10॥

ॐ ह्रीं स्नपनपीठस्थिताय जिनायार्थं निर्वपामीति स्वाहा।

(यह मन्त्र पढ़कर अर्घ चढ़ावें तथा वादित्र या घण्टा आदि का शब्द करते हुए जय-जयकार करें)

कर्म - प्रबन्ध - निगडै - रपि हीन - ताप्तं,
ज्ञात्वापि भक्ति - वशतः परमादि - देवम्।
त्वां स्वीय - कल्मष - गणोन्मथ - नाय देव,
शुद्धोदकै - रभिनयामि महाभिषेकम्॥11॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अहं वं मं हं सं तं पं वं वं मं हं हं सं सं तं तं पं पं
झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते
पवित्रतर-जलेन जिन-मभिषेचयामि स्वाहा।

तीर्थोत्तम - भवैर्नारैः, क्षीर - वारिधि - रूपकैः।

स्नपयामि - सुजन्माप्तान्, जिनान् सर्वार्थ - सिद्धिदान्॥12॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामि स्वाहा।

(यह पढ़ते हुये कलश से 108 धारा प्रतिमा जी पर छोड़ें)

सकल - भुवन - नाथं तं जिनेन्द्रं सुरेन्द्रै-
रभिषव - विधि - माप्तं स्नातकं स्नापयामः।
य - दधि - षवन - वारां बिन्दु - रेकोऽपि नृणां,
प्रभवति विदधातुं भुक्ति - सन्मुक्ति - लक्ष्मीम्॥13॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अहं वं मं हं सं तं पं वं वं मं हं हं सं सं तं तं पं पं
झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं झं झ्वीं क्ष्वीं हं सः झं वं हः यः
सः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं हां ह्रीं हूं हें हैं हों हौं हं हः ह्रीं द्रां
द्रीं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः इति बृहच्छान्ति मन्त्रेणाभिषेकं करोमि।
(यह पढ़कर चारों कोनों में रखे हुए चार कलशों से अभिषेक करें)

पानीय - चन्दन - स - दक्षत - पुष्प - पुंज-,
नैवेद्य - दीपक - सुधूप - फल - ब्रजेन।

कर्माष्टक - क्रथन - वीर - मनन्त - शक्ति,
 सम्पूजयामि महसा महसां निधानम्॥14॥
 ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते श्रीवृषभादि वीरान्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 हे तीर्थपा निज - यशो - धवली - कृताशाः
 सिद्धौष - धाश्च भव - दुःख - महा - गदानाम्।
 सद् - भव्य - हज् - जनित - पंक - कबन्ध - कल्पा,
 यूयं जिनाः सतत - शान्तिकरा भवन्तु॥15॥

(यह पढ़कर शान्ति के लिए पुष्पांजलि छोड़ें)

नत्वा मुहुर्निज - करै - रमृतोप - मेयैः,
 स्वच्छै-र्जिनेन्द्र तव चन्द्र - करा - वदातैः।
 शुद्धांशुकेन विमलेन नितान्तरम्ये,
 देहे स्थितान् जल - कणान् परिमार्जयामि॥16॥

ॐ ह्रीं अमलांशुकेन जिनबिम्बमार्जनं करोमि।

(यह मंत्र पढ़कर शुद्ध और स्वच्छ वस्त्र से प्रतिमा जी को पोंछें)

स्नानं विधाय भवतोऽष्ट - सहस्र - नाम्ना-
 मुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धिम्।
 जिघृक्षु - रिष्ट - मिन तेऽष्ट - तयीं विधातुं,
 सिंहासने विधि - वदत्र निवेशयामि॥17॥

(यह मंत्र पढ़कर प्रतिमा को सिंहासन पर विराजमान करें)

जल - गन्धाक्षतैः पुष्पैश्च, चरु - दीप - सुधूपकैः।
 फलै - रघै - र्जिन - मर्चेज्, जन्म - दुःखाप - हानये॥18॥

ॐ ह्रीं पीठस्थित जिनायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर अर्घ चढ़ावें)

नत्वा परीत्य निज - नेत्र - ललाट - योश्च
 व्यातु - क्षणेन हरता - दघ - संचयं मे।
 शुद्धोदकं जिनपते तव पाद - योगाद्,
 भूयाद् भवातप - हरं धृत - मादरेण॥19॥

मुक्तिश्री - वनिता - करोदक - मिदं, पुण्यांकुरोत्पादकं,
 नागेन्द्र - त्रि - दशेन्द्र - चक्र - पदवी, - राज्याभि - षेकोदकम्।
 सम्यग्ज्ञान - चरित्र - दर्शन - लता, - संवृद्धि - संपादकं
 कीर्तिश्री जय साधकं तव जिन - स्नानस्य गन्धोदकम्॥20॥

(यह पढ़कर गन्धोदक सिर पर लगावें)

इमे नेत्रे जाते सुकृत - जल - सित्ते - सफलिते
 ममेदं मानुष्यं कृति - जन - गणा - देय - मभवत्।
 मदीयाद् - भल्लाटा - दशुभ - तर - कर्माटन - मभूत्
 सदेदृक् - पुण्यार्ह - मम भवतु ते पूजन - विधौ॥21॥

जिनेन्द्र-स्नपन विधि (अभिषेक पाठ)

नीचे लिखा श्लोक पढ़कर जिनेन्द्रदेव के चरणों में पुष्पांजलि क्षेपण करना।

श्रीमज् - जिनेन्द्र - मभि - वन्द्य जगत् - त्रयेशं,
 स्याद्वाद - नायक - मनन्त - चतुष्ट - यार्हम्।
 श्री - मूलसंघ - सुदृशां सुकृतैक - हेतुर्,
 जैनेन्द्र - यज्ञ - विधि - रेष मयाभ्य - धायि॥1॥

ॐ ह्रीं क्ष्वीं भूः स्वाहा स्नपन-प्रस्तावनाय पुष्पांजलि क्षेपेत्॥

(निम्नलिखित श्लोक पढ़कर यज्ञोपवीत, माला, मुदरी, कंगन और मुकुट धारण करना)

श्रीमन्मन्दर - सुन्दरे शुचि - जलै, - धौतैः सदर्भाक्षतैः,
पीठे मुक्तिवरं निधाय रचितं, त्वत् - पाद - पद्म - स्रजः ।
इन्द्रोऽहं निज - भूषणार्थक - मिदं, यज्ञोपवीतं दधे,
मुद्रा - कंकण - शेखराण्यपि तथा, जैनाभिषेकोत्सवे ॥2॥
ॐ नमः परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकृतायाहं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं
दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अहं नमः स्वाहा ।
(अग्रलिखित श्लोक पढ़कर अनामिका अंगुली से नौ स्थानों (मस्तक,
ललाट, कर्ण, कण्ठ, हृदय, नाभि, भुजा, कलाई और पीठ) पर तिलक करें)
सौगन्ध्य - संगत - मधुव्रत - झङ्कृतेन,
संवर्ण्य - मान - मिव गंध - मनिन्द्य - मादौ ।
आरोपयामि विबु - धेश्वर - वृन्द - वन्द्य-
पादार - विन्द - मभिवन्द्य जिनोत्तमानाम् ॥3॥
ॐ ह्रीं परम-पवित्राय नमः नवांगेषु चन्दनानुलेपनं करोमि स्वाहा ।
ये सन्ति केचि - दिह दिव्य - कुल - प्रसूता,
नागाः प्रभूत - बल - दर्पयुता विबोधाः ।
संरक्षणार्थ - ममृतेन शुभेन तेषां,
प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥4॥
ॐ ह्रीं जलेन भूमिशुद्धिं करोमि स्वाहा ।
(निम्नलिखित श्लोक पढ़कर पीठ/सिंहासन का प्रक्षालन करना)
क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः,
प्रक्षालितं सुरवरै - र्यदनेक - वारम् ।
अत्युद्ध - मुद्यत - महं जिन - पादपीठं,
प्रक्षालयामि भव - सम्भव - तापहारि ॥5॥

ॐ हां ह्रीं हूं हौं हः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन पीठ-प्रक्षालनं
करोमि स्वाहा ।

(निम्नलिखित श्लोक पढ़कर सिंहासन पर श्री लिखें)
श्री - शारदा - सुमुख - निर्गत - बीजवर्णम्,
श्रीमंगलीक - वर - सर्व जनस्य नित्यम् ।
श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाश्य - विघ्नम्,
श्रीकार - वर्ण - लिखितं जिन - भद्रपीठे ॥6॥

ॐ ह्रीं अहं श्रीकार-लेखनं करोमि स्वाहा ।
(निम्नलिखित श्लोक पढ़कर इन्द्रादि दश देवों का आह्वान करें ।)
इन्द्राग्नि - दण्डधर - नैर्ऋत - पाशपाणि-
वायूत् - तरेण - शशि - मौलि - फणीन्द्र - चन्द्राः ।
आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिहनाः,
स्वं स्वं प्रतीच्छत - बलिं जिनपाभिषेके ॥7॥

1. ॐ आं क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।
2. ॐ आं क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ।
3. ॐ आं क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।
4. ॐ आं क्रौं ह्रीं नैर्ऋत आगच्छ आगच्छ नैर्ऋताय स्वाहा ।
5. ॐ आं क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ।
6. ॐ आं क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।
7. ॐ आं क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा ।
8. ॐ आं क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ।
9. ॐ आं क्रौं ह्रीं धरणीन्द्र आगच्छ आगच्छ धरणीन्द्राय स्वाहा ।
10. ॐ आं क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ।

(निम्नलिखित श्लोक पढ़कर आरती आदि का अवतरन करें।)

दध्युज् - ज्वलाक्षत - मनोहर - पुष्प - दीपैः,
पात्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण।
त्रैलोक्य - मंगल - सुखालय - कामदाय-,
मारार्तिकं तव विभो - रवतारयामि॥८॥

पात्रार्पितैर्दधि-तण्डुल-पुष्पदीपैर्जिनस्यारार्तिकावतरणम्।

यं पाण्डुकामल - शिलागत - मादिदेव-
मस्नापयन् सुरवराः सुर-शैल - मूर्ध्नि।
कल्याण - मीप्सु - रह - मक्षत - तोय - पुष्पैः,
सम्भावयामि पुर एव तदीय बिम्बम्॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री धर्मतीर्थाधिनाथ ! भगवन्निह पाण्डुकशिला-पीठे तिष्ठ
तिष्ठ स्वाहा। जगतः सर्वशान्तिं करोतु।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(निम्नलिखित श्लोक पढ़कर पल्लवों से सुशोभित मुख वाले स्वस्तिक
सहित चार सुन्दर कलश सिंहासन के चारों कोनों पर स्थापित करें।)

सत्पल्ल - वार्चित - मुखान् कलधौत् - रौप्य-,
ताम्रार - कूट - घटितान् पयसा सुपूर्णान्।
संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्,
संस्थापयामि कलशाञ्जिन - वेदिकांते॥११॥

ॐ ह्रीं स्वस्तये पूर्ण-कलशोद्धरणं करोमि स्वाहा।

(निम्नलिखित श्लोक पढ़कर अरिहन्त-परमेष्ठी के लिये अर्घ चढायें।)

(स्रग्धरा छन्द)

आभिः पुण्याभि-रद्भिः, परि-मल-बहुले,-नामुना चन्दनेन,
श्रीदृक्पेयै-रमीभिः, शुचि-सदक-चयै,-रुद्गमै-रेभि-रुद्घैः।
हृद्यै-रेभि- निवेद्यै-र्मुख-भवन-मिमै-दीप-यद्भिः प्रदीपैः,
धूपैः प्रेयोभि-रेभिः, पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दूरावनम्र - सुरनाथ - किरीट - कोटी-
संलग्न - रत्न - किरणच् - छवि - धूस - रांग्रिम्।
प्रस्वेद - ताप - मल - मुक्त - मपि प्रकृष्टैर्-
भक्त्या जलै - जिनपतिं बहुधाभि - षिञ्चे॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादि-वर्धमानपर्यन्त-चतुर्विंशति-
तीर्थकर-परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे... देशे...
प्रान्ते... नाम्नि नगरे श्री 1008.... जिन चैत्यालयमध्ये वीरनिर्वाण-सं.
मासोत्तममासे... पक्षे.... तिथौ..... वासरे..... पौर्वाह्निक समये मुन्यार्यिका-
श्रावक-श्राविकानां सकल-कर्म-क्षयार्थं जलेनाभिषिञ्चे नमः।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्त्या ललाट - तटदेश - निवेशि - तोच् - चैर्,
हस्तैश् च्युता सुर - वरासुर - मर्त्य - नाथैः।
तत्काल - पीलित - महेश - रसस्य धारा,
सद्यः पुनातु जिन - बिम्ब - गतैव युष्मान्॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं इक्षुरसेनाभिषिञ्चे नमः।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुस्निग्धै - नवनारिकेर - फलजै - राम्रादि-जातैस्तथा,

पुण्डेक्ष्वादि - समुद् - भवैश्च गुरुभिः पापाहैरञ्जसा ।

पीयूषद्रवसन्निभैर्वररसैः सज्ज्ञान-सम्प्राप्तये,

सुस्वादैरमलैरल-जिनविभुम्, भक्त्यानघं स्नापये ।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं इक्षुरसेनाभिषिञ्चे नमः ।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नालिकेरजलैः स्वच्छैः शीतैः पूतैर्मनोहरैः ।

स्नानक्रियां कृतार्थस्य, विदधे विश्वदर्शिनः ।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं नालिकेरसेनाभिषिञ्चे नमः ।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सपक्वैः कनकच्छायैः सामोदैर्मोदकारिभिः ।

सहकाररसैः स्नानं कुर्मः शर्मैकसद्मनः ।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं आम्ररसेनाभिषिञ्चे नमः ।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्कृष्ट - वर्ण - नव - हेम - रसाभिराम-,

देह - प्रभा - वलय - संगम - लुप्त - दीप्तिम् ।

(48-सी)

धारां घृतस्य शुभ - गन्ध - गुणानु - मेयां,

वन्देऽर्हतां सुरभि - संस्नपनोप - युक्ताम् ।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं घृतेनाभिषिञ्चे नमः ।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्पूर्ण - शारद - शशांक - मरीचि - जाल-,

स्यन्दै - रिवात्म - यशसा - मित्र - सुप्रवाहैः ।

क्षीरै - र्जिनाः शुचि - तरै - रभि - षिच्य - मानाः,

सम्पादयन्तु मम चित्त - समीहितानि ।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं क्षीरेणाभिषिञ्चे नमः ।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दुग्धाब्धि - वीचि - चय - संचित - फेनराशि,

पाण्डुत्व - कान्ति - मवधीरयता - मतीव ।

दध्नां गता जिनपतेः प्रतिमां सुधारा,

सम्पद्यतां सपदि वाञ्छित - सिद्धये नः ।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं दध्नाभिषिञ्चे नमः ।

उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

संस्नापितस्य धृत - दुग्ध - दधीक्षु - वाहैः,

सर्वाभि - रौषधिभि - र्हत उज्ज्वलाभिः ।

(48-डी)

उद् - वर्तितस्य विदधाम्यभिषेक - मेला-,
 कालेय - कुंकुम - रसोत्कट - वारिपूरैः ।।29।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं सर्वौषधिभिरभिषिज्ये नमः ।
 उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।30।।
 ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कर्पूरधूलि - मिलितैः घनसार- पंक-
 सम्मिश्रितैः कमलतन्दुलपिण्डपिण्डैः ।
 उद्धर्तनं भगवतो वितनोमि देहे-
 स्नेहोप - लेप - कलना - परिलोपनाय ।।31।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं इति तन्दुलपिण्डादिलेपनं
 करोमि स्वाहा ।
 उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।32।।
 ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 समृद्ध - भक्त्या परया विशुद्ध्या,
 कर्पूर - सम्मिश्रित - चन्दनेन ।
 जिनेन्द्र - देहोपरि कुङ्कुमेन,
 विलेपनं चारु करोमि मुक्त्यै ।।33।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं इति चन्दनादिलेपनं करोमि
 स्वाहा ।
 उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।34।।
 ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 बासन्ति - काजाति - सुरेश - वृन्दैर्-,
 वधूक - वृन्दै - रपि चम्पकाद्यैः ।

पुष्प - रनेकै - रलिभिर् - हुताग्रैः,
 श्रीमज् - जिनेन्द्राङ्घ्रि - युगं यजेऽहं ।।35।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं इति पुष्पवृष्टिं करोमि
 स्वाहा ।
 उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।36।।
 ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 इष्टै - र्मनोरथ - शतैरिव भव्य - पुंसां,
 पूर्णैः सुवर्ण - कलशै - निखिला - वसानैः ।
 संसार - सागर - विलंघन - हेतु - सेतु-
 माप्लावये त्रिभुवनैक - पतिं जिनेन्द्रम् ।।37।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं सर्वौषधिभिरभिषिज्ये नमः ।
 उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।38।।
 ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 द्रव्यै - रनल्प - घनसार - चतुः समाद्यै-
 रामोद - वासित - समस्त - दिगन्तरालैः ।
 मिश्री - कृतेन पयसा जिन - पुंगवानां,
 त्रैलोक्य पावनमहं स्नपनं करोमि ।।39।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तंसकल-कर्म-क्षयार्थं सर्वौषधिभिरभिषिज्ये नमः ।
 उदकचंदनतण्डुल.....कुले जिनगृहे जिननाथ-महं यजे ।।40।।
 ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

लघु शान्तिधारा

ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः,
श्रीवीतरागाय नमः, श्रीवीतरागाय नमः, श्रीवीतरागाय नमः, ॐ
नमोऽर्हते भगवते, श्रीमते, पार्श्वतीर्थकराय, द्वादशगण-परिवेष्टिताय,
शुक्लध्यानपवित्राय, सर्वज्ञाय, स्वयम्भुवे, सिद्धाय, बुद्धाय, परमात्मने
परमसुखाय, त्रैलोक्यमहि-व्याप्ताय अनन्त-संसार-चक्रपरिमर्दनाय अनन्त-
ज्ञानाय, अनन्त-दर्शनाय, अनन्त-वीर्याय अनन्त-सुखाय सिद्धाय, बुद्धाय,
त्रैलोक्यवशंकराय, सत्यज्ञानाय, सत्यब्रह्मणे, धरणेन्द्र-फणामण्डल-
मण्डिताय ऋषि-आर्यिका-श्रावक-श्राविकादि-प्रमुख-चतुस्संघोपसर्ग-
विनाशनाय घातिकर्मविनाशनाय अघातिकर्मविनाशनाय **अपवादं** छिन्धि
छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **मृत्युं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **अतिकामं**
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **रतिकामं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।
बलिकामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **क्रोधं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि
भिन्धि। **पापं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **बैरं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि
भिन्धि। **सर्वभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वअग्निभयं** छिन्धि
छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्ववायुभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।
सर्वशत्रुभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वोपसर्गं** छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। **सर्वविघ्नं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वराज्यभयं**
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वचौरभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।
सर्वदुष्टभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वमृगभयं** छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। **सर्वात्मभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपरमंत्रं**
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वसर्पभयं** छिन्धि भिन्धि भिन्धि।

सर्ववृश्चिकभयं छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वसिंहादिभयं** छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। **सर्वग्रहभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वदोषं**
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वव्याधिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।
सर्वडामरं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वात्मघातं** छिन्धि भिन्धि
भिन्धि। **सर्वपरघातं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वशूलरोगं** छिन्धि
छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वक्षयरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।
सर्वकुष्ठरोगं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वक्रूररोगं** छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। **सर्वकुक्षिरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व-**
अक्षिरोगं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वशिरारोगं** छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। **सर्वज्वररोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वनरमारिं**
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वगजमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।
सर्व-अश्वमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वगोमारिं** छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। **सर्वमहिषमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व-**
अजमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वसस्यमारिं** छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। **सर्वधान्यमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्ववृक्षमारिं**
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वलतामारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि
भिन्धि। **सर्वगुल्ममारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपत्रमारिं** छिन्धि
छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपुष्पमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।
सर्वफलमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वराष्ट्रमारिं** छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। **सर्वदेशमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वक्रूरभयानि**
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्ववेतालभयानि** छिन्धि छिन्धि भिन्धि
भिन्धि। **सर्वशाकिनी-भयानि** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वडाकिनी-**

भयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। सर्ववेदनीयं छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि। सर्वमोहनीयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। सर्वापस्मारिं
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। सर्वकर्माष्टकं छिन्धि छिन्धि भिन्धि
भिन्धि।

ॐ सुदर्शन-महाराज-चक्रविक्रम-सत्त्व-तेजोबल-शौर्यशान्तीः
कुरु कुरु। सर्वजीवानन्दनं कुरु कुरु। सर्वजनानन्दनं कुरु कुरु।
सर्वभव्यानन्दनं कुरु कुरु। सर्वगोकुलानन्दनं कुरु कुरु। सर्वराजानन्दनं
कुरु कुरु। सर्वग्रामानन्दनं कुरु कुरु। सर्वनगरानन्दनं कुरु कुरु।
सर्वखेटानन्दनं कुरु कुरु। सर्वकर्वटानन्दनं कुरु कुरु। सर्वमटम्बानन्दनं
कुरु कुरु। सर्वपत्तनानन्दनं कुरु कुरु। सर्वद्रौणमुखानन्दनं कुरु
कुरु। सर्वसंवाहनानन्दनं कुरु कुरु। सर्वलोकानन्दनं कुरु कुरु स्वाहा।
सर्वदेशानन्दनं कुरु कुरु स्वाहा। सर्वयजमानानन्दनं कुरु कुरु स्वाहा।
सर्वम् दुःखं हन हन दह दह पच पच कुट कुट शीघ्रं शीघ्रं।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधिव्यसनवर्जितम्।

अभयं क्षेममारोग्यं, स्वस्तिरस्तु विधीयते।।

श्री शान्तिरस्तु शिवमस्तु जयोस्तु नित्यमारोग्यमस्तु पुष्टिरस्तु।
समृद्धि-रस्तु कल्याणमस्तु सुखमस्तु अभिवृद्धिरस्तु दीर्घायुरस्तु कुलगोत्र-
धनधान्यं सदास्तु चन्द्रप्रभ-वासुपूज्य-मल्लि-वर्द्धमान-पुष्पदन्त- शीतल-
मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ इत्येतेभ्यो नमः।

इत्यनेन मन्त्रेण नवग्रहाणां शान्त्यर्थं गन्धोदक-धारावर्षणम्।
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः।।

बृहत् शान्तिधारा

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं
हं सं सं तं तं पं पं झं झं इवीं इवीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-
द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ॐ ह्रीं क्रौं मम पापं खण्डय
खण्डय, जहि जहि, दह दह, पच पच, पाचय पाचय ॐ नमो
अर्हन् झं इवीं क्ष्वीं हं सं झं वं हवः पः हः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों
क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं हां ह्रीं हूं हें हैं हों हौं हं हः द्रां द्रीं द्रावय द्रावय
नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः अस्माकं (धारा करने वाले का
नामोच्चारण) श्रीरस्तु वृद्धिरस्तु तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु शान्तिरस्तु
कान्तिरस्तु कल्याणमस्तु स्वाहा। एवं अस्माकं (धारा करने वाले का
नामोच्चारण) कार्यसिद्ध्यर्थं सर्वविघ्ननिवारणार्थं श्रीमद्भगवदहत्सर्वज्ञ-
परमेष्ठि-परमपवित्राय नमो नमः। अस्माकं (धारा करने वाले का
नामोच्चारण) श्रीशान्तिभट्टारकपादपद्म- प्रसादात् सद्धर्म श्रीबल-
आयुः-आरोग्य-ऐश्वर्याभि- वृद्धिरस्तु सद्धर्मस्व-शिष्य- परशिष्य-
वर्गाः प्रसीदन्तु नः।

ॐ श्रीवृषभादयः श्रीवर्द्धमान-पर्यन्ताश् चतुर्-विंशति-
अर्हन्तो भगवन्तः सर्वज्ञाः परम-मंगल-नामधेया अस्माकं (धारा
करने वाले का नामोच्चारण) इहामुत्र च सिद्धिं तन्वन्तु सद्धर्मकार्येषु च
इहामुत्र च सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थकराय श्रीमद्-
रत्नत्रयरूपाय दिव्यतेजोमूर्तये प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगण-

सहिताय, अनन्तचतुष्टय-सहिताय, समवशरण-केवलज्ञानलक्ष्मी-शोभिताय, अष्टादशदोष-रहिताय, षट्चत्वारिंशद्गुण-संयुक्ताय परमेष्ठिपवित्राय सम्यग्ज्ञानाय स्वयम्भुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहिताय, अनंत-संसार-चक्रप्रमर्दनाय अनन्त-ज्ञान-दर्शन-वीर्य-सुखास्पदाय त्रैलोक्यवशंकराय सत्यज्ञानाय सत्य-ब्रह्मणे, उपसर्गविनाशनाय-घातिकर्मक्षयंकराय, अजराय, अभवाय, अस्माकं (धारा करने वाले का नामोच्चारण) व्याधिं घ्नन्तु। श्रीजिनाभिषेक-पूजन-प्रसादात् अस्माकं (धारा करने वाले का नामोच्चारण) सेवकानां सर्वदोष-रोग-शोक-भय-पीडा-विनाशनं भवतु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजो-मूर्तये श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्व-रोगाप-मृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वारिष्ट-शान्तिकराय। ॐ ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं हः अ सि आ उ सा नमः मम सर्वविघ्नशान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं कुरु कुरु स्वाहा। **मम कामं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **रतिकामं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **बलिकामं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वक्रोधं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपापं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्ववैरं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व-अग्निभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्ववायुभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वशत्रुविघ्नं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वोपसर्गं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वविघ्नं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।

भिन्धि। **सर्वराज्यभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वचौरभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वदुष्टभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वसर्पभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्ववृश्चिकभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वसिंहादिभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वग्रहभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वदोषं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वव्याधिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वडामरं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपरमंत्रं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वात्मघातं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपरघातं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वशूलरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वकुक्षिरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व-अक्षिरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वशिरोरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वज्वररोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वनरमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वगजमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वाश्वमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वगोमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वमहिषमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व-अजमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वसस्यमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वधान्यमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वलतामारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वगुल्ममारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपत्रमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।

सर्वपुष्पमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वफलमारिं छिन्धि
छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वराष्ट्रमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि
भिन्धि । सर्वक्रूरभयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्ववेताल-
भयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वशाकिनीभयानि
छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वडाकिनीभयानि छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि । सर्ववेदनीयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि ।
सर्वमोहनीयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वापस्मारिं छिन्धि
छिन्धि भिन्धि भिन्धि । अस्माकं (धारा करने वाले का नामोच्चारण)
अशुभकर्म-जनितदुःखानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । दुष्ट-
जन-कृतान् मंत्र-तंत्र-दृष्टि-मुष्टि-छल-छिद्र-दोषान् छिन्धि
छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वदुष्ट-देव-दानव-वीर-नर-नाहर-
सिंह-योगनी-कृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वअष्ट-
कुलीनाग-जनित-विषभयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि ।
सर्वस्थावर-जंगम-वृश्चिक-सर्पादि-कृतदोषान् छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि । सर्वसिंह-अष्टापदादि-कृतदोषान् छिन्धि छिन्धि
भिन्धि भिन्धि । परशत्रुकृत-मारणोच्चाटन विद्वेषण-मोहन-
वशीकरणादि-दोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । ॐ ह्रीं
अस्मभ्यं (धारा करने वाले का नामोच्चारण) चक्रविक्रम-सत्त्व-तेजो-
बल-शौर्य-शान्तीः पूरय पूरय । सर्वजीवानन्दनं कुरु कुरु ।
सर्वजनानन्दनं कुरु कुरु । सर्वभव्यानन्दनं कुरु कुरु । सर्व-

गोकुलानन्दनं कुरु कुरु। सर्वराजानन्दनं कुरु कुरु। सर्वग्रामा-
नन्दनं कुरु कुरु। सर्वनगरानन्दनं कुरु कुरु। सर्व-खेडानन्दनं
कुरु कुरु। सर्वकर्वटानन्दनं कुरु कुरु। सर्वमंटवानन्दनं कुरु
कुरु। सर्वद्रौणानन्दनं कुरु कुरु। सर्वमुखानन्दनं कुरु कुरु।
सर्वसंवाहनानन्दनं कुरु कुरु। सर्वानन्दनं कुरु कुरु स्वाहा।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधिर्व्यसनवर्जितम्।

अभयं क्षेममारोग्यं स्वस्तिरस्तु विधीयते।।

श्री शान्तिरस्तु शिवमस्तु जयोस्तु नित्यमारोग्यमस्तु।
अस्माकं (धारा करने वाले का नामोच्चारण) पुष्टिरस्तु समृद्धि-रस्तु
कल्याणमस्तु सुखमस्तु अभिवृद्धिरस्तु दीर्घायुरस्तु कुलगोत्रधनानि
सदा सन्तु सद्धर्म-श्रीबल-आयुःआरोग्य-ऐश्वर्याभिवृद्धि-रस्तु।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै
णमो अरहंताणं हौं सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

आयुर्वल्ली विलासं, सकलसुखफलैः, द्राघयित्वाऽऽश्वनल्पं,
धीरं वीरं गरीरं, निरुप-मुपनयत्वा- तनोत्वच्छकीर्तिम्।
सिद्धिं वृद्धिं समृद्धिं, प्रथयतु तरणिः, स्फूर्यदुच्चैः प्रतापं,
कान्तिं शान्तिं समाधिं, वितरतु जगता, -मुत्तमा शान्तिधारा।।
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनन्द्रः।।

।। इति बृहत् शान्तिधारा।।

विनय पाठ

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढ़ै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ।।1।।
अनंत चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज।
मुक्ति-वधु के कंत तुम, तीन भुवन के राज।।2।।
तिहुँ जग की पीड़ा हरन, भवदधि-शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिव-सुख के करतार।।3।।
हरता अघ अंधियार के, करता धर्म-प्रकाश।
थिरता-पद दातार हो, धरता निज गुण रास।।4।।
धर्माभूत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहुँ-जग भूप।।5।।
मैं वन्दौं जिनदेव को, करि अति निरमल भाव।
कर्म-बन्ध के छेदने, और न कछु उपाव।।6।।
भविजन कों भव-कूप तैं, तुम ही काढ़नहार।
दीन-दयाल अनाथ-पति, आतम गुण भंडार।।7।।
चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्म-रज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिव-गैल।।8।।
तुम पद-पंकज पूजतैं, विघ्न-रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय।।9।।

चक्री खगधर इन्द्र पद, मिलैं आप तैं आप।
 अनुक्रम करि शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप॥10॥
 तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जलबिन मीन।
 जन्म-जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन॥11॥
 पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
 अंजन से तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव॥12॥
 थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेव।
 खेवटिया तुम हो प्रभु जय जय जय जिनदेव॥13॥
 राग सहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।
 वीतराग भेट्यो अबैं, मेटो राग कुटेव॥14॥
 कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यच अज्ञान।
 आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान॥15॥
 तुमको पूजैं सुरपती, अहिपति नरपति देव।
 धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव॥16॥
 अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार।
 मैं डूबत भव सिन्धु में, खेव लगाओ पार॥17॥
 इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
 अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान॥18॥
 तुमरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार।
 हा हा डूब्यो जात हों, नेक निहार निकार॥19॥

जो मैं कहहूँ और सों, तो न मिटैं उरभार।
 मेरी तो तोसों बनी, तातैं करौं पुकार॥20॥
 वंदों पाँचों परमगुरु सुरगुरु वंदत जास।
 विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश॥21॥
 चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
 शिवमग साधक साधु नमि, रच्यों पाठ सुखदाय॥22॥

मंगल-पाठ

मंगल मूर्ति परम पद, पंच धरो नित ध्यान।
 हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान्॥23॥
 मंगल जिनवर पद नमो, मंगल अर्हत देव।
 मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दो स्वयमेव॥24॥
 मंगल आचारज मुनि, मंगल गुरु उवझाय।
 सर्व साधु मंगल करो, वन्दों मन-वच-काय॥25॥
 मंगल सरस्वति मात का, मंगल जिनवर धर्म।
 मंगलमय मंगलकरण, हरो असाता कर्म॥26॥
 या विधि मंगल से सदा, जग में मंगल होत।
 मंगल 'नाथूराम' यह भव सागर दृढ़ पोत॥27॥

(पुष्पांजलिं क्षिपामि)

॥ यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र जपना चाहिये॥
 भजन करो प्रभु आदि का अन्त नाम महावीर।
 तीर्थकर चौबीस को धरऊ ध्यान धर शीश॥

भजन - मैं थाने पूजन आयो.....

श्री जी मैं थाने पूजन आयो, मेरी अरज सुनो दीनानाथ।
श्री जी मैं थाने पूजन आयो
जल चन्दन अक्षत शुभ लेके, तामें पुष्प मिलायो।
श्री जी मैं थाने पूजन आयो
चरु अरु दीप धूप फल लेकर, सुन्दर अर्घ बनायो।।
श्री जी मैं थाने पूजन आयो।
अर्घ बनाय गाय गुणमाला, तेरे चरणन शीश झुकायो।
श्री जी मैं थाने पूजन आयो।
आठ पहर की साठ जु घडियाँ, शान्ति-शरण तोरी आयो।
श्री जी मैं थाने पूजन आयो।
मुझ सेवक की अर्ज यही है, जामन-मरण मिटायो।
मेरा आवागमन छुटावो, श्री जी मैं थाने पूजन आयो।

अ. भा. जैन विद्वत्-शास्त्रि-परिषत् संस्थान के अन्तर्गत

पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा, वेदी प्रतिष्ठा, कलशारोहण, सिद्धचक्र विधान, कल्पद्रुम विधान, समवशरण विधान, इन्द्रध्वज विधान, पर्युषणपर्व या अन्य किसी भी विधान हेतु एवं शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर हेतु तथा प्रवचनादि के लिये विद्वान् सदैव उपलब्ध रहते हैं। जानकारी के लिये सम्पर्क करें : -

मुख्य-संयोजक-प्रतिष्ठाचार्य पं. कोमल प्रसाद शास्त्री

5-ई-23, तलवण्डी, कोटा (राज.) 9414488691, 09462842314

अध्यक्ष - सुमतप्रकाश जैन (वरिष्ठ अभियन्ता, सेवानिवृत्त)

401- समृद्धि रेसीडेन्सी, पंचशील नगर, ब्लाक बी, माकड वाली रोड़, अजमेर (राज.)
9413300610, 9460105884, 7976583649

महामन्त्री - पं. महेश चन्द्र जैन, 30 पुष्प-पुञ्ज, सरलाबाग कालोनी, दयालबाग, आगरा 09359793508

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।

अर्थ - पंचपरमेष्ठी की जय हो, जय हो, जय हो। नमस्कार हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।

ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अर्थ - अरहन्तों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो और लोक में सब साधुओं को नमस्कार हो। ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्र को नमस्कार हो।

चत्तारि मंगलं, अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्थ - चार पदार्थ मंगल स्वरूप हैं-अरहन्त मंगल हैं, सिद्ध मंगल हैं, साधु मंगल हैं और केवली द्वारा कहा हुआ धर्म मंगल है।

लोक में चार पदार्थ सर्वश्रेष्ठ हैं-अरहन्त सर्वश्रेष्ठ हैं, सिद्ध सर्वश्रेष्ठ हैं, साधु सर्वश्रेष्ठ हैं और केवली द्वारा कहा हुआ धर्म सर्वश्रेष्ठ है।

चार की शरण में जाता हूँ- अरहन्तों की शरण में जाता हूँ, सिद्धों की शरण में जाता हूँ, साधुओं की शरण में जाता हूँ और केवली द्वारा कहे हुए धर्म की शरण में जाता हूँ। ॐ अरहन्त को नमस्कार है, पुष्पांजलि क्षेपण करता हूँ।

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।

ध्यायेत् पंच-नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते॥1॥

अर्थ - जो मनुष्य पवित्र या अपवित्र यहाँ तक कि सुस्थित या दुःस्थित भी पंच नमस्कार मन्त्र का ध्यान करता है वह सब पापों से छूट जाता है।

अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः॥2॥

अर्थ - जो मनुष्य पवित्र या अपवित्र सब अवस्थाओं में स्थित होकर परमात्मा का स्मरण करता है वह भीतर और बाहर सर्वत्र पवित्र है।

अपरा-जित-मंत्रोऽयं, सर्व-विघ्न-विनाशनः।

मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः॥3॥

अर्थ - यह पंच नमस्कार मन्त्र अजेय है, सब विघ्नों का विनाश करने वाला है और सब मंगलों में पहला मंगल है।

एसो पंच-णमो-यारो, सव्व-पावप्पणा-सणो।

मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होई मंगलं॥4॥

अर्थ - यह पंच नमस्कार मन्त्र सब पापों का नाश करने वाला है और सब मंगलों में पहला मंगल है।

अर्ह-मित्यक्षरं ब्रह्म, -वाचकं परमेष्ठिनः।

सिद्ध-चक्रस्य सद्-बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम्॥5॥

अर्थ - 'अर्हम्' ये अक्षर परब्रह्म परमेष्ठी का वाचक है और सिद्धसमूह का सुन्दर बीजाक्षर है। मैं इसको मन, वचन, काय से नमस्कार करता हूँ।

कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं, मोक्ष-लक्ष्मी-निकेतनं।

सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम्॥6॥

अर्थ - आठों कर्मों से रहित, मुक्तिरूपी लक्ष्मी के मन्दिर और सम्यक्त्वादि आठ गुणों से युक्त सिद्ध-समूह को मैं नमस्कार करता हूँ।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत-पन्नगाः।

विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे॥7॥

(पुष्पांजलि क्षिपामि)

अर्थ - भगवान् जिनेन्द्र की स्तुति करने पर विघ्नसमूह नष्ट हो जाते हैं, शकिनी, भूत और पन्नगों का भय नहीं रहता तथा विष निर्विष हो जाता है।

पंचकल्याणक का अर्थ

उदक-चंदन-तण्डुल-पुष्पकैश्, चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः।

धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे कल्याण-महं यजे॥

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंचकल्याणकेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - मैं प्रशस्त मंगलगान के (मंगलीक जिनेन्द्रस्तवन के) शब्दों से गुंजायमान जिन मन्दिर में जिनेन्द्रदेव का जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल तथा अर्घ से पूजन करता हूँ।

पंचपरमेष्ठी का अर्घ

उदक-चंदन-तण्डुल-पुष्पकैश्, चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे ।।
ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनसहस्रनाम का अर्घ

उदक-चंदन-तण्डुल-पुष्पकैश्, चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे जिननाम यजामहे ।।
ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिन-अष्टोत्तर-सहस्र-नामभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनवाणी का अर्घ

उदक-चंदन-तण्डुल-पुष्पकैश्, चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे जिनसूत्र-महं यजे ।।
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि तत्त्वार्थसूत्र-दशाध्याय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का अर्घ

उदक-चंदन-तण्डुल-पुष्पकैश्, चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे सूरीन्द्रं च यजामहे ।।
ॐ ह्रीं शताष्टगुणसहित आचार्यश्री विद्यासागरादि-त्रिन्यून-नवकोटीमुनिवरेभ्यो
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

श्रीमज् - जिनेन्द्र - मभि - वंद्य - जगत् - त्रयेशं,
स्याद्वाद - नायक - मनन्त - चतुष्ट - यार्हम् ।
श्रीमूल - संघ - सुदृशां सुकृतैक - हेतुर,
जैनेन्द्र - यज्ञ - विधि - रेष मयाऽभ्यधायि ।।1।।

अर्थ - मैं तीन लोक के स्वामी, स्याद्वाद विद्या के नायक, अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख और अनन्तवीर्य के धारक जिनेन्द्र देव को नमस्कार करके, जिनेश देव के पूजन की विधि को कहता हूँ, जो पूजन मूलसंघ के सम्यग्दृष्टि पुरुषों के लिए पुण्यबन्ध का प्रधान कारण है ।

स्वस्ति त्रिलोक - गुरवे जिन - पुंगवाय,
स्वस्ति स्वभाव - महिमोदय - सुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाश - सहजोर्जित - दृङ् - मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न - ललिताद् - भुत - वैभवाय ।।2।।

अर्थ - तीन लोक के गुरु तथा जिन प्रधान (कषायों को जीतने वाले मुनीश्वरों के स्वामी) के लिए कल्याण होवे। स्वाभाविक महिमा का उदय होने से भले प्रकार स्थित हुए भगवान् के लिए मंगल होवे। स्वाभाविक प्रकाश से बढ़े हुए तथा केवल दर्शन से युक्त भगवान् जिनेन्द्र के लिए क्षेम होवे। उज्ज्वल, सुन्दर तथा अद्भुत समवशरणादि वैभव वाले जिनेन्द्र के लिए कुशल होवे।

स्वस् - त्युच् - छलद् - विमल - बोध - सुधा - प्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव - परभाव - विभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोक - विततैक - चिदुद् - गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल - सकलायत - विस्तृताय ।।3।।

अर्थ - उछलते हुए निर्मल केवलज्ञान रूपी अमृत में तैरने वाले, स्वभाव और परभाव का प्रकाशक, तीन लोक में व्याप्त एकमात्र चैतन्य को प्रकट करने वाले और त्रिकालवर्ती सर्व पदार्थों में ज्ञान के द्वारा व्याप्त जिनेन्द्र देव सब के लिए मंगल होवे।

द्रव्यस्य शुद्धि - मधि - गम्य यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धि - मधिका - मधिगन्तु - कामः।
आलम्बनानि विविधान् - यव - लम्ब्य - वल्गन्,
भूतार्थ - यज्ञ - पुरुषस्य करोमि यज्ञम्॥४॥

अर्थ - अपने भावों की परम शुद्धता को पाने का अभिलाषी मैं देश और काल के अनुरूप जल, चन्दनादि द्रव्यों की शुद्धता को पाकर जिन-स्तवन, जिनबिम्बदर्शन आदि अनेक अवलम्बनों का आश्रय लेकर भूतार्थ रूप पूज्य अरहन्तादि का पूजन करता हूँ।

अर्हन् पुराण - पुरुषोत्तम - पावनानि,
वस्तून् - यनून - मखिलान् - यय - मेक एव।
अस्मिञ् ज्वलद् - विमल - केवल - बोध - वह्नौ,
पुण्यं समग्र - मह - मेक - मना जुहोमि॥५॥

ॐ ह्रीं विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपामि।

अर्थ - हे अर्हन्! पुराणपुरुषोत्तम! यह असहाय मैं इन पवित्र समस्त जलादि द्रव्यों का अवलम्बन लेकर अपने समस्त पुण्य को इस दैदीप्यमान निर्मल केवलज्ञानरूपीअग्नि में एकाग्रचित्त होकर हवन करता हूँ।

स्वस्ति मंगल पाठ

श्री वृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अजितः।

श्री संभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनन्दनः।

अर्थ - श्रीऋषभजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री अजितजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्रीसम्भवजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्रीअभिनन्दनजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों।

श्री सुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः।

श्री सुपाश्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभः।

अर्थ - श्री सुमतिजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री पद्मप्रभजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री सुपाश्वजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री चन्द्रप्रभजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों।

श्री पुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतलः।

श्री श्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्यः।

अर्थ - श्री पुष्पदंतजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री शीतलनाथ जिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री श्रेयांसजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री वासुपूज्यजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों।

श्री विमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनन्तः।

श्री धर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शान्तिः।

अर्थ - श्री विमलजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री अनन्तजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री धर्मजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री शान्तिजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों।

श्री कुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथः ।

श्री मल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः ।

अर्थ - श्री कुन्थुजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री अरनाथ जिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री मल्लिजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री मुनिसुव्रतजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों।

श्री नमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री नेमिनाथः ।

श्री पार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वर्द्धमानः ।

(पुष्पांजलिं क्षिपामि)

अर्थ - श्री नमिजिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री नेमि जिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। श्री पार्श्व जिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों और श्री वर्द्धमान जिन हम सबके लिए मंगल स्वरूप हों। (मैं पुष्पांजलि क्षेपण करता हूँ)

परमर्षि स्वस्ति मंगल पाठ

(प्रत्येक श्लोक के बाद पुष्प क्षेपण करें)

नित्या-प्रकम्पाद-भुतकेव-लौघाः, स्फुरन्मनःपर्यय-शुद्धबोधाः ।

दिव्या-वधिज्ञान-बल-प्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥1॥

अर्थ - अविनाशी, अचल और अद्भुत केवलज्ञान के धारक, दैदीप्यमान मनःपर्ययज्ञानरूप शुद्ध ज्ञान वाले तथा दिव्य अवधिज्ञान के बल से प्रबुद्ध महाऋषि हमारा कल्याण करें।

कोष्ठस्थ-धान्योप-ममेक-बीजं, संभिन्न-संश्रोतृ-पदानुसारि ।

चतुर्विधं बुद्धि-बलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥2॥

अर्थ - कोष्ठस्थधान्योपम, एकबीज, संभिन्न संश्रोतृत्व और पदानुसारित्व इन चार प्रकार की बुद्धि ऋद्धि को धारण करने वाले ऋषिराज हमारा मंगल करें।

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरा, -दास्वादन-घ्राण-विलोक-नानि ।

दिव्यान्-मतिज्ञान-बलाद्-वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥3॥

अर्थ - दिव्य मतिज्ञान के बल से दूर से ही स्पर्शन, श्रवण, आस्वादन, घ्राण और अवलोकन रूप पाँच इन्द्रियों के विषय को धारण करने वाले ऋषिराज हम लोगों का कल्याण करें।

प्रज्ञा-प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येक-बुद्धाः दश-सर्व-पूर्वेः ।

प्रवादिनोऽष्टांग-निमित्त-विज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥4॥

अर्थ - प्रज्ञाश्रमण, प्रत्येकबुद्ध अभिन्नदशपूर्वी, चतुर्दशपूर्वी, प्रकृष्टवादी और अष्टांगमहानिमित्त के ज्ञाता मुनिवर हमारा कल्याण करें।

जंघानल-श्रेणि-फलाम्बु-तन्तु, -प्रसून-बीजांकुर-चार-णाहवाः ।

नभोऽङ्ग-गण-स्वैर-विहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥5॥

अर्थ - जंघा, अग्निशिखा, श्रेणी, फल, जल, तन्तु, पुष्प, बीज और अंकुर-पर चलने वाले चारण ऋद्धि के धारक तथा आकाश में स्वच्छन्द विहार करने वाले मुनिवर हमारा कल्याण करें।

अणिमि दक्षाः कुशला महिम्नि, लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि ।

मनो-वपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥6॥

अर्थ - अणिमा, महिमा, लघिमा और गरिमा -ऋद्धि में कुशल तथा मन, वचन और काय बल के धारक योगीश्वर हमारा मंगल करें।

सकाम-रूपित्व-वशित्व-मैश्यं, प्राकाम्य-मन्तर्द्धि-मथाप्तिमाप्ताः ।

तथाऽप्रतीघात-गुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥७॥

अर्थ - कामरूपित्व, वशित्व, ईशित्व, प्राकाम्य, अन्तर्धान, आप्ति
तथा अप्रतिघात ऋद्धि से सम्पन्न ऋषिपुंगव हमारा क्षेम करें।

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोर-परा-क्रमस्थाः ।

ब्रह्मापरं घोरगुणं चरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥८॥

अर्थ - दीप्ति, तप्त, महा, उग्र, घोर और घोर पराक्रम तप के
तथा अघोर ब्रह्मचर्य ऋद्धि के धारी मुनिराज हमारा कल्याण करें।

आमर्ष-सर्वौष-धयस्तथाशी, -र्विषाविषादृष्टि-विषा-विषाश्च ।

सखिल्ल-विड्जल्ल-मलौष-धीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥९॥

अर्थ - आमर्षौषधि, सर्वौषधि, आशीर्विषाविष, दृष्टिविषाविष,
क्ष्वेलौषधि, विडौषधि, जल्लौषधि और मलौषधि ऋद्धि के धारी परमऋषि
हमारा कल्याण करें।

क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो, मधुस्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवंतः ।

अक्षीण-संवास-महा-नसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१०॥

॥ इति परमर्षि स्वस्ति मंगलविधानं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

अर्थ - क्षीरस्त्रावी, घृतस्त्रावी, मधुस्त्रावी, अमृतस्त्रावी तथा
अक्षीणसंवास और अक्षीणमहानस ऋद्धिधारी मुनिवर मंगल करें।

देव-शास्त्र-गुरु पूजन

प्रथम देव अरहंत सुश्रुत सिद्धांत जू,
गुरु निर्ग्रन्थ महन्त मुक्तिपुर पन्थ जू।
तीन रतन जग माहिं सु ये भवि ध्याइये,
तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाइये।।

अर्थ - अरहन्त देव, सिद्धान्त शास्त्र और परिग्रह रहित गुरु पूजनीय हैं और ये ही मोक्ष के मार्ग हैं। संसार में जो भव्य पुरुष इन तीन रत्नों का ध्यान करते हैं, वे देव, शास्त्र और गुरु की भक्ति के प्रसाद से उत्तम पद पा जाते हैं।

पूजों पद अरहंत के, पूजों गुरुपद सार,
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्ट प्रकार।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणम्।

अर्थ - मैं प्रतिदिन अष्ट विधि से अरहंत भगवान् के चरणों की पूजा करता हूँ। फिर सारभूत गुरु-चरणों की पूजा करता हूँ। फिर देवी सरस्वती की/जिनवाणी की पूजा/अर्चना करता हूँ।

सुरपति उरग नरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपद-प्रभा।
अति शोभनीक सुवर्ण उज्ज्वल, देख छबि मोहित सभा।।
वर नीर क्षीर समुद्र घट भरि अग्र तसु बहुविधि नचूँ।
अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ।।

अर्थ - हे भगवन्! इन्द्र, धरणेन्द्र और चक्रवर्ती आपके चरणों में मस्तक नमाते हैं, इसलिए आपके चरण निर्मल सुवर्ण के समान शोभायमान मालूम पड़ते हैं। इनकी कान्ति को देखकर समवशरण की सभायें मोहित हो जाती हैं क्षीर समुद्र के पवित्र जल का कलश भरकर

आपके सामने नाचता हूँ तथा जल चढ़ाता हूँ। इस प्रकार देव, शास्त्र और गुरु की प्रतिदिन पूजा करता हूँ।

मलिन वस्तु हर लेत सब, जल स्वभाव मलछीन।

जासो पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - जल पदार्थों के मैल को दूर करता है क्योंकि मैल दूर करना जल का स्वभाव है। इसलिए भगवन्! पूजनीय देव, शास्त्र और गुरु इन तीनों की जल से पूजा करता हूँ जिससे मेरी आत्मा का मैल दूर हो जावे।

जे त्रिजग उदर मँझार प्राणी तपत अति दुद्धर खरे।

तिन अहित-हरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे।।

तसु भ्रमर-लोभित घ्राण पावन सरस चंदन घिसि सचूँ।

अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ।।

अर्थ - हे भगवन्! तीनों लोकों के जीव संसार के दुःखों से बहुत अधिक दुःखी हैं। जैसे बड़े भारी गड्ढे में आग लगी हो और उसमें रहने वाले अथवा आ गिरने वाले जीव दुःखी होते हैं। ऐसे संसारियों के दुःख दूर करने के लिए हे जिनेन्द्रदेव! आपका उपदेश शान्ति उत्पन्न करने वाला है। इसलिए बहुत सुगन्धित चन्दन घिसकर आपकी पूजा करता हूँ जिससे मेरा संसार का दुःख शान्त हो जावे। इस प्रकार देव, शास्त्र, गुरु की प्रतिदिन पूजा करता हूँ।

चंदन शीतलता करै, तपत वस्तु परवीन।

जासो पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - तपी हुई चीज को शीतल (ठण्डा) करने के लिए चन्दन ही समर्थ है। इसलिए देव, शास्त्र और गुरु की चन्दन से पूजा करता हूँ।

यह भव समुद्र अपार तारण के निमित्त सुविधि ठई।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही।
उज्ज्वल अखण्डित सालि तंदुल, पुंज धरि त्रयगुण जचूँ।
अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥

अर्थ - हे जिनेन्द्रदेव! यह संसार रूपी समुद्र अपार है। इससे पार होने के लिए आपको अतिदृढ़, परम पवित्र और यथार्थ (सच्ची) भक्ति रूप मजबूत नाव ही समर्थ है। यह हमें पूरा विश्वास है। इसलिए ताजे और स्वच्छ शालि धान के तंदुल के पुञ्ज चढ़ाकर सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र इन तीन गुणों की याचना करता हूँ, इस प्रकार देव, शास्त्र और गुरु की प्रतिदिन पूजा करता हूँ।

तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखण्डित बीन।
जासो पूजौं परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन॥
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
अर्थ - शालिधान के सुगन्धित और अखण्डित तंदुलों को एक-एक बीनकर पूज्य देव, शास्त्र और गुरु की पूजा करता हूँ।

जे विनयवंत सुभव्य-उर-अंबुज प्रकाशन भानु हैं।
जे एक मुख चारित्र भाषत त्रिजगमाहिं प्रधान हैं॥
लहि कुंद कमलादिक पहुप, भव-भव कुवेदनसों बचूँ।
अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥

अर्थ - हे जिनेन्द्र देव! आप विनयवान भव्यजीवों के मनरूपी कमलों को विकसित करने के लिए सूर्य के समान हैं, जैसे सूर्य के उदय होने पर कमल खिलते हैं, वैसे ही आप भव्यों को प्रसन्न करने वाले हैं, भव्यों का अज्ञानान्धकार दूर करने वाले हैं। आप प्रधानता से चारित्र का उपदेश देते हैं। हे देव! आप तीन लोक में प्रधान हैं। इसलिए कुन्द कमल आदि फूलों को लेकर अनेक जन्म के काम विकार के कष्टों से बचने के लिए प्रतिदिन देव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ।

विविध भाँति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन।

जासो पूजौं परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - अनेक प्रकार के सुगन्धित फूलों से भौंरे भी जिनकी सुगन्ध से वश में हो जाते हैं, उन पुष्पों से पूजनीयदेव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ।

अति सबल मद-कंदर्प जाको, क्षुधा-उरग अमान है।

दुस्सह भयानक तासु नाशन को सु गरुड़ समान है॥

उत्तम छहों रसयुक्त नित, नैवेद्य करि घृत में पचूँ।

अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥

अर्थ - अत्यन्त बलवान् मद के वेग को हरने वाले महान् क्षुधारूपी सर्प का विष सहन नहीं हो सकता और वह बड़ा भयंकर है। उस विष को दूर करने के लिए हे भगवन्! आप गरुड़ के समान हैं। जैसे सांप को गरुड़ जीत लेता है वैसे ही भूख को आपने जीत लिया है। इसलिए घी में पकाकर छहों रसों के अच्छे-अच्छे पकवानों से आपकी (देव, शास्त्र, गुरु की) प्रतिदिन पूजा करता हूँ जिससे मेरी क्षुधा दूर हो जावे।

नानाविधि संयुक्त रस, व्यंजन सरस नवीन।
जासो पूजौ परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन॥
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अर्थ - छहों रसों से भरे ताजे पकवानों से देव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ।

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने, मोहतिमिर महाबली।
तिहिं कर्मघाती ज्ञानदीप प्रकाश जोति प्रभावली॥
इह भाँति दीप प्रजाल कंचन के सुभाजन में खचूँ।
अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥

अर्थ - हे भगवन्! तीन लोक के प्राणियों के सच्चे पुरुषार्थ को नाश करने के लिए मोहनीय कर्मरूपी अन्धकार बहुत बलवान है। उस मोहनीय कर्म को नाश करने वाला आपका ज्ञान-रूपी दीपक का प्रकाश ही समर्थ है अर्थात् आप मोहनीय कर्म को नष्ट कर केवल ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं। इस प्रकार दीपक जलाकर सुवर्ण के पात्र में सजाता हूँ और प्रतिदिन देव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ जिससे मेरा मोह दूर हो जावे।

स्वपर प्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन।
जासो पूजौ परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन॥
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
अर्थ - केवलज्ञानरूपी दीपक अज्ञानान्धकार से रहित है, इससे अपना और पर पदार्थ का प्रकाश होता है। इसलिए दीपक से देव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ।

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगंधताकरि, सकल परिमलता हँसै॥

इहभाँति धूप चढ़ाय नित भव, ज्वलनमाहिं नहीं पचूँ।
अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥

अर्थ - हे भगवन्! कर्मरूप ईंधन को जलाने के लिए आप अग्नि के समान प्रकाशित हैं। अच्छे धूप की सुगन्ध से सभी सुगन्धियाँ मन्द हो जाती हैं। इसी तरह हे देव! प्रतिदिन धूप चढ़ाता हूँ जिससे मैं संसाररूपी अग्नि से दूर रहूँ। अर्थात् धूप चढ़ाने से संसार से मुक्ति हो जावे। इस तरह देव, शास्त्र और गुरु की प्रतिदिन पूजा करता हूँ।

अग्निमाहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन।

जासो पूजौ परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
अर्थ - चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्यों से सहित धूप को अग्नि में जलाकर देव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ।

लोचन सुरसना घ्राण उर, उत्साह के करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं॥
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूँ।
अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रंथ नित पूजा रचूँ॥

अर्थ - हे देवाधिदेव! नेत्र इन्द्रिय, जिह्वा इन्द्रिय, नासिका इन्द्रिय और मन को प्रसन्न करने वाले फल हैं। इनमें अच्छे फलों के सभी गुण हैं, मुझसे जिनके गुणों की तुलना नहीं की जा सकती। हे भगवन्! अपने मोक्षरूपी प्रयोजन को पूर्ण करने के लिए फल चढ़ाता हूँ जिससे मुझे अनन्त सुख प्राप्त हो। इस प्रकार प्रतिदिन देव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ।

जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण-रस लीन।

जासो पूजौ परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - इन्द्रियों को प्रसन्न करने वाले उत्तम फलों से देव, शास्त्र और गुरु की पूजा करता हूँ।

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूँ।
वर धूप निरमल फल विविध, बहु जनम के पातक हरूँ।।
इहि भाँति अर्घ चढ़ाय नित भवि करत शिवपंकजि मचूँ।
अरहंत श्रुत - सिद्धांत गुरु - निरग्रंथ नित पूजा रचूँ।।

अर्थ - हे परमात्मन्! स्वच्छ जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप और अनेक प्रकार के उत्तम फल चढ़ाकर अनेक जन्मों के कर्मों को दूर करूँ। इस प्रकार अर्घ चढ़ाकर मोक्ष प्राप्त करूँ। इसलिए प्रतिदिन देव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ।

आठों दुखदानी, आठ निशानी, तुम ढिग आन निवारन हो।
दीनन निस्तारन अघम उधारन 'द्यानत' तारन कारन हो।।
प्रभु अन्तर्यामी, त्रिभुवननामी, सब के स्वामी दोष हरो।
यह अरज सुनीजे, ढील न कीजे, न्याय करीजे, दया करो।।

वसुविधि अर्घ संजोयके, अति उछाह मन कीन।

जासो पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - जल आदि आठों द्रव्यों से अर्घ को संजोकर और हृदय में प्रसन्नता रखकर देव, शास्त्र, गुरु की पूजा करता हूँ।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।

भिन्न - भिन्न कहूँ आरती, अल्प सुगुन विस्तार।।

अर्थ - देव, शास्त्र और गुरु तीनों आदर करने योग्य हैं। इनसे आत्मा का कल्याण करने वाले सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र

ये तीन रत्न उत्पन्न होते हैं। इसलिए संक्षेप में इनके अलग-अलग गुणों का वर्णन करता हूँ। कहने में शब्द थोड़े हैं लेकिन उनमें अनेक गुण भरे हैं।

चउ करम की त्रेसठ प्रकृति नाश, जीते अष्टादश दोष राशि।
जे परम सुगुण हैं अनन्त धीर, कहवत के छ्यालिस गुण गंभीर।

अर्थ - हे देव! घातिया कर्मों की 47 और अघातिया कर्मों की 16 प्रकृतियाँ मिलाकर 63 प्रकृतियों (ज्ञानावरण 5, दर्शनावरण 9, मोहनीय 28, अन्तराय 5, (ये 47 घातिया कर्म की प्रकृतियाँ, नरकगति, तिर्यञ्चगति, नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, एकेन्द्रियादि 4 जातियाँ, उद्योत, आतप, साधारण, सूक्ष्म, स्थावर ये नामकर्म की 13, नरक आयु, तिर्यञ्च आयु, देव आयु ये आयुकर्म की 3,) का नाश कर आपने जन्म, जरा आदि अठारह दोषों को जीत लिया है कहने के लिए आपके 46 गुण हैं, (दश अतिशय जन्म के, दश अतिशय केवलज्ञान के, चौदह अतिशय देवकृत, आठ प्रातिहार्य और चार अनन्तचतुष्टय) लेकिन आपमें अनन्त गुण विद्यमान हैं।

शुभ समवशरण शोभा अपार, शत इन्द्र नमत कर सीस धार।
देवाधिदेव अरहंत देव, बंदौ मन-वच-तन करि सु सेव।।

अर्थ - आपका समवशरण बहुत शोभायमान है। आपको सौ इन्द्र मस्तक नमाकर नमस्कार करते हैं। इसलिए हे देवों के देव अरहन्त देव! मन, वचन और काय से सेवा कर मैं आपको नमस्कार करता हूँ। जिनकी ध्वनि है ओंकार रूप, निर-अक्षरमय महिमा अनूप।
दश अष्ट महाभाषा समेत, लघु भाषा सात शतक सुचेत।।

अर्थ - अरहन्त भगवान् की दिव्यध्वनि 'ॐ' स्वरूप है। इसमें अक्षर नहीं होते हैं किन्तु इनका अनुपम महत्त्व होता है। दिव्यध्वनि में 18 महा-भाषायें और 700 लघु भाषायें होती हैं।

सो स्याद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूँथे बारह सुअंग ।

रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ॥

अर्थ - हे भगवन्! वह आपकी ओंकार रूप दिव्यध्वनि स्याद्वाद स्वरूप (सात भंग वाली) है। इसे गणधरों ने आचारांग आदि 12 अंगों में रचा है। जो अन्धकार (अज्ञानान्धकार) सूर्य और चन्द्रमा दूर नहीं कर सकते, उसे यह शास्त्र दूर कर देते हैं। इसलिए शास्त्र को बहुत प्रसन्नता-पूर्वक नमस्कार करता हूँ।

गुरु आचारज उवझाय साधु, तन नगन रतनत्रय-निधि अगाध ।

संसार देह वैराग्य धार, निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥

अर्थ - आचार्य, उपाध्याय और साधु ये तीन गुरु हैं। इनका शरीर नगन (वस्त्रादि रहित) रहता है, किन्तु ये सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूप रत्नों के अथाह समुद्र के समान हैं। अर्थात् तीनों गुरु सम्यग्दर्शन आदि धारण करते हैं। इसलिए संसार और शरीर से वैराग्य धारण कर संसार के विषय भोगों की इच्छा नहीं रखते हुए मोक्ष का लक्ष्य कर तपस्या करते हैं।

गुण छत्तीस पच्चीस आठ बीस, भव तारन तरन जिहाज ईश ॥

गुरु की महिमा वरनी न जाय, गुरु नाम जपों मन-वचन-काय ॥

अर्थ - आचार्य के छत्तीस, उपाध्याय के पच्चीस और साधु के अट्ठाईस मूलगुण होते हैं। हे गुरुदेव! आप संसार से तरने और तराने के लिए जहाज के समान हैं। गुरुओं की महिमा का वर्णन नहीं हो सकता। इसलिए मन-वचन और काय से सदा गुरुओं का नाम जपता हूँ, उन्हीं का ध्यान करता हूँ।

कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै ।

द्यानत सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ - अपनी शक्ति के अनुसार देव, शास्त्र और गुरु की पूजन, भक्ति, ध्यान और जाप करनी चाहिए। यदि शक्ति न हो तो श्रद्धा रखने वाला भी जरा (बुढ़ापा) और मरण आदि दोष रहित मोक्ष को प्राप्त करता है।

मिथ्यात्व दलन सिद्धान्त साधक मुक्ति मारग जानिये।
करनी अकरनी सुगति दुर्गति, पुण्य पाप पिछानिये।।
संसार सागर तरण तारण, गुरु जिहाज विशेषिये।
जग मांहि गुरु सम कहैं बनारसि और न दूजो पेखिये।।
श्री जिनके परसाद ते, सुखी रहें सब जीव।
यातैं तन मन वचन तैं, सेवो भव्य सजीव।।
॥ परिपुष्पांजलिं क्षिपामि॥

अर्धावली

विद्यमान बीस तीर्थकरों का अर्घ
जल फल आठों दरब अरघ कर प्रीति धरी है।
गणधर-इन्द्रनिहू तैं थुति पूरी न करी है।।
'द्यानत' सेवक जानके (हो) जग ते लेहु निकार।।
सीमंधर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार।।
श्री जिनराज हो भव-तारण तरण जिहाज।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि. स्वाहा।

अकृत्रिम जिनबिम्बों का अर्घ
कृत्या-कृत्रिम-चारु-चैत्य-निलयान्, नित्यं त्रिलोकी-गतान्,
वन्दे भावन-व्यन्तरान् द्युतिवरान्, कल्पामरा-वासगान्।।

सद्-गन्धाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः सद्दीप-धूपैः फलैर्,
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा, दुष्कर्मणां शान्तये।।
सात करोड़ बहत्तर लाख सुभवन जिन पाताल में।
मध्यलोक में चार सौ अठ्ठावन, जजों अघमल टाल के।
अब लख चौरासी सहस सन्त्यानवें अधिक तेईस रु कहे।
बिन संख ज्योतिष व्यन्तरालय, सब जजों मन वच ठहे।
ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमजिनबिम्बेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध भगवान् का अर्घ

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रत-गणैः, संगं वरं चन्दनं,
पुष्पौघं विमलं सदक्षत-चयं रम्यं, चरुं दीपकम्।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं, फलं लब्धये,
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं, सेनोत्तरं वाञ्छितम्।।
ॐ ह्रीं श्री सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि. स्वाहा।

तीस चौबीसी का अर्घ

द्रव्य आठों, जु लीना है, अर्घ कर में नवीना है,
पूजतां पाप छीना है, भानुमल जोड़ कीना है।
दीप अढ़ाई सरस राजै, क्षेत्र दस ताँ विषैं छाजै,
सातशत बीस जिनराजे, पूजतां पाप सब भाजै।।
ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं पञ्चभरतक्षेत्रस्थ पञ्चैरावतक्षेत्रस्थ च भूतवर्तमान-
भविष्यतकालवर्तिभ्यः चतुर्विंशत्याः गुणितेभ्यः विंशत्युत्तरसप्तशतसंख्यकेभ्यो
जिनतीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय पूजन का अर्घ

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निजगुण प्रकट किये।।
यह अर्घ समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-
सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय चौबीसी भगवान् का अर्घ

जल फल आठों शुचिसार ताको अर्घ करो,
तुमको अरपो भवतार, भवतरि मोक्ष वरों।
चौबीसों श्री जिनचंद, आनन्दकंद सही,
पद जजत हरत भव फंद, पावत मोक्ष मही।।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्त-चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ
निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ भगवान् का अर्घ

शुचि निरमल नीरं गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ सु लेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय।।
श्री आदिनाथ के चरण कमल पर, बलिबलि जाऊँ मन वच काय।
हे करुणानिधि भव दुःख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पाय।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पद्मप्रभ भगवान् का अर्घ

जल फल आदि मिलाय गाय गुन, भगतभाव उमगाय।
जजों तुमहिं शिवतियवर जिनवर आवागमन मिटाय।।

मनवचतन त्रयधार देत ही जनम जरामृत जाय।

पूजों भावसों, श्रीपद्मनाथपद सार पूजों भावसों।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्द्रप्रभ भगवान् का अर्घ

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों।
पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनी गमों।।
श्रीचंदनाथ दुति चन्द, चरनन चंद लगे।
मनवचतन जजत अमंद, आतमजोति जगे।।
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वासुपूज्य भगवान् का अर्घ

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरों यह लाई।।
वासुपूज वसुपूज तनुज पद, वासव सेवत आई।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शान्तिनाथ भगवान् का अर्घ

वसु द्रव्य सँवारी, तुम ढिग धारी, आनन्दकारी दृग-प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुणाधारी, यातैं थारी, शरनारी।।
श्री शान्तिजिनेशं, नुतशक्रेषं, वृषचक्रेषं, चक्रेषं।
हनि अरि चक्रेषं, हे गुणधेशं, दयामृतेशं मक्रेषं।।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान् का अर्घ
जलगंध आदि मिलाय आठों दरब अरघ सजों वरों।
पूजों चरनरज भगतिजुत, जातें जगत सागर तरों।
शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ, मुनिगुन माल हैं।
तसु चरन आनन्दभरन तारन, तरन विरद विशाल हैं।
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नेमिनाथ भगवान् का अर्घ
जल फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय।
अष्टमछिति के राज करनकों, जजों अंग वसु नाय।।
मन वच तनतें धार देत ही, सकल कलंक नशाय।
दाता मोच्छ के श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाता मोच्छ के।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पार्श्वनाथ भगवान् का अर्घ
नीरगंध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घतें जजीजिये।।
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा।।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर भगवान् का अर्घ
जलफल वसुसजि हिमथार, तनमन मोद धरो।
गुण गाऊँ भवदधितार, पूजत पाप हरो।।

श्रीवीर महा अतिवीर सन्मति-नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मति-दायक हो।।
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री बाहुबली स्वामी का अर्घ
हूँ शुद्ध निराकुल सिद्धो सम भवलोक हमारा वासा ना।
रिपु रागरु द्वेष लगे पीछे, यातें शिवपद को पाया ना।।
निज के गुण निज में पाने को, प्रभु अर्घ संजोकर लाया हूँ।
हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।।
ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

पंच-बालयति का अर्घ
सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ अरघ बनावत हैं।
वसुकर्म अनादि संयोग, ताहि नशावत हैं।।
श्री वासुपूज्य-मलि-नेम, पारस वीर अती।
नमूँ मन-वच-तन धरि प्रेम, पाँचों बालयती।।
ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति-तीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

सोलहकारण का अर्घ
जल फल आठों दरब चढ़ाय 'द्यानत' वरत करो मन लाय।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परम गुरु हो।।
दरश-विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थकर पद दाय।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परम गुरु हो।।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि. स्वाहा।

पंचमेरु का अर्घ

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥

पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा जी को करो प्रणाम।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥

ॐ ह्रीं पंचमेरु-सम्बन्धि अशीतिजिन-चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये
अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वर द्वीप जिनालय का अर्घ

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।

'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों॥

नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पुँज करों।

वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरो॥

नन्दीश्वर द्वीप महान चारों दिशि सोहें।

बावन जिन मन्दिर जान सुर-नर-मन मोहें॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरदिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ
जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण का अर्घ

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों।

भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय का अर्घ

आठ दरब निरधार, उत्तम सो उत्तम लिये।

जनम रोग निरवार सम्यक् रत्नत्रय भज्जूं ।।
ॐ ह्रीं सम्यक् रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सप्तऋषि का अर्घ

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ।।
मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिन की पूजा करूँ ।
ता करें पातक हरे सारे, सकल आनंद विस्तरूँ ।।
ॐ ह्रीं श्री मन्वादिसप्तर्षिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

निर्वाण क्षेत्र का अर्घ

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौँ ।
'द्यानत' करो निरभय जगत सों, जोर कर विनती करो ।।
सम्मेदगढ़ गिरनार चंपा पावापुर कैलाश को ।
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास को ।।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा ।

सरस्वती का अर्घ

जल चन्दन अक्षत फूल चरु, अरु दीप धूप अति फल लावे ।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत' सुख पावै ।।
तीर्थकर की ध्वनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञान मई ।
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई ।।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का अर्घ
श्री विद्यासागर के चरणों में झुका रहा अपना माथा ।
जिनके जीवन की हर चर्या बन पड़ी स्वयं ही नवगाथा ।।
जैनागम का वह सुधा कलश जो बिखराते हैं गली-गली ।
जिनके दर्शन को पाकर के खिलती मुरझाई हृदय कली ।।
भावों की निर्मल सरिता में अवगाहन करने आया हूँ ।
मेरा सारा दुःख दर्द हरो यह अर्घ भेटने लाया हूँ ।।
हे तपोमूर्ति ! हे आराधक ! हे योगीश्वर ! हे महासन्त !
है अरुण कामना देख सके युग-युग तक आगामी बसन्त ।।
जग के वैभव को पाकर मैं, निशदिन कैसा अलमस्त रहा ।
चारों गतियों की ठोकर को, खाने में ही अभ्यस्त रहा ।।
मैं हूँ स्वतन्त्र ज्ञाता दृष्टा, मेरा पर से क्या नाता है ।
कैसे अनर्घपद पा जाऊँ यह अरुण भावना भाता है ।।
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतआचार्य श्री विद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं
निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय महार्घ

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूँ सिद्ध पूजूँ चाव सों ।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ साधु पूजूँ भाव सों ।।
अर्हन्त-भाषित बैन पूजूँ द्वादशांग रचे गनी ।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरण शिव हेतु सब आशा हनी ।।

सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि दया-मय पूजँ सदा ।
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहिं कदा ।।
त्रैलोक्यके कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य-चैत्यालय जजँ ।
पन मेरु नन्दीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजँ ।।
कैलाश श्री सम्मेद श्री गिरनार गिरि पूजँ सदा ।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा ।।
चौबीस श्री जिनराज पूजँ बीस क्षेत्र विदेह के ।
नामावली इक सहस्र-वसु जय होय पति शिवगेह के ।।

जल गंधाक्षत पुष्प चरु दीप धूप फल लाय ।

सर्व पूज्य पद पूज हूँ बहु विधि भक्ति बढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं भावपूजां भाववन्दनां त्रिकालपूजां त्रिकालवन्दनां च कर्तुं
कारयितुं अनुमोदयितुं च श्रीअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाध्वित्यादिपञ्चपरमेष्ठिभ्यो
नमः । ॐ ह्रीं प्रथमानुयोग-करणानुयोग-चरणानुयोग-द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः ।
ॐ ह्रीं दर्शन-विशुद्ध्यादि-षोडश-कारणेभ्यो नमः । ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-
दशलक्षण धर्मेभ्यो नमः । ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्र्येभ्यो
नमः । ॐ ह्रीं जलस्थेभ्यः स्थलेभ्यः आकाशस्थेभ्यः गुहास्थेभ्यः पर्वतस्थेभ्यः
नगरनगरीस्थेभ्यः ऊर्ध्वलोक-मध्यलोक-पाताललोकस्थेभ्यः विराजमान-कृत्रिम-
अकृत्रिम-जिनचैत्यालय-जिनबिम्बेभ्यो नमः । ॐ ह्रीं विदेहक्षेत्रस्थ-विंशति-
तीर्थकरेभ्यो नमः । ॐ ह्रीं पञ्चभरतक्षेत्रस्थ पञ्चैरावतक्षेत्रस्थ च भूतवर्तमान-
भविष्यतकालवर्तिभ्यः चतुर्विंशत्याः गुणितेभ्यः विंशत्युत्तरसप्तशतसंख्यकेभ्यो
जिनतीर्थकरेभ्यो नमः । ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्विपञ्चाशज्जिनचैत्यालयेभ्यो
नमः । ॐ ह्रीं पञ्चमेरु सम्बन्धी अशीति जिनचैत्यालयेभ्यो नमः ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर-कैलाश-चम्पापुर-पावापुर-गिरिनार-सोनागिरि-

राजगृहि-शत्रुञ्जय-तारंगा-कुण्डलपुर-नेमावर-सिद्धोदय-चौरासि-मथुरादि-सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः । ॐ ह्रीं श्रवणबेलगोला-जैनबद्री-मूढबद्री-हस्तिनापुर-चन्देरी-पपोरा-अयोध्या-चमत्कार-श्रीमहावीर-पदमपुरी, तिजारा-सर्वोदयतीर्थ-बीनावारह-कोनीजी-पनागर-त्रिलोकतीर्थ-बडागाँव-वरनावा-बहेलना-अहिच्छत्रक्षेत्र-जलालावादादि-अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः । ॐ ह्रीं श्री चारणत्रयद्विधारी सप्तपरमर्षिभ्यो नमः ।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपावन्तं श्रीवृषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थकर-परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे... नाम्नि नगरे... मासानामुत्तमे ...मासे... शुभपक्षे... तिथौ ...वासरे ...मुनि-आर्यिकाणां श्रावक-श्राविकानां सकलकर्मक्षयार्थं अनर्घपदप्राप्तये सम्पूर्ण- अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शान्तिपाठ भाषा

(शांतिपाठ बोलते समय पुष्प क्षेपण करते रहना चाहिये ।

शान्तिनाथ मुख शशि उनहारि, शील गुणव्रत संयमधारी ।

लखन एक सौ आठ विराजें, निरखत नयन कमलदल लाजें ।।

अर्थ - हे शान्तिनाथ भगवन्! आपका मुख चन्द्रमा के समान निर्मल है। आप शील, गुण, व्रत और संयम के धारक हैं। आपकी देह में 108 शुभ लक्षण हैं और आपके नेत्र कमल के समान हैं। आप मुनियों में श्रेष्ठ हैं, मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

पञ्चम चक्रवर्ति पदधारी, सोलम तीर्थकर सुखकारी ।

इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शान्तिहित शांति विधायक ।।

अर्थ - आप पाँचवें चक्रवर्ती हैं और आपकी इन्द्र तथा नरेन्द्र सदा पूजन करते हैं। शान्ति की इच्छा से शान्ति के कर्ता सोलहवें तीर्थकर शान्तिनाथ भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ।।

अर्थ - (1) अशोक वृक्ष (2) देवों द्वारा की गई फूलों की वर्षा (3) दुन्दुभि (नगाड़ों) का बजना। (4) सिंहासन (5) एक योजन तक दिव्य-ध्वनि का होना (6) सिर पर तीन छत्रों का होना (7) चमरों का दुरना और (8) भामण्डल का होना, ये आठ प्रातिहार्य होते हैं। इनसे आप शोभायमान हैं।

शान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई, जगत्पूज्य पूजौ शिर नाई ।
परम शान्ति दीजै हम सबको, पढ़ें तिन्हें पुनि चार संघ को ।।

अर्थ - संसार में पूजनीय और शान्ति करने वाले श्री शान्तिनाथ तीर्थकर को मस्तक नवाकर नमस्कार करता हूँ। वे शान्तिनाथ भगवान् चतुर्विध संघ को, मुझे और पढ़ने वाले को सदा परम शान्ति प्रदान करें।

पूजें जिन्हें मुकुटहार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ।।

सो शांतिनाथ वर वंश जगत्प्रदीप,
मेरे लिए करहिं शान्ति सदा अनूप ।।

अर्थ - मुकुट, कुण्डल, हार और रत्नों को धारण करने वाले, इन्द्र इत्यादि देव, जिनके चरण कमलों की पूजा करते हैं। ऐसे इक्ष्वाकु आदि उत्तम वंशों में उत्पन्न होने वाले और संसार को प्रकाशित करने वाले तीर्थकर मुझे शान्ति प्रदान करें।

(निम्न श्लोक को पढ़कर जल छोड़ना चाहिए)
संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीनकों को यतिनायकों को ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले कीजे सुखी हे जिन ! शान्ति को दे ।।

अर्थ - हे जिनेन्द्रदेव! आप पूजन करने वालों को, रक्षा करने वालों को, सामान्य मुनियों को, आचार्यों को, देश, राष्ट्र, नगर राजा और प्रजा को सदा शान्ति प्रदान करें।

होवै सारी प्रजा को, सुख बलयुत हो, धर्म-धारी नरेशा।
होवै वर्षा समै पै, तिलभर न रहे, व्याधियों का अन्देशा।।
होवै चोरी न जारी सुसमय वरतै हो न दुष्काल मारी।
सारे ही देश धारें जिनवर-वृषको जो सदा सौख्यकारी।।

अर्थ - सब प्रजा का कुशल हो, राजा बलवान और धर्मात्मा हो, मेघ/बादल समय-समय पर वर्षा करें, सब रोगों का नाश हो, संसार में प्राणियों को एक क्षण भी दुर्भिक्ष, चोरी और बीमारी आदि के दुःख न हों और सब संसार को सुख देने वाले जिनेन्द्र भगवान् का धर्मचक्र सदा वर्तमान रहे।

(निम्न श्लोक पढ़कर चन्दन छोड़ना चाहिए)

घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलज्ञान।
शान्ति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज।।

अर्थ - चार घातियाँ कर्मों को नष्ट करने वाले और केवलज्ञानरूपी सूर्य अर्थात् केवलज्ञानी वृषभ आदि जिनेन्द्र भगवान् जगत् को शान्ति प्रदान करें।

शास्त्रों का हो पठन सुखदा लाभ सत्संगती का,
सद्व्रतों का सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का।
बोलूँ प्यारे वचन हित के आपका रूप ध्याऊँ।
तो लों सेऊँ चरण जिनके मोक्ष जो लों न पाऊँ।।

अर्थ - हे भगवन्! (1) शास्त्रों का पढ़ना, (2) जिनदेव को नमस्कार, (3) सदा उत्तम पुरुषों की संगति रहे, (4) सदाचारी पुरुषों का गुणगान करें, (5) परदोष के कहने में मौन रहूँ, (6) सभी जीवों का हित करने वाले वचन बोलूँ और (7) आत्मा के स्वभाव को पाने की भावना रखूँ। जब तक मुझे मोक्ष की प्राप्ति न हो जावे तब तक प्रत्येक जन्म में मुझे ये सात वस्तुएँ सदा प्राप्त होती रहें, ऐसी मेरी भगवान् से प्रार्थना है।

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।

तब लों लीन रहौ प्रभु, जब लों पाया न मुक्ति पद मैंने।।

अर्थ - हे जिनेन्द्रदेव! जब तक आपके दोनों चरण मेरे हृदय में विराजमान रहें और मेरा हृदय आपके चरणों में लीन रहें, तब तक मुझे आपके समान मोक्ष की प्राप्ति न हो जावे।

अक्षर पद मात्रा से, दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भव दुख से।।
हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सु दुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

(यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ना चाहिए)

अर्थ - हे परमात्मन्! मैंने आपकी पूजा करने में अक्षर, पद और मात्रा से हीन (कम) जो कुछ कहा हो उसे आप क्षमा करें, मेरे संसार के दुःखों का नाश कर दें। हे जगद्बन्धु! आपके चरणों की कृपा से मेरे दुःखों का नाश हो, समाधिमरण प्राप्त हो और सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति हो।

विसर्जन

बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय।

तुम प्रसाद तैं परमगुरु, सो सब पूरन होय॥

अर्थ - हे जिनेन्द्र भगवन्! आपकी पूजा करने में जानकर अथवा बिना जाने, जो कुछ शास्त्र में बताया गया है, वह नहीं कर पाया होऊँ तो वह सब आपकी कृपा से पूर्ण ही समझा जावे।

पूजन विधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान।

और विसर्जन हूँ नहीं, क्षमा करहु भगवान॥

अर्थ - हे परमेश्वर! आह्वान करने की विधि मुझे मालूम नहीं है, पूजा करना भी नहीं जानता और न विसर्जन करना ही आता है। इसलिए आप मुझे क्षमा कीजिए।

मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव।

क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव॥

अर्थ - हे जिनेन्द्रदेव! मैंने मंत्ररहित, क्रियारहित और द्रव्यरहित आपकी पूजा की है, वह सब क्षमा कीजिए और सदा संसार से मेरी रक्षा कीजिए।

आये जो जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमान।

ते अब जावहु कृपाकर, अपने-अपने थान॥

अर्थ - हे परमात्मन्! मैंने पहिले जिन-जिन देवों का आह्वान किया, उनके साथ मैंने भक्तिपूर्वक पूजा की। अब कृपाकर सब देव अपने-अपने स्थान पर पधारें।

श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय।

भव-भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाय॥

॥ यहाँ पर नौ बार णमोकार मन्त्र जपना चाहिये॥

जिन-स्तुति

मैं तुम चरण कमल गुण गाय, बहुविधि भक्ति करी मन लाय।

जनम जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवा फल दीजे मोहि॥

कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय।

बार-बार मैं विनती करूँ, तुम सेवा भवसागर तरूँ॥

नाम लेत सब दुख मिट जाय, तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय।

तुम हो प्रभु देवन के देव, मैं तो करूँ चरण तव सेव॥

जिन पूजा तैं सब सुख होय, जिन पूजा सम अवर न कोय।

जिन पूजा तै स्वर्ग विमान, अनुक्रम तैं पावै निर्वाण॥

मैं आयो पूजन के काज, मेरो जनम सफल भयो आज।

पूजा करके नवाऊँ शीश, मम अपराध क्षमहुँ जगदीश॥

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।

मो गरीब की वीनती, सुन लीज्यो भगवान॥

पूजन करते देव का, आदि मध्य अवसान।

सुरगन के सुख भोगकर, पावै मोक्ष निधान॥

जैसी महिमा तुम विषैं, और धरैं नहिं कोय।

जो सूरज में जोति है, नहिं तारागण होय॥

नाथ तिहारे नाम तैं, अघ छिनमाहि पलाय।

ज्यों दिनकर प्रकाशतैं, अन्धकार विनशाय॥

बहुत प्रशंसा क्या करूँ मैं प्रभु बहुत अज्ञान।

पूजाविधि जानूँ नहीं, शरण राखि भगवान॥

॥ यहाँ पर नौ बार णमोकार मन्त्र जपना चाहिये॥

शान्तिपाठः (संस्कृत)

शान्तिजिनं शशि-निर्मल-वक्त्रं, शील-गुण-व्रत-संयम-पात्रम् ।
अष्टशतार्चित-लक्षण-गात्रं, नौमि जिनोत्तम-मम्बुज-नेत्रम् ॥1॥
पञ्चम-मीप्सित-चक्रधराणां, पूजितमिन्द्र-नरेन्द्र-गणेशच ।
शान्तिकरं गण-शान्तिमभीप्सुः, षोडश-तीर्थकरं प्रणमामि ॥2॥
दिव्य-तरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टिः, दुन्दुभि-रासन-योजन-घोषौ ।
आतपवारण-चामर-युग्मे, यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥3॥
तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्रं, शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ॥
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं, मह्यमरं पठते परमां च ॥4॥

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हाररत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपास्,
तीर्थकराः सतत-शान्तिकरा भवन्तु ॥5॥

संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र-सामान्य तपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥6॥
क्षेमं सर्वप्रजानां, प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपालः,
काले काले च सम्यग्, विकिरतु मघवा, व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौर-मारी, क्षणमपि जगतां, मा स्म भूज्जीव-लोके,
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं, प्रभवतु सततं, सर्व-सौख्य-प्रदायि ॥7॥

प्रध्वस्त-घाति-कर्माणः, केवलज्ञान-भास्कराः ।

कुर्वन्तु जगतां शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥8॥

॥ प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ॥

शास्त्राभ्यासो, जिनपति-नुतिः, संगतिः सर्वदायैः,
सद्वृत्तानां, गुण-गण-कथा, दोष-वादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि, प्रिय-हित-वचो, भावना चात्मतत्त्वे,
संपद्यन्तां, मम भवे भवे, याव-देतेऽपवर्गः ॥9॥

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।

तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्, यावन् निर्वाण-सम्प्राप्तिः ॥10॥

अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ता-हीणं च जं मए भणियं ।

तं खमउ णाणदेव य, मज्झ वि दुक्खक्खयं दिंतु ॥11॥

दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, समाहिमरणं च बोहिलाहो य ।

मम होउ जगद-बंधव, तव जिणवर चरण सरणेण ॥12॥

॥ यहाँ पर नौ बार णमोकार मन्त्र जपना चाहिये ॥

विसर्जन पाठ

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि, शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।

तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु, त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वरः ॥1॥

आह्वानं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनम् ।

विसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वरः ॥2॥

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥३॥
आहूता ये पुरा देवा, लब्धभागा यथाक्रमम् ।
ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या, सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥
श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।
भव भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाय ॥
॥ यहाँ पर नौ बार णमोकार मन्त्र जपना चाहिये ॥

लघु चैत्यभक्ति

वर्षेषु वर्षान्तर - पर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि वन्दे जिनपुंगवानाम् ॥१॥
अवनि - तल - गतानां, कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वन - भवन - गतानां, दिव्य-वैमानिकानाम् ।
इह मनुज - कृतानां, देवराजार्चितानां,
जिनवर - निलयानां, भावतोऽहं स्मरामि ॥३॥
जम्बूधातकि - पुष्करार्ध - वसुधा, क्षेत्र - त्रये ये भवांश्-
चन्द्राम्भोज -शिखण्डि-कण्ठ-कनक,-प्रावृद्धनाभाजिनाः ।
सम्यग्ज्ञान - चरित्र - लक्षणधरा, दग्धाष्ट - कर्मन्धनाः
भूतानागत - वर्तमान-समये, तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥४॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ, रजतगिरिवरे, शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे, रतिकर-रुचके, कुण्डले मानुषांगे ।

इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ, दधिमुख-शिखरे, व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे, भुवन-महितले, यानि चैत्यालयानि ॥५॥
द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ, द्वाविन्द्रनील-प्रभौ,
द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ, द्वौ च प्रियङ्गुप्रभौ ।
शेषाः शोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः संतप्त-हेम-प्रभास्-
ते संज्ञान-दिवाकराः सुर-नुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥६॥

इच्छामि भन्ते ! चेइयभक्ति-काउसगगो कओ तस्सालोचेउं
अहलोय तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्ठिमा-किट्ठिमाणि जाणि
जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-
वाणविंतर-जोइसिय- कप्पवासियत्ति-चउव्विहा देवा सपरिवारा
दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण चुण्णेण,
दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति
वंदंति णमस्संति अहमवि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं
अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ
बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ती होउ मज्झं ।

अथ पौर्वाहणिक (माध्याह्निक) देव-वन्दनायां पूर्वाचार्यानु-
क्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तवसमेतं श्री पञ्चमहा-
गुरुभक्तिं कायोत्सर्गं करोम्यहम् । ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं
वोस्सरामि ।

॥ यहाँ पर नौ बार णमोकार मन्त्र जपना चाहिये ॥

समुच्चय पूजन

देव-शास्त्र-गुरु नमन करि, बीस तीर्थकर ध्याय।

सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूँ चित्त हुलसाय।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह ! विद्यमानविंशतितीर्थकर समूह ! अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि।

अनादिकाल से जग में स्वामिन्, जल से शुचिता को माना।

शुद्ध निजातम सम्यक् रत्नत्रय, निधि को नहीं पहिचाना।।

अब निर्मल रत्नत्रय-जल ले, श्रीदेव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है।

अनजाने अब तक मैंने, पर में की झूठी ममता है।

चन्दन सम शीतलता पाने, श्रीदेव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद के बिन फिरा जगत की, लख चौरासी योनी में।

अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिंग लाया मैं।।

अक्षय निधि निज की पाने अब श्रीदेव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है।

मन्मथ बाणों से बिन्ध करके, चहुँगति में दुःख उपजाया है।।

स्थिरता निज में पाने को, श्रीदेव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् रस-मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शान्त हुई।

आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय-मन इच्छा शमन हुई।।

सर्वथा भूख के मेटन को, श्रीदेव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़-दीप विनश्वर को अब तक, समझा था मैंने उजियारा।

निज-गुण दरशायक ज्ञानदीप से, मिटा मोह का अंधियारा।

ये दीप समर्पित करके मैं, श्रीदेव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।

निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नशायेगी।।

उस शक्तिदहन प्रगटाने को, श्रीदेव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बदाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिग मैं ले आया।
आतमरस भीने निज गुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया।।

अब मोक्षमहाफल पाने को, श्रीदेव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।

सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निजगुण प्रकट किये।।

यह अर्घ्य समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्रगुरु को ध्याऊँ।

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थकर, सिद्ध प्रभु भगवान।

अब वरणूँ जय मालिका, करूँ स्तवन गुणगान।।

नसे घातिया कर्म जु अहन्त देवा,

करे सुर-असुर-नर-मुनि नित्य सेवा।

दरश-ज्ञान-सुख-बल अनन्तों के स्वामी,

छियालीस गुण युत महा ईश नामी।।1।।

तेरी दिव्य-वाणी सदा भव्य मानी,

महा-मोह विध्वंसिनी मोक्ष-दानी।

अनेकान्तमय द्वादशांगी बखानी,
नमो लोक माता श्री जिनवाणी।।2।।

विरागी अचारज उवज्झाय साधू
दरस-ज्ञान भण्डार समता अराधू।

नगन वेशधारी सु एका विहारी,
निजानन्द मंडित मुकति पथ प्रचारी।।3।।

विदेहक्षेत्र में तीर्थकर बीस राजें,
विहरमान बन्दूँ सभी पाप भाजें।

नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी,
अनाकुल समाधान सहजाभिरामी।।4।।

देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थकर, सिद्ध हृदय बिच धर ले रे।

पूजन ध्यान गान गुण करके, भव सागर जिय तर ले रे।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये जयमाला महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भूत भविष्यत वर्तमान की, तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ।

चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन लोक के मन लाऊँ।।

ॐ ह्रीं भूतवर्तमान-भविष्यतकालवर्तिभ्यः चतुर्विंशत्याः गुणितेभ्यः विंशत्युत्तर-सप्तशतसंख्यकेभ्यो जिनतीर्थकरेभ्यो कृत्रिमाकृत्रिम-चैत्यालयेभ्यः च अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्य भक्ति आलोचन चाहूँ, कायोत्सर्ग अघ नाशन हेतु।

कृत्रिमाकृत्रिम तीनलोक में, राजत हैं जिन बिम्ब अनेक।।

चतुर निकाय के देव जजे लें, अष्ट द्रव्य निज भक्ति समेत।

निज शक्ति अनुसार जजूँ मैं, कर समाधि पाऊँ शिखेत।।

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व मध्य अपराह्न की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार ।
देव वन्दना करूँ भाव से सकल कर्म की नाशन हार ॥
पंच महा गुरु सुमरन करके कायोत्सर्ग करूँ सुखकार ।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना जाऊँगा अब मैं भव पार ॥

॥ पुष्पाँजलिं क्षिपेत् ॥
(नौ बार णमोकार मंत्र जपें)

नवदेवता पूजन

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य है ।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वर, मूर्ति जिनगृह वंद्य है ॥
नव देवता ये मान्य जग में, हम सदा अर्चा करें ।
आह्वान कर थापे यहाँ मन में अतुलश्रद्धा धरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालय
समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पाँजलिं
क्षिपामि ।

गंगा नदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा ।
अंतर मलों के क्षालने को, नीर से पूजूँ मुदा ॥
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।
सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन, देह ताप निवारता ।
तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहिं वारता ॥

नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।
सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षीरोदधी के फेन सम सित तंदुलों को लायके ।
उत्तम अखंडित सौख्यहेतु, पुंज नव सुचढ़ायके ॥
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।

सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

चंपा चमेली केवड़ा, नाना सुगन्धित ले लिये ।
भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये ॥
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।

सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में ।
निजआत्म अमृत सौख्य हेतु पूजहूँ नतभाल मैं ॥
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।

सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूर ज्योति जगमगे दीपक लिया निज हाथ में ।
तुम आरती तमवारती, पाऊँ सुज्ञान प्रकाश मैं ॥

नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश गंध धूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ सदा।
निजआत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा ॥
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊँ थाल में।
उत्तम अनुपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूँ आज मैं ॥
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक सुधूप फलार्घ ले।
वर रत्नत्रयनिधि लाभ यह बस अर्घ से पूजत मिले ॥
नवदेवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)
जलधारा से नित्य मैं, जग की शान्ति हेत।
नवदेवों को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत ॥ (शांतये शान्तिधारा)
नानाविध के सुमन ले, मन में बहु हरषाय।
मैं पूजूँ नवदेवता, पुष्पाञ्जलि चढ़ाय ॥ (दिव्य पुष्पाञ्जलिः)
जाप्य - ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-
चैत्यालयेभ्यो नमः। (9, 27 या 108 बार)

जयमाला
सोरठा
चिच्छिंतामणि रत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हो।
गाऊँ गुण मणिमाल, जयवंते वर्तो सदा ॥
(चाल हे दीनबन्धु.....)
जय जय श्री अरिहंत देव देव हमारे।
जय घातिया को घात सकल जंतु उबारे ॥
जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वंदना करूँ।
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूँ ॥
आचार्य देव गुण छत्तीस धार रहे हैं।
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं ॥
जैवंत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी।
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें घनी ॥

जय साधु अठईस गुणों को धरें सदा।
निज आत्मा की साधना से च्युत न हों कदा ॥
ये पंच परम देव सदा वंद्य हमारे।

संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें ।।

जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा ।

जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा ।।

जिनकी ध्वनि पीयूष का जो पान करेंगे ।

भव रोग दूर कर वे मुक्ति कांत बनेंगे ।।

जिन चैत्य की जो वंदना त्रिकाल करे हैं ।

वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं ।।

कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें ।

वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा बसें ।।

नव देवताओं की जो नित आराधना करें ।

वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें ।।

मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूँ ।

संपूर्ण 'ज्ञानमती' सिद्धि हेतु ही भजूँ ।।

नव देवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम ।

भक्ति का फल मैं चहूँ, निज पद में विश्राम ।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-
चैत्यालयेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से नव देवता पूजा करें ।

वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें ।

नवनिधि अतुल भंडार ले, फिर मोक्ष सुख भी पावते ।

सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहाँ पर कभी न आवते ।।

।। पुष्पांजलि क्षिपेत् ।।

पंच-परमेष्ठी पूजन

अर्हन्त सिद्ध आचार्य नमन्, हे उपाध्याय हे साधु नमन् ।
जय पंच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारण हार नमन् ॥
मन-वच-काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध हृदय से आह्वानन ।
मम हृदय विराजों तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन् ॥
निज आत्मतत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन ।
तव चरणों की पूजन से प्रभु, निज सिद्ध रूप का हो दर्शन ॥
ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिनः ! अत्र अवतर
अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम
सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।
मैं तो अनादि से रोगी हूँ उपचार कराने आया हूँ ।
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भरकर लाया हूँ ॥
मैं जन्म-जरा-मृत्यु नाश करूँ ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
संसार ताप में जल-जल कर मैंने अगणित दुःख पाये हैं ।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाए हैं ॥
शीतल चंदन है भेंट तुम्हें, संसार ताप नाशो स्वामी ॥
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
दुःखमय अथाह भव सागर में, मेरी यह नौका भटक रही ।
शुभ-अशुभ भाव की भंवरो में, चैतन्य शक्ति निज अटक रही ॥

तन्दुल है धवल तुम्हें अर्पित, अक्षय पद प्राप्त करूँ स्वामी ॥
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
मैं काम व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किंचित् छाया ।
चरणों में पुष्प चढ़ाता हूँ, तुम को पाकर मन हर्षाया ॥
मैं काम भाव विध्वंस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
मैं क्षुधा रोग से व्याकुल हूँ, चारों गति में भरमाया हूँ ।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी, तृप्त नहीं हो पाया हूँ ॥
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा रोग मेटो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
मोहान्ध महा-अज्ञानी मैं, निज को पर का कर्ता माना ।
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्मस्वरूप न पहचाना ॥
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ॥
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
कर्मों की ज्वाला धधक रही, संसार बढ़ रहा है प्रतिपल ।
संवर से आस्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल-पल ॥

मैं धूप चढ़ाकर अब आठों, कर्मों का हनन करूँ स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
निज आत्म तत्त्व का मनन करूँ चिंतवन करूँ निज चेतन का ।
दो श्रद्धा-ज्ञान-चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का ।।
उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महा फल हो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ ।
अब तक के संचित कर्मों का मैं पुंज जलाने आया हूँ ।।
यह अर्घ समर्पित करता हूँ, अविचल अनर्घपद दो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार ।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अर्हत देव को नमस्कार ।।
अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरंजन निराकार ।
जय अजर अमर हे मुक्तिकंत, भगवंत सिद्ध को नमस्कार ।।
छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार ।
हे मुक्ति वधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार ।।

एकादश अंग पूर्व चौदह के, पाठी गुण पच्चीस धार ।
 बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार ।।
 व्रत समिति गुप्ति चारित्र प्रबल, वैराग्य भावना हृदय धार ।
 हे द्रव्य-भाव संयम मय मुनिवर, सर्व साधु को नमस्कार ।।
 बहुपुण्य संयोग मिला नरतन, जिनश्रुत जिनदेव चरण दर्शन ।
 हो सम्यग्दर्शन प्राप्त मुझे, तो सफल बने मानव जीवन ।।
 निज-पर का भेद जानकर मैं, निज को ही निज में लीन करूँ ।
 अब भेद ज्ञान के द्वारा मैं, निज आत्म स्वयं स्वाधीन करूँ ।।
 निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ ।
 पर-परणति से हो विमुख सदा, निज ज्ञानतत्त्व को ही जानूँ ।।
 जब ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता विकल्प तज, शुक्लध्यान मैं ध्याऊँगा ।
 तब चार घातिया क्षय करके, अर्हन्त महापद पाऊँगा ।।
 है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु कब इसको पाऊँगा ।
 सम्यक् पूजा फल पाने को, अब निजस्वभाव में आऊँगा ।।
 अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु, हे प्रभु मैंने की है पूजन ।
 तब तक चरणों में ध्यान रहे, जब तक न प्राप्त हो मुक्ति सदन ।।
 ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्योऽनर्घपदप्राप्तये महार्घं
 निर्वपामीति स्वाहा ।
 हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूँ ।
 मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल, नवकार मन्त्र का ध्यान करूँ ।।
 ।। इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।।

देव-शास्त्र-गुरु पूजन

केवल-रवि किरणों से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर ।
 उस श्री जिनवाणी में होता तत्त्वों का सुन्दरतम दर्शन ।।
 सद्दर्शन-बोध चरण-पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण ।
 उन देव, परम-आगम, गुरुको शत-शत वन्दन, शत-शत वन्दन ।।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।
 इन्द्रिय के भोग मधुर विष-सम, लावण्यमयी कंचन काया ।
 यह सब कुछ जड़ की क्रीडा है, मैं अब तक जान नहीं पाया ।।
 मैं भूल स्वयं के वैभव को, पर-ममता में अटकाया हूँ ।
 अब निर्मल सम्यक् नीर लिये, मिथ्यामल धोने आया हूँ ।।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।
 जड़ चेतन की सब परिणति प्रभु! अपने-अपने में होती है ।
 अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ति है ।
 प्रतिकूल संयोगों में क्रोधित, होकर संसार बढ़ाया है ।
 सन्तप्त हृदय प्रभु! चन्दन सम, शीतलता पाने आया है ।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा ।
 उज्ज्वल हूँ कुन्द-धवल हूँ प्रभु! पर से न लगा हूँ किञ्चित भी ।
 फिर भी अनुकूल लगें उन पर, करता अभिमान निरन्तर ही ।
 जड़ पर झुक-झुक जाता चेतन, की मार्दव की खण्डित काया ।
 निज शाश्वत अक्षत-निधि पाने, अब दास चरण रज में आया ।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा ।

यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन में माया कुछ शेष नहीं।
 निज अन्तर का प्रभु! भेद कहूँ उसमें ऋजुता का लेश नहीं।।
 चिंतन कुछ फिर संभाषण कुछ, क्रिया कुछ की कुछ होती है।
 स्थिरता निज में प्रभु पाऊँ जो, अन्तर का कालुष धोती है।।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र गुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।
 अब तक अगणित जड़ द्रव्यों से, प्रभु! भूख न मेरी शांत हुई।
 तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही।।
 युग-युग से इच्छा सागर में, प्रभु! गोते खाता आया हूँ।
 पंचेन्द्रिय मन के षट्सतज, अनुपम रस पीने आया हूँ।।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र गुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।
 जग के जड़ दीपक को अब तक, समझा था मैंने उजियारा।
 झंझा के एक झकोरे में जो, बनता घोर तिमिर कारा।।
 अतएव प्रभो! यह नश्वर दीप समर्पण करने आया हूँ।
 तेरी अन्तर लौ से निज अन्तर दीप जलाने आया हूँ।।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।
 जड़ कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रांति रहीं मेरी।
 मैं राग-द्वेष किया करता, जब परिणति होती जड़ केरी।।
 यों भाव-करम या भाव-मरण, सदियों से करता आया हूँ।
 निज अनुपम गंध-अनल से प्रभु, पर गंध जलाने आया हूँ।।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र गुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 जग में जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है।
 मैं आकुल व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है।।
 मैं शान्त निराकुल चेतन हूँ, है मुक्ति-रमा सहचर मेरी।
 यह मोह तड़क कर टूट पड़े, प्रभु! सार्थक फल पूजा तेरी।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 क्षण भर निज-रस को पी चेतन, मिथ्या-मल को धो देता है।
 काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है।।
 अनुपम सुख तब विलसित होता, केवल-रवि जगमग करता है।
 दर्शन बल पूर्ण प्रकट होता, यह ही अर्हन्त अवस्था है।।
 यह अर्घ समर्पण करके प्रभु! निज गुण का अर्घ बनाऊँगा।
 और निश्चित तेरे सदृश प्रभु ! अर्हन्त अवस्था पाऊँगा।।
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र गुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

भव वन में जी भर घूम चुका, कण-कण को जी भर-भर देखा।
 मृग-सम-मृग-तृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा।।

(बारह भावना)

झूठे जग के सपने सारे, झूठी मन की सब आशाएँ।
 तन-जीवन-यौवन अस्थिर है, क्षण-भंगुर पल में मुरझायें।।
 सम्राट महाबल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या?
 अशरण मृत काया में हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या?
 संसार महा दुखसागर के, प्रभु दुःखमय सुख आभासों में।
 मुझको न मिला सुख क्षण भर भी, कंचन-कामिनी प्रासादों में।।
 मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते।
 तन धन को साथी समझा था, पर ये भी छोड़ चले जाते।।
 मेरे न हुए ये, मैं इनसे, अति भिन्न अखण्ड निराला हूँ।
 निज में पर से अन्यत्व लिये, निज सम रस पीने वाला हूँ।।
 जिसके शृंगारों में मेरा, यह महँगा जीवन घुल जाता।

अत्यन्त अशुचि जड़ काया से, इस चेतन का कैसा नाता ॥
 दिन रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता ।
 मानस वाणी और काया से, आस्रव का द्वार खुला रहता ॥
 शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्तल ।
 शीतल समकित किरणें फूटें, संवर से जागे अन्तर्बल ॥
 फिर तपकी शोधकवह्नि जगे, कर्मों की कड़ियाँ टूट पड़ें ।
 सर्वांग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के निर्झर फूट पड़े ॥
 हम छोड़ चलें यह लोक तभी, लोकान्त विराजें क्षण में जा ।
 निज लोक हमारा वासा हो, शोकांत बने फिर हमको क्या ॥
 जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो ! दुर्नय-तम सत्वर टल जावे ।
 बस ज्ञाता दृष्टा रह जाऊँ, मद-मत्सर-मोह विनश जावे ॥
 चिर रक्षक धर्म हमारा हो; हो धर्म हमारा चिर साथी ।
 जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहे जग के साथी ॥

(देव भक्ति)

चरणों में आया हूँ प्रभुवर ! शीतलता मुझको मिल जावे ।
 मुरझाई ज्ञान-लता मेरी, निज अन्तर्बल से खिल जावे ॥
 सोचा करता हूँ भोगों से, बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला ।
 परिणाम निकलता है लेकिन, मानो पावक में घी डाला ॥
 तेरे चरणों की पूजा से, इन्द्रिय सुख की ही अभिलाषा ।
 अब तक न समझ ही पाया प्रभु ! सच्चे सुख की भी परिभाषा ॥
 तुम तो अविकारी हो प्रभुवर ! जग में रहते जग से न्यारे ।
 अतएव झुके तव चरणों में, जग के माणिक मोती सारे ॥

(शास्त्र भक्ति)

स्याद्वादमयी तेरी वाणी, शुभनय के झरने झरते हैं ।
 उस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं ॥

(गुरु भक्ति)

हे गुरुवर ! शाश्वत सुख दर्शक, यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है ।
 जग की नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्शन करने वाला है ॥
 जब जग विषयों में रच-पच कर, गाफिल निद्रा में सोता हो ।
 अथवा वह शिव के निष्कण्टक, पथ में विषकण्टक बोता हो ॥
 हो अर्द्ध-निशा का सन्नाटा, वन में वनचारी चरते हों ।
 तब शान्त निराकुल मानस तुम, तत्त्वों का चिंतन करते हो ॥
 करते तप शैल-नदी-तट पर, तरु-तल वर्षा की झड़ियों में ।
 समता-रस-पान किया करते, सुख-दुख दोनों की घड़ियों में ॥
 अन्तर ज्वाला हरती वाणी, मानों झड़ती हों फुलझड़ियाँ ।
 भव-बन्धन तड़-तड़ टूट पड़ें, खिल जावें अन्तर की कलियाँ ॥
 तुम-सा दानी क्या कोई हो, जग को दे दी जग की निधियाँ ।
 दिन-रात लुटाया करते हो, सम-शम की अविनश्वर मणियाँ ॥
 ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-

हे निर्मल देव ! तुम्हें प्रणाम, हे ज्ञान-दीप आगम ! प्रणाम ।
 हे शान्ति-त्याग के मूर्तिमान, शिव-पथ-पंथी गुरुवर ! प्रणाम ॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

देव-शास्त्र-गुरुपूजन

सार्वः सर्वज्ञनाथः, सकल-तनुभृतां, पाप-संताप-हर्ता,
त्रैलोक्याक्रान्त-कीर्तिः क्षत-मदन-रिपु-घातिकर्म-प्रणाशः।
श्रीमान् निर्वाणसम्पद्, वरयुवति-करा,-लीढ-कण्ठः सुकण्ठैर्,
देवेन्दैर्वन्द्य- पादो, जयति जिनपतिः, प्राप्त-कल्याणपूजः।।1।।

जय जय जय, श्रीसत्कान्ति- प्रभो जगतां पते ।

जय जय भवा,- नेव स्वामी भवाम्भसि मज्जताम्।।

जय जय महा,- मोह-ध्वान्त- प्रभातकृतेऽर्चनम् ।

जय जय जिने,- श त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम्।।2।।

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्ति-अष्टादशदोषरहित-षट्चत्वारिंशद्गुण-
सहित-अर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

देवि श्रीश्रुतदेवते भगवति, त्वत्पाद-पंकेरुह-,

द्वन्द्वे यामि शिली-मुखत्व-मपरं, भक्त्या मया प्रार्थ्यते।

माताश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद् भूते सदा त्राहि माम्।

दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं संपूजयामोऽधुना।।3।।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान! अत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्
आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव
वषट् सन्निधिकरणम्।

संपूजयामि पूज्यस्य पाद-पद्म-युगं गुरोः।

तपः प्राप्त-प्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः।।4।।

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

देवेन्द्र-नागेन्द्र-नरेन्द्र-वन्द्यान्, शुम्भत्पदान् शोभित-सार-वर्णान्।

दुग्धाब्धि-संस्पर्धि-गुणै-र्जलौघै,-जिनेन्द्र-सिद्धान्तयतीन्यजेऽहम्।।5।।

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुण-
सहिताय अर्हत्परमेष्ठिने। ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वाददनय-गर्भितद्वादशाङ्ग-
श्रुतज्ञानाय। ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्व-
साधुभ्यो जन्म-जरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

ताम्यत् त्रिलोकोदर-मध्यवर्ति-, समस्त-सत्त्वाहितहारि-वाक्यान्।

श्रीचन्दनैर्गन्ध-विलुब्धभृङ्गै-, जिनेन्द्र-सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम्।।6।।

ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अपार-संसार-महासमुद्र-, प्रोत्तारणे प्राज्य- तरीन् सुभक्त्या।

दीर्घाक्षतांगै-र्धव-लाक्ष-तौघै-, जिनेन्द्र-सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम्।।7।।

ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

विनीत-भव्याब्ज-विबोधसूर्यान्, वर्यान् सुचर्या-कथनैक-धुर्यान्।

कुन्दारविन्द-प्रमुखैः प्रसूनै, जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम्।।8।।

ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कुदर्प-कन्दर्प-विसर्प-सर्प-, प्रसह्य-निर्णाशन-वैनतेयान्।

प्राज्याज्यसारैश्चरुभी रसाढ्यै, जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम्।।9।।

ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्व-, मोहान्धकार-प्रतिघात-दीपान्।

दीपैः कनत्कांचन-भाजनस्थै, जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम्।।10।।

ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दुष्टाष्ट- कर्मन्धन- पुष्ट- जाल-, संधूपने भासुर-धूमकेतून् ।
 धूपैर्विधूतान्य-सुगन्ध-गन्धै, जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ।।11।।
 ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 क्षुभ्यद् विलुभ्यन्मन-सामगम्यान्, कुवादि-वादस्खलित-प्रभावान् ।
 फलै-रलं मोक्ष-फलाय-सारै, जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ।।12।।
 ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सद्धारि-गन्धाक्षत-पुष्प-जातै-, नैवेद्य-दीपा-मलधूप-धूपैः ।
 फलैर्विचित्रैर्घन-पुण्य-योगान् जिनेन्द्र- सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ।।13।।
 ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ये पूजां जिननाथ-शास्त्र-यमिनां, भक्त्या सदा कुर्वते,
 त्रैसंध्यं सुविचित्र-काव्य-रचना-मुच्चारयन्तो नराः ।
 पुण्याढ्या मुनिराज-कीर्ति-सहिता, भूत्वा तपोभूषणास्,
 ते भव्याः सकलावबोध-रुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ।।14।।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

वृषभोऽजितनामा च, सम्भवश्चाभिनन्दनः ।
 सुमतिः पद्मभासश्च, सुपाश्वो जिनसत्तमः ।।15।।
 चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च, शीतलो भगवान् मुनिः ।
 श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च, विमलो विमल-द्युतिः ।।16।।
 अनन्तो धर्मनामा च, शान्तिः कुन्थुर्जिनोत्तमः ।
 अरश्च मल्लिनाथश्च, सुव्रतो नमि-तीर्थकृत् ।।17।।
 हरिवंश-समुद्भूतोऽरिष्टनेमि-जिनेश्वरः ।
 ध्वस्तोपसर्ग-दैत्यारिः, पाश्वो नागेन्द्र-पूजितः ।।18।।

(111)

कर्मान्तकृन् महावीरः, सिद्धार्थ-कुल-सम्भवः ।
 एते सुरासुरौघेण, पूजिता विमलत्विषः ।।19।।
 पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरि-भूतिभिः ।
 चतुर्विधस्य संघस्य शान्तिं कुर्वन्तु शाश्वतीम् ।।20।।
 जिने भक्तिर्जिने भक्ति-, जिने भक्तिः सदास्तु मे ।
 सम्यक्त्वमेव संसार-, वारणं मोक्ष-कारणम् ।।21।।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः, श्रुते भक्तिः सदास्तु मे ।
 सज्ज्ञानमेव संसार-, वारणं मोक्ष-कारणम् ।।22।।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्ति-, गुरौ भक्तिः सदास्तु मे ।
 चारित्रमेव संसार-, वारणं मोक्ष-कारणम् ।।23।।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

देव-जयमाला

वत्ताणुट्ठाणे जणु धण-दाणे, पइं पोसिउतुहुं खत्त- धरु ।
 तव चरणविहाणे केवलणाणे, तुहुं पर-मप्पउ परमपरु ।।1।।
 जय रिसह रिसीसर-णवियपाय, जय अजिय जियंगयरोस राय ।
 जय संभव संभवकयविओय, जय अहिणंदण णंदिय-पओय ।।2।।
 जय सुमइ सुमइ- सम्मयपयास, जय पउमप्पह पउमा-णिवास ।
 जय जयहि सुपास सुपास- गत्त, जय चंदप्पह चंदाहवत्त ।।3।।

(112)

जय पुष्पयंत दंतंतरंग, जय सीयल सीयल- वयण- भंग ।
जय सेय सेय- किरणोह- सुज्ज, जय वासुपुज्ज पुज्जाणुपुज्ज ।।4।।
जय विमल विमल- गुणसेढिठाण, जय जयहि अणंताणंतणाण ।
जय धम्म धम्म- तित्थयर संत, जय संति संति- विहियायवत्त ।।5।।
जय कुंथु कुंथु पहुअंगि सदय, जय अरअर माहर विहियसमय ।
जय मल्लि मल्लिआ-दामगंध, जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध ।।6।।
जय णमि णमियामरणियरसामि, जय णेमि धम्मरह चक्कणेमि ।
जय पास पास-छिंदण-किवाण, जय वड्ढमाण जस-वड्ढमाण ।।7।।

(घत्ता)

इहजाणिय-णामहिंदुरियविरामहिं, परहिं वि णमिय-सुरावलिहिं ।
अणिहणहिं अणाइहिं समिय-कुवाइहिं, पणविवि अरहंता-वलिहिं ।।
ॐ ह्रीं वृषभादि-महावीरान्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.
स्वाहा ।

शास्त्र-जयमाला

संपइ-सुह-कारण कम्म-वियारण, भव-समुद्द-तारणतरणं ।
जिणवाणि णमस्समि सत्ति पयासमि, सग्गमोक्ख-संगमकरणं ।।1।।
जिणिद-मुहाओ विणिग्गय तार, गणिंदविगुंफिय गंथ- पयार ।
तिलोयहि मंडण धम्मह खाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।2।।
अवग्गह- ईह- अवायजुएहिं, सुधारणभेयहिं तिणिणिएहिं ।
मई छत्तीस बहुप्प- मुहाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।3।।
सुदं पुण दोणिण अणेय- पयार, सुबारह- भेय जगत्तय- सार ।
सुरिंद-णरिंदसमुच्चिय जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।4।।

(113)

जिणिंद-गणिंद-णरिंदह रिद्धि, पयासइ पुण्ण पुरा किउ लद्धि ।
णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।5।।
जु लोय-अलोयह जुत्ति जणेइ, जु तिणिण वि काल सरूव भणेइ ।
चउग्गइ- लक्खण दुज्जउ जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।6।।
जिणिंद- चरित्त विचित्त मुणेइ, सुसावहि धम्मह जुत्ति जणेइ ।
णिउग्गु वि तिज्जउ इत्थु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।7।।
सुजीव-अजीवह तच्चह चक्खु, सुपुण्णु वि पाव वि बंध वि मुक्खु ।
चउत्थु णिउग्गु वि भासिय जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।8।।
तिभेयहिं ओहि वि णाणु विचित्तु, चउत्थ रिजू विउलं मइ उत्तु ।
सुखाइय केवलणाण वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।9।।
जिणिंदह णाणु जग-त्तय भाणु, महातम णासिय सुक्ख-णिहाणु ।
पयच्चउ भत्तिभरेण वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।10।।
पयाणि सुबारह कोडि सयेण, सुलक्ख तिरासिय जुत्ति-भरेण ।
सहस अट्ठवण पंच वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।11।।
इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव, सहस चुलसीदिय सा छक्केव ।
सढाइगवीसह गंथ-पयाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ।।12।।

(धत्ता)

इह जिणवर-वाणि विसुद्धमई, जो भवियण णिय-मण धरई ।
सो सुर-णरिंद संपइ लहई, केवलणाण वि उत्तरई ।।13।।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भित द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अर्घं नि. स्वाहा ।

(114)

गुरु-जयमाला

भवियह भव-तारण सोलह- कारण, अज्जवि- तित्थयरत्तणहं ।
तवकरमि असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महव्वयइं ॥1॥
वंदामि महारिसि सीलवंत, पंचिंदिय- संजम जोगजुत्त ।
जे गारह अंगइ अणुसरंति, जे चउदह पुव्वइं मुणि थुणंति ॥2॥
पादाणुसारि- वरकुट्ठबुद्धि, उप्पण्णु जाह आयासरिद्धि ।
जे पाणाहारी तोरणिया, जे रुक्ख-मूलि आतावणिया ॥3॥
जे मउणधारि चन्दायणिया, जे जत्थत्थ वणि णिवास-णिया ।
जे पंच-महव्वय धरणधीर, जे समिदि-गुत्ति पालण हि वीर ॥4॥
जे वट्ठहि देह विरत्तचित्त, जे राय- रोस-भय-मोहचित्त ।
जे कुगइहि संवरुविगयलोह, जे दुरियविणास अकामकोह ॥5॥
जे जल्लमलत्तणलित्तगत्त, आरंभ-परिग्गह जे विरत्त ।
जे तिण्णकाल बाहर गमंति, छट्ठट्ठम-दसमइं तव चरंति ॥6॥
जे इक्कगास दुइगास लिति, जे णीरस-भोयणि रइ करंति ।
ते मुणिवर वंदउं ठियमसाणे, जे कम्मडहइ वर सुक्कझाणे ॥7॥
बारहविह संजम जे धरंति, जे चारिउ विकहा परिहरंति ।
बावीस परीसह जे सहंति, संसार-महण्णउ ते तरंति ॥8॥
जे धम्म-बुद्धि महियलि थुणंति, जे काउस्सग्गे णिसि गमंति ।
जे सिद्धिविलासणि अहिलसंति, जे पक्खमासि आहारु लिति ॥9॥
गोदूहणि जे वीरासणिया, जे धणुह- सेज्ज-वज्जासणिया ।

जे तवबलेण आयासि जंति, जे गिरि-गुह-कंदरि-विवरि थंति ॥10॥
जे सत्तु-मित्त समभाव-चित्त, ते मुणिवर वंदउ दिढ-चरित्त ।
चउवीसह गंथह जे विरत्त, ते मुणिवर वंदउ जग-पवित्त ॥11॥
जे सज्झाय-झाणेक्कचित्त, वंदामि महारिसि मोक्खपत्त ।
रयण-त्तय-रंजिय सुद्ध- भाव, ते मुणिवर वंदउ ठिदिसहाव ॥12॥

(घत्ता)

जे तव-सूरा संजम धीरा सिद्ध-वधु-अणुराईया ।

रयण-त्तय-रंजिय कम्महगंजिय ते रिसिवर मइ झाईया ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान-चारित्रादि-गुण-विराजमानाचार्योपाध्यायसर्व-साधुभ्यो
अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

णमोकार महामन्त्र पूजन

अनुपमा अनादि अनंत हैं, यह मन्त्रराज महान है ।

सब मंगलों में प्रथम मंगल, करत अघ की हान है ॥

अर्हत सिद्धाचार्य पाठक, साधुओं की वन्दना ।

इस शब्दमय परब्रह्म को थापूँ करूँ नित अर्चना ॥

ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।

(भुजंगप्रयात छन्द)

महातीर्थ गंगा नदी नीर लाऊँ, महामन्त्र की नित्य पूजा रचाऊँ ।

णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ॥

ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि.स्वाहा ।

कपूरादि चंदन महागंध लाके, परं शब्द ब्रह्मा की पूजा रचाके ।
 णमोकार मंत्राक्षरों को जज्जू मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ।।
 ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा ।
 पयः सिन्धु के फेन सम अक्षतों को, लिया थाल में पुंज से पूजने को ।
 णमोकार मंत्राक्षरों को जज्जू मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ।।
 ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा ।
 जुही कुंद अरविन्द मंदार माला, चढ़ाऊँ तुम्हें काम को मार डाला ।
 णमोकार मंत्राक्षरों को जज्जू मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ।।
 ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा ।
 कलाकन्द लड्डू इमरती बनाऊँ, तुम्हें पूजते भूख व्याधि नशाऊँ ।
 णमोकार मंत्राक्षरों को जज्जू मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ।।
 ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा ।
 शिखादीप की ज्योति बिस्तारती है, महामोह अंधेर संहारती है ।
 णमोकार मंत्राक्षरों को जज्जू मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ।।
 ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा ।
 सुगन्धि बड़े धूप खेते अग्नी में, सभी कर्मका भस्म हो एकक्षण में ।।
 णमोकार मंत्राक्षरों को जज्जू मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ।।
 ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा ।
 अनानास अंगूर अमरूद लाया, महामोक्ष सम्पत्ति हेतु चढ़ाया ।
 णमोकार मंत्राक्षरों को जज्जू मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ।।
 ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा ।
 उदक गंध आदि मिला अर्घ लाया, महामन्त्र नवकार को मैं चढ़ाया ।।
 णमोकार मंत्राक्षरों को जज्जू मैं, महाघोर संसार दुःख से बचूँ मैं ।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा ।

(दोहा)

शान्तिधारा मैं करूँ, तिहुँजग शान्ति हेत ।
 भव भव आतप शांत हों, पूजूँ भक्ति समेत ।।
 शान्तये शान्तिधारा ।

वकुल मल्लिका पुष्प ले, पूजूँ मन्त्र महान ।
 पुष्पांजली से पूजते, सकल सौख्य वरदान ।।
 पुष्पाञ्जलिः ।।

(जाप्य)

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं, ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं, ॐ ह्रीं णमो
 आयरियाणं, ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं, ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं ।
 (108 लवंग अथवा सुगन्धित पीले तंदुलों से जाप्य करना)

जयमाला

पंच परम गुरुदेव नमूँ नमूँ नत शीश मैं ।
 करो अमंगल छेव, गाऊँ तुम गुण मालिका ।।1।।

(चाल- हे दीन बन्धु..... !)

जैवंत महामंत्र मूर्ति मंत्र धरा में,
 जैवंत परम ब्रह्म शब्द ब्रह्म धरा में ।
 जैवंत सर्वमंगलों में मंगलीक हो,
 जैवंत सर्व लोक में तुम सर्वश्रेष्ठ हो ।।2।।
 त्रैलोक्य में हो एक तुम ही शरण हमारे,
 माँ शारदा भी नित्य ही तुम कीर्ति उचारे ।
 विघ्नों का नाश होता है तुम नाम जाप से ।

सम्पूर्ण उपद्रव नशे हैं तुम प्रताप से॥३॥
 छयालिस सुगुण को धरें अरिहन्त जिनेशा॥
 सब दोष अठारह से रहित त्रिजग महेशा॥
 ये घातिया को घात के परमात्मा हुए।
 सर्वज्ञ वीतराग और निर्दोष गुरु हुए॥४॥
 जो अष्ट कर्म नाश के ही सिद्ध हुए हैं।
 वे अष्ट गुणों से सदा विशिष्ट हुए हैं॥
 लोकाग्र में हैं राजते वे सिद्ध अनन्ता।
 सर्वार्थ सिद्धि देते हैं वे सिद्ध महन्ता॥५॥
 छत्तीस गुण को धारते आचार्य हमारे।
 चऊ संघ के नायक हमें भव सिन्धु से तारें॥
 पच्चीस गुणों युक्त उपाध्याय कहाते।
 भव्यों को मोक्षमार्ग का उपदेश पढ़ाते॥६॥
 जो साधु अट्ठाईस मूल गुण को धारतें।
 वे आत्म साधना से साधु नाम धारतें॥
 ये पंच परम देव भूतकाल में हुए।
 होते हैं वर्तमान में भी पंच गुरु ये॥७॥
 होंगे भविष्य काल में सुगुरु अनन्ते।
 ये तीन लोक तीन काल के हैं अनन्ते॥
 इन सब अनन्तानंत की मैं वन्दना करूँ।
 शिवपथ के विघ्न पर्वतों की खंडना करूँ॥८॥
 इक और तराजू पे अखिल गुण को चढ़ाऊँ।

इक और महामन्त्र अक्षरों को धराऊँ॥
 इस मन्त्र के पलड़े को उठा ना सके कोई।
 महिमा अनंत यह धरे ना इस सदृश कोई॥९॥
 इस मन्त्र के प्रभाव श्वान देव हो गया।
 इस मन्त्र से अनंत का उद्धार हो गया॥
 इस मन्त्र की महिमा को कोई गा नहीं सके।
 इसमें अनंत शक्ति पार पा नहीं सके॥१०॥
 पाँचों पदों से युक्त मन्त्र सारभूत है।
 पैंतीस अक्षरों से मन्त्र परमपूत है॥
 पैंतीस अक्षरों के जो पैंतीस व्रत करै।
 उपवास या एकाशना से सौख्य को भरै॥११॥
 तिथि सप्तमी के सात पंचमी के पाँच हैं।
 चौदस के चौदह नवमी के नव विख्यात हैं॥
 इस विधि से महामन्त्र की आराधना करें।
 वे मुक्ति बल्लभा प्रति निज कामना करें॥१२॥

(दोहा)

यह विष को अमृत करे, भव भव पाप बिदूर।
 पूर्व 'ज्ञानमती' हेतु मैं जजुँ भरु सुख पूर॥१३॥

ॐ ह्रीं अनादिनिधनपंचनमस्कारमंत्राय अनर्घपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ
 निर्वपामीति स्वाहा।

मंत्रराज सुखकार, आत्म अनुभव देते हैं।
 जो पूजे रुचिधार, स्वर्ग मोक्ष के सुख लहैं॥

॥ इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं॥

विद्यमान श्री बीस तीर्थकर पूजन

दीप अढ़ाई मेरु पन सब तीर्थकर बीस।

तिन सबकी पूजा करूँ मन वच तन धरि शीस॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकराः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि।

इन्द्र-फणीन्द्र-नरेन्द्र वंद्य पद निर्मल धारी।

शोभनीक संसार सार गुण हैं अविकारी॥

क्षीरोदधि सम नीर सों हो पूजों तृषा निवार।

सीमंधर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार॥

श्री जिनराज हो भव-तारण तरण जिहाज॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधर-युगमन्धर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-
अनन्तवीर्य-सूर्यप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-भद्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-
नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयश-अजितवीर्येति विद्यमानविंशति-तीर्थकरेभ्यो
जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक के जीव पाप-आताप सताये।

तिनको साता दाता शीतल वचन सुहाये।

बावन चंदन सों जजूँ हो भ्रमन-तपन निरवार।सी॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

यह संसार अपार महासागर जिनस्वामी,

तातैं तारे बड़ी, भक्ति-नौका जग नामी।

तन्दुल अमल सुगंध सो हो पूजों तुम गुणसार॥सी॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

भविक-सरोज-विकाश निंद्य-तम हर रवि से हो।

जति-श्रावक आचार कथन को तुम्हीं बड़े हो॥

फूल सुवास अनेक सों हो पूजों मदन-प्रहार॥सी॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

काम-नाग विषधाम नाश को गरुड कहे हो।

छुधा महादव-ज्वाल तास को मेघ लहे हो॥

नेवज बहुघृत मिष्ट सों हो पूजों भूख विडार॥सी॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति
स्वाहा।

उद्यम होन न देत सर्व जगमाहिं भर्यो है।

मोह-महातम घोर नाश परकाश कर्यो है॥

पूजों दीप प्रकाश सों हो ज्ञान-ज्योति करतार॥सी॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व.
स्वाहा।

कर्म आठ सब काठ भार विस्तार निहारा।

ध्यान अग्निकर प्रगट सरब कीनो निरवारा॥

धूप अनूपम खेवते हो दुःख जलै निरधार॥सी॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व. स्वाहा।

मिथ्यावादी दुष्ट लोभऽहंकार भरे हैं।

सबको छिन में जीत जैन के मेरु खड़े हैं॥

फल अति उत्तम सो जजो हो वांछित फल-दातार॥सी॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

जल फल आठों दर्व अरघ कर प्रीति धरी है।
गणधर-इन्द्रनिहू तैं थुति पूरी न करी है॥
'द्यानत' सेवक जानके (हो) जग ते लेहु निकार॥सी॥
ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

ज्ञान-सुधाकर चन्द, भविक-खेतहित मेघ हो।
भ्रम-तम भान अमन्द तीर्थकर बीसों नमों॥1॥
सीमंधर सीमंधर स्वामी, जुगमन्धर जुगमन्धर नामी।
बाहु बाहु जिन जग-जन तारे, करम सुबाहु बाहुबल दारे॥2॥
जात सुजातं केवलज्ञानं, स्वयंप्रभु प्रभु स्वयं प्रधानं।
ऋषभानन ऋषि भानन दोषं, अनंतवीरज वीरज कोषं॥3॥
सौरी प्रभ सौरीगुणमालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं।
वज्रधार भवगिरि वज्जर हैं, चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं॥4॥
भद्रबाहु भद्रनि के करता, श्रीभुजंग भुजंगम हरता।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजै, नेमिप्रभु जस नेमि विराजें॥5॥
वीरसेन वीरं जग जानैं, महाभद्र महाभद्र बखानैं।
नमों जसोधर जसधरकारी, नमों अजित वीरज बलधारी॥6॥
धनुष पाँचसौ काय विराजें, आयु कोडि पूरब सब छाजें।
समवशरण शोभित जिनराजा, भवजल-तारन तरन जिहाजा॥7॥
सम्यक् रत्नत्रय-निधि दानी, लोकालोक-प्रकाशक ज्ञानी।
शत इन्द्रनि कर वंदित सो हैं, सुर-नर-पशु सबके मन मोहें॥8॥

तुमको पूजें बंदना, करैं धन्य नर सोय ।

छानत सरधा मन धरैं, सो भी धर्मी होय ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये महार्घ नि. स्वाहा ।

अकृत्रिमचैत्यालय पूजन

आठ करोड़ रु छप्पन लाख, सहस सन्त्यानवें चतुशत भाख ।

जोड़ इक्यासी जिनवर थान, तीन लोक आह्वानकरान ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयाः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।

क्षीरोदधिनीरं, उज्ज्वल छीरं, छान सुचीरं, भरि झारी ।

अति मधुर लखावन, परम सुपावन, तृषा बुझावन, गुणभारी ।

वसुकोटि सु छप्पन, लाख सताणवे, सहस चारशत इक्यासी,
जिनगेहअकीर्तिम तिहुं जगभीतर, पूजत पद ले अविनाशी ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः-
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति
स्वाहा ।

मलयागिर पावन, चंदन बावन, तापबुझावन, घसि लीनो ।

धरि कनककटोरी, द्वै करजोरी, तुमपदओरी, चितदीनो ॥ व. ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा ।

बहुभांति अनोखे तंदुल चोखे, लखि निरदोखे, हम लीने ।

धरि कंचनथाली, तुमगुणमाली, पुंजविशाली, करदीने ॥ व. ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा ।

शुभ पुष्प सुजाती, है बहु भांति, अलि लिपटाती, लेय वरं ।

धरिकनकरकेबी करगह लेवी, तुम पद जुग की, भेंटधरं ॥ व. ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा ।

खुरमा जु गिंदौड़ा, बरफी पेड़ा, घेवर मोदक, भरि थारी ।

विधिपूर्वक कीने, घृतमय भीने, खंडमें लीने, सुखकारी ॥ व. ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः-
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा ।

मिथ्यातम महातम, छाये रह्यो हम, निजभव परणति, नहिं सूझै ।

इह कारण पाकै दीप सजाकै, थाल धराकै, हम पूजैं ॥ व. ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा ।

दशगंध कुटाके, धूप बनाके, निजकर लेके, धरि ज्वाला ।

तसुधूम उड़ाई, दशदिशि छाई, बहुमहकाई अतिआला ॥ व. ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बादाम छुहारे, श्रीफल धारे, पिस्ता प्यारे, द्राखवरं ।

इनआदि अनोखे लखि निरदोखे, थाल संजोखे, भेंटधरं ॥ व. ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चंदन तंदुल कुसुम रुनेवज, दीप धूप फल, थाल रचौं ।
जयघोष कराऊँ, बीन बजाऊँ, अर्घ चढ़ाऊँ खूब नचौं ।।व.।।
ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ प्रत्येक अर्घ

अधोलोक जिन आगम साख, सात कोड़ि अरु बहतर लाख ।
श्रीजिनभवन महा छवि देइ, ते सब पूजौं वसुविधि लेइ ।।
ॐ ह्रीं अधोलोकसम्बन्धि-सप्तकोटि-द्विसप्तति-लक्ष अकृत्रिम-श्रीजिन-
चैत्यालयेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
मध्यलोक जिन मन्दर ठाठ, साढ़ै चार शतक अरु आठ ।
ते सब पूजौं अर्घ चढ़ाय, मन वच तन त्रयजोग मिलाय ।।
ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धि- चतुःशताष्टपञ्चाशत श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो
अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

ऊर्ध्वलोक के माहिं भवन जिन जानिये,
लाख चौरासी सहस्र सन्त्याणव मानिये ।
तापै धरि तेईस जजौं शिरनायकैं,
कंचन थाल मझार जलादिक लायकैं ।।

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोकसम्बन्धि-चतुरशीतिलक्ष - सप्तनवतिसहस्र - त्रयोविंशति
श्रीजिन-चैत्यालयेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वसुकोटि छप्पन लाख ऊपर, सहस्र सन्त्याणव मानिये,
शतच्यार पै गिनले इक्यासी, भवनजिनवर जानिये ।
तिहुँ लोक भीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करें,
तिन भवन को हम अर्घ लेकैं, पूजि हैं जगदुख हरैं ।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि - षट्पञ्चाशल्लक्ष - सप्तनवतिसहस्र -
चतुः-शतैकाशीति - अकृत्रिम-श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ
निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

अब वरणूं जयमालिका, सुनो भव्य चित्त लाय ।
जिनमन्दिर तिहुँ लोक के, देहुँ सकल दरशाय ।।1।।
(पद्धरि छन्द)

जय अमल अनादि अनंतजान, अनिमित्त जु अकीर्तम अचलमान ।
जय अजय अखंड अरूपधार, षट्द्रव्य नहीं दीसै लगाय ।।2।।
जय निराकार अविकार होय, राजत अनंत परदेश सोय ।
जय शुद्धसुगुण अवगाहपाय, दश दिशामाहिं इहविध लखाय ।।3।।
यह भेद अलोकाकाश जान, तामध्य लोक नभ तीन मान ।
स्वयमेव बन्यौ अविचलअनंत, अविनाशि अनादि जु कहत संत ।।4।।
पुरुषाकार ठाडो निहार, कटि हाथ धारि द्वैपग पसार ।
दच्छिन उत्तरदिशि सर्व ठौर, राजू जु सात भाख्यो निचोर ।।5।।
जय पूर्व अपरदिशि घाटबाधि, सुन कथन कहूँ ताको जु साधि ।
लखि श्वभ्रतले राजू जु सात, मधिलोक एक राजू रहात ।।6।।
फिर ब्रह्मसुरग राजू जु पाँच, भू सिद्ध एक राजू जु साँच ।
दश चार ऊँच राजू गिनाय, षट्द्रव्य लये चतुकोण पाय ।।7।।
तसु वातवल्लय लपटाय तीन, इहनिराधार लखियो प्रवीन ।
त्रसनाडी तामधि जान खास, चतुकोन एक राजू जु व्यास ।।8।।

राजू उतंग चौदह प्रमान, लखि स्वयं सिद्ध रचना महान ।
 तामध्य जीव त्रस आदि देव, निज थान पाय तिष्ठे भलेय ॥9॥
 लखि अधोभाग में श्वभ्रथान, गिन सात कहे आगम प्रमान ।
 षट्थानमाहिं नारकि बसेय, इक श्वभ्रभाग फिर तीन भेय ॥10॥
 तसु अधोभाग नारकि रहाय, पुनिऊर्ध्वभाग द्वय थानपाय ।
 बस रहे भवन व्यंतरजु देव, पूर हर्म्य छजै रचना स्वमेव ॥11॥
 तिह थान गेह जिनराजभाख, गिन सात कोटि बहत्तर जु लाख ।
 ते भवन नमों मनवचन काय, गतिश्वभ्रहरन हारे लखाय ॥12॥
 पुनि मध्यलोक गोला अकार, लखिदीप उदधि रचना विचार ।
 गिन असंख्यात भाखे जु संत, लखि संभु रमन सबके जुअंत ॥13॥
 इक राजुव्यास मैं सर्व जान, मधिलोकतनों इह कथन मान ।
 सबमध्य द्वीप जम्बू गिनेय, त्रयदशम रुचिकवर नाम लेय ॥14॥
 इन तेरह में जिनधाम जान, शतचार अठावन हैं प्रमान ।
 खग देव असुरनर आय आय, पद पूज जाय शिर नाय जाय ॥15॥
 जय ऊर्ध्वलोक सुर कल्पवास, तिहथानछजे जिनभवन खास ।
 जय लाख चुरासी पै लखेय, जयसहस सत्याणव और ठेय ॥16॥
 जय बीस तीन पुनि जोड़देय, जिन भवन अकीर्तम जानलेय ।
 प्रतिभवन एक रचना कहाय, जिनबिंब एकशत आठ पाय ॥17॥
 शतपञ्च धनुष उन्नत लसाय, पदमासनयुत वर ध्यानलाय ।
 शिरतीन छत्रशोभित विशाल, त्रयपाद पीठ मणि जटितलाल ॥18॥

भामण्डल की छबि कौन गाय, पुनि चंवर दुरत चौसठि लखाय ।
 जय दुन्दुभिरव अद्भुत सुनाय, जयपुष्प वृष्टि गंधोदकाय ॥19॥
 जय तरु अशोक शोभा भलेय, मंगल विभूति राजत अमेय ।
 घटतूप छजे मणिमाल पाय, घट धूम धूम दिग सर्व छाय ॥20॥
 जय केतु पंक्ति सोहै महान, गंधर्व देव गुन करत गान ।
 सुर जनम लेत लखि अवधिपाय, तिसथान प्रथम पूजन कराय ॥21॥
 जिन गेह तनो वरनन अपार, हम तुच्छबुद्धि किस लहत पार ।
 जय देव जिनेसुर जगत भूप, नमि 'नेम' मंगे निज देह रूप ॥22॥

तीन लोक में सासते, श्रीजिन भवन विचार ।

मन वच तन करि शुद्धता, पूजों अरघ उतार ॥23॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्धि-अष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुः
 शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तिहुँ जग भीतर श्री जिनमन्दिर, बने अकीर्तम अति सुखदाय ।
 नर सुर खगकरि बंदनीक जे, तिनको भविजन पाठ कराय ॥24॥
 धनधान्यादिक संपत्ति तिनके, पुत्रपौत्र सुख होत भलाय ।
 चक्रीसुर खग इन्द्र होयके, करम नाश शिवपुर सुख थाय ॥25॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

सिद्ध पूजा

छंद त्रिभंगी

अष्ट करमकरि नष्ट अष्ट गुण पायकैं,

अष्टम वसुधा माहिं विराजे जायकैं।

ऐसे सिद्ध अनंत महंत मनायकैं,

संवौषट् आह्वान करूँ हरषायकैं॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ

ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

छंद त्रिभंगी

हिमवनगत गंगा आदि अभंगा, तीर्थ उतंगा सरवंगा।

आनिय सुरसंगा, सलिल सुरंगा, करि मन चंगा भरि भृंगा॥

त्रिभुवन के स्वामी, त्रिभुवननामी, अंतरजामी अभिरामी।

शिवपुरविश्रामी निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी शिरनामी॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये

सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हरिचंदन लायो कपूर मिलायो, बहु महकायो मन भायो।

जलसंग घसायो रंगसुहायो, चरन चढ़ायो हरषायो त्रिभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये

सिद्धपरमेष्ठिने भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुल उजियारे, शशि-दुतिटारे, कोमल प्यारे अनियारे।

तुषखंड निकारे, जलसु पखारे, पुंज तुम्हारे ढिग धारे त्रिभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये

सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरु की बारी, प्रीतिविहारी, किरिया प्यारी गुलजारी।

भरि कंचनथारी, माल सँवारी, तुम पद धारी अतिसारी त्रिभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये
सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान निवाजे, स्वाद विराजे, अमृत लाजे क्षुत भाजे।

बहु मोदक छाजे, घेवर खाजे, पूजन काजे करि ताजे त्रिभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये
सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आपापर भासे, ज्ञान प्रकाशै, चित्त विकासै, तम नासै।

ऐसे विध खासे, दीप उजासे, धरि तुम पासे, उल्लासे त्रिभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये
सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चुंबत अलिमाला, गंध विशाला, चंदन काला, गरुवाला।

तस चूर्ण रसाला, करि ततकाला, अगनी ज्वाला में डाला त्रिभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये
सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल अतिभारा, पिस्ता प्यारा, दाख छुहारा, सहकारा।

ऋतु ऋतु का न्यारा, सत्फल सारा, अपरम्पारा लै धारा त्रिभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये
सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल वसुवृंदा, अरघ अमंदा, जजत अनंदा, के कंदा।

मेटो भवफंदा, सब दुखदंदा, 'हीराचंदा' तुम बंदा त्रिभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्ध-चक्राधिपतये
सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

ध्यान दहन विधि-दारु दहि, पायो पद निरवान ।

पंचभाव-जुत थिर भये, नमौ सिद्ध भगवान ॥1॥

तोटक छंद

सुख सम्यकदर्शन ज्ञान लहा, अगुरु-लघु सूक्ष्म-वीर्य महा ।
अवगाह अबाध अघायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥2॥
असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजैं, भुवनेन्द्र खगेन्द्र गणेन्द्र भजैं ।
जर जामन-मरण मिटायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥3॥
अमलं अचलं अकलं अकुलं, अछलं असलं अरलं अतुलं ।
अरलं सरलं शिवनायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥4॥
अजरं अमरं अधरं सुधरं, अडरं अहरं अमरं अधरं ।
अपरं असरं सब लायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥5॥
वृषवृंद अमंद न निंद लहैं, निरदंद अफंद सुछंद रहैं ।
नित आनंदवृंद बधायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥6॥
भगवंत सुसंत अनंत गुणी, जयवंत महंत नमंत मुनी ।
जगजंतु तणो अघ-घायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥7॥
अकलंक अटंक शुभंकर हो, निरडंक निशंक शिवंकर हो ।
अभयंकर शंकर क्षायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥8॥
अतरंग अरंग असंग सदा, भवभंग अभंग उतंग सदा ।
सरवंग अनंग नसायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥9॥

ब्रह्मंड जु मंडल मंडन हो, तिहुं दंड प्रचंड विहंडन हो ।

चिदिपिंड अखंड अकायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥10॥

निरभोग सुभोग वियोग हरे, निरजोग अरोग अशोग धरे ।

भ्रमभंजन तीक्ष्ण नसायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥11॥

जय लक्ष्य अलक्ष्य सुलक्षक हो, जय दक्षक पक्षक रक्षक हो ।

पण अक्ष प्रतक्ष खपायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥12॥

अप्रमाद अनाद सुस्वादरता, उनमाद विवाद विषाद-हता ।

समता रमता अकषायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥13॥

निरभेद अखेद अछेद सही, निरवेद अवेदन वेद नहीं ।

सब लोक अलोक के ज्ञायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥14॥

अमलीन अदीन अरीन हने, निजलीन अधीन अछीन बने ।

जमको घनघात बचायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥15॥

न अहार निहार विहार कबै, अविकार अपार उदार सबै ।

जग-जीवन के मन भायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥16॥

असमंध अधंद अरंध भये, निरबंध अखंद अगंध ठये ।

अमनं अतनं निरवायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥17॥

निरवर्ण अकर्ण उधर्ण बली, दुख हर्ण अशर्ण सुशर्ण भली ।

बलि मोह की फौज भगायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥18॥

अविरुद्ध अक्रुद्ध अजुद्ध प्रभू- अति-शुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध विभू ।
परमात्म पूरन पायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ।।19।।
विरूप चिद्रूप स्वरूप द्युती, जसकूप अनूपम भूत भुती ।
कृतकृत्य जगत्त्रय नायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ।।20।।
सब इष्ट अभीष्ट विशिष्ट हितू, उतकिष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू ।
शिव तिष्ठत सर्व सहायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ।।21।।
जय श्रीधर श्रीकर श्रीवर हो, जय श्रीकर श्रीभर श्रीझर हो ।
जय रिद्धि सुसिद्धि-बढ़ायक हो, सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ।।21।।

देहा

सिद्ध सुगुण को कहि सकै, ज्यों विलस्त नभमान ।

‘हीराचन्द’ तातैं जजै, करहु सकल कल्याण ।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये-
अनर्घपदप्राप्तये महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल

सिद्ध जजैं तिनको नहिं आवै आपदा ।

पुत्र पौत्र धन धान्य लहै सुख संपदा ।।

इंद्र चंद्र धरणेंद्र नरेन्द्र जु होयकैं ।

जावैं मुकति मझार करम सब खोयकैं ।।

।।इत्याशीर्वादाः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

श्री सिद्ध पूजन (संस्कृत)

ऊर्ध्वाधो - रयुतं सविन्दु - सपरं, ब्रह्मास्वरा - वेष्टितं,
वर्गापूरित - दिग्गताम्बुज - दलं, तत्सन्धि-तत्त्वान्वितम्।
अन्तःपत्रतटेष्व - नाहत - युतं, ह्रींकार - संवेष्टितं,
देवं ध्यायति यः स मुक्ति सुभगो वैरीभ कण्ठीरवः॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट्
आह्वाननम्। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
स्थापनम्। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव
वषट् सन्निधिकरणम्।

निरस्त-कर्म-सम्बन्धं, सूक्ष्मं नित्यं निरामयं।

वन्देऽहं परमात्मान- ममूर्त- मनुष-द्रवम्॥

(यह पढ़कर थाल में पुष्प छोड़ना चाहिए।)

सिद्धौ निवास - मनुगं परमात्म - गम्यं,
हीनादि - भाव - रहितं भव वीत कायं।

रेवा - पगा - वर - सरो - यमुनोद् - भवानां,
नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम्।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं
नि.स्वाहा।

आनन्द - कंद - जनकं घन - कर्म - मुक्तं,
सम्यक्त्व - शर्म - गरिमं जननार्ति - वीतम्।

सौरभ्य - वासित - भुवं हरि - चंदनानां,

गंधै - र्यजे परि - मलैर् - वर - सिद्ध - चक्रम्।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने भवातापविनाशनाय चन्दनं
नि.स्वाहा।

सर्वाव - गाहन - गुणं सुसमाधि - निष्ठं,

सिद्धं स्वरूप - निपुणं कमलं विशालं।

सौगन्ध्य - शालि - वनशालि - वराक्ष - तानां,

पुञ्जै - र्यजे शशि - निभै- वर - सिद्ध - चक्रम्॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.स्वाहा।

नित्यं स्वदेह - परिमाण - मनादि - संज्ञं,

द्रव्या - नक्षेप - ममृतं मरणा - द्यतीतम्।

मन्दार - कुन्द - कमलादि - वनस्पतीनां,

पुष्पै - र्यजे शुभतमै - वर - सिद्ध - चक्रम्।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.स्वाहा।

ऊर्ध्व - स्वभाव - गमनं सुमनो - व्यपेतं,

ब्रह्मादि - बीज - सहितं गगनाव - भासम्।

क्षीरान्न - साज्य - वटकै - रस - पूर्ण - गर्भैर्-

नित्यं यजे चरु - वरै - वर - सिद्ध - चक्रम्।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.स्वाहा।

आतंक - शोक - भय - रोग - मद - प्रशांतं,

निर्द्वन्द्व - भाव - धरणं महिमा - निवेशम्।

कर्पूर - वर्ति - बहुभिः कनका - वदातैर्,

दीपै - र्यजे रुचि - वरै - वर - सिद्ध - चक्रम्॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं
नि.स्वाहा।

पश्यत् - समस्त - भुवनं युगपन् नितान्तं,

त्रैकाल्य - वस्तु - विषये - निविड - प्रदीपम्।

सद्द्रव्य - गंधघन - सार - विमिश्रि - तानां,
 धूपै - र्यजे परि - मलै - वर - सिद्ध - चक्रम् ।
 ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा ।
 सिद्धा - सुराधि - पति - यक्ष - नरेन्द्र - चक्रैर्,
 ध्येयं शिवं सकल - भव्य - जनैः सुवन्द्यम् ।
 नारंगि - पुंग - कदली - फल - नारि - केलैः,
 सोऽहं यजे वर - फलै - वर - सिद्ध - चक्रम् ॥
 ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा ।
 गन्धाढ्यं सुपयो मधु - व्रत - गणैः, संगं वरं चन्दनम्,
 पुष्पौघं विमलं स - दक्षत - चयं, रम्यं चरुं दीपकम् ।
 धूपं गन्ध - युतं ददामि विविधं, श्रेष्ठं फलं लब्धये,
 सिद्धानां युगपत् - क्रमाय - विमलं, सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥
 ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा ।
 ज्ञानोपयोग - विमलं विश - दात्म - रूपं,
 सूक्ष्म - स्वभाव - परमं य - दनंत - वीर्यम् ।
 कर्मौघ - कक्ष - दहनं सुख - सस्य - बीजं,
 वन्दे सदा निरूपमं वर - सिद्ध - चक्रम् ।
 कर्माष्टक - विनिर्मुक्तं, मोक्ष - लक्ष्मी - निकेतनम् ।
 सम्यक्त्वादि - गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥
 ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये महार्घं नि. स्वाहा ।
 त्रैलोक्येश्वर - वन्दनीय - चरणाः, प्रापुः श्रियं शाश्वतीं ।
 यानाराध्य - निरुद्ध - चण्ड - मनसः, सन्तोऽपि तीर्थकराः ।

सत् - सम्यक्त्व - विबोध - वीर्य - विशदा, व्याबाध - ताद्यै गुणैर्,
 युक्तांस् ता - निह - तोष्टवीमि सततं, सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥
 ॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥
 जयमाला
 विराग सनातन शान्तनिरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।
 सुधामविबोध निधानविमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥1॥
 विदूरित संसृतिभाव निरंग, समामृतपूरित देव विसंग ।
 अबन्ध कषायविहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥2॥
 निवारित दुष्कृत कर्म विपाश, सदामल केवल-केलि निवास ।
 भवोदधिपारग शान्तविमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥3॥
 अनन्तसुखामृतसागर धीर, कलंक-रजो-मलभूरि-समीर ।
 विखण्डित कामविरामविमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥4॥
 विकारविर्वर्जित तर्जितशोक, विबोधसुनेत्र-विलोकितलोक ।
 विहारविराव विरंगविमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥5॥
 रजोमल खेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्यसुखामृत-पात्र ।
 सुदर्शन - राजित-नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥6॥
 नरामर-वन्दित निर्मल-भाव, अनन्त मुनीश्वर पूज्यविहाव ।
 सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥7॥
 विदम्भ वितृष्णविदोषविनिद्र, परापर शंकरसार वितन्द्र ।
 विकोपविरूप विशंकविमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥8॥
 जरामरणोज्झित-वीतविहार, विचिन्तित निर्मलनिरहंकार ।

अचिन्त्यचरित्र विदर्पविमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥९॥

विवर्णविगंध विमान विलोभ, विमायविकायविशब्दविशोभ ।

अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥१०॥

असम - समय - सारं, चारु - चैतन्य - चिह्नं,

पर - परणति - मुक्तं, पद्मनन्दीन्द्र - वन्द्यम् ।

निखिल - गुण - निकेतं, सिद्धचक्रं विशुद्धं,

स्मरति नमति यो वा, स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा ।

(अडिल्ल छन्द)

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो ।

समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ॥

शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो ।

जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥

ध्यान अग्निकर कर्म कलंक सबै दहे ।

नित्य निरञ्जन देव स्वरूपी हवै रहे ॥

ज्ञायक ज्ञेयाकार ममत्व निवारकें ।

सो परमात्म सिद्ध नमूं सिर नायकें ॥

(दोहा)

अविचल ज्ञान प्रकाशतें, गुण अनन्त की खान ।

ध्यान धरै सोई पाइये, परम सिद्ध भगवान् ॥

अविनाशी आनन्दमय, गुण पूरण भगवान ।

शक्ति हिये परमात्मा, सकल पदारथ ज्ञान ॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

(137)

श्री सिद्ध भगवान् की स्तुति

निजमनोमणि भाजनभारया, समरसैक-सुधारस-धारया ।

सकलबोधकला-रमणीयकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥१॥

सहजकर्म-कलंक-विनाशनैः, -रमलभावसुवासत-चन्दनैः ।

अनुपमान-गुणावलि-नायकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥२॥

सहजभाव-सुनिर्मलतन्दुलैः, सकलदोष-विसाल-विशोधने ।

अनुपरोध-सुबोध-निधानकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥३॥

समयसार-सुपुष्प-सुमालया, सहजकर्मकरेणु विशोधया ।

परमयोगबलेन वशीकृतं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥४॥

अकृतबोध-सुदिव्यनैवेद्यकैः, -विहितजन्म-जरामरणान्तकैः ।

निरवधि-प्रचुरात्म-गुणालयं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥५॥

सहज-रत्न-रुचि-प्रतिदीपकैः, रुचि-विभूतितमः प्रविनाशनैः ।

निरवधि-स्वविकाश-प्रकाशनैः, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥६॥

निज-गुणाक्षयरूप-सुधूपनैः, स्वगुण-घातिमल-प्रविनाशनैः ।

विशदबोध-सुदीर्घ-सुखात्मकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥७॥

परमभाव-फलावलि-सम्पदा, सहजभावकुभावविशोधया ।

निजगुणास्फुरणात्म-निरञ्जनं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥८॥

नेत्रोन्मीलि-विकास-भावनिवहैः, -रत्यन्तबोधाय वै,

वार्गन्धाक्षत-पुष्पदाम-चरुकैः, सद्दीपधूपैः फलैः ।

यश्चिन्तामणि-शुद्धभाव-परम-ज्ञानात्मकै-रर्चयेत्,

सिद्धं स्वादुमगाध-बोधमचलं, सम्प्रार्चयामो वयम् ॥९॥

(138)

समुच्चय चौबीसी जिनपूजा

वृषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पदम सुपाश्वर जिनराय ।
चन्द पुहुप शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज पूजित सुरराय ।।
विमल अनंत धरम जस उज्ज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय ।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय ।।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्ते-चतुर्विंशति-जिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर
संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो
भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

मुनिमन सम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गन्ध भरा ।
भरि कनक कटोरी धीर, दीनी धार धरा ।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द कन्द सही ।
पद-जजत हरत भवफन्द, पावत मोक्ष मही ।।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।
गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंग भरी ।
जिन चरनन देत चढ़ाय, भव आताप हरी ।। चौ. ।।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
तंदुल सित सोम समान, सुन्दर अनियारे ।
मुक्ताफल की उनमान, पुञ्ज धरौं प्यारे ।। चौ. ।।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगंध भरे ।
जिन अग्र धरौं गुणमंड, काम-कलंक हरे ।। चौ. ।।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

मन मोदन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने ।

रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने ।। चौ. ।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगे ।

सब तिमिर मोह क्षय जाय, ज्ञान कला जागे ।। चौ. ।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा ।

दशगंध हुताशन माहिं, हे प्रभु खेवत हों ।

मिस धूम करम जरि जाहिं, तुम पद सेवत हों ।। चौ. ।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुचि-पक्व-सरस-फल सार, सब ऋतु के ल्यायो ।

देखतदृग मनको प्यार, पूजत सुख पायो ।। चौ. ।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ करों ।

तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों ।।

चौबीसों श्रीजिनचंद, आनन्दकंद सही ।

पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही ।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-वीरान्तेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

श्रीमत तीरथनाथ पद, माथ नाथ हितहेत ।

गाऊँ गुणमाला अबै, अजर अमर पद देत ।। 1 ।।

जय भवतम भंजन जनमनकंजन, रंजन दिनमनि स्वच्छकरा ।
 शिवमग परकाशक, अरिगण नाशक चौबीसों जिनराज वरा ॥2॥
 जय ऋषभदेव ऋषिगण नमंत, जय अजित जीत वसुअरि तुरंत ।
 जय संभव भवभय करत चूर, जय अभिनंदन आनन्दपूर ॥3॥
 जय सुमति सुमति दायक दयाल, जय पद्म पद्मदुति तनरसाल ।
 जय जय सुपास भवपास नाश, जय चंद चंदतनदुति प्रकाश ॥4॥
 जय पुष्पदंत दुति दंत सेत, जय शीतल शीतल गुननिकेत ।
 जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज, जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥5॥
 जय विमल विमल पद देनहार, जय जय अनंत गुनगण अपार ।
 जय धर्म धर्म शिव शर्म देत, जय शांति शांति पुष्टीकरेत ॥6॥
 जय कुंथु कुंथुआदिक रखेय, जय अर जिन वसु अरि छयकरेय ।
 जय मल्लि मल्ल हतमोहमल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रतशल्लदल्ल ॥7॥
 जय नमि नित वासवनुत सपेम, जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम ।
 जय पारसनाथ अनाथ नाथ, जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ॥8॥

चौबीस जिनंदा आनंदकंदा, पापनिकंदा सुखकारी ।
 तिनपद जुगचंदा उदय अमंदा, वासव-वंदा हितकारी ॥9॥
 ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्त-चतुर्विंशति जिनेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भुक्ति मुक्ति दातार, चौबीसों जिनराजवर ।
 तिनपद मनवचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥

॥ पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ॥

श्रीशान्तिनाथ जिनपूजा

(श्री बख्तावर सिंह कृत)

सर्वार्थ सुविमान त्याग गजपुर में आये ।
 विश्वसेन भूपाल तासु के नन्द कहाये ॥
 पंचम चक्री भये मदन द्वादसवें राजे ।
 मैं सेवूं तुम चरण तिष्ठये ज्यों दुःख भाजे ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।

पंचम उदधि तनो जल निरमल कंचन कलश भरे हरषाय ।
 धार देत ही श्रीजिन सन्मुख जन्म जरामृत दूर भगाय ॥
 शान्तिनाथ पंचम चक्रेश्वर द्वादश मदन तनो पद पाय ।
 तिन के चरण कमल के पूजे रोग शोक दुःख दारिद जाय ॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 मलियागिर चंदन कदली नंदन कुंकुम जल के संग घसाय ।
 भव आताप विनाशन कारण चरचूं चरण सबै सुखदाय । शान्ति ॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 पुण्यराशि सम उज्ज्वल अक्षत शशिमरीचि तसु देख लजाय ।
 पुंज किये तुम चरणन आगे अक्षय पद के हेतु बनाय । शान्ति ॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुर पुनीत अथवा अवनी के कुसुम मनोहर लिए मंगाया ।
 भेंट धरत तुम चरणन के ढिंग तत क्षिण काम बाण नस जाय । शान्ति ।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

भाँति भाँति के सद्य मनोहर कीने मैं पकवान संवार ।
 भर थारी तुम सन्मुख लायो क्षुधा वेदनी वेग निवार ।।शान्ति।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाथ नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 घृत सनेह करपूर लाय कर दीपक ताके धरे प्रजार ।
 जग मग जोत होत मन्दिर में मोह अंध को देत सुटार ।।शान्ति।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाथ दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 देवदारु कृष्णागरु चन्दन, तगर कपूर सुगन्ध अपार ।
 खेऊँ अष्ट करम जारन को धूप धनंजय माहिं सुडार ।।शान्ति।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नारंगी बादाम सुकेला एला दाडिम फल सहकार ।
 कंचन थाल माहिं धर लायो अरचत ही पाऊँ शिव नार ।।शान्ति।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जल फलादि वसु द्रव्य संवारे अर्घ चढ़ाये मंगल गाय ।
 'बखत रतन' के तुम ही साहिब दीजे शिवपुर राज कराय ।।
 शान्तिनाथ पंचम चक्रेश्वर द्वादश मदन तनो पद पाय ।
 तिन के चरण कमल के पूजे रोग शोक दुःख दारिद जाय ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

(छन्द- उपगति)

भादव सप्तमि श्यामा, सर्वारथत्याग नागपुर आये ।
 माता ऐरा नाम, मैं पूजूं ध्याऊँ अर्घ शुभलाये ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जन्मे तीरथ नाथं, वर जेठ असित चतुर्दश सोहै ।
 हरिगण नावें माथं, मैं पूजूं शान्तिचरण युग जोहै ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
 चौदस जेठ अंधयारी, कानन में जाय योग प्रभु लीन्हा ।
 नवनिधिरत्न सुछांरी, मैं बन्दू आत्मसार जिन चीह्ना ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपकल्याणकप्राप्ताय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
 पौष दसैं उजियारा, अरि घाति ज्ञान भानु जिन पाया ।
 प्रातिहार्य वसुधारा, मैं सेऊँ सुर नर जासु यश गाया ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
 सम्मेद शैलभारी, हन कर अधाति मोक्ष जिन पाई ।
 जेठ चतुर्दशिकारी, मैं पूजूं सिद्धथान सुखदाई ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्तये
 अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(छप्पय छन्द)

भये आप जिनदेव जगत में सुख विस्तारे ।
 तारे भव्य अनेक तिन्हों के संकट टारे ।।1।।
 टारे आठों कर्म मोक्ष सुख तिनको भारी ।
 भारी विरद निहार लही मैं शरण तिहारी ।।2।।

तिहारे चरणन को नमूं दुःख दारिद संताप हर ।
हर सकल कर्म छिन एक में, शान्ति जिनेश्वर शान्ति कर ॥३॥

(छन्द दोहा)

सारंग लक्षण चरण में, उन्नत धनु चालीस ।
हाटक वर्ण शरीर द्युति, नमूं शान्ति जग ईश ॥४॥

(छन्द भुजंग-प्रयात)

प्रभो आपने सर्व के फन्द तोड़े, गिनाऊँ कछू मैं तिनों नाम थोड़े ।
पड़ो अंबु के बीच श्रीपाल राई, जपो नाम तेरो भए थे सहाई ॥५॥
धरो रायने सेठ को सूलिका पै, जपी आपके नाम की सार जापै ।
भये थे सहाई तबै देव आये, करी फूल वर्षा सिंहासन बनाये ॥६॥
जबै लाख के धाम वहनि प्रजारी, भयो पाण्डवों पै महा कष्ट भारी ।
जबै नाम तेरे तनी टेर कीनी, करी थी विदुर ने वही राह दीनी ॥७॥
हरी द्रोपदी धातुकी खंड मांही, तुम्हीं वहाँ सहाई भला ओर नाहीं ।
लियो नाम तेरो भलो शील पालो, बचाई तहाँ ते सबै दुःख टालो ॥८॥
जबै जानकी राम ने जो निकारी, धरे गर्भ को भार उद्यान डारी ।
रटो नाम तेरो सबै सौख्यदाई, करी दूर पीड़ा सु क्षण ना लगाई ॥९॥
व्यसन सात सेवें करें तस्कराई, सुअंजन से तारे घड़ी ना लगाई ।
सहे अंजना चंदना दुःख जेते, गये भाग सारे जरा नाम लेते ॥१०॥
घड़े बीच में सास ने नाग डारो, भलो नाम तेरो जु सोमा संभारो ।
गई काढ़ने को भई फूलमाला, भई है विख्यात सबै दुःख टाला ॥११॥
इन्हें आदि देके कहाँ लो बखानें, सुनों विरद भारी तिहूँ लोक जानें ।
अजी नाथ मेरी जरा और हेरो, बड़ी नाव तेरी रती बोझ मेरो ॥१२॥

गहो हाथ स्वामी करो वेग पारा, कहूँ क्या अबै आपने में पुकारा ।
सबै ज्ञान के बीच भासी तुम्हारे, करो देर नाहीं मेरे शान्ति प्यारे ॥१३॥
श्री शान्ति तुम्हारी, कीरत भारी, सुर नरनारी गुणमाला ।
'बख्तावर' ध्यावे, रतन सु गावे, मम दुःख दारिद सब टाला ॥१४॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अजी एरा नन्दन छबि लखत ही आप अरण ।
धरै लज्जा भारी करत श्रुति सो लाग चरण ॥
करै सेवा सोई लहत सुख सो सार क्षण में ।
घने दीना तारे हम चहत हैं वास तिन में ॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

पंच बालयति तीर्थकर पूजा

श्रीजिन पंच अनंग जित, वासुपूज्य मलि नेमि ।
पारसनाथ सुवीर अति, पूजूं चित धरि प्रेम ॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति तीर्थकराः ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणम् ।

शुचि शीतल सुरभि सुनीर लायो भर झारी ।
दुख जामन मरन गहीर, याको परिहारी ॥
श्री वासुपूज्य मलि नेम, पारस वीर अति ।
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम पाँचों बालयति ॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-वर्द्धमान-
पंचबालयतितीर्थकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन केशर करपूर, जल में घसि आनौ।
 भव तप भंजन सुखपूर, तुमको मैं जानौ॥श्री॥।।
 ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति तीर्थकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।
 वर अक्षत विमल बनाय, सुवरन थाल भरे।
 बहुदेश देशके लाय, तुमरी भेंट धरे॥श्री॥।।
 ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति तीर्थकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व. स्वाहा।
 यह काम सुभट अति सूर, मनमें क्षोभ करौ।
 मैं लायो सुमन हजूर, याकौ वेग हरौ॥श्री॥।।
 ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति तीर्थकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।
 षट् रस पूरित नैवेद्य, रसना सुख कारी।
 द्वय कर्म वेदनी छेद, आनन्द हवै भारी॥श्री॥।।
 ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति तीर्थकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।
 धरि दीपक जगमग ज्योति, तुम चरणन आगे।
 मम मोह तिमिर क्षय होत, आतम गुण जागे॥श्री॥।।
 ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति तीर्थकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।
 ले दशविध धूप अनूप, खेऊँ गंध मई।
 दशबंध दहन जिन भूप तुमहो कर्म जई॥श्री॥।।
 ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति तीर्थकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 पिस्ता अरु दाख बदाम, श्रीफल लेय घने।
 तुम चरन जजूं गुणधाम, द्यौ सुख मोक्ष तने॥श्री॥।।
 ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति तीर्थकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 सजि वसुविधि द्रव्य मनोग, अरघ बनावत हैं।
 वसुकर्म अनादि संयोग, ताहि नशावत हैं॥।।

श्री वासुपूज्य मलि नेम, पारस वीर अति।
 नमूँ मन वच तन धरि प्रेम पाँचों बालयति॥।।
 ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति तीर्थकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 जयमाला
 दोहा
 बालब्रह्मचारी भये, पाँचों श्री जिनराज।
 तिनकी अब जयमालिका, कहूँ स्वपर हितकाज॥1॥।।
 पद्धरि छन्द
 जय जय जय श्री वासु पूज्य, तुम सम जग में नहीं और दूज।
 तुम महा शुक्र सुर लोक छार, जब गर्भ मात माहीं पधार॥2॥।।
 षोडश स्वपने देखे सुमात, बल अवधि जान तुम जन्म तात।
 अति हर्ष धार दंपत्ति सुजान, बहु दान दियो याचक जनान॥3॥।।
 छप्पन कुमारिका कियो आन, तुम मात सेव बहु भक्ति ठान।
 छः मास अगाऊ गर्भ आय, धनपति सुवरण नगरी रचाय॥4॥।।
 तुम तात महल आंगन मंझार, तिहुँ काल रतन धारा अपार।
 वरषाए षट् नव मास सार, धनि जिन पुरुषन नयनन निहार॥5॥।।
 जय मल्लिनाथ देवन सुदेव, शत इन्द्र करत तुम चरण सेव।
 तुम जन्मत ही त्रय ज्ञान धार, आनन्द भयो तिहुँ जग अपार॥6॥।।
 तब ही ले चहुँ विधि देव संग, सौधर्म इन्द्र आयो उमंग।
 सजि गज ले तुम हरि गोद आप, वन पांडुक शिल ऊपर सुथाप॥।।
 क्षीरोदधि तैं बहु देव जाय, भरि जल घट हाथों हाथ लाय।
 करि न्हवन वस्त्र भूषण सजाय, दे मात नृत्य तांडव कराय॥8॥।।

पुनि हर्ष धार हृदय अपार, सब निर्जर तब जय जय उचार ।
 तिस अवसर आनन्द हे जिनेश, हम कहिवे समरथ नहिं लेश ।9 ।
 जय जादोपति श्री नेमिनाथ, हम नमत सदा जुग जोरि हाथ ।
 तुम ब्याह समय पशुवन पुकार, सुनि तुरत छुड़ाये दया धार ।।10।।
 कर कंकण अरु सिर मौर बंद, सो तोड़ भये छिन में स्वच्छंद ।
 तब ही लौकान्तिक देव आय, वैराग्य वर्द्धनी थुति कराय ।।11।।
 ततक्षण शिविका लायो सुरेन्द्र, आरूढ़ भये तापर जिनेन्द्र ।
 सो शिविका निज कंधन उठाय, सुर नर खग मिल तप वन ठहराय ।12
 कच लौंच वस्त्र भूषण उतार, भये जती नगन मुद्रा सुधार ।
 हरि केश लेय रतनन पिटार, सो क्षीर उदधि माँही पधार ।।13।।
 जय पारसनाथ अनाथ नाथ, सुर असुर नमत तुम चरण माथ ।
 जुग नाग जरत कीनी सुरक्ष, यह बात सकल जग में प्रत्यक्ष ।14 ।
 तुम सुर धनु सम लखि जग असार, तप तपत भये तन ममत छांड ।
 शठ कमठ कियो उपसर्ग आय, तुम मन सुमेरु नहिं डगमगाय ।15 ।
 तुम शुक्ल ध्यान गहि खड़ग हाथ, अरि च्यारि घातिया कर सुघात ।
 उपजायो केवल ज्ञान भानु, आयो कुबेर हरि बच प्रमाण ।।16।।
 की समोशरण रचना विचित्र, तहाँ खिरत भई वाणी पवित्र ।
 मुनि सुर नर खग तिर्यंच आय, सुनि निज निज भाषा बोध पाय ।17
 जय वर्द्धमान अन्तिम जिनेश, पायो न अंत तुम गुण गणेश ।
 तुम च्यारि अघाति करम हान, लियो मोक्ष स्वयं सुख अचलथान ।
 तब ही सुरपति बल अवधि जान, सब देवन युत बहु हर्ष ठान ।
 सजि निज बाहन आयो सुतीर, जहँ परमौदारिक तुम शरीर ।।19।।

निर्वाण महोत्सव कियो भूर, ले मलयगिरी चंदन कपूर ।
 बहु द्रव्य सुगन्धित सरससार, तामें श्री जिनवर वपु पधार ।।20।।
 निज अग्नि कुमारिन मुकुट नाय, तिहं रतनन शुचि ज्वाला उठाय ।
 तिस सर माहीं दीनी लगाय, सो भस्म सबन मस्तक चढ़ाय ।।21।।
 अति हर्ष थकी रचि दीप माल, शुभ रतन मई दश दिश उजाल ।
 पुनि गीत नृत्य बाजे बजाय, गुणगाय ध्याय सुरपति सिधाय ।।22।।
 सो थान अबै जग में प्रत्यक्ष, नित होत दीपमाला सुलक्ष ।
 हे जिन तुम गुण महिमा अपार, बसु सम्यक् ज्ञानादिक सु सार ।।23।।
 तुम ज्ञान माहिं तिहुँ लोक दर्ब, प्रतिबिंबित हैं चर अचर सर्व ।
 लहि आतम अनुभव परम ऋद्धि, भये वीतराग जग में प्रसिद्ध ।।24।।
 ह्वै बालयती तुम सबन एम, अचरज शिव कांता वरी केम ।
 तुम परम शान्ति मुद्रा सुधार, किये अष्ट कर्म रिपु को प्रहार ।।25।।
 हम करत बीनती बार-बार, कर जोर स्व मस्तक धार-धार ।
 तुम भये भवोदधि पार पार, मोको सुवेग ही तार तार ।।26।।
 अरदास दास ये पूर पूर, बसु कर्म शैल चक चूर चूर ।
 दुख सहन दास अब शक्ति नाहिं, गही चरण शरण कीजे निवाह ।।27।।
 पाँचों बालयति तीर्थेश, तिनकी यह जयमाल विशेष ।
 मन वच काय त्रियोग सम्हार, जे गावत पावत भव पार ।।28।।
 ॐ ह्रीं श्री पंच बालयतितीर्थकरजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं नि.स्वाहा ।

ब्रह्मचर्य सों नेह धरि, रचियो पूजन ठाठ ।
 पाँचों बाल यतीनको, कीजे नित प्रतिपाठ ।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

श्री पार्श्वनाथ जिनपूजन

(पुष्पेन्द्र कृत)

हे पार्श्वनाथ ! हे अश्वसैन सुत, करुणा सागर तीर्थकर ।
 हे सिद्धशिला के अधिनायक, हे ज्ञान उजागर तीर्थकर ।।
 हमने भावुकता में भरकर, तुमको हे नाथ पुकारा है ।
 प्रभुवर ! गाथा की गंगा से, तुमने कितनों को तारा है ।।
 हम द्वार तुम्हारे आये हैं, करुणा कर नेक निहारो तो ।
 मेरे उर के सिंहासन पर, पग धारो नाथ पधारों तो ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।
 मैं लाया निर्मल जल धारा, मेरा अन्तर निर्मल कर दो,
 मेरे अन्तर को हे भगवन्, शुचि सरल भावना से भर दो ।
 मेरे इस आकुल अन्तर को दो शीतल सुखमय शान्ति प्रभु ।
 अपनी पावन अनुकम्पा से, हर लो मेरी भव-भ्रान्ति प्रभु ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 प्रभु पास तुम्हारे आया हूँ, भव का सन्ताप सताया हूँ,
 तव पद चन्दन के हेतु प्रभो, मलयागिरि चन्दन लाया हूँ ।
 अपने पुनीत चरणाम्बुज की, हमको कुछ रेणु प्रदान करो,
 हे संकटमोचन तीर्थकर, मेरे मन के सन्ताप हरो ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 प्रभुवर क्षण भंगुर वैभव को, तुमने क्षण में ठुकराया है ।
 निज तेज तपस्या से तुमने, अभिनव अक्षय पद पाया है ।।

अक्षय हों मेरे भक्ति भाव, प्रभु पद की अक्षय प्रीति मिले।
 अक्षय प्रतीति रवि किरणों से, प्रभु मेरा मानस-कुंज खिले।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
 यद्यपि शतदल की सुषमा से, मानस-सर शोभा पाता है।
 पर उसके रस में फंस मधुकर, अपने प्रिय प्राण गंवाता है।।
 हे नाथ आपके पद-पंकज, भव सागर पार लगाते हैं।
 इस हेतु तुम्हारे चरणों में, श्रद्धा के सुमन चढ़ाते हैं।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
 व्यंजन के विविध समूह प्रभो, तन की कुछ क्षुधा मिटाते हैं।
 चेतन की क्षुधा मिटाने में प्रभु! ये असफल रह जाते हैं।।
 इनके आस्वादन से प्रभु मैं, सन्तुष्ट नहीं हो पाया हूँ।
 इस हेतु आपके चरणों में नैवेद्य चढ़ाने आया हूँ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
 प्रभु दीपक की मालाओं से जग अन्धकार मिट जाता है।
 पर अन्तर्मन का अन्धकार इनसे न दूर हो पाता है।।
 यह दीप सजाकर लाए हैं इनमें प्रभु दिव्य प्रकाश भरो।
 मेरे मानस पट पर छाये अज्ञान तिमिर का नाश करो।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
 यह धूप सुगन्धित द्रव्यमयी नभमण्डल को महकाती है।
 पर जीवन-अघ की ज्वाला में ईंधन बनकर जल जाती है।।
 प्रभुवर इसमें वह तेज भरो जो अघ को ईंधन कर डाले,
 हे वीर विजेता कर्मों के हे मुक्ति-रमा वरने वाले।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

यों तो ऋतुपति ऋतु में ही फल से उपवन को भर जाता है।
 पर अल्प अवधि का ही झोंका उसको निष्फल कर जाता है।।
 दो सरस भक्ती का फल प्रभुवर, जीवन-तरु तभी सफल होगा।
 सहजानन्द सुख से भरा हुआ, इस जीवन का प्रतिफल होगा।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 पथ की प्रत्येक विषमता को मैं समता से स्वीकार करूँ
 जीवन-विकास के प्रिय-पथ की बाधाओं का परिहार करूँ।।
 मैं अष्टकर्म आवरणों का प्रभुवर आतंक हटाने को।
 वसु द्रव्य सँजोकर लाया हूँ, चरणों में नाथ चढ़ाने को।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

शिवदेवी के गर्भ में, आये दीनानाथ।
 चिर अनाथ जगती हुई, सजग, समोद, सनाथ।।
 अज्ञानमय इस लोक में, आलोक सा छाने लगा,
 होकर मुदित सुरपति नगर में रत्न बरसाने लगा।
 गर्भस्थ बालक की प्रभा प्रतिभा, प्रकट होने लगी,
 नभ से निशा की कालिमा अभिनव उषा धोने लगी।।
 ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 द्वार द्वार पर सज उठे, तोरण वन्दनवार,
 काशी नगरी में हुआ, पार्श्व प्रभु अवतार।
 प्राची दिशा के अंग में नूतन दिवाकर आ गया,
 भविजन जलज विकसित हुए जग में उजाला छा गया।

भगवान के अभिषेक को जल क्षीर सागर ने दिया,
 इन्द्रादि ने है मेरु पर अभिषेक जिनवर का किया ।।
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

निरख अथिर संसार को, गृह कुटुम्ब सब त्याग,
 वन में जा दीक्षा धरी, धारण किया विराग ।
 निज आत्मसुख के श्रोत में तन्मय प्रभु रहने लगे,
 उपसर्ग और परीषहों को शान्ति से सहने लगे ।
 प्रभु की विहार वनस्थली तप से पुनीता हो गई,
 कपटी कमठ शठ की कुटिलता भी विनीता हो गई ।।
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आत्मज्योति से हट गये, तम के पटल महान,
 प्रकट प्रभाकर सा हुआ, निर्मल केवल ज्ञान ।
 देवेन्द्र द्वारा विश्वहित समवशरण निर्मित हुआ,
 समभाव से सबको शरण का पंथ निर्देशित हुआ ।
 था शान्ति का वातावरण उसमें न विकृत विकल्प थे,
 मानों सभी तब आत्महित के हेतु कृत-संकल्प थे ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

युग युग के भव भ्रमण से, देकर जग को त्राण,
 तीर्थकर श्रीपार्श्व ने, पाया पद-निर्वाण ।
 निर्लिप्त आज नितान्त है चैतन्य कर्म अभाव से,
 है ध्यान, ध्याता, ध्येय का किंचित न भेद स्वभाव से ।

तव पाद पद्मों की प्रभु सेवा सतत पाते रहें,
 अक्षय असीमानन्द का अनुराग अपनाते रहें ।।
 ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(वन्दनागीत)

अनादिकाल से कर्मों का मैं सताया हूँ,
 इसी से आपके दरबार आज आया हूँ ।
 न अपनी भक्ति, न गुणगान का भरोसा है,
 दयानिधान श्री भगवान का भरोसा है ।
 इक आस लेकर आया हूँ, कर्म कटाने के लिये,
 भेंट में कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ।।
 जल न चन्दन और अक्षत पुष्प भी लाया नहीं,
 है नहीं नैवेद्य, दीप, मैं धूप फल पाया नहीं ।
 हृदय के टूटे हुए उद्गार केवल साथ हैं,
 और कोई भेंट के हित, अर्घ सजवाया नहीं ।
 है यही फल फूल जो समझो चढ़ाने के लिए ।
 भेंट में कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ।।
 मांगना यद्यपि बुरा समझा किया मैं उम्र भर,
 किन्तु अब जब मांगने पर बांध कर आया कमर ।
 और फिर सौभाग्य से जब आप सा दानी मिला,
 तो भला फिर मांगने में आज क्यों रक्खूँ कसर ।
 प्रार्थना है आप ही जैसा बनाने के लिए,
 भेंट में कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ।।

यदि नहीं यह दान देना आपको मंजूर है,
 और फिर कुछ माँगने से दास ये मजबूर है।
 किन्तु मुँहमांगा मिलेगा मुझको ये विश्वास है,
 क्योंकि लौटाना न इस दरबार का दस्तूर है।
 प्रार्थना है कर्म बन्धन से छुड़ाने के लिए,
 भेंट में कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिए ॥
 हो न जब तक माँग पूरी नित्य सेवक आयेगा,
 आपके पदपंकज में 'पुष्पेन्दु' शीश झुकायेगा।
 है प्रयोजन आपको यद्यपि न मेरी भक्ति से,
 किन्तु फिर भी नाथ मेरा तो भला हो जाएगा।
 आपका क्या जायेगा बिगड़ी बनाने के लिये,
 भेंट में कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपकेवलज्ञाननिर्वाणपंचकल्याणक सहिताय
 अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री अहिच्छत्रक्षेत्र पार्श्वनाथ जिनपूजन

हे पार्श्वनाथ करुणानिधान महिमा महान मंगलकारी।
 शिव भर्तारी, सुख भण्डारी, सर्वज्ञ सुखारी त्रिपुरारी॥
 तुम धर्मसेत, करुणानिकेत, आनन्द हेत अतिशय धारी।
 तुम चिदानन्द आनन्द कन्द दुख-द्वन्द्व फन्द संकटहारी॥
 आवाहन करके आज तुम्हें अपने मन में पधराऊँगा।
 अपने उर के सिंहासन पर गद-गद हो तुम्हें बिठाऊँगा॥

मेरा निर्मल मन टेर रहा, हे नाथ हृदय में आ जाओ।
 मेरे सूने मन मन्दिर में पारस भगवान समा जाओ॥
 ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथ-जिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
 आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव
 वषट् सन्निधिकरणम्।

भव वन में भटक रहा हूँ मैं भर सकी न तृष्णा की खाई।
 भव सागर के अथाह दुख में सुख की जल बिन्दु नहीं पाई॥
 जिस भाँति आपने तृष्णा पर, जय पाकर तृष्णा बुझाई है।
 अपनी अतृप्ति पर, अब तुमसे जय पाने की सुधि आई है।
 ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं
 निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित हो क्रूर कमठ ने जब नभ से ज्वाला बरसाई थी।
 उस आत्मध्यान की मुद्रा में आकुलता तनिक न आई थी॥
 विघ्नों पर बैर-विरोधों पर मैं साम्यभाव धर जय पाऊँ।
 मन की आकुलता मिट जाये ऐसी शीतलता पा जाऊँ॥
 ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चन्दनं
 नि.स्वाहा।

तुमने कर्मों पर जय पाकर मोती सा जीवन पाया है।
 यह निर्मलता मैं भी पा जाऊँ मेरे मन यही समाया है॥
 यह मेरा अस्तव्यस्त जीवन इसमें सुख कहीं न पाता हूँ।
 मैं भी अक्षय पद पाने को शुभ अक्षत तुम्हें चढ़ाता हूँ॥
 ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.
 स्वाहा।

अध्यात्मवाद के पुष्पों से जीवन फुलवारी महकाई।
जितना जितना उपसर्ग सहा उतनी उतनी दृढ़ता आई।।
मैं इन पुष्पों से वञ्चित हूँ अब इनको पाने आया हूँ।
चरणों पर अर्पित करने को कुछ पुष्प संजोकर लाया हूँ।।
ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.
स्वाहा।

जय पाकर चपल इन्द्रियों पर अन्तर की क्षुधा मिटा डाली।
अपरिग्रह की आलोक शक्ति अपने अन्दर ही प्रगटा ली।।
भटकाती फिरती क्षुधा मुझे मैं तृप्त नहीं हो पाया हूँ।
इच्छाओं पर जय पाने को मैं शरण तुम्हारी आया हूँ।।
ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.
स्वाहा।

अपने अज्ञान अंधेरे में वह कमठ फिरा मारा मारा।
व्यन्तर विमानधारी था पर तप के उजियारे से हारा।।
मैं अंधकार में भटक रहा उजियारा पाने आया हूँ।
जो ज्योति आप में दर्शित है वह ज्योति जगाने आया हूँ।।
ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.
स्वाहा।

तुमने तपके दावानल में कर्मों की धूप जलाई है।
जो सिद्ध-शिला तक आ पहुँची वह निर्मल गंध उड़ाई है।।
मैं कर्म बंधनों में जकड़ा भव बन्धन से घबराया हूँ।
वसु-कर्म दहन के लिये तुम्हें मैं धूप चढ़ाने आया हूँ।।
ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

तुम महा तपस्वी शान्ति मूर्ति उपसर्ग तुम्हें न डिगा पाये।
तप के फल ने पद्मावति के इन्द्रों के आसन कम्पाये।।
ऐसे उत्तम फल की आशा मैं मन में उमड़ी पाता हूँ।
ऐसा शिव सुख फल पाने को, फल की शुभ भेंट चढ़ाता हूँ।।
ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।
संघर्षों में उपसर्गों में तुमने समता का भाव धरा।
आदर्श तुम्हारा अमृत-बन भक्तों के जीवन में बिखरा।।
मैं अष्ट द्रव्य से पूजा का शुभ थाल सजा कर लाया हूँ।
जो पदवी तुमने पाई है मैं भी उस पर ललचाया हूँ।।
ॐ ह्रीं श्रीअहिच्छत्रक्षेत्र-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा।

पंच कल्याणक

वैशाख कृष्ण दुतिया के दिन तुम वामा के उर में आये।
श्री अश्वसेन नृप के घर में, आनन्द भरे मंगल छाये।।
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं
निर्वपामीति स्वाहा।

जब पौष कृष्ण एकादशि को, धरती पर नया प्रसून खिला।
भूले भटके भ्रमते जगको, आत्मोन्नति का आलोक मिला।।
ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं
नि.स्वाहा।

एकादशि पौष कृष्ण के दिन, तुमने संसार अथिर पाया।
दीक्षा लेकर आध्यात्मिक पथ, तुमने तप द्वारा अपनाया।।
ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादशीदिने तपोमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं
निर्वपामीति स्वाहा।

अहिच्छत्र धरा पर जी भर कर, की क्रूर कमठ ने मनमानी।
तब कृष्णा चैत्र चतुर्थी को, पद प्राप्त किया केवल ज्ञानी॥
यह वन्दनीय हो गई धरा, दश भव का बैरी पछताया।
देवों ने जय जयकारों से, सारा भूमण्डल गुञ्जाया॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थीदिवसे अहिच्छत्रतीर्थे ज्ञानसाम्राज्यप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ-
जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावण शुक्ला सप्तमि के दिन, सम्मेद शिखर ने यश पाया।
'सुवर्ण गिर भद्र कूट' से जब, शिव मुक्ति रमा को परिणाया॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लासप्तम्यां सम्मेदशिखरस्य सुवर्णभद्रकूटाद् मोक्षमंगल
मण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

सुरनर किन्नर गणधर फनधर योगीजन ध्यान लगाते हैं।
भगवान तुम्हारी महिमा का, यशगान मुनीश्वर गाते हैं॥
जो ध्यान तुम्हारा ध्याते हैं दुख उनके पास न आते हैं।
जो शरण तुम्हारी रहते हैं उनके संकट कट जाते हैं।
तुम कर्मदली, तुम महाबली इन्द्रिय सुख पर जय पाई है।
मैं भी तुम जैसा बन जाऊँ मन में यह आज समाई है॥
तुमने शरीर औ आत्मा के अंतर स्वभाव को जाना है।
नश्वर शरीर का मोह तजा निश्चय स्वरूप पहिचाना है॥
तुम द्रव्य, मोह औ भाव मोह इन दोनों से न्यारे-न्यारे।
जो पुद्गल के निमित्त कारण वे राग द्वेष तुम से हारे॥
तुम पर निर्जन वन में बरसे ओले-शोले पत्थर पानी।
आलोक तपस्या के आगे चल सकी न शठ की मनमानी॥

यह सहन शक्तियों का बल है जो तप के द्वारा आया था।
जिसने स्वर्गों में देवों के सिंहासन को कम्पाया था॥
'अहि' का स्वरूप धर कर तत्क्षण धरणेन्द्र स्वर्ग से आया था।
ध्यानस्थ आप के ऊपर प्रभु फण-मण्डप बन कर छाया था॥
उपसर्ग कमठ का नष्ट किया मस्तक पर फण-मण्डप रचकर।
पद्मादेवी ने उठा लिया तुम को सिर के सिंहासन पर॥
तप के प्रभाव से देवों ने व्यंतर की माया विनशाई।
पर प्रभो आपकी मुद्रा में तिल मात्र न आकुलता आई॥
उपसर्गों का आतंक तुम्हें हे प्रभु तिल भर न डिगा पाया।
अपनी विडम्बना पर बैरी असफल हो मन में पछताया॥
शठ कमठ बैर के वशीभूत भौतिक बल पर बौराया था।
अध्यात्म आत्मबल का गौरव यह मूरख समझ न पाया था॥
दश भव तक जिसने बैर किया पीड़ायेँ देकर मन मानी।
फिर हार मानकर चरणों में झुक गया स्वयं वह अभिमानी॥
यह बैर महा दुख दायी है यह बैर न बैर मिटाता है।
यह बैर निरन्तर प्राणी को भव सागर में भटकाता है॥
जिनको भव सुख की चाह नहीं, दुख से न जरा भय खाते हैं।
वे सर्व-सिद्धियों को पाकर भव सागर से तिर जाते हैं॥
जिसने भी शुद्ध मनोबल से ये कठिन परीषह झेली है।
सब ऋद्धि-सिद्धियाँ नत होकर उनके चरणों पर खेली हैं॥

जो निर्विकल्प चैतन्य रूप शिव का स्वरूप तुमने पाया।
 ऐसा पवित्र पद पाने को मेरा अन्तर मन ललचाया।।
 कार्माण वर्गणायें मिलकर भव वन में भ्रमण कराती हैं।
 जो शरण तुम्हारी आते हैं ये उनके पास न आती हैं।।
 तुमने सब बैर विरोधों पर समदर्शी बन जय पाई है।
 मैं भी ऐसी समता पाऊँ यह मेरे हृदय समाई है।।
 अपने समान ही तुम सब का जीवन विशाल कर देते हो।
 तुम हो तिखाल वाले बाबा जग को निहाल कर देते हो।।
 तुम हो त्रिकाल दर्शी तुमने तीर्थकर का पद पाया है।
 तुम हो महान अतिशय धारी तुम में आनन्द समाया है।।
 चिन्मूरति आप अनंत गुणी रागादि न तुमको छू पाये।
 इस पर भी हर शरणागत मनमाने सुख साधन पाये।।
 तुम रागद्वेष से दूर दूर इनसे न तुम्हारा नाता है।
 स्वयमेव वृक्ष के नीचे जग शीतल छाया पा जाता है।।
 अपनी सुगन्ध क्या फूल कहीं घर पर आकर बिखराते हैं।
 सूरज की किरणों को छूकर सुमन स्वयं खिल जाते हैं।।
 भौतिक पारस मणि तो केवल लोहे को स्वर्ण बनाती है।
 हे पार्श्व प्रभो तुमको छूकर आत्मा कुन्दन बन जाती है।।
 तुम सर्व शक्ति धारी हो प्रभु ऐसा बल मैं भी पाऊँगा।
 यदि यह बल मुझको भी दे दो फिर कुछ न मांगने आऊँगा।।
 कह रहा भक्ति के वशीभूत हे दया सिन्धु स्वीकारो तुम।

जैसे तुम जग से पार हुये मुझ को भी पार उतारो तुम।।
 जिसने भी शरण तुम्हारी ली वह खाली हाथ न आया है।
 अपनी अपनी आशाओं का सबने वांछित फल पाया है।।
 बहूमूल्य सम्पदायें सारी ध्याने वालों ने पाई हैं।
 पारस के भक्तों पर निधियाँ स्वयमेव सिमटकर आई हैं।।
 जो मन से पूजा करते हैं पूजा उनको फल देती है।
 प्रभु-पूजा भक्त पुजारी के, सारे संकट हर लेती है।
 जो पथ तुमने अपनाया है वह सीधा शिव को जाता है।
 जो इस पथ का अनुयायी है वह परम मोक्ष पद पाता है।।
 ॐ ह्रीं अहिच्छत्रश्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घ निर्वपामीति
 स्वाहा।

दोहा

पार्श्वनाथ भगवान को जो पूजे धर ध्यान।
 उसे लोक परलोक के मिलें सकल वरदान।।

। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

श्री रविव्रत-पूजा

यह भविजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही।
 करहु भव्यजन सर्व, सुमन देकें सही।।
 पूजो पार्श्व जिनेन्द्र, त्रियोग लगायके।
 मिटे सकल सन्ताप, मिलै निधि आयके।।
 मतिसागर इक सेठ, सु ग्रन्थन में कहो।
 उनने भी यह पूजा कर आनन्द लहो।।

तातें रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये।
 सुख सम्पत्ति संतान, अतुल निधि लीजिये।।
 प्रणमों पार्श्व जिनेश को, हाथ जोड़ सिर नाय।
 परभव सुख के कारने, पूजा करूँ बनाय।।
 रविवार व्रत के दिना, ये ही पूजन ठान।
 ता फल सुख सम्पत्ति लहैं, निश्चय लीजे मान ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
 परिपुष्पांजलिं क्षिपामि।

उज्ज्वल जल भरकें अतिलायो, रतन कटोरन माहीं।
 धार देत अति हर्ष बढ़ावत, जन्म जरा मिट जाहीं।।
 पारसनाथ जिनेश्वर पूजो, रविव्रत के दिन भाई।
 सुख सम्पत्ति बहु होय तुरत ही, आनन्द मंगल दाई।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
 मलयागिर केशर अतिसुन्दर कुंकुम रंग बनाई।
 धार देत जिन चरनन आगे, भव आताप नशाई।। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
 मोतीसम अति उज्ज्वल तंदुल, लावो नीर पखारो।
 अक्षयपद के हेतु भावसों श्री जिनवर ढिग धारो। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
 बेला अरु मचकुंद चमेली, पारिजात के ल्यावो।
 चुनचुन श्रीजिन अग्र चढ़ाऊँ, मनवांछित फल पावो।। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बावर फैनी गुजिया आदिक, घृत में लेत पकाई।
 कंचन थार मनोहर भरके, चरनन देत चढ़ाई। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
 मणिमय दीप रतनमय लेकर, जगमग जोति जगाई।
 जिनके आगे आरति करके, मोहतिमिर नश जाई। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
 चूरन कर मलयागिरि चंदन, धूप दशांग बनाई।
 तट पावक में खेय भाव सों, कर्मनाश हो जाई। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 श्रीफल आदि बदाम सुपारी, भांति-भांति के लावो।
 श्रीजिन चरन चढ़ाय हरषकर, तातें शिवफल पावो। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 जल गंधादिक अष्ट द्रव्य ले, अर्घ बनावो भाई।
 नाचत गावत हर्षभाव सों, कंचन थार भराई। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 मन वचन काय त्रिशुद्ध करके, पार्श्वनाथ सु पूजिये।
 जल आदि अर्घ बनाय भविजन, भक्तिवंत सु हूजिये।। पारस.।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णाघं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

यह जग में विख्यात हैं पारसनाथ महान।
 तिन गुण की जयमालिका, भाषा करूँ बखान।।
 जय जय प्रणमों श्री पार्श्व देव, इन्द्रादिक तिनकी करत सेव।

जय जय सु बनारस जन्म लीन, तिहुँ लोक विषैं उद्योत कीन ॥
 जय जिनके पितु श्री अश्वसेन, तिनके घर भये सुख-चैन देन ॥
 जय वामा देवी मात जान, तिनके उपजे पारस महान ॥
 जय तीन लोक आनन्द देन, भविजन के दाता भये ऐन ।
 जय जिनने प्रभु की शरण लीन, तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन ॥
 जय नाग नागिनी भये अधीन, प्रभु चरणन लाग रहे प्रवीन ।
 तज देह देवगति गये जाय, धरणेन्द्र पद्मावति पद लहाय ॥
 जय अञ्जन चोर अधम अजान, चोरी तज प्रभु को धरो ध्यान ।
 जय मृत्यु भये वह स्वर्ग जाय, ऋद्धि अनेक उनने सो पाय ॥
 जय मत्तिसागर इक सेठ जान, तिन अशुभकर्म आयो महान ।
 तिनकै सुत थे परदेश माहिं, उनसे मिलने की आश नाहिं ॥
 जय रविव्रत पूजन करी सेठ, ता फल कर सब से भई भेंट ।
 जिन जिन ने प्रभु की शरण लीन, तिन ऋद्धि सिद्धि पाई नवीन ॥
 जय रविव्रत पूजा करहिं जेय, ते सौख्य अनन्तानन्त लेय ।
 धरणेन्द्र पद्मावति हुये सहाय, प्रभुभक्त जान तत्काल आय ॥
 पूजा विधान इहिविधि रचाय, मन वचन काय तीनों लगाय ।
 जो भक्तिभाव जयमाल गाय, सोही सुखसम्पत्ति अतुल पाय ॥
 बाजत मृदंग बीनादि सार, गावत नाचत नाना प्रकार ।
 तन नन नन नन नन ताल देत, सन नन नन नन सुर भर सो लेत ॥
 ता थेई थेई थेई पग धरत जाय, छम छम छम छम घुंघरु बजाय ।
 जे करहिं निरत इहि भांत भांत, ते लहहिं सुख शिवपुर सुजात ॥

दोहा
 रविव्रत पूजा पार्श्व की, करै भविक जन जोय ।
 सुख सम्पत्ति इह भव लहैं, आगे सुर पद होय ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र, पूज भवि मन धरें ।
 भव भव के आताप, सकल छिन में टरें ॥
 होय सुरेन्द्र नरेन्द्र, आदि पदवी लहे ।
 सुख सम्पत्ति सन्तान, अटल लक्ष्मी रहे ॥
 फेर सर्व विधि पाय, भक्ति प्रभु अनुसरें ।
 नानाविधि सुख भोग, बहुरि शिवतिय वरें ॥
 ॥ पुष्पांजलिं क्षिपेत् ॥

रविव्रत जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं नमो भगवते चिंतामणि-पार्श्वनाथाय सप्तफण-मण्डिताय
 श्रीधरणेन्द्र पद्मावती-सहिताय मम ऋद्धिं सिद्धिं वृद्धिं सौख्यं कुरु कुरु
 स्वाहा ।

श्री बाहुबलि स्वामी की पूजन

आचार्य श्री 108 सन्मत्तिसागर जी कृत
 बाहुबली तुम जीत भरत, नश्वर अभिमान मिटाया था ।
 वन में जा अनुपम तप करके, केवल रवि को प्रकटाया था ॥
 संसार महादुख सागर है, भव्यों को आप बताया है ।
 इन्द्रादि देव चक्री आकर, प्रभु पद में शीश झुकाया है ॥
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।

अमृतमय रतनत्रय जल से, निज मन को शुद्ध बनाऊँगा।
 इस नश्वर जड़ तन के पीछे, ना अपना समय गमाऊँगा।
 निर्मल निज भाव बनाने को, प्रासुक जल कलसा लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।
 पर परणति में पर क्रोधादि, अग्नी से झुलसा जाता हूँ।
 निज शीतल रूप निराकुल का, प्रभु अनुभव कर ना पाता हूँ।
 भव का सन्ताप मिटे स्वामिन्, शीतल चन्दन घिस लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
 निज पद को भूल अनादि से, भव पद में शिव सुख मान रहा।
 है पूर्ण निराकुल अनुपम पद, विषयों में रम नहीं जान रहा।
 निज अक्षय पद के हेतु विभो, अक्षत मुक्ता सम लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
 हूँ शुद्ध निराकुल ऋजुतामय, मुझमें छल माया लेश नहीं।
 निज को भूला रम भोगों में, यातें मिलता सन्तोष नहीं।
 कामादि नशें निज गन्ध रमूँ, यह पुष्प सुगन्धित लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
 जड़ तन इन्द्रिय के पोषण को, नाना व्यञ्जन रस मय खाये।
 अबलो न क्षुधा मम शान्त हुई, आशा तृष्णा बढ़ते पाये।

सम्भाव सुधारस पान करूँ, षट् रसमय व्यञ्जन लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
 है ज्ञान दीप मेरा मुझमें, पर मोह आवरण ढका हुआ।
 यातें निज पर परकाश बिना, ठोकर खा भव वन पड़ा हुआ।
 अन्तर से मोह विनश जावे, प्रभु कंचन दीपक लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
 जड़कर्म यदा अत्यन्त भिन्न, फिर भी इन सरबस लूट लिया।
 वर भेद ज्ञान की अग्नि में, जिन दहा दिया शिव सौख्य लिया।
 सारे जड़ कर्म विनश जावें, प्रभु धूप दहन को लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 प्रभु पुण्य पापमय क्रीड़ा कर, चहुँगति में बहुफल पाये हैं।
 निज अनुभव का अवलम्बन ले, सम रस फल ना चख पाये हैं।
 नर भव से वर फल मोक्ष मिले, ये फल नाना विध लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 हूँ शुद्ध निराकुल सिद्धों सम, भवलोक हमारा वासा ना।
 रिपु रागरु द्वेष लगे पीछे, यातें शिवपद को पाया ना।
 निज के गुण निज में पाने को, प्रभु अर्घ सजों कर लाया हूँ।
 हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

कर्म कली को तोड़ भुजबली, मुक्ति गली ले सुख पाया।
प्रकटा के केवल सूर्य किरण, जग भव्य कमल को विकसाया।।
हो आदीश्वर के लाल आप, जो युग के आदि विधाता थे।
जितने ही प्राणी भूमण्डल पर, सबको समरस दाता थे।।
आनन्दित गंग सुनन्दा सी, माँ के प्राणों के प्यारे थे।
थे कामदेव वर प्रथम आप, सबकी आँखों के तारे थे।।
थी ब्रह्म ज्ञान से युक्त तुम्हारी, ब्रह्म सुन्दरी-सी भगिनी।
जिन अक्षर अंक कला पाई, अरु बनी आर्यिका वर गणिनी।।
थे चरम शरीरी भ्रात आप, शत एक अतिशय बल बाहुबली।
रत्नत्रय ध्यान धनुष लेकर, दल दल कर डाले कर्म दली।।
तुम भ्रात चक्रधर भरतेश्वर, छह खण्ड जीत बल से आया।
फिर पौदनपुर के राज्य हेतु, तुमको भी खत था लिखवाया।।
खत पढ़ा आप भरतेश्वर का, आ नमन करो मुझको भाई।
नहिं सबकी धूल उड़ा दूंगा, समझो अब कजा घर आई।।
तुम साफ मना कर दिये मुझे, आधीनपना स्वीकार नहीं।
सेना लेकर के आता हूँ, यहाँ कोरी करता बात नहीं।।
आँखें हो गई तुम लाल लाल, सेनापति को बुलवाय लिया।
चतुरंगी सजी सब सेना सह, जा युद्ध क्षेत्र में शोर किया।।
दोनों मन्त्री मिल करी मन्त्रणा, सेना क्यों व्यर्थ कटाय रहे।
युद्ध नियुक्त कर तीन सभी, आपस में उन्हें लड़ाय रहे।।

त्रय युद्ध भई तुम विजय पूर्ण, भरतेश्वर का अपमान हुआ।
उन चक्र चलाया क्रोधित हो, पर चक्र शरण आ खड़ा हुआ।।
यह लीला लख भरतेश्वर की, भव भोगन से वैराग्य हुआ।
मतलब की सारी दुनिया है, आतम से निज अनुराग हुआ।।
कर केश लौंच तज वस्त्र सभी, तुम राह लई निर्जन वन की।
संवत्सर अनुपम तप कीना, तन बनी वामियाँ सर्पन की।।
भरतेश्वर ने आकर स्वामी, तुम चरणों शीश झुकाया था।
आँखों से अश्रु धार बहीं, निश्चय प्रायश्चित्त को आया था।।
कर बद्ध अरज भरतेश्वर की, स्वामी मन में क्यों आंश रही।
मेरे से चक्री ना जाने, कितने आकर गए रही मही।।
जब केवल रवि का उदय हुआ, जय जय नभ में खग बोल रहे।
सुर असुर तुम्हारी पूजा कर, भक्ति में नाचे कूद रहे।।
तुमरी महिमा के गीत प्रभो, भरतेश्वर इन्द्रदेव गाये।
हे तारणतरण भवोदधि से, निज के गुण निज में हैं पाए।।
ये बेल चढ़ी तुमरे तन पर, अनुपम शोभा को पाती हैं।
सिर घुंघरी हुई लटें प्रभुवर, सब के मन को हरषाती हैं।।
तुमरी महिमा जग में अपार, इन शब्दों में ना आती है।
तुम दर्शन करते एक बार, सारी विपदा टल जाती है।।
सच्चे मन से जो भक्त बिभो, तुमरे चरणों आ जाता है।
लौकिक निधि की तो बात जरा, सम्यक्निधि निज पा जाता है।।
प्रभु रोगी पंगु मूक भक्त जो, तुम गुण का नित गान करे।

कंचन सम उसकी काया हो, अरु मुक्ति बधू आ वरण करे ॥
 नित प्रति प्रभु जो तुम चरणों की, पूजन कर निज को ध्याता है।
 पर से अपने को भिन्न लखे, कर्मों से लड़ सुख पाता है ॥
 प्रभु काल अनादि से मैंने, पर वैभव को निज माना है।
 है शक्ति निराकुल सिद्धों सम, उसको ना मैं पहचाना है ॥
 बिभु तुमरी पूजन करने से, निज रूप समझ में आया है।
 संसार महादुख सागर में, नाहक में समय गमाया है ॥
 लौकिक सुख की कुछ चाह नहीं, प्रभु तुम सा तप कर सुख पाऊँ।
 सन्मति साम्भाव निजी गुण है, पुरुषारथ बल से नित ध्याऊँ ॥
 ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आदीश्वर से पूर्व बिभो, दीने कर्म नशाय।
 अर्घ मुहा अर्पण करूँ, शत-शत शीश नवाय ॥
 ॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

निर्वाण क्षेत्र पूजा

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये ।
 सिद्धभूमि निश-दीस, मन-वच-तन पूजा करौं ॥
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
 आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव
 वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।
 शुचि छीर-दधि-सम नीर निरमल, कनक-झारी में भरौं।
 संसार पार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं ॥

सम्मदेगढ़ गिरनार चंपा, पावापुरि कैलाशकों।
 पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि-निवासकों ॥
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं
 नि.स्वाहा।
 केशर कपूर सुगंध चन्दन, सलिल शीतल विस्तरौं।
 भव-तापकौ संताप मेटो, जोर कर विनती करौं ॥सम्मदेद.॥
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं नि.
 स्वाहा।
 मोती-समान अखंड तंदुल, अमल आनंद धरि तरौं।
 औगुन हरौं गुन करौं हमको, जोरकर विनती करौं ॥सम्मदेद.॥
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.
 स्वाहा।
 शुभ फूल-रास सुवास-वासित, खेद सब मन को हरौं।
 दुख-धाम-काम विनाश मेरो, जोरकर विनती करौं ॥सम्मदेद.॥
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.
 स्वाहा।
 नेवज अनेक प्रकार जोग मनोग धरि भय परिहरौं ।
 मम भूख-दूखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौं ॥सम्मदेद.॥
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.
 स्वाहा।
 दीपक-प्रकाश उजास उज्ज्वल, तिमिरसेती नहिं डरौं।
 संशय-विमोह-विभरम-तम-हर, जोर कर विनती करौं ॥सम्मदेद.॥
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.
 स्वाहा।

शुभ-धूप परम-अनूप पावन, भाव पावन आचरौं ।
सब करम-पुंज जलाय दीज्यौ, जोर कर विनती करौं ।।सम्मेद.।।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा ।
बहु फल मंगाय चढ़ाय उत्तम, चार गतिसों निरवरौं ।
निहचै मुकति-फल देहु मोको, जोर कर विनती करौं ।।सम्मेद.।।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा ।
जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं ।
'द्यानत' करो निरभय जगत सों, जोर कर विनती करौं ।।सम्मेद.।।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा ।

जयमाला

श्री चौबीस जिनेश, गिरि कैलाशादिक नमों ।

तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवाणतैं ।।

(चौपाई)

नमो ऋषभ कैलासपहारं, नेमिनाथ गिरनार निहारं ।
वासुपूज्य चंपापुर वंदौ, सन्मति पावापुर अभिनंदौ ।।
वंदौ अजित अजित पद-दाता, वंदौ संभव भव-दुःख-घाता ।
वंदौ अभिनंदन गुण-नायक, वंदौ सुमति सुमति के दायक ।।
वंदौ पदम मुकति-पदमाकर, वंदौ सुपास आश-पासाहर ।
वंदौ चन्द्रप्रभ प्रभु चंदा, वंदौ सुविधि सुविधि-निधि-कंदा ।।
वंदौ शीतल अघ-तप-शीतल, वंदौ श्रेयांस श्रेयांस महीतल ।
वंदौ विमल विमल उपयोगी, वंदौ अनंत-अनंत सुख भोगी ।।
वंदौ धर्म धर्म विस्तारा, वंदौ शान्ति शान्ति मन धारा ।

वंदौ कुन्थ कुन्थ रखवालं, वन्दौ अर अरि-हर गुण माला ।।
 वंदौ मल्लि काम-मल-चूरन, वंदौ मुनिसुव्रत व्रत-पूरन ।
 वंदौ नमि जिन नमित-सुरासुर, वंदौ पार्श्व-पार्श्वभ्रम-जग-हर ।।
 बीसों सिद्धि भूमि जा ऊपर, शिखरसम्मोद-महागिरि भूपर ।
 भावसहित बंदे जो कोई, ताहि नरक-पशुगति नहिं होई ।।
 नरपति नृप सुर शक्र कहावै, तिहुं जग-भोग भोगि शिव पावैं ।
 विघन-विनाशन मंगलकारी, गुण-विलास वंदौ भवतारी ।।
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा ।
 जो तीरथ जावै पाप मिटावे, ध्यावै गावै भगति करै ।
 ताको जस कहिये संपति लहिये, गिरिके गुण को बुध उचरैं ।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

सप्तर्षि-पूजा

(छण्णय छन्द)

प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर ।
 तृतीय मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर ।।
 पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि ।
 सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्र-धाम गनि ।।
 ये सातों चारण-ऋद्धि-धर, करूँतास पद थापना ।
 मैं पूजूं मन वचन काय करि, जो सुख चाहूँ आपना ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिचारणर्द्धिधरसप्तर्षीश्वराः ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
 आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव
 वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।

शुभ-तीर्थ-उद्भव-जल अनुपम, मिष्ट शीतल लायके ।
 भव-तृषा-कंद-निकंद-कारण, शुद्ध-घट भरवायकै ।।
 मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिन की पूजा करूँ ।
 ता करें पातक हरे सारे, सकल आनन्द विस्तारूँ ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्व-स्वरमन्व-निचय-सर्वसुन्दर-जयवान-विनयलालस-जयमित्रा-
 ख्यचारणर्षिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीखंड कदली नंद केशर, मंद मंद घिसायकैं ।
 तसु गंध प्रसरित दिग-दिगंतर, भर कटोरी लायकै ।।मन्वा. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अति धवल अक्षत खंड-वर्जित, मिष्ट राजन भोग के ।
 कलधौत-थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोग के ।।मन्वा. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 बहु-वर्ण सुवरण-सुमन आछै, अमल कमल गुलाब के ।
 केतकी चंपा चारु मरुआ, चुने निज-कर चावके ।।मन्वा. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 पकवान नानाभाँति चातुर, रचित शुद्ध नये नये ।
 सदमिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरटके थारा लये ।।मन्वा. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कलधौत-दीपक जडित नाना, भरित गोघृत-सारसों ।
 अति ज्वलित जग मग-ज्योति जाकी, तिमिर नाशन हार सों ।।मन्वा. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दिक्-चक्र गंधित होत जाकर, धूप दश-अंगी कही ।
 सो लाय मन-वच काय शुद्ध, लगाय कर खेऊँ सही ।।मन्वा. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायकैं।
 द्रावडी दाडिम चारु पुंगी, थाल भर भर लायकैं।।मन्वा.।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सुलावना।
 फल ललित आठों द्रव्य-मिश्रित, अर्घ कीजे पावना।।मन्वा.।।
 ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(धत्ता)

वंदूँ ऋषिराजा धर्म-जहाजा निज-पर-काजा करत भले।
 करुणा के धारी गगन-विहारी दुःख-अपहारी भरम दले।।
 काटत जम फंदा भवि-जन-वृंदा करत अनंदा चरणन में।
 जो पूजैं ध्यावैं मंगल गावैं फेर न आवैं भव-वन में।।

छन्द पद्धरी

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत, त्रस-थावर की रक्षा करन्त।
 जय मिथ्या-तम-नाशक पतंग, करुणा-रस-पूरित अंग अंग।।
 जय श्रीस्वरमनु अकलंकरूप, पद-सेव करत नित अमर भूप।
 जय पंच अक्ष जीते महान, तप तपत देह कंचन-समान।।
 जय नियत सप्त तत्त्वार्थ भास, तप-रमातनों तनमें प्रकाश।
 जय विषय-रोध संबोध भान, परपरणति नाशन अचल ध्यान।।
 जय जयहि सर्वसुन्दर दयाल, लखि इंद्रजालवत जगत-जाल।
 जय तृष्णाहारी रमण राम, निज परणति में पायो विराम।।
 जय आनन्दघन कल्याण रूप, कल्याण करत सबको अनूप।
 जय मद-नाशन जयवान देव, निरमद विचरत सब करतसेव।।

(175)

जय जयहिं विनयलालस अमान, सब शत्रु मित्र जानत समान।
 जय कृशित-काय तपके प्रभाव, छवि छटा उड़ति आनन्द दाय।।
 जय मित्र सकल जग के सुमित्र, अनगिनत अधम कीने पवित्र।
 जय चन्द्र-वदन राजीव-नैन, कबहूँ विकथा बोलत न बैन।।
 जय सातों मुनिवर एक संग, नित गगन-गमन करते अभंग।
 जय आये मथुरा पुर मँझार, तहं मरी रोग को अति प्रचार।।
 जय जय तिन चरणनिके प्रसाद, सबमरी देवकृत भई वाद।
 जय लोक करे निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोड़ हस्त।।
 जय ग्रीष्म-ऋतु पर्वत मँझार, नित करत अतापन योग सार।
 जय तृष्णा-परिषह करत जेर, कहूं रंच चलत नहिं मन-सुमेर।।
 जय मूल अठाइस गुणन धार तप उग्र तपत आनन्दकार।
 जय वर्षा-ऋतु में वृक्ष-तीर, तहँ अति शीतल झेलत समीर।।
 जय शीत-काल चौपट मँझार, कै नदी-सरोवर-तट विचार।
 जय निवसत ध्यानारूढ़ होय, रंचक नहिं मटकत रोम कोय।।
 जय मृतकासन वज्रासनीय, गौदूहन इत्यादिक गनीय।
 जय आसन नानाभाँति धार, उपसर्ग सहन समता निवार।।
 जय जपत तिहारो नाम कोय, लख पुत्र पौत्र कुल वृद्धि होय।
 जय भरे लक्ष अतिशय भंडार, दारिद्रतनो दुःख होय छार।।
 जय चोर अग्नि डाकिन पिशाच, अरुईति भीति सब-नसत सांच।
 जय तुम सुमरत सुख लहत लोक, सुर असुर नमत पद देत धोक।।

(176)

(छन्द रोला)

ये सातों मुनिराज, महातप लक्ष्मी धारी।
परम पूज्य पद धरें, सकल जगके हितकारी॥
जो मनवचतन शुद्ध, होय सेवै औ ध्यावै।
सो जन 'मनरंगलाल', अष्ट ऋद्धिनकों पावै॥
नमन करत चरनन परत, अहो गरीबनिवाज।
पंच परावर्तननितैं, निरवारो ऋषिराज॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

सरस्वती-पूजा

दोहा

जनम जरा मृतु, क्षय करै, हनै कुनय जड़रीति।
भव-सागर सों ले तिरै, पूजै जिन वच प्रीति ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव
वषट् सन्निधिकरणम्।

(त्रिभंगी)

क्षीरोदधि गंगा विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखसंगा।
भरि कंचनझारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चंगा॥
तीर्थकर की ध्वनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई।
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन-मानी पूज्य भई॥
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि.
स्वाहा।

(177)

करपूर मंगाया चन्दन आया, केशर लाया रंग भरी।
शारद-पद वंदों, मन अभिनंदों, पाप निकंदों दाह हरी।।तीर्थ.।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।
सुखदास कमोदं, धारक मोदं, अति अनुमोदं चंदसमं।
बहु भक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं।।तीर्थ.।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।
बहु फूल सुवासं, विमल प्रकाशं, आनंद रासं लाय धरे।
मम काम मिटायो, शील बढ़ायो, सुख उपजायो दोष हरे।।तीर्थ.।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।
पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विधि भाया मिष्ट महा।
पूजूं धुति गाऊँ, प्रीति बढ़ाऊँ, क्षुधा नशाऊँ हर्ष लहा।।तीर्थ.।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।
करि दीपक-जोतं, तमक्षय होतं, ज्योति उदोतं तुमहिं चढ़ै।
तुम हो परकाशक, भरम-विनाशक हम घट भासक, ज्ञान बढ़ै।।तीर्थ.।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.स्वाहा।
शुभ गंध दशो कर, पावक में धर, धूप मनोहर खेवत हैं।
सब पाप जलावै, पुण्य कमावै, दास कहावै सेवत हैं।।तीर्थ.।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।
बादाम छुहारे, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी ल्यावत हैं।
मन वांछित दाता मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं।।तीर्थ.।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।
नयनन सुखकारी, मृदु गुणधारी, उज्ज्वल भारी, मोलधरें।
शुभगंध सम्हारा, वसन निहारा, तुम तन धारा ज्ञान करें।।तीर्थ.।।

(178)

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै दिव्यज्ञानप्राप्तये वस्त्रं समर्पयामीति
स्वाहा।

जल चंदन अक्षत फूल चरु अरु दीप धूप अति फल लावैं।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर दानत सुखपावैं॥ तीर्थ॥
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा।

जयमाला

सोरठा

ओंकार ध्वनिसार, द्वादशांग वाणी विमल।
नमों भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै॥

पहलो आचारांग बखानो, पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं, पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ॥
तीजो ठाना अंग सुजानं, सहस बयालिस पद सरधानं ।
चौथो समवायांग निहारं, चौंसठ सहस लाख इक धारं ॥
पंचम व्याख्या प्रज्ञप्ति दरसं, दोय लाख अट्ठाइस सहसं।
छट्टो ज्ञातृकथा विस्तारं, पांच लाख छप्पन हज्जारं ॥
सप्तम उपासकाध्ययनंगं, सत्तर सहस ग्यारलख भंगं ।
अष्टम अंतकृत दस ईसं, सहस अठाइस लाख तेईसं॥
नवम अनुत्तरदश सुविशालं, लाख बानवै सहस चवालं।
दशम प्रश्न व्याकरण विचारं, लाख तिरानवै सोल हजारं॥
ग्यारम सूत्र विपाक सु भाखं, एक कोडि चौरासी लाखं ।
चार कोडि अरु पंद्रह लाखं, दो हजार सब पद गुरुशाखं॥
द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं, इकसौ आठ कोडि पन वेदं।

अड़सठ लाख सहस छप्पन हैं, सहित पंचपद मिथ्या हन हैं॥
एक सौ बारह कोडि बखानो, लाख तिरासी ऊपर जानों।
ठान सहस पंच अधिकाने, द्वादश अंग सर्व पद माने॥
कोडि इकावन आठ हि लाखं, सहस चुरासी छह सौ भाखं।
साढ़े इक्कीस श्लोक बताये, एक एक पद के ये गाये॥
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिदेव्यै अनर्घपदप्राप्तये महार्घं नि. स्वाहा।

जा वानी के ज्ञान तै, सूझे लोक अलोक।
'दानत' जग जयवंत हो, सदा देत हूँ धोक॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्॥

श्रीसिद्धयन्त्र या विनायकयन्त्र पूजन

परमेष्ठिन्! जगत्त्राण-करणे मंगलोत्तम!।

इतःशरण! तिष्ठ त्वं, सन्निधौ भव पावन!॥

ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूताः पञ्चपरमेष्ठिनः! अत्र अवतर
अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम
सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

पंके-रुहायात-पराग-पुञ्जैः, सौगन्ध्य-वद्भि-सलिलैः पवित्रैः
अर्हत्पदाभाषित मंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि॥

ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरा-
मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीर-कर्पूर-कृतद्रवेण, संसार- तापापहतौ युतेन।

अर्हत्पदाभाषित मंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि॥

ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो भवाताप-
विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्यक्षतै-रक्षत मूर्तिमद्भि- रब्जादि-वासेन सुगन्धवद्भिः ।
 अर्हत्पदाभाषित मंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपद-
 प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 कदम्ब-जात्यादि-भवैः सुरद्रुमैः, -जातेर्मनोजात-विपाशदक्षैः ।
 अर्हत्पदाभाषित मंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः कामबाण-
 विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 पीयूष-पिण्डैश्च शशांक-कांति, -स्पर्धाभिविष्टै-र्नयनप्रियैश्च ।
 अर्हत्पदाभाषित मंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोग-
 विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ध्वस्तान्ध-कारप्रसरैः सुदीपैः, धृतोद्भवैः रत्नविनिर्मितैर्वा ।
 अर्हत्पदाभाषित मंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकार-
 विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 स्वकीय-धूमेन नभोऽवकाश-संव्याप्नु-वद्भिश्च सुगन्धधूपैः ।
 अर्हत्पदाभाषित मंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्म-
 दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नारंग-पूगादि-फलैरनर्घैः, हन्मानसादि-प्रियतर्पकैश्च ।
 अर्हत्पदाभाषित मंगलादीन्, प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये
 फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अच्छाम्भः शुचि-चन्दनाक्षत-सुमैः, नैवेद्यकैश्चारुभिर्,
 दीपैर्धूपफलोत्तमैः समुदितैः, रेभिः सुपात्रस्थितैः ।
 अर्हत्सिद्ध-सुसूरि-पाठक-मुनीन्, लोकोत्तमान् मंगलान्,
 प्रत्यूहौघनिवृत्तये शुभकृतः, सेवे शरण्यानहम् ।।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा श्रीमंगलोत्तमशरणभूतेभ्यः पञ्चपरमेष्ठिभ्यो अनर्घपद-
 प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्घ

(वसन्ततिलका छन्द)

कल्याण - पञ्चक - कृतोदय - माप्त - मीश-
 मर्हन्त - मच्युत - चतुष्टय - भासुरांगम् ।
 स्याद्वाद - वा - गमृत - सिंधु - शशांक - कोटि,
 मर्चे जलादिभि - रनन्त - गुणालयं तम् ।।
 ॐ ह्रीं श्री अनन्तचतुष्टयादिलक्ष्मी विभ्रतेऽर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये
 अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कर्माष्ट - केध्म - चय - मुत्पथ - माशु हुत्वा,
 सद्ध्यान - वह्नि विसरे स्वय - मात्मवन्तम् ।
 निःश्रेयसा - मृत - सरस्यथ सन् निनाय,
 तं सिद्ध - मुच्च - पददं परि - पूजयामि ।।
 ॐ ह्रीं अष्टकर्मकाष्टाणभस्मीकृते श्री सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं
 निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वाचार - पञ्चक - मपि स्वय - माचरन्तः,
 ह्याचारयन्ति भविकान् निज - शुद्धि - भाजः ।
 ता - नर्चयामि विविधैः सलिलादि - भिश्च,
 प्रत्यूह - नाशन - विधौ निपुणान् पवित्रैः ।।

ॐ ह्रीं श्रीपञ्चाचारपरायणाय आचार्यपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.
स्वाहा।

अष्टांग - बाह्य - परिपाठन - लालसाना-
मष्टांग - ज्ञान - परिशीलन - भावितानाम्।
पादार - विन्द - युगलं खलु पाठकानां,
शुद्धैर् - जलादि - वसुभिः परिपूजयामि॥

ॐ ह्रीं श्री द्वादशांगपठनपाठनोद्यताय उपाध्यायपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आराधना - सुख - विलास - महेश्वराणां,
सद् - धर्म - लक्षण - मयात्म - विक-स्वराणाम्।
स्तोतुं गुणान् गिरि - वनादि - निवास - भाजा-
मेषोऽर्घतश्चरण - पीठभुवं यजामि॥

ॐ ह्रीं श्रीत्रयोदशप्रकारचारित्राराधकसाधुपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं
नि.स्वाहा।

अर्हन्मंगल-मर्चामि, जगन्मंगल-दायकम्।
प्रारब्धकर्म-विघ्नौघ-प्रलयाय पयोमुखैः॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीअर्हन्मंगलाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चिदानन्दलसद्वीची-मालीढं गुणशालिकम्।
सिद्धमंगलमर्चेऽहं, सलिलादिभिरुज्ज्वलैः॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धमंगलाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

बुद्धिक्रिया-रसतपो-विक्रियौषधि-मुख्यकाः।
नर्धयो मोहदा यस्य, साधुमंगलमर्चये॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीसाधुमंगलाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकालोक-स्वरूपस्य, वक्तु धर्म-मंगलम्।

अर्चे वादित्र-निर्घोष-गीतनृत्यै-र्वनादिभिः॥

ॐ ह्रीं श्रीकेवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकोत्तमोऽर्हन् जगतां, भवबाधाविनाशकः।

अर्च्यतेऽर्घ्येण समया, कुकर्म-गणहानये॥

ॐ ह्रीं श्रीअर्हत् लोकोत्तमाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

विश्वाग्रशिखर-स्थायी, सिद्धो लोकोत्तमो मया।

मह्यते महसानन्द-चिदानन्द-सुमेदुरः॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धलोकोत्तमाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

राग-द्वेष-परित्यागी, साम्यभावाव-बोधकः।

साधुलोकोत्तमोऽर्घ्येण, पूज्यते सलिलादिभिः॥

ॐ ह्रीं श्रीसाधुलोकोत्तमाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तमक्षमया भास्वान् सद्धर्मो विष्टपोत्तमः।

अनन्तसुखसंस्थानं, यज्यतेऽम्भः सुमादिभिः॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीकेवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा।

अर्हस्त्वमेव शरणं, नान्यथा शरणं मम।

तत्त्वां भावविशुद्ध्यर्थ-, मर्हयामि जलादिभिः॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीअर्हच्छरणाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ब्रजामि सिद्धशरणं, परावर्तन-पञ्चकम्।

भित्वा स्वसुखसन्दोह, सम्पन्नमिति पूजये॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धशरणाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आश्रये साधुशरणं, सिद्धान्त-प्रतिपादनैः।

न्यक्कृताज्ञानतिमिर-,मिति शुद्ध्या यजामि तम्॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीसाधुशरणाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

धर्म एव सदा बन्धुः, स एव शरणं मम ।

इह वान्यत्र संसारे, इति तं पूजयेऽधुना ॥17॥

ॐ ह्रीं श्रीकेवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(वसन्ततिलका छन्द)

संसार - दुःख - हनने निपुणं जनानां,

नाद्यन्त - चक्रमिति सप्तदश प्रमाणम् ।

सम्पूजये विविध - भक्ति - भरावनम्रः,

शान्ति - प्रदं भुवन - मुख्य - पदार्थ - सार्थैः ॥

ॐ ह्रीं श्रीअर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

विघ्न - प्रणाशन - विधौ सुरमर्त्यनाथा,

अग्रेसरं जिन वदन्ति भवन्त - मिष्टम् ।

आना - द्यनंत - युग - वर्तिन - मत्र - कार्ये,

विघ्नौघ - वारण - कृतेऽह - मपि स्मरामि ॥

(भुजंग प्रयातछन्द)

गणानां मुनीना - मधीशस् त्वतस्ते, गणेशाख्या ये भवन्तं स्तुवन्ति ।

सदा विघ्न-सन्दोह-शान्ति र्जनानां, करे संलुठत्यायत-क्षेमकाणाम् ॥

(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

कले प्रभावत् कलुषाशयेषु, जनेषु मिथ्या - मद - वासितेषु ।

प्रवर्तितो यो गण-राज-नाम्ना, कथं स कुर्याद् भववार्धिशोषम् ॥

(उपजाति छन्द)

यो वाक्सुधा - तोषित-भव्यजीवो, यो ज्ञान-पीयूष-पयोधि-तुल्यः ।

यो वृत्त - दूरी-कृत-पाप-पुञ्जः, स एव मान्यो गणराजनाम्ना ॥

यतस्त्वमेवासि विनायिको मे, दृष्टेष्ट-योगा-दविरुद्ध-वाचः ।
त्वन्-नाम-मात्रेण पराभवन्ति, विघ्नारयस् तर्हि कि-मत्र चित्रम् ।।

(मालिनी छन्द)

जय जय जिनराज त्वद् गुणान् को व्यनक्ति,
यदि सुर - गुरु - रिन्द्रः कोटि - वर्ष - प्रमाणम् ।
वदितु - मभि - लषेद् वा पार - माप्नोति नो चेत्,
कथित इह मनुष्यः स्वल्प - बुद्ध्या समेतः ।।
ॐ ह्रीं अर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रियं बुद्धिमनाकुल्यं, धर्मप्रीति - विवर्धनम् ।
जिनधर्मे स्थिति र्भूयात्, श्रेयो मे दिशतु त्वरा ।।
।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

मानस्तम्भ पूजन

(गीतिका छन्द)

मानस्तम्भ में जिन चतुर्दिश हैं महाशुभ सोहना ।
जिनलखत मान पलात मानिन होत हिय निर्मोहना ।।
तिसमूलमाहि जिनेश प्रतिमा लखें आनंद हो घना ।
करके आह्वानन थाप पूजों, लहें शिवसुख सोहना ।।
मानस्तम्भ के मूल में प्रतिमा श्री भगवान् ।
कर आह्वानन जोरकर तिष्ठ तिष्ठ ते आन ।।
ॐ ह्रीं मानस्तम्भचतुर्दिक्षु स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्
आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव
वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

(योगीरासा)

कंचनझारी उज्ज्वल जल ले श्रीजिन चरण चढ़ाऊँ ।
भाव सहित श्रीजिनवर पूजों जनम जनम सुख पाऊँ ।।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊँ ।
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊँ ।।
ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि.
स्वाहा ।
कुमकुम केशर सरस सुवासी खासी लेकर धारो ।
भव आताप विनाशन कारण श्रीजिनचरण पखारो ।।मान.।।
ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं नि.स्वाहा ।
मुक्ताफल उनहार सुतंदुल कान्ति चन्द्रसमधारें ।
पुंज धरों जिनवर पद आगे अक्षय पद विस्तारें ।।मान.।।
ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा ।
कमल केतकी बेल चमेली भ्रमर गुंजारत जाएँ ।
पूजत श्रीजिन चरण मनोहर काम न आवे तापे ।।मान.।।
ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा ।
फेनी घेवर मुरत सु घी के लाडू गोझा लाव ।
क्षुधारोग निवारन कारन श्रीजिन चरण चढ़ावे ।।मान.।।
ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा ।
मणीमयदीप अमोलक लेकर कनक रकावी धरिये ।
मोह अंध के नाशन कारण जगमग ज्योति उजरिये ।।मान.।।
ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा ।

धूप सुगन्ध समूह अनूपम खेय अगनि में डालो ।
 अष्टकर्म ये दुष्ट भयानक इनको तुरतहि जालो ।।मान.।।
 ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीफल लोंग लायची सुन्दर पिस्ता जात घनेरा ।
 पूजि जिनेश शिवफल पाइये स्वर्गादिक सुख केरा ।।मान.।।
 ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा ।
 आठ द्रव्य मिली अरघ संजोयो पूजों श्रीजिनभाई ।
 भवसागर से पार उतारो जय जय जय जिन राई ।।मान.।।
 ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा ।

मानस्तम्भ सुहावनो चारों दिश जिन थान ।

सुर नर मुनि खग हर्षयुत पूजें आनन्द ठान ।।

(पद्धरि छन्द)

जय जय मानस्तम्भसार, शोभित नीचे चौकोर धार ।
 जय ऊपर गोलाकार जान, जय अति उत्तंग देदीप्यमान ।।
 जय ऊपर महा अति जगमगात, जय वज्रमयी नीचे सुहात ।
 जय लसै स्फटिक मय बीचमान, मणि वैडूरजसम ऊर्ध्व जान ।।
 जय तापर कमल बनें स्वरूप, जय तापर है कलशा अनूप ।
 जय दंड ध्वजा तापर सुहात, जय जगमग जगमग लहलहात ।।
 जय घंटा छत्र सु चमर जान, जय बँधी रतनमाला प्रमान ।
 जय नाना मणि मय शोभकार, राजत सो मानस्तम्भ सार ।।
 तामूल सु चारों दिश निहार, जिन प्रतिमा सोहै परम सार ।
 सुरगण पूजत जयजय उचार, कर नृत्यताल स्वर को सम्हार ।।

सननं सननं बाजै सितार, घननं घननं घन घंट धार ।
 द्रम द्रम द्रम द्रम बाजत मृदंग, करताल तबल अरु मूहचंग ।।
 छम छम छम छम नूपुर बजाय, क्षण भूमि क्षणक आकाश जाय ।
 जहाँ नाचत मधवा आप आन, तिहि शोभा को वरनें महान ।।
 इम नृत्य गान उत्सव महान, पूजत कर सुरपति हरष ठान ।
 जय पंच रतन मय अतिसुरंग, जय मानस्तम्भ दिपै अभंग ।।
 जय मानी जय सब मान छोड़, देखत नावत शिर हाथ जोड़ ।
 जय तातें मानस्तम्भ नाम, सार्थक कीन्हों शोभाभिराम ।।
 जय ऐसो मानस्तम्भ सार, सोहै चारों दिश जिन निहार ।
 जिनराज विभव देखत जु सार, महिमा वरनत पावे न पार ।।
 ॐ ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री जिनमानस्तम्भ की गुणमाला सुविशाल ।

जो नर पहिरे कंठ में सुर शिव पावे हाल ।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

नवग्रह अरिष्टनिवारक पूजन

प्रणम्याद्यंत-तीर्थेशं, धर्मतीर्थ-प्रवर्तकं ।
 भव्यविघ्नोपशांत्यर्थं, ग्रहाचार्या वर्ण्यते मया ।।
 मार्तण्डेन्दु-कुजसोम-सूरसूर्यकृतांतकाः ।
 राहुश्च केतुसंयुक्तो, ग्रह-शांतिकरा नवः ।।
 आदि अन्त जिनवर नमों, धर्म प्रकाशन कार ।
 भव्य विघ्न उपशांतको, ग्रहपूजा चित धार ।।

काल दोष परभावसों, विकल्प छूटे नाहि ।
 जिन पूजा में ग्रहन की, पूजा मिथ्या नाहि ॥
 इस ही जम्बूद्वीप में, रवि- शशि मिथुन प्रमान ।
 ग्रह नक्षत्र तारा सहित, ज्योतिष चक्र प्रमान ॥
 तिनही के अनुसार सों, कर्म चक्र की चाल ।
 सुख दुख जानै जीव को, जिन वच नेत्र विशाल ॥
 ज्ञान प्रश्न- व्याकरण में, प्रश्न अंग हैं आठ ।
 भद्रबाहु मुख जनित जो, सुनत कियो मुख पाठ ॥
 अवधि धार मुनिराज जी, कहे पूर्वकृत कर्म ।
 उनके वच अनुसार सौं, हरे हृदय को मर्म ॥
 अर्क चन्द्र कुज सोम गुरु, शुक्र शनिश्चर राहु ।
 केतु ग्रहारिष्ट नाशने, श्री जिन पूज रचाहु ॥
 ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्ट निवारकचतुर्विंशतितीर्थकराः अत्र अवतर अवतर
 संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो
 भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।
 क्षीर सिंधु समान उज्ज्वल, नीर निर्मल लीजिये ।
 चौबीस श्रीजिनराज आगे, धार त्रय शुभ दीजिये ॥
 रवि सोम भूमिज सौम्य गुरु कवि, शनि नमो पूतकेतवै ।
 पूजिये चौबीस जिन, ग्रहारिष्ट नाशन हेतवै ॥
 ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय
 जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीखंड कुमकुम हिम सुमिश्रित, घिसौं मनकरि चावसौं ।
 चौबीस श्री जिनराज अघहर, चरण चरचों भावसौं ॥रवि.॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं
 निर्वपामीति स्वाहा ।
 अक्षत अखण्डित सालि तंदुल, पुंज मुक्ताफल समं ।
 चौबीस श्रीजिनचरण पूजत, नाश ह्वै नवग्रह भ्रमं ॥रवि.॥
 ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
 निर्वपामीति स्वाहा ।
 कुन्द कमल गुलाब केतकी, मालती जाही जुही ।
 कामबाण विनाश कारण, पूजि जिनमाला गुहि ॥रवि.॥
 ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय
 पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 फैनी सुआली पुवा पापर लेय मोदक घेवरं ।
 शत छिद्र आदिक विविध व्यंजन क्षुधा हर बहु सुख करं ॥रवि.॥
 ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं
 निर्वपामीति स्वाहा ।
 मणिदीप जग मग जोत तमहर प्रभू आगे लाइये ।
 अज्ञान नाशक जिन प्रकाश, मोहतिमिर नशाइये ॥रवि.॥
 ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय
 दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कृष्णा अगर घनसार मिश्रित, लोंग चन्दन लेइये ।
 ग्रहारिष्ट नाशन हेत भविजन, धूप जिनपद खेइये ॥रवि.॥
 ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि.
 स्वाहा ।
 बादाम पिस्ता सेव श्रीफल, मोच नींबू सद फलं ।
 चौबीस श्रीजिनराज पूजत, मनोवांछित शुभफलं ॥रवि.॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि.
स्वाहा।

जल गंधसुमन अखण्ड तन्दुल, चरु सुदीप सुधूपकं।

फल द्रव्य दूध दही सुमिश्रित, अर्घ देय अनूपकं।।रवि.।।

ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि.
स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

(अडिल्ल छन्द)

सलिल गंध ले फूल सुगन्धित लीजिये,

तन्दुल ले चरु दीपक धूप खेवीजिये।

फल ले अर्घ बनाय प्रभू पद पूजिये,

रवि अरिष्ट को दोष तुरत तहे धूजिये।।

ॐ ह्रीं रवि-अरिष्ट-निवारक-श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि.
स्वाहा।

जल चन्दन बहु फूल सु तन्दुल लीजिये,

दुग्ध शर्करा राशि हित सु व्यंजन कीजिये।

दीप धूप फल अर्घ बनाय धरीजिये,

शीस जिनेन्द्र को नवाय अरिष्ट हरीजिये।।

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारकश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि.
स्वाहा।

सुरभित जल श्रीखण्ड कुसुम तन्दुल भले,

व्यंजन दीपक धूप सदा फल सो रले।

वासुपूज्य जिनराय अर्घ शुभ दीजिये,

मंगल ग्रह को रिष्ट नाश कर लीजिये।।

ॐ ह्रीं भौमारिष्ट-निवारक श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि. स्व।

शुभ सलिल चन्दन सुमन अक्षत क्षुधाहर चरु लीजिये,

मणिदीप धूप सुफल सहित बसु दरब अर्घ जु दीजिये।

विमलनाथ अनन्तनाथ सु धर्मनाथ जु शांतये,

कुन्थु अर जु नमि जिन महावीर आठ जिनं यजे।।

ॐ ह्रीं सोमग्रहारिष्ट निवारक अष्ट जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि.।

जल चन्दन फूलं तन्दुल मूलं चरु दीपक ले धूप फलं,

वसुविधि से अर्घ वसुविधि चर्च कीजे अविचल मुक्ति धरं।

ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन सुमति सुपार्श्वनाथ वरं,

शीतलनाथ श्रेयांस जिनेश्वर पूजत सुर गुरु दोष हरं।।

ॐ ह्रीं सुगुरुदोष निवारक वसु जिनवरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि. स्वाहा।

जल चन्दन ले पुष्प और अक्षत घने,

चरु दीपक बहु धूप सु फल अति सोहने।

गीत नृत्य गुण गाय अर्घ पूरन करै,

पुष्पदन्त जिन पूज शुक्र दूषण हरैं।।

ॐ ह्रीं शुक्रारिष्ट-निवारक-श्रीपुष्पदन्त जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि.
स्वाहा।

प्राणी नीरादिक बसु द्रव्य ले, मनवचकाय लगाय।

अष्ट कर्म को नाश ह्वै अष्ट महागुण पाय हो,

प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये।

ए जी रवि सुत सहज दुख जाय, प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये।।

ॐ ह्रीं शनि अरिष्टनाशक श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ
निर्वपामीति स्वाहा।

जलगन्ध पुष्प अखण्ड अक्षय चरु मनोहर लीजिये,
दीप धूप फलौघ सुन्दर अर्घ जिन पद दीजिये।
जब राहु गोचर रासि में दुख देइ दुष्ट सुभावसों,
तब नेमि जिनके भाव सेति चरण पूजै चावसों।।
ॐ ह्रीं राहु अरिष्टनाशक श्रीनेमिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि.
स्वाहा।

जल चन्दन सुमन सु लाय तन्दुल अघ हारी,
चरु दीप धूप फल लाय अर्घ करो भारी।
मैं पूजों मल्लि जिनेश पारस सुखकारी,
ग्रहकेतु अरिष्ट निवार मन सुख हितकारी ।।
ॐ ह्रीं केतु-अरिष्टनिवारक श्री मल्लिनाथपार्श्वजिनाभ्यां अनर्घपदप्राप्तये
अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

रवि शशि मंगल सौम गुरु भृगु शनि राहु सुकेतु।
इनको रिष्ट निवार करे अर्घ जिन सुख हेतु।।
ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्ट-निवारक-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ नि.
स्वाहा।

श्रीजिनवर पूजा किये, ग्रह अरिष्ट मिट जाय।
पंच ज्योतिषी देव सब, मिल सेवें प्रभु पाय।।

(पद्धरी छन्द)

जय जय जिन आदि महन्त देव, जय अजित जिनेश्वर करहिं सेव।
जय जय संभव भव भय निवार, जय जय अभिनन्दन जगत तार ।।
जय सुमति सुमति दायक विशेष, जय पद्मप्रभ लख पदम लेष।
जय जय सुपार्स हर कर्म पास, जय जय चन्द्रप्रभ सुख निवास।।

जय पुष्पदन्त कर कर्म अन्त, जय शीतल जिन शीतल करन्त।
जय श्रेयकरन श्रेयांस देव, जय वासुपूज्य पूजत सुमेव।।
जय विमल विमल कर जगत जीव, जय जय अनन्त सुख अति सदीव।
जय धर्म धुरन्धर धर्मनाथ, जय शान्ति जिनेश्वर मुक्ति साथ ।।
जय कुंथुनाथ शिव-सुख निधान, जय अरजिनेश्वर मुक्ति खान।
जय मल्लिनाथ पद पद्म भास, जय मुनिसुव्रत सुव्रत प्रकाश ।।
जय जय नमिदेव दयाल सन्त, जय नेमिनाथ तसुगुण अनन्त।
जय पारस प्रभु संकट निवार, जय वर्द्धमान आनन्दकार ।।
नव ग्रह अरिष्ट जब होय आय, तब पूजैं श्रीजिनदेव पाय ।
मन वच तन मन सुख सिंधु होय, ग्रह शांत रीत यह कही जोय ।।
ॐ ह्रीं सर्वग्रहअरिष्ट निवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थकरजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसों जिनदेव प्रभु, ग्रह सम्बन्ध विचार ।
जो पूजें प्रत्येक को, वे पावें सुख सार ।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

ॐ हां ह्रीं हूं हौं हः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।
(प्रातःकाल इस मंत्र की माला करने से सर्वग्रहों की शांति होती है।)

नवग्रहशांति स्तोत्र

जगद्गुरुं नमस्कृत्य, श्रुत्वा सद्गुरुभाषितम्।
ग्रहशांतिं प्रवक्ष्यामि, लोकानां सुखहेतवे।।
जिनेन्द्राः खेचरा ज्ञेया, पूजनीया विधिक्रमात्।
पुष्पै-र्विलेपनै-र्धूपै-र्नैवेद्यैस्तुष्टि-हेतवे।।

पद्मप्रभस्य मार्तण्डश्- चन्द्रश्चन्द्रप्रभस्य च ।
 वासुपूज्यस्य भूपुत्रो, बुधश्चाष्टजिनेशिनाम् ।।
 विमलानन्तधर्मेश-शांतिकुन्ध्वरनमि ।
 वर्द्धमानजिनेन्द्राणां, पादपद्मं बुधो नमेत् ।।
 ऋषभाजितसुपाशर्वाः साभिनन्दनशीतलौ ।
 सुमतिः सम्भवस्वामी, श्रेयांसेषु बृहस्पतिः ।।
 सुविधिः कथितः शुक्रे, सुव्रतश्च शनैश्चरे ।
 नेमिनाथो भवेद्-राहोः केतुः श्रीमल्लिपार्श्वयोः ।।
 जन्मलग्नं च राशिं च, यदि पीडयन्ति खेचराः ।
 तदा संपूजयेद् धीमान्खेचरान् सह तान् जिनान् ।।
 भद्रबाहुगुरुर्वर्गमी, पंचमः श्रुतकेवली ।
 विद्याप्रसादतः पूर्वं ग्रहशांतिविधिः कृता ।।
 यः पठेत् प्रातरुत्थाय, शुचिर्भूत्वा समाहितः ।
 विपत्तितो भवेच्छान्तिः क्षेमं तस्य पदे पदे ।।

(प्रातःकाल इस स्तोत्र का पाठ करने से क्रूर ग्रह अपना असर नहीं करते। किसी ग्रह के असर होने पर 27 दिन तक प्रतिदिन 21 बार पाठ करने से अवश्य शान्ति होगी।)

नव ग्रहों के जाप्य

ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं सूर्यग्रहअरिष्टनिवारक श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः
 शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।।1।। 7000 जाप्य।
 ॐ ह्रीं क्रौं श्रीं क्लीं चन्द्रारिष्टनिवारक श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नमः
 शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।।2।। 11000 जाप्य।

(195)

ॐ आं क्रौं ह्रीं श्रीं क्लीं भौमारिष्ट निवारक श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय
 नमः शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।।3।। 10000 जाप्य
 ॐ ह्रीं क्रौं आं बुद्धग्रहारिष्ट-निवारक-श्रीविमल-अनंत-धर्म-शांति-
 कुंथु-अर-नमि-वर्धमानादि अष्टजिनेन्द्रेभ्यो नमः शान्तिं कुरुत कुरुत
 स्वाहा ।।4।। 8000 जाप्य।
 ॐ औं क्रौं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं गुरु अरिष्टनिवारक-श्रीवृषभ-अजित-
 संभव-अभिनन्दन-सुमति-सुपाशर्व-शीतल-श्रेयस्-अष्ट जिनेन्द्रेभ्यो नमः
 शान्तिं कुरुत कुरुत स्वाहा ।।5।। 19000 जाप्य।
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं शुक्रअरिष्टनिवारक श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय नमः शान्तिं
 कुरु कुरु स्वाहा ।।6।। 11000 जाप्य।
 ॐ ह्रीं क्रौं हः श्रीं शनिग्रहअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय
 नमः शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।।7।। 23000 जाप्य।
 ॐ ह्रीं क्लीं हूं राहुग्रहारिष्टनिवारक श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय नमः शान्तिं
 कुरु कुरु स्वाहा ।।8।। 18000 जाप्य।
 ॐ ह्रीं क्लीं ऐं केतुअरिष्टनिवारक श्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथ जिनेन्द्राभ्यां
 नमः शान्तिं कुरुतम् कुरुतम् स्वाहा ।।9।। 7000 जाप्य।
 (अभिषेक पूजन विधान के बाद इन जाप्यों को जपना चाहिए
 फिर शान्ति विसर्जन करें।)

श्री सम्मेद शिखर पूजा (बड़ी)

सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उत्कृष्ट सु थान ।
 शिखर सम्मेद सदा नमौ, होय पाप की हान ।।1।।
 अगणित मुनि जहँ तें गए, लोक शिखर के तीर ।
 तिनके पद पंकज नमूँ, नाशै भवकी पीर ।।2।।

(196)

है उज्ज्वल वह क्षेत्र सु अति निर्मल सही।
 परम पुनीत सुठैर महा गुणकी मही।।
 सकल सिद्धि दातार महा रमणीक है।
 बन्दों निज सुख हेत अचल पद देत है।।3।।
 शिखर सम्मेद महान् जग में तीर्थ प्रधान है।
 महिमा अद्भुत जान अल्पमती मैं किमि कहो।।4।।
 सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है, अति सु उज्ज्वल तीर्थ महान् है।
 करहि भक्तिसु जे गुणगाय के, वरहि सुर शिव के सुख जायकै।।5।।
 सुर हरि नरपति आदि सु जिन बन्दन करें।
 भव सागर तैं तिरे नहीं भव में परें।।
 सफल होय जो जन्म सु जे दर्शन करें।
 जन्म जन्म के पाप सकल छिन में टरें।।6।।
 श्री तीर्थकर जिनवरजु बीस, अरु मुनि असंख्य गुणन ईश।
 पहुँचे जहँ ते केवल्य धाम, तिन सबको अब मेरी प्रणाम।।7।।
 सम्मेदगढ़ है तीर्थ भारी सबहिं को उज्ज्वल करे।
 चिरकाल के जो कर्म लागे दरश तैं छिन में टरे।।
 है परम पावन पुण्य दायक अतुल महिमा जानिये।
 है अनूप सख्य गिरिवर तासु पूजा ठानिये।।8।।
 श्री सम्मेद शिखर महा, पूजों मन वच काय।
 हरत चतुर गति दुख को मन वाँछित फल दाय।।9।।
 ॐ ह्रीं श्रीसम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ
 तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भवभव वषट् ।

क्षीरोदधि सम नीर सु निरमल लीजिये।
 कनक कलस में भरकै धारा दीजिये।।
 पूजों शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी।।
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
 पयसौं घसि मलयागिरि चन्दन लाइये।
 केशर आदि कपूर सुगन्ध मिलाइये।।
 पूजों शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी।।
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
 तन्दुल धवल सु उज्ज्वल खासे धोयके।
 हेम रतन के थार भरो शुचि होयके।।
 पूजों शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी।।
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 अक्षयपदप्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।
 सुरतरुके सम पुष्प अनुपम लीजिये।
 कामदाह-दुखहरणचरण प्रभु दीजिये।।
 पूजों शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी।।
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कनक थार नैवेद्य सु षटरसतै भरे ।
 देखत क्षुधा पलाय सुजिन आगै धरे ॥
 पूजौं शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी ।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी ॥
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 लेकर मणिमय दीप सुज्योति प्रकाश है ।
 पूजत होत सुज्ञान मोहतम नाश है ॥
 पूजौं शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी ।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी ॥
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दश विधि धूप अनूप अग्नि में खेवहूँ ।
 अष्ट कर्म को नाश होत सुख पावहूँ ॥
 पूजौं शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी ।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी ॥
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 केला लोंग सुपारी श्रीफल ल्याइये ।
 फल चढ़ाय मन वांछित फल सु पाइये ॥
 पूजौं शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी ।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी ॥
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत फूल सु नेवज लीजिये ।
 दीप धूप फल लेकर अर्घ सु दीजिये ॥
 पूजौं शिखर सम्मेद सु मन वच काय जी ।
 नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जी ॥
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीविंशति तीर्थकर, अरु असंख्यात मुनीन्द्र जहँतें मोक्ष गये ।
 तिनकों करजोरि करों प्रणाम, जिनको पूजौं तजि सकल काम ॥
 ॐ ह्रीं विंशतितीर्थकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तये सम्मेदशिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो
 अनर्घपद प्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

जे नर परम सुभावन तैं पूजा करें ।
 हरि हलि चक्री होंय राज छह खंड करें ॥
 फेरि होंय धरणेंद्र इंद्र पदवी धरें ।
 नाना विध सुख भोगि बहुरि शिव तिय वरें ॥

(चौपाई)

मनमोहन तीरथ शुभ जानो, पावन परम सु क्षेत्र प्रमानो ।
 उन्नत शिखर अनूपम सोहै, देखत ताहि सुरासुर मोहै ॥

(दोहा)

तीरथ परम सुहावनो, शिखर सम्मेद विशाल ।
 कहत अल्पबुधि उक्ति सो, सुखदायक जयमाल ॥

(चौपाई)

सिद्ध क्षेत्र तीरथ सुखदाई, बन्दत पाप दूर हो जाई।
शिखर शीस पर कूट मनोज्ञ, कहे बीस अतिशोभा योग्य॥
प्रथम सिद्ध शुभ कूट सुनाम, अजितनाथ की मुक्ति सुधाम।
कूट तनो दर्शनफल कहो, कोड़ि बत्तीस उपवासफल लहो॥
दूजो धवल कूट है नाम, सम्भव प्रभु जहँ ते निर्वाण।
कूट दरश फल प्रोषध मानो, लाख बयालिस कहै बखानो॥
आनन्द कूट महा सुखदाई, जहँ ते अभिनन्दन शिव जाई।
कूट तनौ बन्दन इम जानौ, लाख उपवास तनौ फल मानौ॥
अविचल कूट महासुख वेश, मुक्ति गये जहँ सुमति जिनेश।
कूट भाव धर पूजे कोई, एक क्रोड़ प्रोषध फल होई॥
मोहन कूट मनोहर जान, पद्म प्रभू जहँ तें निर्वाण।
कूट पुण्य फल लहै सुजान, क्रोड़ उपवास कहे भगवान॥
मन मोहन शुभ कूट प्रभास, मुक्ति गये जहँ नाथ सुपार्श्व।
पूजै कूट महाफल सोई, कोड़ि बत्तीस उपवास फल होई॥
चन्द्र प्रभु को मुक्ति सुधामा, परम विशाल ललितकूट नामा।
दर्शन कूट तनो इम जानो, प्रोषध सोला लाख बखानो॥
सुप्रभ कूट महा सुखदाई, प्रोषध जहँ तै पुष्पदन्त शिव जाई।
सो विद्युतवर कूट महान, मोक्ष गये शीतल धर ध्यान॥
पूजै त्रिविध योग कर कोई, कोड़ि उपवास तनौ फल होई।
पूजै कूट महाफल होय, कोड़ि उपवास कहो जिन सोय॥

(201)

संकुल कूट महा शुभ जान, श्री श्रेयांस गये शिव थान।
कूट तनौ अब दर्शन सुनौ, कोड़ि उपवास जिनेश्वर भनौ॥
संकुल कूट परम सुखदाई, विमल जिनेश जहाँ शिव जाई।
मन वच दर्श करे जो कोई, कोड़ि उपवास तनो फल होई॥
कूट स्वयं प्रभु सुभग सुठाम, गये अनन्त अमरपुर धाम।
यही कूट को दर्शन करै, कोड़ि उपवास तनो फल धरै॥
है सुदत्तवर कूट मान, जहँ तें धर्मनाथ निर्वाण।
परम विशाल कूट है सोई, कोड़ि उपवास दर्शन फल होई॥
परम विशाल कूट शुभ कहो, शांति प्रभु जहँ तें शिव लहो।
कूट तनो दर्शन है सोई, एक कोड़ि प्रोषध फल होई॥
परम ज्ञानधर है शुभ कूट, शिवपुर कुन्थ गये अघ छूट।
इनको पूजे जो कर जोड़ि, फल उपवास कहो इक कोड़ि॥
नाटक कूट महाशुभ जान, जहँ तें अरनाथ मोक्ष भगवान।
दर्शन करे कूट को जोई, छियानवै कोड़ि उपवास फल होई॥
संवल कूट मल्लि जिनराय, जहँ तें मोक्ष गये जिन काय।
कूट दर्श फल कहो जिनेश, कोड़ि एक प्रोषध फल वेष॥
निर्जर कूट महा सुखदाई, मुनिसुव्रत जहँ तें शिव जाई।
कूट तनो दर्शन है सोई, एक कोड़ि प्रोषध फल होई॥
कूट मित्रधर तें नमि मोक्ष, पूजन आय सुरासुर जक्ष।
कूट तनो फल है सुखदाई, कोड़ि उपवास कहे जिन राई॥
श्री प्रभु पार्श्वनाथ जिनराज, दुरगति तें धूरें महाराज।
सुवर्णभद्र कूट को नाम, जहँ तें मोक्ष गये जिनधाम॥

(202)

तीन लोक हित करत अनूप, वन्दन ताहि सुरासुर भूप ।
 चिंतामणि सुर वृक्ष समान, ऋद्धि सिद्धि मंगल सुखदान ॥
 नवनिधि चित्रा बेलि समान, जातें सुख अनूपम जान ।
 पार्श्व और काम सुर धेन, नाना विध आनन्द को देन ॥
 व्याधिविकार जाहिं सब भाज, मन चिन्तै पूरे सब काज ।
 भवदधि रोग विनाशक होई, जो पद जग में और न कोई ॥
 निर्मल परम धाम उत्कृष्ट, बन्दत पाप भजे और दुष्ट ।
 जो नर ध्यावत पुण्य कमाय, जस गावत सब कर्म नशाय ॥
 कटें अनादि कर्म के पाप, भजे सकल छिन में सन्तान ।
 सुरनर इन्द्र फणिन्द्र जु सबै, और खगेन्द्र मृगेन्द्र गु नसैं ॥
 नित देवांगना करें उच्चार, नाचत गावत विविध प्रकार ।
 बहुविधिभक्ति करें मन लाय, विविध प्रकार बादित्र बजाय ॥
 द्रुम द्रुम द्रुमता बाजें मृदंग, घन घन घण्टा बाजें मुँह चंग ।
 झन झन झनियां करें उच्चार, सर सर सारंगी धुन उच्चार ॥
 मुरली बीन बजे घन मिष्ट, पटहा तूर सुरान्वित पुष्ट ।
 नित सुरगण थुति गावत सार, सुरगन नाचत बहुत प्रकार ॥
 झननन झननन नूपुर तान, तननन तननन तौरन तान ।
 ता थेई थेई थेई थेई चाल, सुर नाचत नित नावत सुभाल ॥
 गावत नाचत नाना रंग, लेत जहाँ शुभ आनन्द संग ।
 नित प्रति सुर जहँ वन्दन जाय, नानाविध मंगल को गाय ॥
 आनन्द धुनि सुन मोर जु सोय, प्रापति वृष की अति ही होय ।
 तातें हमको दे सुख सोई, गिर बंदन कर धर शुभ दोई ॥

मास्त मन्द सुगन्ध चलेय, गन्धोदक तहाँ नित वरषैय ।
 जिय की जाति विरोध न होई, गिरिवर वंदे कर धर दोई ॥
 ज्ञान चरित तप साधन सोई, निज अनुभव को ध्यान सु होई ।
 शिव मन्दिर को धारें सोई, गिरिवर बन्दे कर धर दोई ॥
 जो भवि बन्दे एक जु बार, नरक निगोद पशु गति टार ।
 सुर शिवपदकूँ पावे सोय, गिरिवर बन्दे कर धर दोय ॥
 ताकी महिमा अगम अपार, गणधर कबहुँ न पावें पार ।
 तुव अद्भुत मैं शक्ति करहीन, कहीं भक्ति बस केवल लीन ॥
 श्री सिद्ध खेतं अति सुख देतं, त्वरित भवदधि पारकरा ।
 अरु कर्म विनाशै सुख पयासे, केवल भासे सुखकरा ॥
 ॐ ह्रीं श्री सम्मेशिखर सिद्ध पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं नि. स्वाहा ।

(दोहा)

शिखर सम्मेश पूजें सदा, मन वच तन नर नारि ।
 सुर शिव के जे फल लहै, कहते दास जवाहरि ।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

सम्मेश शिखर टोंकों के अर्घ

24 तीर्थकरों के गणधरों की कूट

चौबीसों जिनराज के, गण नायक हैं जेह ।

मन वच तन कर पूजहुँ, शिखर सम्मेश यजेह ॥

ॐ ह्रीं श्री गौतम स्वामी आदि गणधर देव ग्राम के उद्यान आदि भिन्न-भिन्न
 स्थानों से निर्वाण पधारे हैं तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से
 बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ 1 ॥

ज्ञानधर कूट

कुन्थुनाथ जिनराज का, कूट ज्ञानधर जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 96 कोड़ा-कोड़ी 96 करोड़ 32 लाख 96 हजार 742 मुनि ज्ञानधर कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो । जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।2।।

मित्रधर कूट

नमिनाथ जिनराज का, कूट मित्रधर जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथ जिनेन्द्रादि 9 कोड़ाकोड़ी 1 अरब 45 लाख 7 हजार 942 मुनि मित्रधर कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो । जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।3।।

नाटक कूट

अरनाथ जिनराज का, नाटक कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथ जिनेन्द्रादि 99 करोड़ 99 लाख 99 हजार 999 मुनि (यानि 1 कम 1 अरब) मुनि नाटक कूट से सिद्ध भए तिनके चरणार-विन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो । जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।4।।

संबल कूट

मल्लिनाथ जिनराज का, संबल कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथ जिनेन्द्रादि 96 करोड़ मुनि संबल कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो । जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।5।।

संकुल कूट

श्रेयांसनाथ जिनराज का, संकुल कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्रादि 96 कोड़ाकोड़ी 96 करोड़ 96 लाख 9 हजार 542 मुनि संकुल कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो । जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।6।।

सुप्रभ कूट

पुष्पदंत जिनराज का, सुप्रभ कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंत जिनेन्द्रादि 1 कोड़ाकोड़ी 99 लाख 7 हजार 780 मुनि सुप्रभ कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो । जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।7।।

मोहन कूट

पदमप्रभ जिनराज का, मोहन कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ॐ ह्रीं श्रीपदमप्रभ जिनेन्द्रादि 99 करोड़ 87 लाख 43 हजार 757 मुनि मोहन कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो । जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।8।।

निरजर कूट

मुनिसुव्रत जिनराज का, निरजर कूट है जेह ।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्रादि 99 कोड़ाकोड़ी 99 करोड़ 99 लाख 999 मुनि निरजर कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो । जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।9।।

ललित कूट

चन्द्रप्रभ जिनराज का, ललित कूट है जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्रादि 984 अरब 12 करोड़ 80 लाख 84 हजार 595 मुनि ललित कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥10॥

श्रीआदिनाथ भगवान की टोंक

ऋषभदेव जिन सिद्ध भए, गिरि कैलाश से जोय।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथ जिनेन्द्रादि 10 हजार मुनि कैलाश पर्वत से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥11॥

विद्युतवर कूट

शीतलनाथ जिनराज का, कूट विद्युतवर जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथ जिनेन्द्रादि 18 कोड़ा कोड़ी 42 करोड़ 32 लाख 42 हजार 905 मुनि विद्युतवर कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥12॥

स्वयंभू कूट

अनन्तनाथ जिनराज का, कूट स्वयंभुवर जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथ जिनेन्द्रादि 96 कोड़ाकोड़ी 70 करोड़ 70 लाख 70 हजार 700 मुनि स्वयंभू कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥13॥

धवल कूट

सम्भवनाथ जिनराज का, धवल कूट है जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्भवनाथ जिनेन्द्रादि 9 कोड़ाकोड़ी 12 लाख 42 हजार 500 मुनि धवल कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥14॥

श्री वासुपूज्य भगवान की टोंक

वासुपूज्य जिन सिद्ध भए, चम्पापुर से जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्रादि चम्पापुर मंदारगिरि से एक हजार मुनि सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥15॥

आनन्द कूट

अभिनन्दन जिनराज का, आनन्द कूट है जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि 72 कोड़ाकोड़ी 70 करोड़ 70 लाख 42 हजार 700 मुनि आनन्द कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥16॥

सुदत्तवर कूट

धर्मनाथ जिनराज का, कूट सुदत्तवर जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथ जिनेन्द्रादि 29 कोड़ा कोड़ी 19 करोड़ 9 लाख 9 हजार 765 मुनि सुदत्तवर कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

अविचल कूट

सुमतिनाथ जिनराज का, अविचल कूट है जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 1 कोड़ा कोड़ी 84 करोड़ 72 लाख 81 हजार 781 मुनि अविचल कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घ नि. स्वाहा ॥18॥

कुन्दप्रभ कूट (शान्तिनाथ कूट)

शान्तिनाथ जिनराज का, कुन्दप्रभ कूट है जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्रादि 9 कोड़ाकोड़ी 9 लाख 9 हजार 999 मुनि कुन्दप्रभ कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥19॥

श्री महावीर भगवान की टोंक

महावीर जिन सिद्ध भए, पावापुर से जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीर स्वामी पावापुर के पदम सरोवर स्थान से 26 मुनि सहित मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥20॥

प्रभास कूट

सुपाश्वनाथ जिनराज का, प्रभास कूट है जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपाश्वनाथ जिनेन्द्रादि 49 कोड़ाकोड़ी 84 करोड़ 72 लाख 7 हजार 742 मुनि प्रभास कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घ नि. स्वाहा ॥21॥

सुवीर कूट (संकुल कूट)

विमलनाथ जिनराज का, कूट सुवीर है जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथ जिनेन्द्रादि 70 कोड़ाकोड़ी 60 लाख 6 हजार 742 मुनि सुवीर कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥22॥

सिद्धवर कूट

अजितनाथ जिनराज का, सिद्धवर कूट है जेह।

मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मोद यजेह॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथ जिनेन्द्रादि 1 अरब 80 करोड़ 54 लाख मुनि सिद्धवर कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥23॥

श्री नेमिनाथ भगवान की टोंक

नेमिनाथ जिन सिद्ध भए, सिद्ध क्षेत्र गिरनार।

मन वच तन कर पूजहूँ, भव दधि पार उतार॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथ जिनेन्द्रादि शम्बू प्रद्युम्न अनिरुद्ध इत्यादि 72 करोड़ सात सौ मुनि गिरनार पर्वत से मोक्ष गए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥24॥

स्वर्णभद्र कूट

पाश्वनाथ जिनराज का, स्वर्णभद्र है कूट।

मन वच तन कर पूजहूँ, जाऊँ कर्म से छूट॥

ॐ ह्रीं श्रीपाश्वनाथ जिनेन्द्रादि 82 करोड़ 84 लाख 45 हजार 742 मुनि स्वर्णभद्र परमपुनीत कूट से सिद्ध भए तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो। जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥25॥

आचार्य श्रीविद्यासागर जी पूजन

श्री विद्यासागर के चरणों में झुका रहा अपना माथा ।
जिनके जीवन की हर चर्या बन पड़ी स्वयं ही नव गाथा ।।
जैनागम का वह सुधा कलश जो बिखराते हैं गली-गली ।
जिनके दर्शन को पाकर के खिलती मुरझाई हृदय कली ।।
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अत्र अवतर अवतर
संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो
भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।
सांसारिक विषयों में पड़कर, मैंने अपने को भरमाया ।
इस राग द्वेष की वैतरणी से, अब तक पार नहीं पाया ।।
तब ज्ञान सिन्धु के जल कण से, भव कालुष धोने आया हूँ ।
आना जाना मिट जाय मेरा, यह बन्ध काटने आया हूँ ।।
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय
जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
क्रोध अनल में जल-जल कर, अपना सर्वस्व लुटाया है ।
निज शान्त स्वरूप न जान सका, जीवन भर इसे भुलाया है ।।
चंदन सम शीतलता पाने अब, शरण तुम्हारी आया हूँ ।
संसार ताप मिट जाये मेरा, चन्दन वन्दन को लाया हूँ ।।
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं
निर्वपामीति स्वाहा ।
जड़ को न मैंने जड़ समझा, नहीं अक्षय निधि को पहचाना ।
अपने तो केवल सपने थे, भ्रम और जगत का भटकाना ।।
चरणों में अर्पित अक्षत है, अक्षय पद मुझको मिल जावे ।
तब ज्ञान अरुण की किरणों से, यह हृदय कमल भी खिल जावे ।।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
निर्वपामीति स्वाहा ।

इन विषय भोग की मदिरा पी, मैं बना सदा से मतवाला ।
तृष्णा को तृप्त करें जितनी, उतनी बढ़ती इच्छा ज्वाला ।।
मैं काम भाव विध्वंस हेतु, मन-सुमन चढ़ाने आया हूँ ।
यह मदन विजेता बन न सके, यह भाव हृदय में लाया हूँ ।।
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं
निर्वपामीति स्वाहा ।
इस क्षुधा रोग की व्यथा कथा, भव-भव में कहता आया हूँ ।
अति भक्ष अभक्ष भखे फिर भी, मन तृप्त नहीं कर पाया हूँ ।।
नैवेद्य समर्पित करके मैं, तृष्णा की भूख भगाऊँगा ।
अब और अधिक न भटक सकूँ, यह अन्तर बोध जगाऊँगा ।।
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।
मोहान्धकार से व्याकुल हो, निज को नहीं मैंने पहचाना ।
मैं राग द्वेष में लिप्त रहा, इस हाथ रहा बस पछताना ।।
यह दीप समर्पित है मुनिवर, मेरा तम दूर भगा देना ।
तुम ज्ञान दीप की बाती से, मम अन्तर दीप जला देना ।।
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय
दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
इन अशुभ कर्म ने घेरा है, मैंने अब तक यह माना था ।
बस पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपना था ।।
शुभ अशुभ कर्म सब रिपुदल हैं, मैं इन्हें जलाने आया हूँ ।
इसीलिए तब चरणों में, अब धूप चढ़ाने आया हूँ ।।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि.
स्वाहा।

भोगों को इतना भोगा कि, खुद को ही भोग बना डाला।
साध्य और साधक का अन्तर, मैंने आज मिटा डाला।।
मैं चिदानन्द में लीन रहूँ, पूजा का यह फल पाना है।
पाना था जिसके द्वारा वह, मिल बैठा मुझे ठिकाना है।।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि.
स्वाहा।

जग के वैभव को पाकर मैं, निश दिन कैसा अलमस्त रहा।
चारों गतियों की ठोकर को, खाने में ही अभ्यस्त रहा।।
मैं हूँ स्वतन्त्र ज्ञाता दृष्टा, मेरा पर से क्या नाता है।
कैसे अनर्घपद पा जाऊँ, यह 'अरुण' भावना भाता है।।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.
स्वाहा।

जयमाला

हे गुरुवर तेरे गुण गाने, अर्पित हैं जीवन के क्षण क्षण।
अर्चन के सुमन समर्पित हैं, हरषाये जगती के कण कण।।
कर्नाटक के सदलगा ग्राम में, मुनिवर तुमने जन्म लिया।
मल्लप्पा पूज्य पिताश्री को, अरु समय मति कृतकृत्य किया।।
बचपन के इस विद्याधर में, विद्या के सागर उमड़ पड़े।
मुनिराज देशभूषणजी से तुम, व्रत ब्रह्मचर्य ले निकल पड़े।।
आचार्य ज्ञानसागर ने सन्, अड़सठ में मुनि पद दे डाला।
अजमेर नगर में हुआ उदित, मानों रवि तम हरने वाला।।

परिवार तुम्हारा सबका सब, जिन पथ पर चलने वाला है।
वह भेद ज्ञान की छैनी से, गिरि कर्म काटने वाला है।।
तुम स्वयं तीर्थ से पावन हो, तुम हो अपने में समयसार।
तुम स्याद्वाद के प्रस्तोता, वाणी-वीणा के मधुर तार।।
तुम कुन्द-कुन्द के कुन्दन से, कुन्दन सा जग को कर देने।
तुम निकल पड़े बस इसीलिए, भटके अटकों को पथ देने।।

वह मन्द मधुर मुस्कान सदा, चेहरे पर बिखरी रहती है।
वाणी कल्याणी है अनुपम, करुणा के झरने झरते हैं।।

तुममें कैसा सम्मोहन है, या है कोई जादू टोना।
जो दर्श तुम्हारे कर जाता, नहीं चाहे कभी विलग होना।।

इस अल्प उम्र में भी तुमने, साहित्य सृजन अति कर डाला।
जैन गीत गागर में तुमने, मानों सागर भर डाला।।

है शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अनजाना।
स्वर ताल छन्द मैं क्या जानूँ, केवल भक्ति में रम जाना।।

भावों की निर्मल सरिता में, अवगाहन करने आया हूँ।
मेरा सारा दुख-दर्द हरो, यह अर्घ भेटने लाया हूँ।।

हे तपो मूर्ति! हे आराधक!, हे योगीश्वर! हे महासन्त!
है अरुण कामना देख सके, युग-युग तक आगामी बसन्त।।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत-आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं
नि.स्वाहा।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

हवन की विधि

मण्डप में वेदी के सम्मुख, चौकोर, गोल और त्रिकोण ऐसे तीन कुण्ड बनवायें। यदि तीन कुण्ड बनवाने की असुविधा हो तो एक चौकोर कुण्ड बनाकर शेष दो कुण्डों की उसी में स्थापना कर लें। यदि हवन में बैठने वालों की संख्या अधिक हो तो अलग से स्थण्डिल (मिट्टी के कुण्ड) बना लेना चाहिए। कुण्ड पर इन्द्र, इन्द्राणी और जप करने वाले बैठें। अन्य लोग स्थण्डिलों पर बैठ जावें। हवन के लिए साकल्य और समिधाएँ पहले से तैयार कर लें। हवन में बैठने वाले एक वस्त्र पहिनकर न बैठें। प्रारम्भ में सब लोग अपने-अपने स्थान पर खड़े होकर मंगलाष्टक पढ़ते हुए कुण्ड पर पुष्प छोड़ें। तदनन्तर-

(यह मन्त्र पढ़कर कुण्ड की भूमि में पुष्प छोड़ें तथा दर्भ की कूची से भूमि का मार्जन करें।)

ॐ ह्रीं क्ष्वीं भूः स्वाहा।

(यह मन्त्र पढ़कर हवन की भूमि-कुण्ड पर जल सींचें)

ॐ ह्रीं मेघकुमार धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं सं तं पं स्वं झं यं क्षः फट् स्वाहा।

(यह पढ़कर कपूर जलाकर भूमि को संतप्त करें)

ॐ ह्रीं अग्निकुमाराय ह्यभूर्भ्यू ज्वल ज्वल तेजःपतये अमित तेजसे स्वाहा।

(यह पढ़कर होम कुण्ड के पश्चिम में पीठ स्थापन करें।)

ॐ ह्रीं अर्हं क्षं वं वं श्री पीठस्थापनं करोमि इति स्वाहा।

(यह पढ़कर पीठ पर विनायक यन्त्र विराजमान करें) तदनन्तर नीचे लिखे मन्त्रों से यन्त्र की पूजा करें, अर्घ चढ़ायें।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं जगतां सर्वशान्तिं कुर्वन्तु श्रीपीठयन्त्रस्थापनं करोमीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं अर्हं नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमः परमात्मभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनादिनिधनेभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमो सर्वनृसुरासुरपूजितेभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तज्ञानेभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तदर्शनेभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तवीर्येभ्यः स्वाहा। ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तसौख्येभ्यः स्वाहा।

तदनन्तर-

(यह पढ़कर धर्मचक्र के लिये अर्घ चढ़ावें।)

ॐ ह्रीं धर्मचक्राय अप्रतिहततेजसे स्वाहा।

(यह पढ़कर छत्रत्रय को अर्घ देवें)

ॐ ह्रीं श्वेतछत्रत्रयश्रियै स्वाहा।

(यह मन्त्र पढ़कर सरस्वती का आह्वान करें)

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं हं सौं ह्रीं सर्वशास्त्रप्रकाशिनि वद वद वाग्वादिनि अत्र अत्र अवतर अवतर तिष्ठ तिष्ठ, सन्निहिता भव भव वषट्।

(यह पढ़कर सरस्वती जिनवाणी को अर्घ देवें)

ॐ ह्रीं जिन-मुखोद्भूत-स्याद्वाद-नय-गर्भित-द्वादशांग-श्रुत-ज्ञानाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

(यह पढ़कर निर्ग्रन्थ गुरु का आह्वान करें।)

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रपवित्रतरगात्र-चतुरशीति-लक्षोत्तर-गुणाष्टदश-सहस्रशीलधर-गणधरचरण! आगच्छ आगच्छ तिष्ठ तिष्ठ सन्निहितो भव भव वषट्।

(यह पढ़कर निर्ग्रन्थ गुरु का आह्वान करें।)
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-ज्ञानचारित्रादि-गुण-विराजमान-आचार्य-
उपाध्याय-सर्वसाधुभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(यह पढ़कर गुरु को अर्घ चढ़ावें।)
ॐ ह्रीं स्वस्ति विधानाय पुण्याहवाचनार्थं च कलशं स्थापयामि इति
स्वाहा।

(यह पढ़कर चावलों पर जल भरा एवं श्रीफल तथा तूल आदि
से सुशोभित कलश स्थापित करें।)

ॐ हां ह्रीं हूं हौं हः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पद्म-महापद्म-
तिगिंछ-केसरी-पुण्डरीक-महापुण्डरीक-गंगासिन्धु-रोहिद्-द्रोहितास्या-
हरिद्-धरिकान्ता-सीतासीतोदा-नारी-नरकान्ता-सुवर्ण-कूला-
रूप्यकूला- रक्ता-रक्तोदा- क्षीराम्भोनिधि-शुद्धजलं सुवर्णघटं प्रक्षालित-
परिपूरितं नवरत्न-गंधाक्षत-पुष्पार्चितं ममोदकं पवित्रं कुरु कुरु झं
झं झ्रौं झ्रौं वं वं मं मं हं हं क्षं क्षं लं लं पं पं द्रां द्रां द्री द्री हं सः स्वाहा।

(यह पढ़कर कलश पर थोड़ा प्रासुक जल डालें)
ॐ ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि इति स्वाहा।
(यह पढ़कर घृत से प्रज्वलित कर चारों दिशाओं में चार
दीपक रखें) तदनन्तर-

(नीचे लिखे मन्त्र बोलकर क्रम से जल आदि आठ द्रव्य
चढ़ावें।)
ॐ ह्रीं नीरजसे नमः (जलम्)। ॐ ह्रीं शीलगन्धाय नमः (चन्दनम्)।
ॐ ह्रीं अक्षतेभ्यः नमः (अक्षतान्)। ॐ ह्रीं विमलाय नमः (पुष्पम्)।
ॐ ह्रीं दर्पमथनाय नमः (नैवेद्यम्)। ॐ ह्रीं ज्ञानद्योतनाय नमः
(दीपम्)। ॐ ह्रीं श्रुतधूपाय नमः (धूपम्)। ॐ ह्रीं अभीष्टफलदाय
नमः (फलम्)। ॐ ह्रीं परमसिद्धाय नमः (अर्घम्)।

तदनन्तर-

ॐ ह्रीं होमार्थं अग्नित्रयाधारभूतां समिधां स्थापयामि।

(यह पढ़कर कुण्ड में समिधाएँ स्थापित करें।)

ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं अग्निं स्थापयामि।

(यह पढ़कर कपूर जलाकर कुण्ड में अग्नि स्थापन करें।)

जिनेन्द्रवाक्यैरिव सुप्रसन्नैः, संशुष्कदर्भाग्रघृताग्निकीलैः।

कुण्डस्थिते सेन्धनशुद्धवह्नौ संधुक्षणं संप्रति संतनोमि॥

ॐ ह्रीं श्रीं रं रं रं रं दर्भपूलेन ज्वलय ज्वलय नमः फट् स्वाहा।

(यह पढ़कर डाभ के फूल से अग्नि का संधुक्षण करें।)

श्रीतीर्थनाथ - परि - निर्वृत्ति - पूतकाले,

ह्यागत्य वह्निं सुरपा - मुकुटोल्लसद्भिः।

बहिनव्रजै - जिन - पदेहमुदार - भक्त्या,

देहुस्तदग्नि - महमर्चयितुं दधामि॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं चतुरस्रै तीर्थकरकुण्डे गार्हपत्याग्नौ कृत-संस्काराय
तीर्थकरपरमदेवायार्घं नि. स्वाहा।

(यह पढ़कर कुण्ड में अर्घ चढ़ावें।)

गणाधिपानां शिवयाति कालेऽग्नीन्द्रोत्तमांग-स्फुरदुग्रोचिः।

संस्थाप्य पूज्यश्च समाह्वनीयो, विघ्नौघशान्त्यै-विधिना हुताशः॥

ॐ ह्रीं श्रीं वृत्ते द्वितीये गणधरकुण्डे आह्वानीय अग्नौ कृतसंस्काराय
गणधरदेवाय अर्घं नि. स्वाहा।

(यह पढ़कर कुण्ड में अर्घ चढ़ावें।)

ॐ ह्रीं श्रीं वृत्ते
द्वितीये गणधरकुण्डे
आह्वानीयाग्नौ
कृतसंस्काराय गणधर
देवायार्घं नि. स्वाहा।

(यह पढ़कर कुण्ड में
अर्घ चढ़ावें।)

ॐ ह्रीं श्रीत्रिकोणे
तृतीयसामान्यकेवलिकुण्डे
दक्षिणाग्नौ
कृतसंस्काराय सामान्य
केवलिनोऽर्घं नि.

स्वाहा।

(यह पढ़कर कुण्ड में
अर्घ चढ़ावें।)

तदनन्तर-

श्रीदक्षिणाग्निः परिकल्पितश्च, किरीट-देशात्प्रणतानिदेवैः ।
निर्वाण-कल्याणक-पूतकाले, तमर्चये विघ्न-विनाशनाय ।।
ॐ ह्रीं श्रीं त्रिकोणे तृतीय-सामान्य-केवलि-कुण्डे दक्षिणाग्नौ
कृतसंस्काराय सामान्यकेवलिनेऽर्घं नि. स्वाहा ।

(यह पढ़कर कुण्ड में अर्घ चढ़ावें।)

तदनन्तर-

(शुद्ध घी से निम्नलिखित आहुतियाँ देवें।)

ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं
सूरिभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं पाठकेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यः
स्वाहा । ॐ ह्रीं जिनधर्मभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं जिनागमेभ्यः स्वाहा । ॐ
ह्रीं जिनचैत्येभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं
सम्यग्दर्शनेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानेभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं
सम्यक्चारित्र्येभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं तपोभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अस्मद्
गुरुभ्यः स्वाहा । ॐ ह्रीं अस्मद् विद्यागुरुभ्यः स्वाहा ।

(साकल्य से आहुतियाँ देवे। मंत्र के बाद स्वाहा शब्द का
उच्चारण स्पष्ट करें।)

(पीठिका मन्त्र)

ॐ सत्यजाताय नमः स्वाहा । ॐ अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ।
ॐ परमजाताय नमः स्वाहा । ॐ अनुपमजाताय नमः स्वाहा । ॐ
स्वप्रधानाय नमः स्वाहा । ॐ अचलाय नमः स्वाहा । ॐ अक्षयाय
नमः स्वाहा । ॐ अव्याबाधाय नमः स्वाहा । ॐ अनन्तदर्शनाय नमः
स्वाहा । ॐ अनन्त-ज्ञानाय नमः स्वाहा । ॐ अनन्तवीर्याय नमः
स्वाहा । ॐ अनन्तसुखाय नमः स्वाहा । ॐ नीरजसे नमः स्वाहा ।
ॐ निर्मलाय नमः स्वाहा । ॐ अच्छेद्याय नमः स्वाहा । ॐ अभेद्याय

नमः स्वाहा । ॐ अजराय नमः स्वाहा । ॐ अमराय नमः स्वाहा ।
ॐ अप्रमेयाय नमः स्वाहा । ॐ अगर्भवासाय नमः स्वाहा । ॐ
अक्षोभाय नमः स्वाहा । ॐ अविलीनाय नमः स्वाहा । ॐ परमधनाय
नमः स्वाहा । ॐ परमकाष्ठायोगरूपाय नमः स्वाहा । ॐ
लोकाग्रनिवासिने नमः स्वाहा । ॐ परम-सिद्धेभ्यो नमः स्वाहा । ॐ
अर्हत्सिद्धेभ्यो नमः स्वाहा । ॐ केवलिसिद्धेभ्यो नमः स्वाहा । ॐ
अन्तःकृत्सिद्धेभ्यो नमः स्वाहा । ॐ परम्परासिद्धेभ्यो नमः स्वाहा ।
ॐ अनादिपरम्परासिद्धेभ्यो नमः स्वाहा । ॐ अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो
नमः स्वाहा ।

ॐ सम्यग्दृष्टे! सम्यग्दृष्टे! आसन्नभव्य! आसन्नभव्य! निर्वाण-
पूजार्ह! निर्वाण-पूजार्ह! अग्नीन्द्र! अग्नीन्द्र! स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु । समाधि-
मरणं भवतु स्वाहा ।

(जाति मन्त्र)

ॐ सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये नमः स्वाहा । ॐ अर्हज्जन्मनः
शरणं प्रपद्ये नमः स्वाहा । ॐ अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये नमः स्वाहा ।
ॐ अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये नमः स्वाहा । ॐ अनादिगमनस्य शरणं
प्रपद्ये नमः स्वाहा । ॐ अनुपमजन्मनः शरणं प्रपद्ये नमः स्वाहा । ॐ
रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये नमः स्वाहा ।

ॐ सम्यग्दृष्टे! सम्यग्दृष्टे! ज्ञानमूर्ते! ज्ञानमूर्ते! सरस्वति!
सरस्वति! स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु ।
समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

(निस्तारक मन्त्र)

ॐ सत्यजाताय नमः स्वाहा । ॐ अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ।
ॐ षट्कर्मणे नमः स्वाहा । ॐ ग्रामपतये स्वाहा । ॐ अनादिश्रोत्रियाय
स्वाहा । ॐ स्नातकाय स्वाहा । ॐ श्रावकाय स्वाहा । ॐ देवब्राह्मणाय
स्वाहा । ॐ सुब्राह्मणाय स्वाहा । ॐ अनुपमाय स्वाहा । ॐ सम्यग्दृष्टे !
सम्यग्दृष्टे ! निधिपते ! निधिपते ! वैश्रवण ! वैश्रवण ! स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु ।
समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

(ऋषि मन्त्र)

ॐ सत्यजाताय नमः स्वाहा । ॐ अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ।
ॐ निर्ग्रन्थाय नमः स्वाहा । ॐ वीतरागाय नमः स्वाहा । ॐ महाव्रताय
नमः स्वाहा । ॐ त्रिगुप्तये नमः स्वाहा । ॐ महायोगाय नमः स्वाहा ।
ॐ विविधयोगाय नमः स्वाहा । ॐ विवर्द्धये नमः स्वाहा । ॐ
अंगधराय नमः स्वाहा । ॐ पूर्वधराय नमः स्वाहा । ॐ गणधराय
नमः स्वाहा । ॐ परमर्षिभ्यो नमो नमः स्वाहा । ॐ अनुपमजाताय
नमो नमः स्वाहा ।

ॐ सम्यग्दृष्टे ! सम्यग्दृष्टे ! भूपते ! भूपते ! नगरपते ! नगरपते !
कालश्रमण ! कालश्रमण स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु । समाधिमरणं
भवतु स्वाहा ।

(सुरेन्द्र मन्त्र)

ॐ सत्यजाताय नमः स्वाहा । ॐ अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ।
ॐ दिव्यजाताय स्वाहा । ॐ दिव्यार्चिजाताय स्वाहा । ॐ नेमिनाथाय
स्वाहा । ॐ सौधर्माय स्वाहा । ॐ कल्पाधिपतये स्वाहा । ॐ अनुचराय
स्वाहा । ॐ परम्परेन्द्राय स्वाहा । ॐ अहमिन्द्राय स्वाहा । ॐ
परमार्हताय नमः स्वाहा । ॐ अनुपमाय स्वाहा ।

ॐ सम्यग्दृष्टे ! सम्यग्दृष्टे ! कल्पपते ! कल्पपते ! दिव्यमूर्ते !
दिव्यमूर्ते ! वज्रनामन् ! वज्रनामन् स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु ।
समाधिमरणं भवतु स्वाहा ।

(परमराजादि मन्त्र)

ॐ सत्यजाताय नमः स्वाहा । ॐ अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ।
ॐ अनुपमेन्द्राय स्वाहा । ॐ विजयार्च्यजाताय स्वाहा । ॐ नेमिनाथाय
स्वाहा । ॐ परमजाताय नमः स्वाहा । ॐ परमार्हताय नमः स्वाहा ।
ॐ अनुपमाय नमः स्वाहा ।

ॐ सम्यग्दृष्टे ! सम्यग्दृष्टे ! उग्रतेजः ! उग्रतेजः ! दिशाञ्जन !
दिशाञ्जन ! नेमिविजय ! नेमिविजय ! स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु । समाधिमरणं
भवतु स्वाहा ।

(परमेष्ठि मन्त्र)

ॐ सत्यजाताय नमः स्वाहा । ॐ अर्हज्जाताय नमः स्वाहा ।
ॐ परमजाताय नमः स्वाहा । ॐ परमार्हताय नमः स्वाहा । ॐ
परमरूपाय नमः स्वाहा । ॐ परमतेजसे नमः स्वाहा । ॐ परमगुणाय
नमः स्वाहा । ॐ परमस्थानाय नमः स्वाहा । ॐ परमयोगिने नमः

स्वाहा। ॐ परमभाग्याय नमः **स्वाहा।** ॐ परमर्द्धये नमः **स्वाहा।**
 ॐ परमप्रसादाय नमः **स्वाहा।** ॐ परमकांक्षिताय नमः **स्वाहा।** ॐ
 परम-विजयाय नमः **स्वाहा।** ॐ परमविज्ञानाय नमः **स्वाहा।** ॐ
 परमदर्शनाय नमः **स्वाहा।** ॐ परमवीर्याय नमः **स्वाहा।** ॐ परमसुखाय
 नमः **स्वाहा।** ॐ परमसर्वज्ञाय नमः **स्वाहा।** ॐ अर्हते नमः **स्वाहा।**
 ॐ परमेष्ठिने नमः **स्वाहा।** ॐ परमनेत्रे नमः **स्वाहा।**

ॐ सम्यग्दृष्टे! सम्यग्दृष्टे! त्रिलोकविजय! त्रिलोकविजय!
 धर्ममूर्ते! धर्ममूर्ते! धर्मनेमे! धर्मनेमे! **स्वाहा।**

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु। अपमृत्युविनाशनं भवतु। समाधिमरणं
 भवतु **स्वाहा।**

शान्तिमन्त्राहुतयः

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष-कल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये
 नमः श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वपापप्रणाशनाय सर्वविघ्नप्रणाशाय
 सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्वपर-कृच्छुद्रोपद्रव-विनाशनाय सर्वक्षाम-
 डामर-विनाशनाय ॐ हां हीं हूं हौं हः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु
 कुरु **स्वाहा।**

ॐ ह्रीं हे अग्निकुमारदेवाः यजमानप्रभृतीनां सर्वशान्तिं कुरु
 कुरु **स्वाहा।**

नोट- विघ्नशान्ति के निमित्त इस मन्त्र की पांच आहुतियाँ
 साकल्य से ही देना चाहिये।

इसके पश्चात् जिस मन्त्र का जितना जप किया हो उसकी
 दशांग आहुतियाँ देनी चाहिए। हवनकर्ता एक साथ स्वाहा बोलकर
 आहुति देवे। हवन समाप्त हो जाने पर पूर्व में स्थापित किये हुए
 मंगलकलश से पुण्याहवाचन किया जावे।

पुण्याहवाचन

पुण्याहवाचन पढ़ते समय अनुष्ठानकर्ता पूर्व मुख खड़े होकर
 एक श्रीकारयुक्त गहरी रकाबी में मंगलकलश से अतिसूक्ष्म जलधारा
 छोड़ता जावे।

ॐ अद्य भगवतो महापुरुष-वर-पुण्डरीकस्य परमेण तेजसा
 व्याप्त-लोकालोकोत्तम-मंगलस्य मंगलस्वरूपस्य अमुक-नाम्नः
 अनुष्ठानकर्तुः सर्वपुष्टि-सम्पादनार्थं पुण्याहं..... वाचनां करिष्ये।

ॐ पुण्याहं पुण्याहं त्रिलोकोद्योतनकरा अतीतकाल-सञ्जाता
 निर्वाण-सागर-महासाधु-विमलप्रभु-शुद्धप्रभ-श्रीधर-सुदत्तामल-
 प्रभोद्धरांगिर-सन्मति-सिन्धु-कुसुमाञ्जलि-शिव-गणोत्साह-ज्ञानेश्वर-
 परमेश्वर-विमलेश्वर-यशोधर-कृष्णमति-ज्ञानमति-शुद्धमति-श्रीभद्राति-
 कान्तशान्ताश्चेति चतुर्-विंशति-भूतपरम-देवाश्च वः प्रीयन्तां
 प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥

ॐ सम्प्रतिकालजाताः श्रेयस्कर-स्वर्गावतरण-जन्माभिषेक-परि-
 निष्क्रमण-केवलज्ञान-निर्वाण-कल्याणक-विभूति-विभूषित-महाभ्युदयाः
 श्रीवृषभाजित-संभवाभिनंदन-सुमति-पद्मप्रभ-सुपार्श्व-चन्द्रप्रभ-पुष्पदन्त-
 शीतल-श्रेयो-वासुपूज्य-विमलानंत-धर्म-शान्ति-कुन्धवर-मल्लि-मुनिसुव्रत-
 नमि-नेमि-पार्श्व-वर्धमानाश्चेति चतुर्-विंशति-वर्तमान-परमदेवाश्च वः
 प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥

ॐ भविष्यत्कालाभ्युदय-प्रभवाः महापद्म-सुरदेव-सुपार्श्व-
 स्वयम्प्रभव-सर्वात्मभूत-देवपुत्र-कुलपुत्रोदक-प्रोष्ठिल-जयकीर्ति-
 मुनिसुव्रतार-निष्पाप-निष्कषाय-विपुल-निर्मल-चित्रगुप्त-समाधिगुप्त
 स्वयम्भवननिर्वतक-जयनाथ-विमलनाथ-देवपालानन्त-वीर्याश्चेति चतुर्-
 विंशति-भविष्यत्-तीर्थकर-परमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ॥ धारा ॥

ॐ त्रिकालवर्ति-परमधर्माभ्युदयाः सीमन्धर-युगमन्धर-बाहु-सुबाहु-
सञ्जातक-स्वयम्प्रभ-वृषभाननानन्त-वीर्यसुर-प्रभविशाल-कीर्ति-वज्रधर-
चन्द्रानन-भद्रबाहु-भुजंगमेश्वर-नेमिप्रभ-वीरसेन- महाभद्र-देवयशोऽजित-
वीर्याश्चेति पञ्चविदेहक्षेत्रविहरमाणा-विंशति-तीर्थकर-परमदेवाश्च वः
प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ वृषभसेनादि-गणधरदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ कोष्ठबीज-पादानुसारि-बुद्धिसम्भिन्न-श्रोतृप्रज्ञाश्रमणाश्च वः
प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ आमर्श-क्ष्वेल-जल्लमल-विड्डत्सर्ग-सर्वौषधयश्च वः प्रीयन्तां
प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ जलफलजंघातन्तुपुष्प-श्रेणि-पत्राग्नि-शिखाकाश-चारणाश्च
वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ अक्षीणमहानस-अक्षीणमहालयाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम्
।। धारा ।।

ॐ दीप्ततप्त-महोग्र-घोरपराक्रमाः घोरगुणतपसश्च वः प्रीयन्तां
प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ मनोवाक्काय-बलिनश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ क्रियाविक्रिया-धारिणश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ मतिश्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलज्ञानिश्च वः प्रीयन्तां
प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

ॐ अंगांग-बाह्यज्ञान-दिवाकराः कुन्दकुन्दाद्यनेक-दिगम्बर-देवाश्च
वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।

शान्तिधारा

इह वान्यनगर-ग्राम-देवतामनुजाः सर्वे गुरुभक्ताः जिनधर्मपरायणा
भवन्तु ।। धारा ।।

दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु ।। धारा ।।

मातृपितृ-भ्रातृ-पुत्रपौत्र-कलत्र-सुहृत्-स्वजन-सम्बन्धि-बन्धु सहितस्य
अमुकस्य अनुष्ठानकर्तुः.....ते धनधान्यैश्वर्यबल-द्युतियशः प्रमोदोत्सवाः
प्रवर्धन्ताम् ।। धारा ।। 17 ।।

तुष्टिरस्तु । पुष्टिरस्तु । वृद्धिरस्तु । कल्याणमस्तु । अविघ्नमस्तु ।
आयुष्यमस्तु । आरोग्यमस्तु । कर्मसिद्धिरस्तु । इष्टसम्पत्तिरस्तु । काम-
मांगल्योत्सवाः सन्तु । निर्वाणपर्वोत्सवाः सन्तु । पापानि शाम्यन्तु ।
घोराणि शाम्यन्तु । धर्मो वर्धताम् । पुण्यं वर्धताम् । श्री वर्धताम् । कुलगोत्रे
चाभिवर्धताम् । स्वस्ति भद्रं चास्तु । इर्वी इर्वी हं सः स्वाहा । श्रीमज्जिनेन्द्र-
चरणार-विन्दध्वानन्दभक्तिः सदास्तु ।

यहाँ तक पढ़ते हुए मंगलकलश से एक श्रीकार लिखित गहरे
पात्र में जल धारा छोड़ते जाना चाहिये । पश्चात् पूजन के थाल में पुष्प
छोड़ते हुए निम्न शान्तिस्तव पढ़ना चाहिये ।

।। इति शान्तिधारा ।।

अथ शान्तिस्तव

(बसन्ततिलका छन्द)

चिद्रूप- भाव- मनवद्य- मिमं त्वदीयं,

ध्यायन्ति ये सदुपधि-व्यतिहार-मुक्तम् ।

नित्यं निरञ्जन-मनादि-मनन्त-रूपं,

तेषां महांसि भुवन-त्रितये लसन्ति ।। 1 ।।

ध्येयस्त्व-मेव भव-पञ्च-तयप्रसार,
 निर्णाश-कारण- विधौ निपुणत्वयोगात् ।
 आत्म- प्रकाश- कृतलोक- तदन्यभाव,
 पर्याय-विस्फुरणकृत्परमोऽसि योगी ॥2॥
 त्वन्नाम-मन्त्र-घन-उद्धत-जन्मजात,
 दुष्कर्म-दाव-मभिशम्य शुभाङ्कुराणि ।
 व्यापार-यत्यतुल-भक्ति-समृद्धिभाज्जि,
 स्वामिन्नतोऽसिशुभदः शुभकृत्त्वमेव ॥3॥
 त्वत्पाद-तामारसकोष-निवासमास्ते,
 चित्तद्विरेफ-सुकृती मम यावदीश !
 तावच्च संसृतिज-किल्बिष-तापशापः,
 स्थानं मयि क्षणमपि प्रतियाति कच्चित् ॥4॥
 त्वन्नाम-मन्त्रमनिशं रसनाग्र-वर्ति,
 यस्य यास्ति मोहमद-घूर्ण-ननाशहेतुः ।
 प्रत्यू-हराजित-गणोद्-भवकालकूट-
 भीति हि तस्य किमु सन्निधिमेति देव ॥5॥
 तस्मात् त्वमेव शरणं तरणं भवाब्धौ ,
 शान्तिप्रदः सकल-दोष-निवारणेन ।
 जागर्ति शुद्धमनसा स्मरतो यतो मे,
 शान्तिः स्वयं करतले रभसाभ्युपैति ॥6॥

जगति शान्ति-विवर्धन-महसां,
 प्रलय-मस्तु जिन-स्तवनेन मे (ते) ।
 सुकृत-बुद्धि-रलं क्षमया युतो,
 जिनवृषो हृदये अम (तव) वर्तताम् ॥7॥

इसके बाद अनुष्ठानकर्ता थाल या मण्डल में पुष्पों को छोड़ता
 हुआ पुस्तक से शान्तिपाठ और विसर्जन पाठ बोलकर अग्रिम मन्त्र से
 विसर्जन करें-

मोहध्वान्तविदारणं विशद-विश्वोद्भासिदीप्तिश्रियं,
 सन्मार्ग-प्रतिभाषकं, विबुध,-सन्दोहामृतापादकम् ।
 श्रीपादं जिनचन्द्र ! शान्तिशरणं, स्याद्भक्तियुक्तस्यते,
 भूयस्ताप-हरस्य देव भवतो, भूयात्पुनर्दर्शनम् ॥

ॐ हां हीं हूं हौं हः अ सि आ उ सा अस्मिन् अनुष्ठाने समागताः
 अर्हदादिपरमेष्ठिनः स्वस्थानं गच्छन्तु । अपराधक्षमापणं भवतु ।
 ॐ हां हीं हूं हौं हः अ सि आ उ सा अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधवः शान्तिं
 तुष्टिं पुष्टिं च कुरुत कुरुत स्वाहा ।

॥ इति हवन विधि समाप्तः ॥

श्री आदिनाथ जिनपूजन

नाभिराय मरुदेवि के नन्दन, आदिनाथ स्वामी महाराज ।
सर्वार्थसिद्धितैं आप पधारे, मध्यलोक मांहिं जिनराज ।।
इन्द्रदेव सब मिलकर आये, जन्म महोत्सव करने काज ।
आह्वानन सब विधिमिल करके, अपने कर पूजें प्रभु पायं ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणम् ।
क्षीरोदधि का उज्ज्वल जल ले, श्री जिनवर पद पूजन जाय ।
जन्म जरा दुख मेटन कारन, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभु जी के पाय ।।
श्री आदिनाथ के चरण कमल पर, बलिबलि जाऊँ मन वच काय ।
हे करुणानिधि भव दुःख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पाय ।।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
मलयागिरि चन्दन दाह निकन्दन, कंचन झारी में भर ल्याय ।
श्रीजी के चरण चढ़ावो भविजन, भव आताप तुरत मिट जाय ।। श्री ।।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
शुभशालि अखण्डित सौरभ मंडित, प्रासुक जलसों धोकर ल्याय ।
श्रीजी के चरण चढ़ावों भविजन, अक्षय पद को तुरत उपाय । श्री ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
कमल केतकी बेल चमेली, श्री गुलाब के पुष्प मंगाया ।
श्री जी के चरण चढ़ावो भविजन, कामबाण तुरत नसि जाय । श्री ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज लीना षट् - रस भीना, श्री जिनवर आगे धरवाय ।
थाल भराऊँ क्षुधा नसाऊँ, जिन गुण गावत मन हरषाय । श्री ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
जगमग-जगमग होत दशों दिश, ज्योति रही मन्दिर में छाया ।
श्री जी के सन्मुख करत आरती, मोहतिमिर नासै दुखदाय । श्री ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
अगर कपूर सुगन्ध मनोहर चन्दन कूट सुगन्ध मिलाय ।
श्री जी के सन्मुख खेय धूपायन, कर्मजरे चहुँगति मिटि जाय । श्री ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय ।
महा मोक्षफल पावन कारन, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभु जी के पाय । श्री ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
शुचि निरमल नीरं गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय ।
दीप धूप फल अर्घ सुलेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय ।।
श्री आदिनाथ के चरण कमल पर, बलिबलि जाऊँ मन वच काय ।
हे करुणानिधि भव दुःख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पाय ।।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच कल्याणक अर्घ

सर्वार्थ सिद्धि तैं चये, मरुदेवी उर आय ।
दोज असित आषाढ़ की, जजुँ तिहारे पाय ।।
ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चैतवदी नौमी दिना, जन्म्या श्री भगवान ।

सुरपति उत्सव अति करा, मैं पूजौ धरि ध्यान ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तृणवत् ऋद्धि सब छांड़ि के, तप धार्यो वन जाय ।

नौमी चैत्र असेत की, जजुं तिहारे पाय ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

फाल्गुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान ।

इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजो इह थान ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

माघ चतुर्दशि कृष्ण की, मोक्ष गये भगवान ।

भवि जीवों को बोधिके, पहुँचे शिवपुर थान ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं
निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

आदीश्वर महाराज मैं विनती तुमसे करूँ ।

चारों गति के माहिं मैं दुख पायो सो सुनो ।।

अष्टकर्म मैं एकलो, यह दुष्ट महादुख देत हो ।

कबहुँ इतर निगोद में मोकुँ, पटकत करत अचेत हो ।।

म्हारी दीनतणी सुन वीनती ।।टेक ।।

प्रभु कबहुँक पटक्यो नरक में, जठै जीव महादुख पाय हो ।

निष्ठुर निरदई नारकी, जठै करत परस्पर घात हो ।।म्हारी ।।

प्रभु नरक तणा दुःख अब कहूँ, जठै करे परस्पर घात हो ।

कोइयक बांध्यो खंभसो, पापी दे मुद्गरकी मार हो ।।म्हारी ।।

कोइयक काटें करोतसों, पापी अंगतणी दोयफाड़ हो ।

प्रभु यह विधिदुःख भुगत्या घणा, फिर गति पाई तिरयंच हो ।।म्हारी ।।

हिरण बकरा बाछला, पशु दीन गरीब अनाथ हो ।

पकड़ कसाई जाल में, पापी काट काट तन खाय हो ।।म्हारी ।।

प्रभु मैं ऊंट बलद भैंसा भयो जापैं लादियों भार अपार हो ।

नहीं चाल्यो जब गिर पर्यो, पापी दे सोटन की मार हो ।।

प्रभु कोइयक पुण्य संजोग सँ, मैं तो पायो स्वर्ग निवास हो ।।म्हारी ।।

देवांगना संग रमि रह्यो जठै भोगनि को परकास हो ।

प्रभु संग अप्सरा रमि रह्यो, कर कर अति अनुराग हो ।।म्हारी ।।

कबहुँक नंदनवन विषैं प्रभु, कबहुँक वन गृह माहिं हो ।

प्रभु यह विधिकाल गमायकैं, फिर माला गई मुरझाय हो ।।म्हारी ।।

देव थिति सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो ।

सोच करता तन खिर पड़्यो, फिर उपज्यो गरभ मैं जाय हो ।।म्हारी ।।

प्रभु गर्भतणा दुःख अब कहूँ, जठै सकुड़ाई की ठौर हो ।

हलन चलन नहीं कर सक्यो, जठै सघन कीच घनघोर हो ।।म्हारी ।।

माता खावै चरपरो, फिर लागे तन संताप हो ।

प्रभु ज्यों जननी तातो भखै, फिर उपजै तन संताप हो ।।म्हारी ।।

औंधे मुख झूल्यो रह्यो, फेर निकसन कौन उपाय हो ।

कठिन-कठिन कर नीसरो, जैसे निसरै जन्त्री में तार हो ।।म्हारी ।।

प्रभु फिर निकसत ही धरत्यां पड़्यो, फिर लागी भूख अपार हो।
रोय रोय बिलख्यो घणो, दुख वेदनको नहिं पार हो।।म्हारी.।।
प्रभु दुःख मेटन समरथ धनी यातैं लागूँ तिहारे पाय हो।
सेवक अरज करै प्रभु मोकूँ, भवोदधि पार उतार हो।।म्हारी.।।

श्री जी की महिमा अगम है, कोई न पावै पार।

मैं मति अल्प अज्ञान हों, कौन करै विस्तार।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

विनती ऋषभ जिनेश की, जो पढ़सी मन लाय।

सुरगों में संशय नहीं, निश्चय शिवपुर जाय।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

श्री अजितनाथ जिनपूजन

त्याग वैजयन्त सार सारधर्म के अधार,

जिनमधार धीर नग्न सुष्टु कौशलापुरी।

अष्ट दुष्ट नष्टकर मातु वैजयाकुमार,

आयु लक्षपूर्व दक्ष है बहत्तरै पुरी।।

ते जिनेश श्री महेश शत्रु के निकन्दनेश,

अत्र हेरिये सुदृष्टि भक्त पै कृपा पुरी।

आय तिष्ठ इष्टदेव मैं करों पदाब्जसेव,

परम शर्मदाय पाय आय शर्म आपुरी।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौष्ट आह्वाननम्।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणम्।

(छन्द-त्रिभंगी अनुप्रासक)

गंगाहद पानी, निर्मल आनी, सौरभसानी सीतानी।

तसु धारत धारा, तृषानिवारा, शांतागारा सुखदानी।।

श्री अजित जिनेशं, नुतनाकेशं, चक्रधरेशं खग्गेशं।

मनवांछितदाता, त्रिभुवनत्राता, पूजों ख्याता जग्गेशं।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि चंदन बावन, ताप मिटावन, सौरभ पावन घसि ल्यायो।

तुम भवतप भंजन, हो शिवरंजन, पूजनरंजन मैं आयो।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सित खंड विवर्जित, निशिपति तर्जित, पुंज विधर्जित तंदुलको।

भवभावनिखर्जित, शिवपदसर्जित, आनंदभर्जित दंदलको।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मनमथ मदमंथन, धीरजग्रंथन, ग्रंथनिग्रंथन ग्रंथपति।

तुअ पादकुशेसे, आदिकुशेसे, धारि अशेसे अर्चयती।।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आकुल कुल वारन, थिरता कारन, छुधा विदारन चरु लायो।

षटरसकर भीने, अन्न नवीने, पूजन कीने सुखपायो।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक मनिमाला, जोत उजाला, भरि कनथाला हाथ लिया।

तुम भ्रमतमहारी, शिवसुखकारी, केवलधारी पूज किया।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगरादिक चूरन, परिमलपूरन खेवत क्रूरन कर्म जरै ।
 दशहूँ दिशि धावत, हर्ष बढ़ावत अलि गुणगावत नृत्यकरै ।श्री. ।
 ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 बादाम, नरंगी, श्रीफल चंगी आदि अभंगीसों अरचौ ।
 सब विघनविनाशै, सुखपरकाशै आतम भासै भौ विरचौ ।।श्री. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जल फल सब सज्जे, बाजत बज्जे गुनगनरज्जे मनमज्जे ।
 तुअ पदजुगमज्जे, सज्जन जज्जे ते भव भज्जे निजकज्जे ।श्री. ।
 ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच कल्याणक अर्घ

(छन्द : द्रुतमध्यकं 15 मात्रा)

जेठ असित अमावशि सोहै, गर्भदिना नंद सो मनमोहै ।
 इंद फनिंद जजे मनलाई, हम पद पूजत अर्घ चढ़ाई ।।
 ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णामावस्यायां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 माघसुदी दशमी दिन जाये, त्रिभुवन में अति हरष बढ़ाये ।
 इन्दफनिंद जजैं तित आई, हम पद सेवत हैं हुलशाई ।।
 ॐ ह्रीं माघशुक्लदशमीदिने जन्ममंगलमंडिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 माघसुदी दशमी तप धारा, भव तन भोग अनित्य विचारा ।
 इन्द फनिन्द जजैं तित आई, हम पद सेवत हैं सिरनाई ।।
 ॐ ह्रीं माघशुक्लदशमीदिने दीक्षाकल्याणकप्राप्ताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पौषसुदी एकादशी सुहायो, त्रिभुवनभानु सु केवल जायो ।
 इन्द फनिंद जजैं तित आई, हम पद पूजत प्रीति लगाई ।।
 ॐ ह्रीं पौषशुक्लैकादशी दिने ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 पंचमि चैतसुदी निरवाना, निजगुनराज लियो भगवाना ।
 इन्द्र फनिंद जजैं तित आई, हम पद पूजत हैं गुनगाई ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपंचमीदिने निर्वाणमंगलप्राप्ताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

अष्ट दुष्ट को नष्ट करि, इष्ट मिष्ट निज पाय ।
 शिष्ट धर्म भाख्यो हमें, पुष्ट करो जिनराय ।।

(छन्द : पद्धरी 16 मात्रा)

जय अजित देव तुम गुन अपार, पै कहूँ कछुक लघु बुद्धि धार ।
 दश जनमत अतिशय बल अनन्त, शुभलच्छन मधुरवचन भनंत ।।
 संहनन प्रथम मलरहित देह, तनसौरभ शोणित स्वेत जेह ।
 वपु स्वेदबिना महरूप धार, समचतुर धरें संठान चार ।।
 दश केवल गमन अकाश देव, सुरभिच्छ रहै योजन सतेव ।
 उपसर्गरहित जिनतन सु होय, सब जीव रहित बाधा सु जोय ।।
 मुख चारि सरब विद्याअधीश, कवलाअहार वर्जित गरीश ।
 छाया बिनु नख कच बड़े नाहिं, उन्मेष टमक नहिं भ्रकुटि माहिं ।।
 सुरकृत दस-चार करों बखान, सब जीवमित्रता भावजान ।
 कंटक बिन दर्पणवत् सुभूम, सब धान वृच्छ फल रहै झूम ।।

षट् रितुके फूल फले निहार, दिशि निर्मल जिय आनन्दधार ।
 जहँ शीतल मंद सुगन्ध वाय, पदपंकज तल पंकज रचाय ॥
 मलरहित गगन सुरजय उचार, वरषा गन्धोदक होत सार ।
 वर धर्मचक्र आगे चलाय, वसुमंगलजुत यह सुर रचाय ॥
 सिंहासन छत्र चमर सुहात, भामंडल छवि वरनी न जात ।
 तरु उच्च अशोक रु सुमनवृष्टि, धुनि दिव्य और दुन्दुभी मिष्ट ॥
 दृग ज्ञान शर्म वीरज अनन्त, गुण छियालीस इम तुम लहन्त ।
 इन आदि अनन्ते सुगुनधार, वरनत गनपति नहिं लहत पार ॥
 तव समवशरणमहं इन्द्र आय, पद पूजत वसुविधि दरब लाय ।
 अति भगति सहित नाटक रचाय, ता थेई थेई थेई धुनि रही छाय ॥
 पग नुपूर झननन झनन नाय, तन नन नन तन नन तान गाय ।
 घन नन नन नन घण्टा घनाय, छम छम छम छम घुंघरु बजाय ॥
 दृम दृम दृम दृम दृम मुरज ध्वान, संसाग्रदि सरंगीसुर भरत तान ।
 झट झट झट अटपट नटत नाट, इत्यादि रच्यो अद्भुत सुठात ॥
 पुनि वन्दि इन्द्र थुति नुति करन्त, तुम हो जग में जयवन्त सन्त ।
 फिर तुम विहार करि धर्मवृष्टि, सब जोग निरोध्यो परम इष्ट ॥
 सम्मेदथकी लिय मुकति थान, जय सिद्धशिरोमन गुणनिधान ।
 वृन्दावन वन्दत बार-बार, भवसागरतें मोहि तार तार ॥

(छन्द : घत्तानन्द)

जय अजित कृपाला, गुनमणिमाला, संजम शाला बोधपती ।
 वर सुजस उजाला हीरहिमाला, ते अधिकाला स्वच्छ अती ॥
 ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(237)

(छन्द : मदावल्लिप्तकपोल)

जो जन अजित जिनेश जजैं हैं, मनवचकाई ।
 ताकों होय अनन्द ज्ञान सम्पत्ति सुखदाई ॥
 पुत्र मित्र धन्यधान्य सुजस त्रिभुवनमहं छावै ।
 सकल शत्रु छय जाय अनुक्रमसों शिव पावै ॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री संभवनाथ जिनपूजन

(छन्द : मदावल्लिप्त कपोल)

जय संभव जिनचन्द सदा हरिगन चकोरनुत ।
 जयसेना जसु मातु जैति राजा जितारिसुत ॥
 तजि ग्रीवक लिये जन्मनगर श्रावस्ति आई ।
 सो भव भंजनहेत भगतपर होहु सहाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

मुनि मन सम उज्जल जल लेकर, कनक कटोरी में धारा ।
 जनम जरा मृतु नाश करन कों, तुम पदतर द्वारों धारा ॥
 संभव जिनके चरन चरचतें, सब आकुलता मिट जावै ।
 निजनिधि ज्ञान दरश सुख वीरज, निराबाध भविजन सुख पावै ॥
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तपत दाह को कन्दन चंदन, मलयागिरि को घसि लायो ।
 जगवन्दन भौ फंदन खंदन समरथ लखि शरनै आयो ॥ सं. ॥
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

(238)

देवजीर सुखदास कमलवासित, सित सुन्दर अनियारे ।
 पुंज धरों इन चरनन आगें, लहों अखयपदकों प्यारे ।।सं.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 कमल केतकी बेल चमेली, चंपा जूही सुमन वरा ।
 तासों पूजत श्रीपति तुमपद, मदनबान विध्वंसकरा ।।सं.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 घेवर बावर मोदन मोदक, खाजा ताजा सरस बना ।
 तासों पदश्रीपति को पूजत, क्षुधारोग ततकाल हना ।।सं.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 घट पट परकाशक भ्रम तम नाशक, तुम ढिग ऐसो दीप धरो ।
 केवलजोत उदोत होहु मोहि, यही सदा अरदास करों ।।सं.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अगर तगर कृष्णागर श्रीखंडादिक चूर हुतासनमें ।
 खेवत हों तुम चरनजलजढिग, कर्म छार जरि ह्वै छनमें ।।सं.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीफल लौंग बदाम छुहारा, एला पिस्ता दाख रमैं ।
 लै फल प्रासुक पूजों तुम पद, देहु अखयपद नाथ हमैं ।।सं.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जल चंदन तंदुल प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ किया ।
 तुमको अरपों भाव भगतिधर, जै जै जै शिवरमनि पिया ।।सं.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

(छन्द : हंसी मात्रा 15)

मातागर्भवैषै जिन आय, फागुनसित आठैं सुखदाय ।
 सेयो सुरतिय छप्पन वृन्द, नानाविधि में जजौं जिनन्द ।।
 ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लाष्टम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कार्तिक सित पूनम तिथि जान, तीनज्ञानजुत जनम प्रमाण ।
 धरि गिरिराज जजे सुरराज, तिन्हें जजौं मैं निजहितकाज ।।
 ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लपूर्णिमायां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 मगसिर सित पून्यों तप धार, सकल संग तजि जिन अनगार ।
 ध्यानादिक बल जीते कर्म, चर्चौं चरन देहु शिवशर्म ।।
 ॐ ह्रीं मार्गशीर्षपूर्णिमायां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कार्तिक कलि तिथि चौथ महान, घाति घात लिय केवलज्ञान ।
 समवशरनमहँ तिष्ठे देव, तुरिय चिह्न चर्चौं वसुभेव ।।
 ॐ ह्रीं कार्तिककृष्ण-चतुर्थीदिने ज्ञानसाम्राज्य मंगलप्राप्ताय श्रीसंभवनाथ-
 जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चैत्रशुक्ल तिथि षष्ठी धोख, गिरसम्मेदतैं लीनों मोख ।
 चार शतक धनु अवगाहना, जजौं तासपद थुतिकर घना ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल-षष्ठीदिने निर्वाणकल्याणक- प्राप्ताय श्रीसंभवनाथ - जिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

श्री संभवके गुन अगम, कहि न सकत सुरराज ।
मैं वशभक्ति सु धीठ ह्वै, विनवों निजहित काज ॥१॥

(छन्द : मोतीयादाम)

जिनेश महेश गुणेश गरिष्ठ, सुरासुरसेवित इष्ट वरिष्ठ ।
धरे वृषचक्र करे अघ चूर, अतत्त्व छपातम मर्दनसूर ॥
सुतत्त्व प्रकाशन शासन शुद्ध, विवेक विराग बढ़ावन बुद्ध ।
दयातरु तर्पन मेघ महान, कुनय गिरि गंजन वज्र समान ॥
सुगर्भरु जन्ममहोत्सवमाहिं, जगज्जन आनन्दकन्द लहाहिं ।
सुपूरब साठहि लच्छ जु आय, कुमार चतुर्थम अंश रमाय ॥
चवालिस लाख सुपूरव एव, निकटक राज कियो जिनदेव ।
तजे कछु कारन पाय सु राज, धरे व्रत संजम आतमकाज ॥
सुरेन्द्र नरेन्द्र दियो पयदान, धरे वन में निज आतमध्यान ।
किया चवघातिय कर्म विनाश, लयो तब केवलज्ञान प्रकाश ॥
भई समवसृत ठाट अपार, खिरै धुनि झेलहिं श्रीगनधार ।
भने षट्द्रव्यतने विसतार, चहूँ अनुयोग अनेक प्रकार ॥
कहें पुनि त्रेपन भावविशेष, उभै विधि हैं उपशम्य जु भेष ।
सुसम्यकचारित्र भेदस्वरूप, भये इमिछायक नौ सुअनूप ॥
दृगौ बुधि सम्यक चारितदान, सुलाभ रु भोगोपभोगोप्रमान ।
सुवीरज संजुत ए नव जान, अठार छयोपशम इम प्रमान ॥

(241)

मति श्रुत औधि उभै विधि जान, मनःपरजै चखु और प्रमान ।
अचक्खु तथा विधिदान रु लाभ, सुभोगोपभोग रु वीरजसाभ ॥
व्रताव्रत संजम और सु धार, धरे गुन सम्यक चारित भार ।
भये वसु एक समापत येह, इकीश उदीक सुनो अब जेह ॥
चहूँ गति चारि कषाय तिवेद, छह लेश्या और अज्ञानविभेद ।
असंजमभाव लखो इसमाहिं, असिद्धित और अतत्त कहाहिं ॥
भये इकबीस सुनो अब और, सुभेदत्रियं पारिनामिक ठौर ।
सुजीवित भव्यत और अभव, तरेपन एम भने जिन सब्ब ॥
तिन्हों मँह केतक त्यागन जोग, कितेक गहेंतें मिटैं भवरोग ।
कह्यो इन आदि लह्यो फिर मोख, अनन्त गुनातम मंडित चोख ॥
जजों तुम पाय जपौं गुनसार, प्रभु हमको भवसागर तार ।
गही शरनागत दीनदयाल, विलम्ब करो मति हे गुनमाल ॥

घत्ता

जै जै भव भंजन जन-मन-रंजन, दया-धुरंधर कुमति-हरा ।
वृन्दावन-वंदत मन आनन्दित, दीजै आतम-ज्ञान-वरा ॥
ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

छन्द अडिल्ल

जो बांचै यह पाठ सरस संभवतनों ।
सो पावै धनधान्य सरस सम्पत्ति घनों ॥
सकल पाप छै जाय सुजस जगमें बढे ।
पूजत सुरपद होय अनुक्रम शिव चढ़े ॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

(242)

श्री अभिनन्दननाथ जिनपूजन

अभिनन्दन आनन्दकंद, सिद्धारथ नन्दन।

संवरपिता दिनन्द चन्द, जिहिं आवत वन्दन॥

नगर अयोध्या जनम इन्द, नागिंद जु ध्यावैं।

तिन्हें जजनके हेत थापि, हम मंगल गावैं॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणम्।

(छन्द-गीता, हरिगीता तथा रूपमाला)

पदम द्रहगत गंगचंग, अभंग धार सुधार है।

कनक मणि नगजड़ित झारी, द्वार धार निकार है॥

कलुष तापनिकंद श्री अभिनन्द, अनुपम चन्द है।

पदवंद वृन्द जजे प्रभु, भवदंद फंद निकंद है॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

शीतल चन्दन कदलि नन्दन सुजलसंग घसायकैं।

हो सुगंध दशों दिशामें, भ्रमैं मधुकर आयकैं॥क॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

हीर हिम शशि फेन मुक्ता, सरिस तंदुल सेत हैं।

तासको ढिग पुंज धारों, अक्षयपदके हेत हैं॥क॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

समर सुभट निघटन कारन, सुमन सुमन समान हैं।

सुरभितैं जापैं करै झंकार, मधुकर आन हैं॥क॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

सरस ताजे नव्य गव्य मनोज्ञ, चितहर लेयजी।

छुधाछेदन छिमा छितिपति के, चरन चरचेयजी॥क॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

अतत तममर्दन किरनवर, बोधभानुविकाश है।

तुम चरन ढिग दीपक धरों, मोहि होहु स्वपर प्रकाश है॥क॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

भूर अगर कपूर चूर सुगंध, अग्नि जराय है।

सब करम काष्ठ सुकाष्ठमैं मिस, धूमधूम उडाय है॥क॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम निंबु सदा फलादिक, पक्व पावन आनजी।

मोक्षफलके हेतु पूजों, जोरिकैं जुगपान जी॥क॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टद्रव्य संवारि सुन्दर सुजस गाय रसाल ही।

नचत रचत जजों चरनजुग, नाय नाय सुभाल ही॥क॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक

(छन्द : हरिपद)

शुक्लछट्ट वैशाखविषै तजि, आये श्रीजिनदेव।

सिद्धारथ माता के उर में, करै शची शुचि सेव॥

रतनवृष्टि आदिक वर मंगल, होत अनेक प्रकार।

ऐसे गुननिधिको मैं पूजों, ध्यावों बारम्बार॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

माघशुक्लतिथि द्वादशिके दिन, तीनलोक हितकार ।
अभिनन्दन आनन्दकंद तुम, लीन्हों जग अवतार ॥
एक महूरत नरकमांहि हू, पायों सब जिय चैन ।
कनकवरन कपि चिह्न धरन पद, जजों तुमैं दिनरैन ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

साढ़े छत्तिस लाख सुपूरब, राजभोग वर भोग ।
कछु कारन लिखि माघशुक्ल द्वादशिको धार्यो जोग ॥
षष्ठम नियम समाप्त करि लिय, इंद्रदत्तघर छीर ।
जय धुनि पुष्प रतन गंधोदक, वृष्टि सुगंध समीर ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पौष शुक्ल चौदशिको घाते, घातिकरम दुखदाय ।
उपजायो वरबोध जासको, केवल नाम कहाय ॥
समवशरन लहि बोधिधरम कहि, भव्यजीव सुखकन्द ।
मोकों भवसागरतैं तारों जय जय जय अभिनन्द ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लचतुर्दश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जोगनिरोध अघातिघाति लहि, गिरिसमेदतैं मोख ।
माससकल सुखरास कहे, बैशाखशुक्ल छठचोख ॥
चतुरनिकाय आय तित कीनो, भगत भाव उमगाय ।
हम पूजत इत अरघ लेय जिमि, विघन सघन मिट जाय ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठीदिने मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

तुंग सु तन धनु तीन सौ, औ पचास सुखधाम ।
कनकवरन अवलौकिकैं, पुनि पुनि करूँप्रणाम ॥

(छन्द : लक्ष्मीधरा)

सच्चिदानन्द सद्ज्ञान सद्दर्शनी, सत्यस्वरूपा लई सत्सुधासर्सनी ।
सर्वआनन्दकंदा महादेवता, जास पादाब्ज सेवैं सबैं देवता ॥
गर्भ औ जन्म निःक्रमकल्यान में, सत्त्व को शर्म पूरे सवै थान में ।
वंशइक्ष्वाकु में आप ऐसे भये, ज्यों निशाशर्द में इन्दु स्वेच्छे ठये ॥

(लक्ष्मीवती छन्द)

होत वैराग लोकांतसुर बोधियो, फेरि शिविकासु चढ़ि गहन निज सोधियो ।
घाति चौघातिया ज्ञान केवल भयो, समवसरनादि धनदेव तब निरमयो ।
एक है इन्द्रनीली शिला रत्नकी, गोल साढ़ेदशै जोजने रत्नकी ।
चारदिश पैड़िका बीस हज्जार है, रत्न के चूर का कोट निरधार है ॥
कोट चहुँओर चहुँद्वार तोरन खचे, तास आगे चहू मानथंभा रचे ।
मान मानी तजैं जास ढिग जायकैं, नम्रता धार सेवैं तुम्हैं आयकैं ॥
बिंब सिंहासनो पै जहाँ सोहहीं, इन्द्रनागेन्द्र केते मनै मोहहीं ।
वापिका वारिसों जत्र सोहैं भरीं, जासमें न्हात ही पाप जावै टरी ॥
तास आगे भरी खातिका वारिसों, हंस सूआदि पंखी रमें प्यारसों ।
पुष्पकी वाटिका बागवृक्षें जहाँ, फूल और श्रीफले सर्वही हैं तहाँ ॥

कोट सौवर्ण का तास आगे खड़ा, चारदर्वाज चौओर रत्नों जड़ा ।
 चार उद्यान चारों दिशा में गना, है धुजापंक्ति और नाट्यशाला बना ।।
 तासु आगे त्रितीकोट रूपामयी, तूप नौ जास चारों दिशामें ठयी ।
 धाम सिद्धान्तधारीनके हैं जहाँ, औ सभाभूमि है भव्य तिष्ठे तहाँ ।।
 तास आगे रची गन्धकूटी महा, तीन है कटिनी सारशोभा लहा ।
 एकपैं तौ निधैं ही धरी ख्यात हैं, भव्यप्रानी तहाँ लौं सबै जात हैं ।।
 दूसरी पीठ पै चक्रधारी गमै, तीसरे प्रातिहार्ये लसै भागमें ।
 तासपै वेदिका चार थंभानकी, है बनी सर्वकल्याण के खान की ।।
 तासुपै है सुसिंघासनं भासनं, जासुपैं पद्मप्राफुल्ल है आसनं ।
 तासुपै अन्तरीक्षं विराजै सही, तीन छत्रे फिरें शीसरत्ने यही ।।
 वृक्ष शोकापहारी अशोकं लसै, दुन्दुभी नाद और पुष्प खंते खसै ।
 देह की ज्योति से मण्डलाकार है, सात सौ भव्य तामें लखै सार है ।।
 दिव्यवानी खिरै सर्वशंका हरै, श्रीगनाधीश झेलैं सुशक्ति धरै ।
 धर्मचक्री तुही कर्मचक्री हने, सर्वशक्री नमैं मौदधारे घने ।।
 भव्यको बोधि सम्पेदतैं शिव गये, तत्र इन्द्रादि पूजे सुभक्तीमये ।
 हे कृपासिन्धु मोपै कृपा धारिये, घोर संसार सों शीघ्र मो तारिये ।।

(घत्तानन्द छन्द)

जय जय अभिनन्दा, आनन्दकंदा, भवसमुद्रवर पोत इवा ।
 भ्रमतम शतखंडा, भानुप्रचंडा, तारि तारि जग रैन दिवा ।।
 ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(247)

(छन्द : कवित्त)

श्री अभिनन्दन पापनिकन्दन तिनपद जो भवि जजै सुधार ।
 ताके पुन्य भानु वर उगै दुरित-तिमिर फाटे दुखकार ।।
 पुत्र मित्र धनधान्य कमल यह विकसै सुखद जगतहित प्यार ।
 कछुक कालमें सो शिव पावै, पढ़े सुने जिन जजै निहार ।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

श्री सुमतिनाथ जिनपूजन

(छन्द : कवित्त रूपक मात्रा 31)

संजम रतन विभूषण भूषित, दूषण वर्जित श्रीजिनचन्द ।
 सुमति रमा रंजन भवभंजन, संजयंत तजि मेरुनरिंद ।।
 मातु मंगला सकलमंगला, नगर विनीता जये अमंद ।
 सो प्रभु दया सुधारस गर्भित, आय तिष्ठ इत हरि दुखदंद ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।
 पंचम उदधितनों सम उज्ज्वल, जल लीनों वरगंध मिलाय ।
 कनककटोरी माहिं धारिकरि, धारदेहुं सुचि मनवचकाय ।।
 हरिहर वंदित पापनिकंदित, सुमतिनाथ त्रिभुवनके राय ।
 तुमपदपद्म सद्मशिवदायक, जजत मुदितमन उदित सुभाय ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 मलयागर घनसार घसौं वर, केशर अर करपूर मिलाय ।
 भव तप हरन चरन पर वारों, जनम जरा मृतताप पलाय ।हरि ।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

(248)

शशि सम उज्ज्वल सहित गंधतल, दोनों अनी शुद्ध सुखदास ।
 सो ले अखय संपदा कारन, पुंज धरों, तुम चरनन पास ।हरि. ।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 कमल केतुकी बेल चमेली, करना अरु गुलाब महकाय ।
 सो ले समर शूल छय कारन, जजों चरन अति प्रीति लगाय ।हरि. ।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नव्य गव्य पकवान बनाऊँ, सुरस देखि दृगमन ललचाय ।
 सो ले क्षुधारोग छयकारण, धरों चरन ढिग मनहरषाय ।।हरि. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 रतन जड़ित अथवा घृतपूरित वा कपूरमय जोति जगाय ।
 दीप धरों तुम चरनन आगैं जातैं केवलज्ञान लहाय ।।हरि. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अगर तगर कृष्णागरु चंदन, चूरि अगनि में देत जराय ।
 अष्टकरम ये दुष्ट जरतु हैं, धूम धूम यह तासु उड़ाय ।।हरि. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीफल मातुलिंग वर दाड़िम, आम निंबु फल प्रासुक लाय ।
 मोक्ष महाफल चाखन कारन, पूजत हों तुमरे जुग पाय ।।हरि. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जल चंदन तंदुल प्रसून चरु दीप धूप फल सकल मिलाय ।
 नाचि राचि शिरनाय समरचों, जय जय जय जय जिनराय ।।
 हरिहर वंदित पापनिकंदित, सुमतिनाथ त्रिभुवनके राय ।
 तुमपदपद्म सद्मशिवदायक, जजत मुदितमन उदित सुभाय ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

संजयंत तजि गरभ पधारे, सावनसेत दुतिय सुखकारे ।
 रहे अलिप्त मुकुर जिमि छाया, जजों चरन जय जय जिनराया ।।
 ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लद्वितीयादिने गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चैत सुकल ग्यारस कहँ जानों, जनमे सुमति सहित त्रयज्ञानों ।
 मानो धर्यो धरम अवतारा, जजों चरनजुग अष्टप्रकारा ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चैत सुकल ग्यारस तिथि भाखा, ता दिन तपधरि निजरस चाखा ।
 पारन पद्मसद्म पय कीनों, जजत चरन हम समता भीनों ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुकल चैत एकादशि हाने, घाति सकल जे जुगपति जाने ।
 समवसरनमँह कहि वृषसारं जजहुँ अनंतचतुष्टयधारं ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां ज्ञानसाम्राज्यप्राप्ताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चैत सुकल ग्यारस निर्वाणं, गिरिसमेदतैं त्रिभुवन मानं ।
 गुन अनन्त निज निरमलधारी, जजों देव सुधिलेहु हमारी ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

सुमति तीनसौ छत्तिसौ, सुमति भेद दरसाय ।
सुमति देहु विनती करों, सुमति विलम्ब कराय ॥
दयाबेलि तहँ सुगुननिधि, भविकमोद गण चन्द ।
सुमतिसतीपति सुमतिकों, ध्यावों धरि आनन्द ॥
पंच परावरतन हरन, पंचसुमति सित दैन ।
पंचलब्धि दातार के, गुन गाऊँ दिनरैन ॥

(छन्द : भुजंगप्रयात)

पिता मेघराजा सबै सिद्ध काजा, जपैं नाम जाको सबै दुःखभाजा ।
महासूर इक्ष्वाकुवंशी विराजै, गुणग्राम जाकौ सबै ठौर छाजै ॥
तिन्हों के महापुण्य सों आप जाये, तिहँलोक में जीव आनन्द पाये ।
सुनासीर ताही घारी मेरुधारो, क्रिया जन्म की सर्व कीनी यथायों ॥
बहुरि तातकों सोंपि संगीत कीनो, नमें हाथ जोरों भली भक्ति भीनों ।
विताई दशै लाख ही पूर्व बालै, प्रजा लाख उन्तीस ही पूर्व पालै ॥
कछू हेतुतैं भावना बार भाये, तहाँ ब्रह्मलोकान्तके देव आये ।
गये बोधि ताही समै इन्द्र आयो, धरे पालकी में सु उद्यान ल्यायो ॥
नमः सिद्ध कहि केशलोंचे सबै ही, धर्यो ध्यान शुद्ध जु घाती हने ही ।
लह्यो केवलं औ समोसर्न साजं, गणाधीश जु एकसौ सोलराजं ॥
खिरै शब्द तामै छहों द्रव्यधारे, गुनौपर्जउत्पादव्यय ध्रौव्य सारे ।
तथा कर्म आठों तनी थिति गाजं, मिले जासुके नाशतैं मोक्षराजं ॥
धरैं मोहिनी सत्तरं कोड़कोड़ी, सरिपतिप्रमाणं थिति दीर्घ जोड़ी ।
अवज्ञान दृवेदिनी अन्तरायं, धरैं तीस कोड़ाकुड़ी सिन्धुकायं ॥

तथा नाम गोतं कुड़ाकोड़ि बीसं, समुद्रप्रमाणं धरें सत्ताईसं ।
सु तैंतीस अब्धिं धरें आयु अब्धिं, कहें सर्व कर्मों तनी वृद्धलब्धिं ॥
जघन्य प्रकारे धरे भेद ये ही, मुहूर्त वसू नामगोतं गने ही ।
तथाज्ञानदृग्मोह प्रत्यूह आयं, सुअन्तर्मुहूर्त धरें थित्तिगायं ॥
तथा वेदिनी बारहे ही मुहूर्त, धरें थित्ति ऐसे भन्यो न्यायजुत्तं ।
इन्हें आदि तत्त्वार्थ भाख्यो अशेसा, लह्यो फेरि निर्वाण माहि प्रवेसा ॥
अनन्तं महन्तं सुरंतं सुतंतं, अमन्दं अफन्दं अनन्तं अभन्तं ।
अलक्षं विलक्षं सुलक्षं सुदक्षं, अनक्षं अवक्षं अभक्षं अतक्षं ॥
अवर्णं सुवर्णं अमर्णं अकर्णं, अभर्णं, अतर्णं अशर्णं सुशर्णं ।
अनेकं सदेकं चिदेकं विवेकं, अखण्डं सुमण्डं प्रचण्डं सदेकं ॥
सुपर्मं सुधर्मं सुशर्मं अकर्म, अनन्तं गुनाराम जयवन्त धर्मं ।
नमैं दास वृन्दावनं शर्न आई, सबै दुखतैं मोहि लीजै छुड़ाई ॥
तुम सुगुन अनन्ता ध्यावत सन्ता, भ्रमतम भंजन मार्तडा ।
सतमजकरचंडा भवि कजमंडा, कुमतिकुबल भन गन हंडा ॥
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(छन्द : रोड़क)

सुमतिचरन जौ जजैं, भविक जन मनवचकाई ।
तासु सकलदुखदंद फंद ततछिन छय जाई ॥
पुत्रमित्र धनधान्य, शर्म अनुपम सो पावै ।
वृन्दावन निर्वाण, लहै जो निहचै ध्यावै ॥
॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री पद्मप्रभ जिन पूजन

पदमराग मनि वरन धरन, तनतुंग अढ़ाई।
शतक दंड अघखंड, सकल सुर सेवत आई।।
धरनि तात विख्यात सुसीमा जूके नंदन।
पदमचरन धरि राग सु थापों इतकरि वंदन।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
परिपुष्पांजलिं क्षिपामि।

(चाल होली की- ताल जत्त)

पूजों भावसों, श्रीपदमनाथपद सार पूजों भावसों ।।टेक।।
गंगाजल अतिप्रासुक लीनों, सौरभ सकल मिलाय।
मनवचतन त्रयधार देत ही जनम जरामृत जाय।
पूजों भावसों, श्रीपदमनाथपद सार पूजों भावसों।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
मलयागर कपूर चन्दन घसि, केशररंग मिलाय।
भव तप हरन चरनपर वारों, मिथ्याताप मिटाय।।
मन वच तन त्रयधार देत ही जनम जरामृत जाय।
पूजों भाव सों, श्रीपदमनाथपद सार, पूजों भावसों।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
तंदुल उज्ज्वल गंध अनीजुत, कनक थारभर लाय।
पुंज धरों तुव चरनन आगैं, मोहि अखयपद दाय।।पू.।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

(253)

पारिजात मंदार कलप तरु, जनित सुमन शुचि लाय।
समरशूल निरमूल करन को, तुम पद पद्म चढ़ाय ।।पू.।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
घेवर बावर आदि मनोहर, सद्य सजे शुचि लाय।
छुधारोग निर्वारन कारन, जजों हरष उरलाय ।।पू.।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
दीपकजोति जगाय ललित वर, धूमरहित अभिराम।
तिमिरमोह नाशन के कारन, जजों चरन गुनधाम ।।पू.।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
कृष्णागर मलयागर चन्दन, चूर सुगंध बनाय।
अग्निमाहिं जारों तुम आगैं अष्टकरम जरिजाय ।।पू.।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
सुरस वरन रसना मनभावन, पावन फल अधिकार।
तासों पूजों जुगम चरन यह, विघन करमनिरवार ।।पू.।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
जल फल आदि मिलाय गाय गुन, भगतभाव उमगाय।
जजों तुमहिं शिवतियवर जिनवर आवागमन मिटाय।।हरि.।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

(छन्द द्रुतविलम्बित्)

असित माघ सु छट्ठि बखानिये, गरभमंगल तादिन मानिये।
उरध ग्रीवक सौं चय राज जी, जजत इन्द्र जजैं हम आजजी।।

(254)

ॐ ह्रीं माघकृष्णषष्ठीदिने गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुकल कार्तिक तेरसको जये, त्रिजगजीव सु आनन्दकों लये ।
नगर स्वर्ग समान कुसंबिका, जजतु हैं हरिसंजुत अंबिका ।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुकल तेरस कार्तिक भावनी, तप धर्यौ व्रतषष्ठम पावनी ।

करत आतमध्यान धुरंधरों, जजत हैं हम पाप सबै हरो ।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लत्रयोदश्यां निःक्रमणकल्याण प्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुकल पूनम चैत सुहावनी, परमकेवल ता दिन पावनी ।

सुरसुरेश नरेश जजैं तहाँ हम जजैं पदपंकजको इहाँ ।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपूर्णिमायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

असित फागुन चौथि सुजानियो, सकल कर्म महारिपु हानियो ।

गिरिसमेद थकी शिवको गये, हम जजैं पद ध्यान विषैं लये ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्थीदिने मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(घत्तानन्द छन्द)

जय पद्मजिनेशा शिव सद्देशा, पादपद्म जजि पद्मेशा ।

जय भवतम भंजन मुनि मन कंजन, रंजन को दिवसाधेशा ।।

(255)

(छन्द रूप चौपाई)

जय जय जिन भविजन हितकारी, जय जय जिन भवसागर तारी ।

जय जय समवसरन धनधारी, जय जय वीतराग हितकारी ।।

जय तुम सात तत्त्व विधि भाख्यो, जय जय नव पदार्थ लखि आख्यो ।

जय षट् द्रव्य पंच युत काया, जय सब भेद सहित दरशाया ।।

जय गुनथान, जीव परमानो, जय पहिले संख्यात जीव जानो ।

जय दूजे सासादन माही, बावन कोड़ि जीवथित आंही ।।

जय तीजे मिश्रित गुणथाने, चार अधिक शत कोड़ि सदीवा ।

जय चौथे अविरति गुन जीवा, कोड़ि सातसौ हैं थिति वेशा ।।

जय जिय देशविरत में शेषा, तेरह कोड़ि जीव सुप्रमाणा ।

जय प्रमत्त षट् शून्य दोय वसु, नव तीन नव पांच जीव लसु ।।।

जय जय अपरमत्त द्विकोडी, लच्छ छानवे सहस बहोरं ।

निन्यानवे एकशत तीनों, ऐते मुनि तित रहिं प्रवीना ।।

जय जय अष्टम में दुई धारा, आठ शतक सत्तानों सारा ।

जय इतने इतने हितकारी, नवें दशें जुग श्रेणी धारी ।।

उपशममें दुइसो निन्यानों, छपकमाहिं तसु दूने जानों ।

जय ग्यारें उपशम मगगामी, दुइसैं निन्यानों अघ गामी ।।

जय जय छीनमोह गुन थानों, मुनि शत पाँच अधिक अट्ठानों ।

जय जय तेरह में अरहन्ता, जुग नभ एक नव नव वसु तंता ।।

ऐते राजतु हैं चतुरानन, हम वन्दै पद थुतिकरि आनन ।

हैं अजोग गुनमें जे देवा, अठ नव पंच करों सु सेवा ।।

(256)

तित तिथि अ इ उ ऋ लृ भाषत, करि थिति फिर शिव आनन्द चाखत ।
 ये उत्कृष्ट सकल गुन थानी, तथा जघन मध्यम जे प्रानी ।।
 तीनों लोक सदन के वासी, निज गुन परज भेदमय राशी ।
 तथा और द्रव्यन के जेते, गुन परजाय भेद है तेते ।।
 तीनों काल तनें जु अनन्ता, सो तुम जानत जुगपत सन्ता ।
 सोई दिव्यवचन के द्वारे, दे उपदेश भविक उद्धारे ।।
 फेरि अचल थल बासा कीनों, गुन अनन्त निज आनन्द भीनों ।
 चरम देहते किंचित् ऊनो, नर आकृति तित हैं नित गूनो ।।
 जय जय सिद्धदेव हितकारी, बार बार यह अरज हमारी ।
 मोकों दुख सागर तें काढ़ो, वृन्दावन जाँचतु है ठाढ़ो ।।

(छन्द घत्तानन्द)

जय जय जिनचन्दा पद्मानंदा, परम सुमतिपद्माधारी ।
 जय जनहितकारी दयाविचारी, जय जय जिनवर अविकारी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(छन्द रोड़क)

जजत पद्मपद पद्मसद्व ताके सुपद्म अत ।
 होत वृद्धि सुतमित्र सकल आनन्दकंद शत ।।
 लहत स्वर्गपदराज तहाँतें चय इत आई ।
 चक्रीकों सुख भोगि, अंत शिवराज कराई ।।
 ॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

(257)

श्री सुपाश्वर्चनाथ जिनपूजन

(छन्द : हरिगीतिका तथा गीता)

जय जय जिनिन्द गनिंद इन्द, नरिंद गुन चिंतन करै ।
 तन हरिहर मनसम हरत मन, लखत उर आनन्द भरै ।।
 नृप सुपरतिष्ठ वरिष्ठ इष्ट, महिष्ठ शिष्ठ पृथी प्रिया ।
 तिन नन्दके पद वन्द वृन्द, अमंद थापत जुतक्रिया ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपाश्वर्चनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।
 तुम पद पूजों मनवचकाय, देव सुपारस शिवपुर राय ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।।
 उज्ज्वल जल शुचि गंध मिलाय, कंचनझारी भरकरलाय ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपाश्वर्चनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।
 मलयागर चंदन घसि सार, लीनो भवतप भंजनहार ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।। तुम ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपाश्वर्चनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 देवजीर सुखदास अखंड, उज्ज्वल जल छालित सितमंड ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।। तुम ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपाश्वर्चनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 प्रासुक सुमन सुगंधित सार, गुंजत अलि मकर ध्वजहार ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।। तुम ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपाश्वर्चनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

(258)

छुधाहरण नेवज वर लाय, हरो वेदनी तुम्हें चढ़ाय ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।।तुम.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाथ नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ज्वलित दीप भरकरि नवनीत, तुमढिग धारतु हों जगमीत ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।।तुम.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाथ दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दशविधि गन्ध हुताशन माहिं, खेवत क्रूर करम जरि जाहिं ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।।तुम.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीफल केला आदि अनूप, लै तुम अग्र धरो शिवभूप ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।।तुम.।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 आठों दरवसजि गुनगाय, नाचत राचत भगति बढ़ाय ।।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।।
 तुम पद पूजों मनवचकाय देव सुपारस शिवपुर राय ।
 दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।।
 ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

(छन्द : द्रुतविलम्बित तथा सुन्दरि-वर्ण 12)

सुकलभादव छट्ठ सुजानिये, गरभमंगल तादिन मानिये ।
 करत सेव सची रचि मातकी, अरघ लेय जजों वसुभातिकी ।।
 ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लषष्ठीदिने गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुकलजेठ दुवादशि जन्मये, सकल जीव सु आनन्द तन्मये ।
 त्रिदशराज जजैं गिरिराजजी, हम जजैं पद मंगलसाज जी ।।
 ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जनमके तिथि श्रीधरने धरी, तप समस्त प्रमादनकों हरी ।
 नृपमहेन्द्र दियो पय भावसों, हम जजैं इत श्रीपद चावसों ।।
 ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां निःक्रमणकल्याणप्राप्ताय श्रीसुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 भ्रमर फागुन छट्ठ सुहावनों, परम केवल ज्ञान लहावनों ।
 समवसर्न विषैं वृश भाखिओ, हम जजैं पद आनन्द चाखियों ।।
 ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णषष्ठीदिने ज्ञानसाम्राज्यप्राप्ताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 असित फागुण सातय पावनों, सकल कर्म कियो छ्य भावनों ।
 गिरि समेद थकी शिव जातु हैं, जजत ही सब विघ्न विलातु हैं ।।
 ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तमीदिने मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

तुंग अंग धनु दोय सौं, शोभा सागरचन्द ।
 मिथ्यातपहर सुगुनकर, जयसुपास सुखकंद ।।

(छन्द : कामिनी मोहन-10 मात्रा)

जयति जिनराज शिवराजहितहेत हो,
 परम वैराग आनन्द भरि देत हो ।
 गर्भ के पूर्व षट् मास धनदेवने,
 नगर निरमापि वाराणसी सेवने ।।

गगन सों रतन की धार बहु वरषहीं,
 कोड़ि त्रैअर्द्ध त्रैवार सब हरषहीं।
 तात के सदन गुन वदन रचना रची,
 मातुकी सर्वविधि करत सेवा शची॥
 भयो जब जनम तब इन्द्र आसन चल्थो,
 होय चकित तुरित अवधितैं लखि भल्थो।
 सप्त पग जाय शिर नाय वन्दन करी,
 चलन उमग्यो तबैं मानि धनि धनि धरी॥
 सात विधि सैन गज वृषभ रथ बाज लै,
 गन्धरव नृत्यकारी सबै साज लै।
 गलित मद गण्ड ऐरावती साजियो,
 लक्ष जोजन सु तन वदन सत राजियो॥
 वदन वसु दन्त प्रति दन्त सरवर भरे,
 तासुमधि शतक पनबीस कमलिनि खरे।
 कमलिनी मध्य पनवीस फूले कमल,
 कमल प्रति कमल मँह एकसौ आठदल॥
 सर्वदल कोड़ शतवीस परमान जू,
 तासुपर अपसरा नचहिं जुतमान जू।
 तततता तततता विततता ताथई,
 धृगतता धृगतता धृगतता में लई॥
 धरत पग सनन नन सनन नन गगन में,
 नूपुरें झनन नन झनन नन पगनमे ।

नचन इत्यादि कई भाँतिसों मगन में,
 केई तित बजत बाजै मधुर पगनमें॥
 केई दृम दृम सुदृमदृम मृदंगनि धुनै,
 केई झल्लरि झनन झंझनन झंझनै।
 केई संसागृदि सारंगि संसाग्रदि सुर,
 केई बीनापटह बंसि बाजै मधुर॥
 केइ तनननन तनननन तानैं पुरैं,
 शुद्ध उच्चारी सुर केई पाठैं फुरैं।
 केई झुकि झुकि फिरैं चक्रसी भामनी,
 धृगततां धृगततां परम शोभा बनी॥
 केई छिन निकट छिन दूर छिन थूल लघु,
 धरत वैक्रियक परभावसों तन सुभगु ।
 केइ करताल करताल तल में धुनै,
 तत वितत घन सुषिरि जात बाजै मुनैं॥
 इन्द्र आदिक सकल साज संग धारिकैं,
 आय पुर तीन फेरी करी प्यार कै।
 सचिय तब जाय परसूतथल मोद में,
 मातु करि नींद लीनों तुम्हें गोद में॥
 आन गिरवान नाथहिं दियो हाथ में,
 छत्र अर चमर वर हरि करत माथ में।
 चढ़े गजराज जिनराज गुन जापियो,
 जय गिरिराजपांडुकशिला थापियो॥
 लेय पंचम उदधि उदक कर कर सुरनि,

सुरन कलशनि भरे सहित चर्चित पुरनि ।
 सहस अरु आठ शिर कलश ढारे जबै,
 अघघ घघ घघघ घघ भभभ भभ भौ तबै ॥
 धधध धध धधध धध धुनि मधुर होत है,
 भव्य जन हंस के हरस उद्योत है ।
 भयो इमि न्हौन तब सकल गुन रंग में,
 पौछि शृंगार कीनों सची अंगमें ॥
 आनि पितुसदन शिशु सौं पि हरि थल गयो,
 बालवय तरुन लहि राज सुख भोगियो ।
 भोग तज जोग गहि चार अरि को हने,
 धारि केवल परम धरम दुइ विधि भने ॥
 नाशि अरि शेष शिव थान वासी भये,
 ज्ञान दृग शर्म वीरज अनन्ते लये ।
 दीन जन की करुन बानि सुन लीजिये,
 धरमके नन्दको पार अब कीजिये ॥

(घत्तानन्द)

जय करुनाधारी, शिवहितकारी, तारन तरन जिहाजा हो ।
 सेवत नित वंदे मनआनन्दै, भव भय मेटन काजा हो ॥
 ॐ ह्रीं श्रीसुपाश्वर्षनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

श्रीसुपाश्वर्ष पदजुगल जो, जजै पढैं यह पाठ ।
 अनुमोदै सो चतुर नर, पावे आनन्द ठाठ ॥
 ॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

(263)

श्री चन्द्रप्रभ जिन पूजन

(छप्पय)

चारु चरन आचरन, चरन चित - हरन चिह्नचर,
 चन्द- चन्द- तनचरित, चंदथल चहत चतुर नर ।
 चतुक चण्ड - चकचूरि, चारि चिदचक्र गुनाकर,
 चंचल चलित सुरेश, चूलनुत चक्र धनुरधर ॥
 चर अचर हितू तारन तरन, सुनत चहकि चिर नंद शुचि ।
 जिनचंद चरन चरच्यो चहत, चितचकोर नचि रच्चि रुचि ॥

(दोहा)

धनुष डेढ़ सौ तुंग तन, महासेन नृपनन्द ।
 मातु लछमना उर जये, थापों चन्द जिनन्द ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
 परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

(छन्द अवतार)

गंगाहद निरमल नीर, हाटक भृंगभरा,
 तुम चरन जजों वर वीर, मेटो जनम जरा ।
 श्रीचंदनाथ दुति चन्द, चरनन चंद लगे,
 मनवचतन जजत अमंद, आतमजोति जगे ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री खण्ड कपूर सुचंग, केशर रंग भरी ।
 घसि प्रासुक जल के संग, भव-आताप हरी ॥ श्री ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

(264)

तन्दुल सित सोम समान सोले अनियारे ।
 दिय पुंज मनोहर आन, तुम पदतर प्यारे ॥ श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुरद्रुम के सुमन सुरंग, गन्धित अलि आवे ।
 तासों पद पूजत चंग, कामबिथा जावै ॥ श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नेवज नाना परकार, इन्द्रिय बलकारी ।
 सो लै पद पूजों सार, आकुलता हारी ॥ श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तम भंजन दीप संवार, तुम ढिग धारतु हो ।
 मम तिमिरमोह निरवार, यह गुन धारतु हों ॥ श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दशगंध हुतासन माहिं, हे प्रभु खेवतु हों ।
 मम करम दुष्ट जरि जाहिं, यातैं सेवतु हों ॥ श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अति उत्तम फल सु मंगाय, तुम गुण गावतु हों ।
 पूजों तनमन हरषाय, विघन नशावतु हों ॥ श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों ।
 पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनी गमों ॥ श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(पंच कल्याणक अर्घ - तोटक छन्द)
 कलि पंचम चैत सुहात अली, गरभागम मंगल मोद भरी ।
 हरि हर्षित पूजत मातु पिता, हम ध्यावत पावत शर्मसिता ॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपंचम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
 अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कलि पौष इकादशि जन्म लयो, तब लोकविषे सुख थोक भयो ।
 सुर ईश जजें गिरशीश तबै, हम पूजत हैं नितशीस अबै ॥
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
 अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तप दुद्धर श्रीधर आप धरा, कलि पौष ग्यारसि पर्व वरा ।
 निज ध्यान विषैं लवलीन भये, धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ॥
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 वर केवलभानु उद्योत कियो, तिहुं लोक तणों भ्रम मेट दियो ।
 कलि फाल्गुन सप्तमी इन्द्र जजे, हम पूजहिं सर्व कलंक भजे ॥
 ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सित फाल्गुण सप्तमि मुक्ति गये, गुणवन्त अनन्त अबाध भये ।
 हरि आय जजें तित मोद धरे, हम पूजत ही सब पाप हरे ॥
 ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

हे मृगांकअंकित चरण, तुम गुण अगम अपार ।
गणधर से नहीं पार लहिं, तौ को वरनत सार ॥
पै तुम भगति हिये मम, प्रेरैं अति उमगाय ।
तातैं गाऊँ सुगुण तुम, तुम ही होउ सहाय ॥

(पद्धरि छन्द)

जय चन्द्र जिनेन्द्र दयानिधान, भवकानन हानन दवप्रमाण ।
जय गरभ जनम मंगल दिनन्द, भवि जीवविकाशन शर्मकन्द ॥1
दशलक्ष पूर्व की आयु पाय, मनवांछित सुख भोगे जिनाय ।
लखि कारण ह्वै जगतैं उदास, चिन्त्यो अनुप्रेक्षा सुख निवास ॥2
तित लौकांतिक बोध्यो नियोग, हरि शिविका सजि धरियो अभोग ।
तापैं तुम चढ़ि जिन चन्द राय, ता छिनकी शोभा को कहाय ॥3
जितअंग सेत सित चमर ढार, सित छत्र शीस गल गुलक हार ।
सित रतन जड़ित भूषण विचित्र, सित चन्द्रचरण चरचैं पवित्र ॥4
सित नत द्युति नाकाधीश आप, सिति शिविका काँधे धरि सुचाप ।
सित सुजस सुरेश नरेश सर्व, सित चित में चिन्तत जात पर्व ॥5
सित चन्दनगरतैं निकसि नाथ, सित वन में पहुँचे सकल साथ ।
सित शिला शिरोमणि स्वच्छ छाँह, सित तप तित धार्यो तुम जिनाह ॥6
सित पय को पारण परमसार, सित चन्द्रदत्त दीनों उदार ।
सित कर में सो पयधार देत, मानों बाँधत भवसिंधु सेत ॥7

(267)

मानो सुपुण्यधारा प्रतच्छ, तित अचरज पनसुर किय ततच्छ ।
फिर जाय गहन सित तप करंत, सित केवल ज्योति जग्यो अनंत ॥8
लहि समवसरण रचना महान, जाके देखत सब पापहान ।
जहँ तरु अशोक शौभै उतंग, सब शोकतनो चूरैं प्रसंग ॥9
सुर सुमनवृष्टि नभतैं सुहात, मनु मन्मथ तज हथियार जात ।
बानी जिन मुखसों खिरत सार, मनु तत्त्वप्रकाशन मुकुरधार ॥10
जहँ चौंसठ चमर अमर दुरंत, मनु सुजसमेघ झरि लगिय तन्त ।
सिंहासन है जहँ कमलजुक्त, मनु शिवसरवर को कमलशुक्त ॥11
दुंदुभि जित बाजत मधुर सार, मनु करमजीत को है नगार ।
सिर छत्र फिरै त्रय श्वेतवर्ण, मनु रतन तीन त्रय-ताप हर्ण ॥12
तन प्रभातनों मण्डल सुहात, भवि देखत निज भव सात सात ।
मनु दर्पणद्युति यह जगमगाय, भविजन भव मुख देखत सुआय ॥13
इत्यादि विभूति अनेक जान, बाहिज दीसत महिमा महान ।
ताको वरणत नहीं लहत पार, तौ अन्तरंग को कहै सार ॥14
अनअन्त गुणनिजुत करि विहार, धरमोपदेश दे भव्य तार ।
फिर जोगनिरोधि अघाति हान, सम्मेदथकी लिय मुकतिथान ॥15
“वृन्दावन” वन्दत शीश नाय, तुम जानत हो मम उर जु भाय ।
तातैं का कहों सु बार-बार मनवांछित कारज सार-सार ॥16

(छन्द धत्ता)

जय चन्द जिनंदा आनंदकंदा, भवभय भंजन राजैं हैं ।
रागादिक द्वन्दा हरि सब फन्दा, मुकतिमाहिं थिति साजैहैं ॥17

(268)

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 आठों दरव मिलाय गाय गुण, जो भविजन जिनचन्द जजैं ।
 ताकै भवभव के अघ भाजै, मुक्ति सार सुख ताहि सजैं ।।
 जमके त्रास मिटें सब ताके, सकल अमंगल दूर भजैं ।
 “वृन्दावन” ऐसो लखि पूजत, जातैं शिवपुर राज रजैं ।।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री पुष्पदन्त जिन पूजन

(छन्द मदावलिप्त कपोल / रोड़क)

पुष्पदन्त भगवन्त सन्त सु जपन्त तन्त गुण ।
 महिमावन्त महन्त कन्त शिवतिय रमन्त मुन ।।
 काकन्दीपुर जन्म पिता सुग्रीव रमासुत ।
 श्वेतवरन मनहरन तुम्हें थापों त्रिवार नुत ।।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
 परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

(चाल होली)

मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय जी, मेरी ।। टेक ।।
 हिम वन गिरि गत गंगाजल भर, कंचन भृंग भराय ।
 करम कलंक निवारन कारन, जजों तुम्हारे पाय ।। मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 बावन चन्दन कदली नंदन कुंकुम संग घसाय ।
 चरचों चरन हरन मिथ्यातप, वीतराग गुण गाय ।। मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शालि अखण्डित सौरभ मंडित, शशि सम द्युति दमकाय ।
 ताको पुंज धरों चरनन ढिग, देहु अखय पदराय ।। मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुमन सुमन सम परिमल मंडित, गुंजत अलिगन आय ।
 ब्रह्मपुत्र मद भंजन कारन, जजों तुम्हारे पाय ।। मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 घेवर बावर फेनी गोंजा, मोदन मोदक लाय ।
 छुधा वेदनी रोग हरन को, भेंट धरों गुणगाय ।। मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 वाति कपूर दीप कंचनमय, उज्ज्वल ज्योति जगाय ।
 तिमिर मोह नाशक तुम को लखि, धरों निकट उमगाय ।। मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दशवर गंध धनंजय के संग, खेवत हों गुन गाय ।
 अष्टकर्म ये दुष्ट जरैं सो, धूम धूम सु उड़ाय ।। मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीफल पूगी और शुचिर भट, दाड़िम आममंगाव ।
 तासों तुम पद पद्म जजत हों, विघन सघन मिटजाय ।। मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जलफल सकल मिलाय मनोहर, मनवचतन हुलसाय ।
 तुमपद पूजों प्रीतिलायकै, जय जय त्रिभुवनराय ।।
 मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय जी, मेरी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(पंच कल्याणक अर्घ - छन्द स्वयम्भू)

नवमी तिथिकारी फागुन धारी, गरभ मांहीं थिति देवा जी ।
तजि आरण थानं कृपा निधानं, करत सची तित सेवा जी ॥

रतनन की धारा परम उदारा, परीमल व्योमत सारा जी ।

मैं पूजौं ध्यावौं भगति बढ़ावौं, करो मोहि भव पारा जी ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णनवम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मगसिर सित पच्छं तरिवा, स्वच्छं जनमें तीरथ नाथा जी ।

तब ही चव भेवा निरजर येवा, आय नये निज माथा जी ॥

सुरगिर नहवाये, मंगल गाये, पूजे प्रीति लगाईजी ।

मैं पूजौं ध्यावौं भगति बढ़ावौं, निजनिधि हेतु सुहाई जी ॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदायां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सित मंगसिर मासा तिथि सुख रासा, एकम के दिन धारा जी ।

तप आतमज्ञानी आकुलहानी, मौनसहित अविकारा जी ॥

सुरमित्र सुदानी के घर आनी, गो-पय पारन कीना है ।

तिनको मैं वन्दौं पापनिकंदौं, जो समतारस भीना है ॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदायां तपोमंगलमंडिताय श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सित कार्तिक गाये दोइज धाये, घातिकरम परचंडाजी ।

केवल परकाशे भ्रमतम नाशे, सकल सारसुख मंडाजी ॥

गनराज अठासी आनंदभासी, समवसरण वृषदाताजी ।

हरि पूजन आयो शीश नमायो, हम पूजैं जगत्राताजी ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वितीयायां ज्ञानमंगलमंडिताय श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

भादव सित सारा आठैं धारा, गिरिसमेद निरवाना जी ।

गुन अष्टप्रकारा अनुपमधारा, जय जय कृपानिधाना जी ॥

तितइन्द्र सु आयौ, पूज रचायौ, चिन्ह तहाँ करि दीना है ।

मैं पूजत हों गुन धरत महीसौं, तुमरे रस में भीना है ॥

ॐ ह्रीं भादवशुक्लाष्ट्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

लच्छन मगर सुश्वेत तन तुंग धनुश शत एक ।

सुरनरवंदित मुक्तपति, नमों तुम्हें शिर टेक ॥1

पुहुपरदन गुनवदन है, सागरतोय समान ।

क्यों कर कर अंजुलिनकर, करिये तासु प्रमान ॥2

(छन्द तामरस)

पुष्पदन्त जयवन्त नमस्ते, पुण्य तीर्थकर सन्त नमस्ते ।

ज्ञानध्यान अमलान नमस्ते, चिद् विलास सुखज्ञान नमस्ते ॥3

भवभय भंजन देव नमस्ते, मुनिगन कृत पदसेव नमस्ते ।

मिथ्या निशि दिन इन्द्र नमस्ते, ज्ञानपयोदधि चन्द्र नमस्ते ॥4

भवदुखतरुनिःकन्द नमस्ते, रागद्वेषमद दहन नमस्ते ।

विश्वेश्वर गुनभूर नमस्ते, धर्मसुधारस पूर नमस्ते ॥5

केवल ब्रह्म प्रकाश नमस्ते, सकल चराचर भास नमस्ते ।

विघ्न महीधर विज्जु नमस्ते, जय ऊरध गति रिज्जु नमस्ते ॥6

जय मकरा कृतपाद नमस्ते, मकरध्वज मदवाद नमस्ते।
 कर्मभर्म परिहार नमस्ते, जय जय अधम उधार नमस्ते॥7
 दयाधुरंधर धीर नमस्ते, जय जय गुनगम्भीर नमस्ते।
 मुक्ति रमनि पतिवीर नमस्ते, हरता भवभयपीर नमस्ते॥8
 व्यय उत्पति थितिधार नमस्ते, निजआधार अविकार नमस्ते।
 भव्यभवोदधि तार नमस्ते, वृन्दावन निस्तार नमस्ते॥9

(छन्द घत्तानन्द)

जय जय जिनदेवं हरिकृतसेवं, परम धरम धन धारी जी ।
 मैं पूजों ध्यावों गुनगन गावों, मेटो विथा हमारी जी॥10॥
 ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पुहुपदंतपद सन्त, जजै जो मनवचकाई।
 नाचै गावै भगति करै, शुभ परनति लाई॥
 सो पावै सुख सर्व, इन्द्र अहमिंद तनों वर।
 अनुक्रमतैं निरवान, लहै निहचै प्रमोदधर॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री शीतलनाथ जिनपूजा

(छन्द : मत्तमातंग तथा मत्तगयंद-वर्ण : 23)

शीतलनाथ नमों धरि हाथ, सुमाथ जिन्हों भवगाथ मिटाये।
 अच्युततैं च्युत मात सुनन्द के, नन्द भये पुरभद्दल आये॥
 वंश इक्ष्वाकु कियो जिनभूषित, भव्यनको भवपार लगाये।
 ऐसे कृपानिधिके पदपंकज, थापतु हों हिय हर्ष बढ़ाये॥
 ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

(छन्द : वसंततिलका)

देवापगा सु वरवारि विशुद्ध लायौ।
 भृंगार हेमभरि भक्ति हिये बढ़ायौ॥
 रागादिदोष-मल-मर्दन हेतु येवा।
 चर्चो पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंडसार वर कुंकुम गारि लीनो।
 कंसंग स्वच्छ घसि भक्ति हिये धरीनों॥रा.॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता समान सित तंदुल सार राजैं।
 धारन्तु पुंज कलिकुंज समस्त भाजैं॥रा.॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीकेतकी प्रमुख पुष्प अदोष लायो।
 नौरंग जंगकरि भृंग सुरंग पायौ॥रा.॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य सार चरु चारु संवारि लायौ।
 जांबूनदप्रभृति भाजन शीस नायौ॥रा.॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्नेह प्रपूरित सुदीपक जोति राजैं।
 स्नेहप्रपूरित हिये जजतेऽघ भाजैं॥रा.॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु प्रमुखगन्ध हुताश माही ।
 खेवों तवाग्र वसुकर्म जरन्त जाही ।।रा.।।
 ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 निम्बाम्र कर्कटि दाड़िम आदि धारा ।
 सौवर्ण गन्ध फलसार सुपक्व प्यारा ।।रा.।।
 ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कंश्री फलादि वसु प्रासुकद्रव्य साजै ।
 नाचे रचे मचत बज्जत सज्ज साजै ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 पंच कल्याणक अर्घ
 (छन्द इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा)
 आठैं वदी चैत सुगर्भमाहीं, आये प्रभू मंगलरूप थाहीं ।
 सेवैं सची मातु अनेक भेवा, चर्चों सदा शीतलनाथ देवा ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
 अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्री माघकी द्वादशि श्याम जायो, भूलोक में मंगलसार आयो ।
 शैलेन्द्र पै इन्द्र फनिंद जज्जै, मैं ध्यान धारों भवदुख भज्जै ।।
 ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 श्रीमाघ की द्वादशि श्याम जानों, वैराग्य पायो भवभाव हानों ।
 ध्यायो चिदानन्द निवार मोहा, चर्चों सदा चर्न निवार कोहा ।।
 ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमंडिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्दशी पौषबदी सुहायो, ताही दिना केवललब्धि पायो ।
 शोभै समोसृत्य बखानि धर्म, चर्चों सदा शीतल पर्म शर्म ।।
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां केवलज्ञानमंडिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कुंवारकी आठय शुद्धबुद्धा, भये महा मोक्ष सरूप शुद्धा ।
 सम्मेदतैं शीतलनाथ स्वामी, गुनाकरं तासु पदं नमामी ।।
 ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाष्टम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

आप अनन्त गुनाकर राजैं, वस्तुविकाशन भानु समाजैं ।
 मैं यह जानि गही शरना है, मोह महा रिपु को हरना है ।।
 हेमवरन तन तुंग धनु, नब्बै अति अभिराम ।
 सुरतरु अंक निहारि पद, पुनपुन करों प्रणाम ।।
 (छन्द : तोटक-वर्ण : 12)

जय शीतलनाथ जिनन्द वरं, भव दुःख दवानल मेघझरं ।
 दुख भूभृत भंजन वज्रसमं, भवसागर नागर पोतपमं ।।
 कुहमान-मयागद-लोभहरं, अरि विघ्नगयन्द मृगिंद वरं ।
 वृष वारिद वृष्टन सृष्टिहितू, परदृष्टि विनाशन सुष्टुपितू ।।
 समवस्रत संजुत राजतु हो, उपमा अभिराम विराजतु हों ।
 वर बारहभेद सभाथितको, तित धर्म बखानि किया हितको ।।
 पहले महि श्रीगनराज रजैं, दुतिये महि कल्पसुरी जू सजैं ।
 त्रितिये गणनी गुनभूरि धरैं, चवथे तिय जोतिष जोति भरैं ।।

तिय वितरनी पनमें गनिये, छह में भुवनेसुर तीय भनिये।
 भुवनेश दशों थित सत्तम हैं, वसु में वसुवितर उत्तम हैं॥
 नवमें नभजोतिष पंच भरे, दशमें दिविदेव समस्त खरे।
 नरवृन्द इकादश में निवसै, अरु बारह में पशु सर्व लसे॥
 तजि बैर प्रमोद धरें सब ही, समतारसमग्न लसैं तब हीं।
 धुनि दिव्य सुनैं तजि मोहमलं, गनराज असी धरि ज्ञानबलं॥
 सबके हित तत्त्व बखान करें, करुणामन रंजित शर्म भरें।
 वरने षट्द्रव्यतनें जितने, वर भेद विराजतु हैं तितने॥
 पुनि ध्यान उभै शिवहेत मुना, इक धर्म दुती सुकलं अधुना।
 तित धर्म सुध्यानतणो गनियो, दशभेद लखे भ्रमको हनियो॥
 पहलो अरि नाश अपाय सही, दुतियो जिनवैन उपाय गही।
 त्रिति जीवविचै निजध्यावन है, चवथो सु अजीव रमावन है॥
 पनमो सु उदै बल टारन है, छहमो अरि राग निवारन है।
 भव त्यागन चिंतन सप्तम है, वसुमों जितलोभ न आतम है॥
 नवमों जिनकी धुनी सीस धरें, दशमों जिनभासित हेत करें।
 इमि धर्मतणो दशभेद भन्यो, पुनि शुक्ल तणो चदु येम गन्यो॥
 सुपृथक्त्व वितर्कविचार सही, सुएकत्ववितर्क विचार गही।
 पुनि सूक्ष्मक्रिया प्रतिपात कही, विपरीत क्रिया निरवृत लही॥
 इन आदिक सर्व परकाश कियो, भवि जीवन को शिव स्वर्ग दियो।
 पुनि मोच्छविहार कियो जिनजी, सुखसागर मग्न चिरंगुनजी॥
 अब मैं शरना पकरी तुमरी, सुधि लेहु दयानिधिजी हमरी।
 भवव्याधि निवार करो अबही, मति ढील करो सुख द्यो सब ही॥

(छन्द घत्तानन्द)

शीतलजिन ध्याऊँ भगति बढ़ाऊँ, ज्यौ रतनत्रयनिधि पाऊँ।
 भवदंद नशाऊँ शिवथल जाऊँ, फेर न भववन में आऊँ॥
 ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

(छन्द : 15 मात्रिक)

दिदरथ सुत श्रीमान्, पंचकल्याणधारी।
 तिनपदजुगपद्मं, जो जजै भक्तिधारी॥
 सहसुख धनधान्यं, दीर्घ सौभाग्य पावै।
 अनुक्रम अरि दाहै, मोक्षको सो सिधावै॥19॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री श्रेयांसनाथ जिनपूजन

(छन्द : रूपमाला तथा गीता)

विमलनृप विमलासुअन, श्रेयांसनाथ जिनन्द।
 सिंहपुर जन्मे सकल हरि, पूजि धरि आनन्द॥
 भव बंध ध्वंशन हेत लखि मैं, शरन आयो येव।
 थापौं चरन जुग उरकमल में, जजन कारन देव॥
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

(छन्द : गीता तथा हरिगीता-मात्रा : 28)

कलधौत वरन उतंग हिमगिरि पदम द्रहतैं आवई।
 सुरसरित प्रासुक उदकसों भरि भृंग धार चढ़ावई॥

श्रेयांसनाथ जिनन्द त्रिभुवन वन्द आनन्दकन्द हैं ।
 दुख दंद फंद निकंद पूरनचन्द जोतिअमंद हैं ।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाथ जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 गोशीर वर करपूर कुंकुम नीरसंग घसों सही ।
 भवताप भंजन हेत भवदधि सेत चरन जजों सही ।।श्रे.।।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाथ चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सितशालि शशिदुति शुक्तिसुन्दर मुक्तिकी उनहार हैं ।
 भरि थार पुंज धरंत पदतर अखयपद करतार हैं ।।श्रे.।।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 सद सुमन सुमनसमान पावन, मलयतैं अलि झंकरैं ।
 पद कमल तर धरतैं तुरित सो मदनको मदखंकरैं ।।श्रे.।।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाथ पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 यह परम मोदक आदि सरस सँवारि सुन्दर चरु लियो ।
 तुम वेदनी मदहरन लखि, चरचों चरन शुचिकर हियो ।।श्रे.।।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाथ नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 संशयविमोह विभरम तम भंजन दिनन्द समान हो ।
 तातैं चरनढिग दीप जोऊँ देहु अविचल ज्ञान हो ।।श्रे.।।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाथ दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 वर अगर तगर कपूर चूर सुगन्ध भूर बनाइया ।
 दहि अमर जिह्व विषैं चरनढिग करमभरम जराइया ।।श्रे.।।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाथ धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुरलोक अरु नरलोक के फल पक्व मधुर सुहावनें ।
 लै भगति सहित जजों चरन शिव परमपावन पावनें ।।श्रे.।।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलमलय-तंदुल सुमनचरु अरु दीपधूप फलावली ।
 करि अरघ चरचों चरन जुगप्रभु मोहि तार उतावली ।।
 श्रेयांसनाथ जिनन्द त्रिभुवन वन्द आनन्दकन्द हैं ।
 दुख दंद फंद निकंद पूरनचन्द जोतिअमंद हैं ।।
 ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

(छन्द :आर्या)

पुष्पोत्तर तजि आये, विमलाउर जेठकृष्ण आठैं को ।
 सुर नर मंगल गाये, पूजों मैं नासि कर्मकाठैं को ।।
 ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाष्टम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जनमें फागुनकारी, एकादशि तीनज्ञान दृग्धारी ।
 इक्ष्वाकु वंशतारी, मैं पूजों घोर विघ्न दुख टारी ।।
 ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 भवतनभोग असारा, लख त्यागो धीर शुद्ध तपधारा ।
 फागुनवदि इग्यारा, मैं पूजों पाद अष्ट परकारा ।।
 ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथ-
 जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 केवलज्ञान सुजानन, माघबदी पूर्णतिथिको देवा ।
 चतुरानन भवभानन, बंदों ध्यावों करौं सुपदसेवा ।।
 ॐ ह्रीं माघकृष्णामावस्यायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गिरिसमेदतैं पायो, शिवथल तिथि पूर्णमासि सावनको ।
कुलिशायुध गुनगायो, मै पूजों आप निकट आवन को ।।
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लपूर्णिमायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(छन्द : लोलतरंग-वर्ण : 11)

शोभित तुंग शरीर सुजानों, चाप असी शुभलक्षण मानों ।
कंचनवर्ण अनूपम सोहै, देखत रूप सुरासुर मोहै ।।

(छन्द : पद्धरि - मात्रा : 16)

जय जय श्रेयांस जिन गुणगरिष्ठ, तुमपद जुग दायक इष्टमिष्ट ।
जय शिष्ट शिरोमणि जगतपाल, जय भवसरोजगन प्रातःकाल ।।
जय पंच महाव्रत गजसवार, लै त्याग भाव दलबल सु लार ।
जय धीरजको दलपति बनाय, सत्ता छिति महँरन को मचाय ।।
धरि रतन तीन तिहुँशक्ति हाथ, दशधरम कवच तपटोप माथ ।
जय शुक्ल ध्यानकर खड़गधार, ललकारे आठों अरि प्रचार ।।
तामैं सबको पति मोहचण्ड, ताकों तत छिन करि सहस खण्ड ।
फिर ज्ञान दरस प्रत्यूह हानि, निजगुन गढ़ लीनों अचलथान ।।
शुचि ज्ञान दरस सुखवीर्यसार, हुवे समवशरण रचना अपार ।
तित भाषे तत्त्व अनेक धार, जाकों सुनि भव्य हिये विचार ।।
निजरूप लह्यो आनन्दकार, भ्रम दूरकरन को अति उदार ।
पुनि नयप्रमाण-निच्छेप सार, दरसायो करि संशय प्रहार ।।
तामैं प्रमान जुगभेद एव, परतच्छ परोछ रजै स्वमेव ।

तामैं प्रतच्छके भेद दोय, पहिलो है संविवहार सोय ।।
ताके जुगभेद विराजमान, मति श्रुति सोहैं सुन्दर महान ।
हैं परमारथ दुतियों प्रतच्छ, हैं भेद जुगम तामाहि दच्छ ।।
इक एकदेश इक सर्वदेश, इकदेश उभै विधि सहित वेश ।
वर अवधि सु मनपरजय विचार, है सकलदेश केवल अपार ।।
चर अचर लखत जुगपत प्रतच्छ, निरद्वन्द रहित परपंचपच्छ ।
पुनि है परोच्छमहँ पंच भेद, समिरति अरु प्रत्यभिज्ञानवेद ।।
पुनि तरक और अनुमान मान, आगमजुत पन अब नय बखान ।
नैगम संग्रह व्यौहार गूढ़, ऋजुसूत्र शब्द अरु समभिरूढ़ ।।
पुनि एवंभूत सु सप्त एम, नय कहे जिनेसुर गुन जु तेम ।
पुनि दरवक्षेत्र अर काल भाव, निच्छेप चार विधि इमि जनाव ।।
इनको समस्त भाष्यौ विशेष, जा समुझत भ्रम नहिं रहत लेश ।
निज ज्ञानहेत ये मूलमन्त्र, तुम भाषै श्री जिनवर सु तन्त्र ।।
इत्यादि तत्त्व उपदेश देय, हनि शेषकरम निरवान लेय ।
गिरवान जजत वसु दरव ईश, वृन्दावन नितप्रति नमत शीश ।।

(छन्द घत्तानन्द)

श्रेयांस महेशा सुगुनजिनेशा, वज्र धरेशा ध्यावतु हैं ।
हम निशदिन वन्दैं पापनिकंदै, ज्यों सहजानंद पावतु हैं ।।
ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(सोरठा)

जो पूजैं मनलाय, श्रेयनाथ पद पद्म को ।
पावै इष्ट अघाय, अनुक्रमसों शिवतिय वरै ।।
।। इत्याशीर्वाद : पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

श्री वासुपूज्य जिनपूजा

(छन्द : रूप कवित्त)

श्रीमत वासुपूज्य जिनवरपद, पूजन हेत हिये उमगाय ।
थापों मन वच तन शुचि करिके जिनकी पाटल देव्या माय ।।
महिष चिह्न पद लसै मनोहर, लाल वरन तन समतादाय ।
सो करुणानिधि कृपादृष्टिकरि, तिष्ठहु सुपरितिष्ठ यहँ आय ।।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।

(छन्द : जोगीरासा, आंचलीबंध 'जिनपदपूजों लव लाई ।')
गंगाजल भरि कनककुंभमें, प्रासुक गन्ध मिलाई ।
करम कलंक विनाशन कारन, धार देत हरषाई ।।
वासुपूज वसुपूज तनुज पद, वासव सेवत आई ।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई ।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
कृष्णागरु मलयागिर चंदन, केशरसंग घसाई ।
भवआताप विनाशन कारन, पूजों पद चित लाई ।।वा.।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
देवजीर सुखदास शुद्धवर, सुवरन थार भराई ।
पुञ्ज धरत तुम चरनन आगैं, तुरित अक्षय पद पाई ।।वा.।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
पारिजात संतान कल्प तरु, जनित सुमन बहु लाई ।
मीनकेतु मद भंजन कारन, तुम पदपद्म चढ़ाई ।।वा.।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

(283)

नव्यगव्य आदिक रसपूरित नेवज तुरित उपाई ।

क्षुधारोग निवारनकारन, तुम्हें जजों शिरनाई ।।वा.।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपकजोत उदोत होत वर दशदिश में छवि छाई ।

तिमिरमोह नाशक तुमको लखि जजों चरन हरषाई ।।वा.।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशविध गन्धमनोहर लेकर, वातहोत्र में ढाई ।

अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं धूम सु धूम उड़ाई ।।वा.।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरस सुपक्व सुपावन फल लै कंचन थार भराई ।

मोच्छ महाफल दायक लखि प्रभु भेंट धरों गुनगाई ।।वा.।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई ।

शिवपदराज हेत हे श्रीपति ! निकट धरों यह लाई ।।वा.।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच कल्याणक अर्घ

(छन्द पाईता, मात्रा 14)

कलि छटि असाढ़ सुहायौ, गरभागम मंगल पायौ ।

दशमें दिवितें इत आये, शतइन्द्र जजे सिर नाये ।।

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णषष्ठ्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलि चौदशि फागुन जानों, जनमे जगदीश महानों ।

हरि मेरु जजे तब जाई, हम पूजत हैं चितलाई ।।

(284)

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तिथि चौदस फागुन श्यामा, धरियो तप श्री अभिरामा ।

नृप सुन्दरके पय पायो, हम पूजत अतिसुख थायो ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुदि भादव दोइज सोहै, लहि केवल आतम जो है ।

अनअन्त गुनाकर स्वामी, नित वंदों त्रिभुवन नामी ।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लद्वितीयायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सितभादव चौदशि लीनों, निरवान सुथान प्रवीनों ।

पुरचंपा थानक सेती, हम पूजत निजहित हेती ।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

चम्पापुर में पंच वर, कल्याणक तुम पाय ।

सत्तर धनु तन शोभनों, जय जय जय जिनराय ।।

(छन्द : मोतियदाम-वर्ण : 12)

महासुखसागर आगर ज्ञान, अनन्त सुखामृतमुक्त महान ।

महाबल मण्डित खण्डित काम, रमाशिव संग सदा बिसराम ।।

सुरिन्द फनिन्द खगिन्द नरिन्द, मुनिन्द जजै तित पादारविन्द ।

प्रभू तुव अन्तरभाव विराग, सुबालहि तें व्रतशीलसों राग ।।

कियो नहिं राज उदास सरूप, सुभावन भावत आतमरूप ।

अनित्य शरीर प्रपंच समस्त, चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त ।।

अर्शन नहीं कोउ शर्न सहाय, जहाँ जिय भोगत कर्मविपाय ।

निजातम कै परमेसुर शर्न, नहीं इनके बिन आपद हर्न ।।

जगत् जथा जल बुदबुद येव, सदा जिय एक लहै फलमेव ।

अनेक प्रकार धरी यह देह, भ्रमें भवकानन आन न नेह ।।

अपावन सात कुधात भरीय, चिदातम शुद्धसुभाव धरीय ।

धरै इनसों जब नेह तबेव, सुआवत कर्म तबै वसुभेव ।।

जबै तन भोगजगत उदास, धरै तब संवर निर्जरआस ।

करै जब कर्मकलंक विनाश, लहै तब मोक्ष महा सुखराश ।।

तथा यह लोक नराकृत नित्त, विलोकियते षट्द्रव्यविचित्त ।

सुआतम जानन बोधविहीन, धरै किन तत्त्व प्रतीत प्रवीन ।।

जिनागम ज्ञानरु संयमभाव, सबै निजज्ञान बिना विरसाव ।

सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल, सुभाव सबै जिहंतें शिव हाल ।।

लयो सब जोग सुपुन्य वसाय, कहो किमि दीजिय ताहि गंवाय ।

विचारत यों लौकान्तिक आय, नमें पदपंकज पुष्प चढ़ाय ।।

कह्यो प्रभु धन्य कियो सुविचार, प्रबोध सु येम कियो जु विहार ।

तबै सौधर्म तनों हरि आय, रची शिविका चढ़ि आप जिनाय ।।

धरे तप पाय सु केवल बोध, दियो उपदेश सुभव्य संबोध ।

लियो फिर मोच्छ महासुखराश, नमें नित भक्त सोई सुखआश ।।

(घत्तानन्द)

नित वासव वंदत, पाप निकंदत, वासुपूज्य व्रत ब्रह्मपती ।
भव संकल खंडित, आनंद मंडित जय जय जय जयवंत जती ।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(सोरठा)

वासुपूज्य पद सार, जजौ दरबविधि भावसौ ।
सो पावै सुखसार, भुक्ति मुक्तिको जो परम ।।
।। इत्याशीर्वाद : पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

श्री विमलनाथ जिनपूजन

(छन्द)

सहस्रार दिवि त्यागि, नगर कम्पिला जनम लिय ।
कृतधर्मा-नृपनन्द, मातु जयसेना धर्मप्रिय ।।
तीन लोक वरनन्द, विमल जिन विमल विमलकर ।
थापों चरन सरोज, जजनके हेतु भावधर ।।
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणम् ।

(सोरठा छन्द)

कंचनझारी धारि, पदमद्रहको नीर ले ।
तृषा रोग निरवारि, विमल विमलगुन पूजिये ।।
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
मलयागर करपूर, देववल्लभा संग घसि ।
हरि मिथ्यातम भूर, विमल विमल गुन जजतु हों ।।
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

(287)

वासमती सुखदास, श्वेत निशापति को हँसै ।

पूरै वांछित आस, विमल विमल गुन जजत ही ।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पारिजात मंदार, संतानक सुरतरु जनिता ।

जजों सुमन भरि थार, विमल विमलगुन मदनहर ।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नव्यगव्य रसपूर, सुवरणथाल भरायकैं ।

छुधावेदनी चूर, जजों विमलपद विमलगुन ।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मानिक दीप अखण्ड, गो छाई वर गो दशो ।

हरो मोहतम चंड, विमल विमलमति के धनी ।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगुरु तगर घनसार, देवदारु कर चूर वर ।

खेवों वसु अरि जार, विमल विमल पद पद्म ढिग ।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल सेव अनार, मधुर रसीले पावने ।

जजों विमलपद सार, विघ्न हरैं शिवफल करैं ।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठों दरव संवार, मन सुखदायक पावने ।

जजों अरघ भरथार, विमल विमल शिवतिय रमण ।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(288)

पंच कल्याणक

(छन्द : द्रुतविलम्बित तथा सुन्दरी-वर्ण : 12)

गरभ जेठ वदी दशमी भनों, परम पावन सो दिन शोभनों।
करत सेव सची जननी तणी, हम जजैं पद पद्म शिरोमणी॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णदशम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
शुक्लमाघ तुरी तिथि जानिये, जनम मंगल ता दिन मानिये।
हरि तवै गिरिराज विषैं जजे, हम समर्चत आनन्दको सजे॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
तप धरे सितमाघ तुरी भली, निज सुधातम ध्यावत हैं रली।
हरि फनेश नरेश जजें तहाँ, हम जजैं नित आनन्दसों इहाँ॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां निःक्रमणकल्याणप्राप्ताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
विमल माघरसी हनि घातिया, विमलबोध लयौ सब भासिया।
विमल अर्घ चढ़ाय जजों अबै, विमल आनन्द देहु हमैं सबै॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लषष्ठ्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
भ्रमर साढ़रसी अति पावनों, विमल सिद्ध भये मन भावनों।
गिरसमेद हरी तित पूजिया, हम जजैं इत हर्ष धरैं हिया॥
ॐ ह्रीं आसाढ़कृष्ण-षष्ठ्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(289)

जयमाला

(दोहा)

गहन चहत उड़गन गगन, छिति तिथिके छहैं जेम।
तिमि गुन वरनन वरनन, माँहि होय तब केम॥1
साठ धनुष तन तुंग है, हेमवरन अभिराम।
वर बराह पद अंक लखि, पुनि पुनि करो प्रनाम॥2

(छन्द : तोटक-वर्ण : 12)

जय केवलब्रह्म अनन्तगुनी, तुम ध्यावत शेष महेश मुनी।
परमातम पूरन पाप हनी, चितचिन्ततदायक इष्ट घनी॥3
भव आतपध्वंसन इन्दुकरं, वर सार-रसायन शर्मभरं।
सब जन्म जरा मृत दाह हरं, शरना गत पालन नाथ वरं॥4
नित सन्त तुमें इन नामनितैं, चितचिन्तत हैं गुनमाननितैं।
अमलं अचलं अडलं अतुलं, अरलं अछलं अथलं अकुलं॥5
अजरं अमरं अहरं अडरं, अपरं अभरं अशरं अनरं।
अमलीन अछीन अरीन हने, अमतं अगतं अरतं अघने॥6
अछुधा अतृषा अभयातम हो, अमदा अगदा अवदातम हो।
अविरुद्ध अक्रुद्ध अमानधुना, अतलं असलं अनअन्त गुना॥7
अरसं सरसं अकलं सकलं, अवचं सवचं अमचं सबलं।
इन आदि अनेक प्रकार सही, तुमको जिन सन्त जपैं नित हीं॥8
अब मैं तुमरी शरना पकरी, दुख दूर करो प्रभुजी हमरी।

(290)

हम कष्ट सहे भवकानन मैं, कुनिगोद तथा थल आनन मैं॥9
 तित जामनमर्न सहे जितने, कहि केम सकैं तुमसों तितने।
 सुमुहूरत अन्तरमाहि धरे, छह त्रै त्रय छः छहकाय खरे॥10
 छिति वह्नि वयारिक साधरनं, लघु थूल विभेदनिसों भरनं।
 परतेक वनस्पति ग्यार भये, छहजार दुवादश भेद लये॥11
 सब द्वै त्रय भू षट छः सु भया, इक इन्द्रियकी परजाय लया।
 जुग इन्द्रिय काय असी गहियो, तिय इन्द्रिय साठिन में रहियो॥12
 चतुरिन्द्रिय चालिस देह धरा, पनइन्द्रिय के चवबीस वरा।
 सब ये तन धार तहाँ सहियो, दुखघोर चितारित जात हियो॥13
 अब मो अरदास हिये धरिये, सुखदंद सबै अब ही हरिये।
 मन वांछित कारज सिद्ध करो, सुखसार सबै घर रिद्ध भरो॥14

(घत्तानन्द)

जय विमल जिनेशा नुत नाकेशा, नागेशा नरईश सदा।
 भवताप अशेषा, हरन निशेशा दाता चिन्तित शर्म सदा॥15
 ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

श्रीमत विमलजिनेशपद, जो पूजै मनलाय।
 पूजें वांछित आश तसु, मैं पूजों गुनगाय॥16॥
 ॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री अनन्तनाथ जिनपूजा

(कवित्त छन्द : मात्रा-31)

पुष्पोत्तर तजि नगर अजुध्या, जनम लियो सूर्या उर आय।
 सिंघसेन नृप के नन्दन, आनन्द अशेष भरे जगराय॥
 गुन अनन्त भगवन्त धरे, भवदंद हरे तुम हे जिनराय ।
 थापतु हों त्रय बार उचरिक्ैं कृपासिंधु तिष्ठहु इत आय॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

(हरिगीता)

शुचि नीर निर्मल गंगको लै, कनकभृंग भराइया।
 मल करम धोवन हेत, मन वच काय धार ढराइया॥
 जगपूज परम पुनीत मीत, अनन्त सन्त सुहावनों।
 शिव कंत वंत महंत ध्यावों, भ्रन्तवन्त नशावनों॥

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।
 हरिचन्द कदलीनन्द कुंकुम, दन्दताप निकन्द है।
 सब पापरुज सन्ताप भंजन आपको लखि चन्द है॥ज॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
 कनशाल दुति उजियाल हीर, हिमालगुलकनि तैं घनी।
 तसु पुंज तुम पदतर धरत, पद लहत स्वच्छ सुहावनी॥ज॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
 पुष्कर अमरतर जनितवर, अथवा अवर कर लाइया।
 तुम चरन पुष्कर तर धरत, सरशूल सकल नशाइया॥ज॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान नैना घान रसना, को प्रमोद सुदाय हैं।
 सो ल्याय चरन चढ़ाय रोग, छुधाय नाश कराय हैं॥ ज.॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
 तममोहभानन जानि आनन्द, आनि सरन गही अबै।
 वर दीप धारों वारि तुमढिग, स्वपरज्ञान जु द्यो सबै॥ ज.॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
 यह गन्ध चूरि दशांग सुन्दर, धूम्र ध्वज में खेय हों।
 वसुकर्म भर्म जराय तुम ढिग, निजसुधातम वेय हों॥ ज.॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 रसथक्व पक्व सुभक्व चक्व, सुहावनें मृदुपावनें।
 फलसारवृंद अमंद ऐसो, ल्याय पूज रचावने॥ ज.॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 शुचिनीर चन्दन शालि शन्दन, सुमन चरु दीवा धरों।
 अरु धूप फल जुत अरघ करि कर, जोरजुग विनती करों॥ ज.॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक अर्घ

(छन्द- सुन्दरी तथा द्रुतविलम्बित)

असित कार्तिक एकम भावनों, गरभको दिन सो गिन पावनों।
 किय सची तित चर्चन चावसों, हम जजें इत आनन्द भावसों॥
 ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णप्रतिपदायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 जनम जेठवदी तिथि द्वादशी, सकलमंगल लोकविषैं लशी।
 हरि जजे गिरिराज समाजतैं, हम जजें इत आतम काजतैं॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 भवशरीर विनस्वर भाइयो, असित जेठ दुवादशि गाइयो।
 सकल इन्द्र जजें तित आइकैं, हम जजें इत मंगल गाइकैं।
 ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 असित चैत अमावसिको सही, परम केवलज्ञान जग्यो कही।
 लहि समोसृत धर्म धुरंधरो, हम समर्चत विघ्न सबै हरो॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण-अमावस्यायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 असित चैत अमावस गाइयौ, अघाति घाति हने शिवपाइयो।
 गिरिसमेद जजें हरि आयकैं, हम जजें पद प्रीति लगाइकैं॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण-अमावस्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

तुम गुण वरनन येम जिम, खं विहाय कर मान।
 तथा मेदिनी पदनिकरि, कीनों चहत प्रमान॥
 जय अनन्त रवि भव्यमन, जलज वृंद विहँसाय।
 सुमति कोक तियथोक सुख, वृद्ध कियो जिनराय॥
 (छन्द : नयमालिनी तथा चंडी तथा तामरस - मात्रा : 16)
 जय अनन्त गुनवन्त नमस्ते, शुद्धध्येय नित सन्त नमस्ते।
 लोकालोक विलोक नमस्ते, चिन्मूरत गुनथोक नमस्ते॥

रत्नत्रय धर धीर नमस्ते, करमशत्रु करि वीर नमस्ते।
 चार अनन्त महन्त नमस्ते, जय जय शिवतियकन्त नमस्ते॥
 पंचाचार विचार नमस्ते, पंच करण मद हार नमस्ते।
 पंच-पराव्रत चूर नमस्ते, पंचम गति सुख पूर नमस्ते॥
 पंच लब्धि धरनेश नमस्ते, पंच भाव सिद्धेश नमस्ते।
 छहों दरबगुन जान नमस्ते, छहों काल पहिचान नमस्ते॥
 छहों काय-रच्छेश नमस्ते, छहसम्यक उपदेश नमस्ते।
 सप्त व्यसन वनवह्नि नमस्ते, जय केवल अपरह्नि नमस्ते॥
 सप्ततत्त्व गुनभनन नमस्ते, सप्त शुभ्र गति हनन नमस्ते।
 सप्त भंगके ईश नमस्ते, सातों नय कथनीश नमस्ते॥
 अष्टकरम मलदल्ल नमस्ते, अष्ट जोगि निरशल्ल नमस्ते।
 अष्टम-धराधिराज नमस्ते, अष्ट-गुननि-सिरताज नमस्ते॥
 जय नव केवल प्राप्त नमस्ते, नव पदार्थथिति आप्त नमस्ते।
 दशों धरम धरतार नमस्ते, दशों बंधपरिहार नमस्ते॥
 विघ्न महीधर विज्जु नमस्ते, जय ऊरधगति रिज्जु नमस्ते।
 तन कन कंदुति पूर नमस्ते, इक्ष्वाकु वंश गन सूर नमस्ते॥
 धनु पचास तन उच्च नमस्ते, कृपासिन्धु गुन शुच्च नमस्ते।
 सेही अंक निशंक नमस्ते, चित चकोर मृगअंक नमस्ते॥
 राग दोष मद टार नमस्ते, निज विचार दुखहार नमस्ते।
 सुर सुरेश गण वृन्द नमस्ते, वृन्द करो सुखकन्द नमस्ते॥

(छन्द घत्तानन्द)
 जय जय जिनदेवं, सुरकृतसेवं, नितकृतिचित हुल्लासधरं।
 आपद उद्धारं समतागारं, वीतरागविज्ञान भरं॥
 ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्ण-अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।
 जो जन मन वच काय लाय, जिन जजै नेह धर।
 वा अनुमोदन करै करावै पढ़े पाठ वर।
 ताके नित नव होय सुमंगल आनन्ददाई।
 अनुक्रमतैं निरवान लहै सामग्री पाई॥
 ॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री धर्मनाथ जिनपूजन

(माधवी तथा किर्रीट छन्द) (8 सगण व गुरु)
 तजिके सरवारथ सिद्ध विमान, सुभानकै आनि आनन्द बढ़ाये।
 जगमात सुव्रत्ति के नन्दन होय, भवोदधि डूबत जंतु कढ़ाये॥
 जिनको गुन नामहिं माहिं प्रकाश है, दासनिको शिवस्वर्ग मँढ़ाये।
 तिनके पद पूजनहेत त्रिवार सुथापतु हों यह फूल चढ़ाये॥
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
 परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।
 मुनि मन सम शुचि शीर नीर अति, मलय मेलि भरि झारी।
 जनम जरा मृत ताप हरन को, चरचों चरन तुम्हारी॥
 परम धरम शम रमन धरम जिन, अशरन शरन निहारी।
 पूजों पाय गाय गुन सुन्दर नाचों दै दै तारी॥
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर चन्दन कदली नन्दन, दाह निकन्दन लीनों।
 जल संग घस लसि शशि सम शमकर, भव आताप हरीनों।पर.।
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
 जलज जीर सुखदास हीर हिम, नीर किरनसम लायो।
 पुंज धरत आनन्द भरत भव, दंद हरत हरषायो।।पर.।।
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
 सुमन सुमनसम सुमणि थालभर, सुमन वृन्द विहसाई।
 सुमन मथ मद मंथनके कारन, चरचों चरन चढ़ाई।।पर.।।
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
 घेवर बावर अर्द्धचन्द्र सम, छिद्र सहस्र विराजै।
 सुरस मधुर तासों पद पूजत, रोग असाता भाजै।।पर.।।
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
 सुन्दर नेह सहित वर दीपक, तिमिर हरन धरि आगै।
 नेह सहित गाऊँ गुन श्रीधर, ज्यों सुबोध उर जागै।।पर.।।
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
 अगर तगर कृष्णागर तवदिव हरिचन्दन करपूरं।
 चूर खेय जलज वनमाहिं जिमि, करम जरैं वसु कूरं।।पर.।।
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 आम्र काम्रक अनार सारफल, भार मिष्ट सुखदाई।
 सो लै तुम ढिग धरहुँ कृपानिधि, देहु मोच्छ ठकुराई।।पर.।।
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 आठों दरब साज शुचि चितहर, हरषि हरषि गुनगाई।
 बाजत दृम दृम दृम मृदंग गत, नाचत ता थेई थाई।।

परम धरम शम रमन धरम जिन, अशरन शरन निहारी।
 पूजों पाय गाय गुन सुन्दर नाचों दै दै तारी।।
 ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

(राग टप्पाकी चाल-खोयोरे गंवार तैं सारो दिन यों ही खोयो ऐसी)
 पूजों हो अवार, धरमजिनेसुर पूजों।।टेक.।।
 आठैं सित बैशाखकी हो, गरभदिवस अधिकार।।
 जगजन वांछित पूजों, पूजों हो अबार, धरम जिनेसुर पूजों।।
 ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाष्ट्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ल माघ तेरसि लयो हो धरम धरम अवतार।
 सुरपति सुरगिर पूजों पूजों हो अवार।।धरम.।।
 ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

माघशुक्ल तेरस लयो हो, दुर्द्धर तप अविकार।
 सुरऋषि सुमनतैं पूजों, पूजों हो अवार।।धरम.।।
 ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां निःक्रमणकल्याणप्राप्ताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष शुक्ल पूनम हने अरि, केवल लहि भवितार।
 गणसुर नरपति पूज्यो, पूजों हो अवार।।धरम.।।
 ॐ ह्रीं पौषशुक्लपूर्णिमायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घपद-
 प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जेठशुक्ल तिथि चौथकी हो, शिव समेदतैं पाय ।
जगतपूजपद पूजों, पूजों हो अवार ॥ धरम ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लचतुर्थ्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ-
पदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

घनाकार करि लोक पट, सकल उदधि मसि तंत ।
लिखै शारदा कलम गहि, तदपि न तुव गुन अंत ॥

(छन्द : पद्भरि)

जय धरमनाथ जिन गुनमहान, तुम पदको मैं नित धरों ध्यान ।
जय गरभजनम तप ज्ञानयुक्त, वर मोच्छ सुमंगल शर्म-भुक्त ॥
जय चिदानन्द आनन्दकन्द, गुनवृन्द सु ध्यावत मुनि अमन्द ।
तुम जीवनिके बिन हेतु मित्त, तुम ही हों जगमें जिन पवित्त ॥
तुम समवसरण में तत्त्वसार, उपदेश दियो है अति उदार ।
ताकों जे भवि निजहेत चित्त, धारैं ते पावैं मोच्छवित्त ॥
मैं तुम मुख देखत आज पर्म, पायो निज आतम रूप धर्म ।
मोको अब भवदधितैं निकार, निरभय पद दीजै परमसार ॥
तुम सम मेरो जग में न कोय, तुम हीतैं सब विधि काज होय ।
तुम दया धुरन्धर धीर वीर, मेटो जगजन की सकल पीर ॥
तुम नीति निपुन बिन राग रोष, शिवमग दरसावतु हो अदोष ।
तुमरे ही नामतने प्रभाव, जगजीव लहें शिव-दिव-सुराव ॥
तातैं मैं तुमरी शरण आय, यह अरज करतु हों शीश नाय ।
भव बाधा मेरी मेट मेट, शिवराधासो करि भेंट भेंट ॥

(299)

जंजाल जगत को चूर चूर, आनन्द अनूपम पूर पूर ।
मति देर करो सुनि अरज एव, हे दीनदयाल जिनेश देव ॥
मोको शरना नहिं और ठौर, यह निहचै जानों सुगुनमौर ।
वृन्दावन वंदत प्रीति लाय, सब विघन मेट हे धरम-राय ॥

(छन्द घत्तानन्द)

जय श्रीजिनधर्म, शिवहितपर्म, श्री जिनधर्म उपदेशा ।
तुम दयाधुरंधर विनत पुरन्दर, कर उरमन्दर परवेशा ॥
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(छन्द मदावलिप्तकपोल)

जो श्रीपति जुगल, उगल मिथ्यात जजै भव ।
ताके दुख सब मिटहिं लहै आनन्दसमाज सब ॥
सुर-नर-पति-पद भोग, अनुक्रमतैं शिव जावै ।
वृन्दावन यह जानि धरम, जिन के गुन ध्यावै ॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री शान्तिनाथ जिनपूजन

(छन्द)

या भवकानन में चतुरानन, पाप पनानन घेरी हमेरी ।
आतम जानन मानन ठानन, वान न होन दर्ई शठ मेरी ॥
ता मद भानन आपहि हो, यह छान न आन न आनन टेरी ।
आन गही शरनागत को अब श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

(300)

हिमगिरि गतगंगा, धार अभंगा, प्रासुक संग भरि भृंगा ।
 जर जनम मृतंगा, नाशि अधंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ।।
 श्री शान्तिजिनेशं, नुतशकेशं, वृषचकेशं, चकेशं ।
 हनि अरि चकेशं, हे गुणधेशं, दयामृतेशं मकेशं ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाथ जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 वर बावन चंदन, कदली नंदन, घन आनंदन सहित घसों ।
 भव ताप निकंदन, ऐरा नन्दन, वंदि अमंदन, चरन वसो । श्री. ।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाथ चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 हिमकर करि लज्जत, मलय सुसज्जत, अच्छत जज्जत भरि थारी ।
 दुखदारिद गज्जत, सदपदसज्जत, भव भयभज्जत अतिभारी । श्री. ।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 मन्दार सरोजं, कदली जोजं, पुंज भरोजं मलयभरं ।
 भरि कंचनथारी, तुम ढिग धारी, मदनविदारी, धीर धरं ।। श्री. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाथ पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 पकवान नवीने पावन कीने, षटरस भीने सुखदाई ।
 मनमोदन हारे, छुधा विदारे, आगै धारे गुन गाई ।। श्री. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाथ नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तुम ज्ञान प्रकाशे, भ्रम-तम नाशे, ज्ञेय विकाशे, सुखरासे ।
 दीपक उजियारा, यातैं धारा, मोह निवारा, निज भासे ।। श्री. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाथ दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन करपूरं करि वर चूरं, पावक भूरं, माँहि जुरं ।
 तसु धूम उड़ावे, नाचत आवै, अलि गुंजावै, मधुर-स्वरं । श्री. ।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाथ धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 बादाम खजूरं दाडिम पूरं, निंबुक भूरं लै आयो ।
 तासो पद जज्जों, शिवफल सज्जों, निज रस रज्जों, उमगायो । श्री. ।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 वसु द्रव्य सँवारी, तुम ढिग धारी, आनन्दकारी दृग-प्यारी ।
 तुम हो भवतारी, करुना धारी, यातैं थारी, शरनारी ।।
 श्री शान्तिजिनेशं, नुतशकेशं, वृषचकेशं, चकेशं ।
 हनि अरि चकेशं, हे गुणधेशं, दयामृतेशं मकेशं ।।
 ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच कल्याणक

असित सातय भादव जानिये, गरभ-मंगल ता दिन मानिये ।
 सचि कियो जननी पद चर्चनं, हम करैं इत ये पद अर्चनं ।।
 ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जनम जेठ चतुर्दशी श्याम है, सकल इन्द्र सु आगत धाम है ।
 गजपुरै गज साजि सबै तबै, गिरि जजे इत में जजि हों अबै ।।
 ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 भव शरीर सुभोग असार हैं, इमि विचार तबै तप धार हैं ।
 भ्रमर चौदस जेठ सुहावनी, धरममेह जजों गुन पावनी ।।
 ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुक्ल पौष दशैं सुखरास है, परम केवलज्ञान प्रकाश है।
 भवसमुद्र- उधारन देवकी, हम करें नित मंगल सेवकी।।
 ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 असित चौदशि जेठ हने अरी, गिरी समेद थकी शिवतिय वरी।
 सकल इन्द्र जजैं तित आइकैं, हम जजैं इत मस्तक नाइकैं।।
 ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(छन्द)

शान्ति शान्ति-गुन मंडिते सदा, जाहि ध्यावत सुपंडिते सदा।
 मैं तिन्हें भगत मंडिते सदा, पूजि हों कलुष हंडिते सदा।।
 मोक्षहेतु तुम ही दयाल हो, हे जिनेश गुन रत्नमाल हो।
 मैं अबै सुगुन-दाम ही धरों, ध्यावते तुरित मुक्तितिय वरों।।
 जय शान्तिनाथ चिद्रूपराज, भवसागर में अद्भुत जहाज।
 तुम तजि सरवारथसिद्ध थान, सरवारथजुत गजपुर महान।।
 तित जनम लियौ आनंद धार, हरि ततछिन आयो राजद्वार।
 इन्द्रानी जाय प्रसूत-थान, तुमको कर में ले हरष मान।।
 हरि गोद देय सो मोदधार, सिर चमर अमर ढारत अपार।
 गिरिराज जाय तित शिला पाण्डु, तापै थाप्यो अभिषेक माण्डु।।
 तित पंचम उदधितनों सु-वार, सुर कर-कर करि ल्याये उदार।
 तब इन्द्र सहसकर करि अनन्द, तुम सिर धारा ढार्यो सुमन्द।।

अघ घघ घघ घघ धुनि होत घोर, भभभभ भभ धध धधकलश शोर।
 दृम दृम दृमदृम बाजत मृदंग, झन नन नन नन नन नूपुरंग।।
 तन नन नन नन नन तनन तान, घन नन नन घंटा करत ध्वान।
 तार्थेई थेई थेई थेई सुचाल, जुत नाचत गावत तुमहिं भाल।।
 चट चट चट अटपट नटत नाट, झट झट झट हट नट शट विराट।
 इमि नाचत राचत भगत रंग, सुर लेत तहाँ आनंद संग।।
 इत्यादि अतुल मंगल सुठाट, तित बन्यो जहाँ सुरगिरि विराट।
 पुनिकरि नियोग पितुसदन आय, हरि सौंष्यौ तुम तित वृद्ध थाय।।
 पुनि राजमाहिं लहि चक्ररत्न, भोग्यौ छहखंड करि धरम जत्न।
 पुनि तप धरि केवल-त्रिद्वि पाय, भविजीवन को शिव मग बताय।।
 शिवपुर पहुँचे तुम हे जिनेश, गुनमण्डित अतुल अनंत भेष।
 मैं ध्यावतु हों नित शीश नाय, हमरी भवबाधा हरि जिनाय।।
 सेवक अपनो निज जान जान, करुना करि भौभय भान भान।
 यह विघनमूल तरुखण्ड खण्ड, चितचिन्तित आनन्दमण्ड मण्ड।।

(छन्द)

श्री शान्ति महंता शिवतियकंता, सुगुन अनन्ता भगवन्ता।
 भवभ्रमन हनंता, सौख्य अनन्ता, दातारं तारनवन्ता।।
 ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 शान्तिनाथ जिनके पद पंकज, जो भवि पूजै मनवचकाय।
 जनम जनम के पातक ताके, ततछिन तजिकैं जाय पलाय।।
 मन वाँछित सुख पावै सौ नर, बाँचै भगतिभाव अतिलाय।
 तातैं 'वृन्दावन' नित बन्दै, जातैं शिवपुर-राज कराय।।
 ॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री कुन्धुनाथ जिनपूजा

(छन्द माधवी तथा किरिट)

अज अंक अजै पद राजै निशंक, हरै भव शंक निशंकित दाता ।
मत मत्त मतंगके मार्ये गँथे, मतवाले तिन्हें हने ज्यौं हरिहाता ।।
गजनागपुरैं लियो जन्म जिन्हौं, रविप्रभके नन्दन श्रीमतिमाता ।
सह कुंथु सुकुंथुनि के प्रतिपालक, थापों तिन्हें जुतभक्ति विख्याता ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।

(चाल लावनी मरहठी की लाला मनसुखरायजी कृत)

कुंथु सुन अरज दासकेरी, नाथ सुनि अरज दासकेरी ।
भवसिन्धु पर्यो हो नाथ, निकारो बाँह पकर मेरी ।।
प्रभु सुन अरज दासकेरी, नाथ सुन अरज दासकेरी ।
जगजाल पर्यो हों वेग, निकारों बाँह पकर मेरी ।। टेक ।।
सुरतरनीको उज्ज्वल जल भरि, कनकभृंग भेरी ।
मिथ्यातृषा निवारन कारन, धरों धार नेरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
बावन चन्दन कदलीनन्दन घसि कर गुट टेरी ।
तपत मोह नाशनके कारन, धरों चरन नेरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
मुक्ताफल सम उज्ज्वल अक्षत, सहित मलय लेरी ।
पुंज धरों तुम चरनन आगैं, अखय सुपद देरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

कमल केतकी बेला दौना, सुमन सुमन सेरी ।
समर शूल निरमूल हेतु प्रभु, भेंट करों तेरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
सद नेबज बावर लाडू आदिक उत्तमता सेरी ।
क्षुधा रोग नाशन के कारण पाय धरू तेरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
कंचन दीपमई वर दीपक, ललित जोति घेरी ।
सो ले चरन जजों भ्रम तम रवि, निज सुबोधदेरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
देवदारु हरि अगर तगर करि, चूर अग्नि खेरी ।
अष्ट करम तत काल जरैं ज्यौं, धूम धनंजेरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
लोंग लायची पिस्ता केला, कमरख शुचि लेरी ।
मोक्ष महाफल चाखन कारन, जजों सुकरि ढेंरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप लेरी ।
फल जुत जजन करों मनसुख धरि, हरो जगत फेरी ।। कुंथु ।।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्धुनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच कल्याणक

(मोतियादाम छन्द : वर्ण-12)

सुसावनकी दशमी कलि जान, तज्यो सरवारथसिद्ध विमान ।
भयो गरभा गम मंगल सार, जजैं हम श्रीपद अष्टप्रकार ।।

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णदशम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

महा बैशाख सु एकम शुद्ध, भयो तब जन्म तिज्ञान समृद्ध।
कियो हरि मंगल मन्दिरशीस, जजैं हम अत्र तुम्हें नुतशीस॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तज्यो षट्खण्ड विभौ जिनचन्द, विमोहित चित्त चितारि सुछन्द।
धरे तप एकम शुद्ध विशाख, सुमग्न भये निज आनन्द चाख॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथ-
जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदी तिय चैत सु चेतन शक्त, चहूँ अरि छै करि तादिन व्यक्त।
भई समवसृत भाखि सुधर्म, जजों पद ज्यों पद पाइय पर्म॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लतृतीयायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदी बैशाख सु एकम नाम, लियौ तिहीं द्योस अभय शिव धाम।
जजे हरि हर्षित मंगल गाय, समर्चतु हों तुहि मन-वच-काय॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(अडिल्ल छन्द)

षट खंडन के शत्रु राजपद में हने।
हरि दीक्षा षट्खण्डन पाप तिन्हें दनें॥

(307)

त्यागि सुदरशन चक्र धरम चक्री भये।

करमचक्र चकचूर सिद्ध दिढ़ गढ़ लये॥

ऐसे कुन्थु जिनेश तनें पदपद्मको।

गुन अनन्त भण्डार महासुख सद्म को॥

पूजों अरघ चढ़ाय पूरणानन्द हो।

चिदानन्द अभिनन्द इन्द्र गन वन्द हो॥

(पद्धरी छन्द)

जय जय जय श्रीकुन्थुदेव, तुम ही ब्रह्मा हरि त्रिबुकेव।

जय बुद्धि बिदांवर विष्णु ईस, जय रमाकंत शिवलोक शीस॥

जय दयाधुरंधर सृष्टिपाल, जय जय जगबन्धु सुकुंथुमाल।

सरवारथ सिद्ध विमान छार, उपजे गजपुर में गुन अपार॥

सुरराज कियो गिर न्यौह जाय, आनन्द सहित जुत भगति भाय।

पुनि पिता सौंपि कर मुदित अंग, हरि तांडव निरत कियो अभंग॥

पुनि स्वर्ग गयो तुम इत दयाल, वय पाय मनोहर प्रजापाल।

षट्खण्ड विभौ भोग्या समस्त, फिर त्याग जोग धार्यो निरस्त॥

तब घाति घात केवल उपाय, उपदेश दियो सब हित जिनाय।

जाके जानत भ्रम तम विलाय, सम्यक् दरशन निरमल लहाय॥

तुम धन्य देव किरपा निधान, अज्ञान क्षमा तमहरन भान।

जय स्वच्छ गुनाकर शुक्तसुक्त, जय स्वच्छ सुखामृत भुक्तमुक्त॥

जय भौं भय भंजन कृत्यकृत्य, मैं तुमरो हों निज भृत्य भृत्य।

प्रभु अशरन शरन अधार धार, मम विघ्न तूलगिरि जार जार॥

(308)

जय कुनय-यामिनी सूर सूर, जय मनवांछित सुख पूर पूर ।
 मम करमबन्ध दिढ़ चूर चूर, निजसम आनन्द दै भूर भूर ॥
 अथवा जब लौं शिव लहौं नाहिं, तब लौं ये तो नित ही लहाहिं ।
 भव भव श्रावक कुल जनमसार, भव भव सतमति सतसंग धार ॥
 भव भव निज आतम-तत्त्व ज्ञान, भव भव तप संयम शील दान ।
 भव भव अनुभव नित चिदानन्द, भव भव तुम आगम हे जिनन्द ॥
 भव भव समाधिजुत मरण सार, भव भव व्रत चाहौं अनागार ।
 यह मोकों हे करुणानिधान, सब जोग मिलो आगम प्रमान ॥
 जब लौं शिव सम्पत्ति लहौं नाहि, तबलौं मैं इनको नित लहाहि ।
 यह अरज हिये अवधारि नाथ, भव संकट हरि कीजे सनाथ ॥

(घत्तानन्द छन्द : मात्रा-31)

जय दीन दयाला, वर गुन माला, विरद विशाला सुख आला ।
 मैं पूजों ध्यावों, शीस नवावों, देहु अचल पदकी चाला ॥
 ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(छन्द रोड़क)

कुन्थु जिनेश्वर पादपदम जो प्रानी ध्यावैं ।
 अलि सम कर अनुराग, सहज सो निजनिधि पावैं ॥
 जो बाचै सरधहैं, करै अनुमोदन पूजा ।
 वृन्दावन तिह पुरुष सदृश, सुखिया नहिं दूजा ॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

(309)

श्री अरनाथ जिनपूजन

(छप्पय छन्द)

तप तुरंग असवार धार, तारन विवेक कर ।
 ध्यान शुक्ल असि धार, शुद्ध सुविचार सुबखतर ॥
 भावन सेना धरम, दर्शौं सेनापति थापे ।
 रतन तीन धर सकति, मन्त्रि अनुभौ निरमापे ॥
 सत्तातल सोहं सुभट धुनि, त्याग केतु शत अग्र धरि ।
 इहविध समाज सज राजकों, अरजिन जीते करम अरि ॥
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आहवाननम् । अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
 परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

(छन्द त्रिभंगी अनुप्रयासक मात्रा-23 जगन वर्जित)

कन मनि मय झारी, दृगसुखकारी, सुरसरितारी, नीर भरी ।
 मुनि मनसम उज्ज्वल, जनम जरादल, सो लै पदतल, धार करी ॥
 प्रभु दीनदयालं, अरिकुलकालं, विरदविशालं, सुकुमालम् ।
 हनि मम जंजालं, हे जगपालं, अरगुनमालं, वरभालम् ॥
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 भवताप नशावन विरद सुपावन, सुनि मन भावन मोद भयो ।
 तातैं घसि बावन, चन्दन पावन, तुमहिं चढ़ावन उमगि अयो । प्रभु ।
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तंदुल अनियारे, श्वेतसंवारे, शशिवुति टारे, थार भरे ।
 पद अखय सुदाता, जगविख्याता, लखि भवताता पुंजधरे । प्रभु ॥
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

(310)

सुरतरु के शोभित, सुरन मनोभित, सुमन अछोभित ले आयो ।
 मनमथ के छेदन, आप अवेदन, लखि निरवेदन, गुन गायो । प्रभु ।।
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नेवज सज भक्षक, प्रासुक अक्षक, पक्षक रक्षक स्वक्षधरी ।
 तुम करम निंकक्षक, भस्मकलक्षक, दक्षक पक्षक रक्षकरी । प्रभु ।
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तुम भ्रमतमभंजन, मुनिमनकंजन-रंजन गंजन मोह निशा ।
 रविकेवलस्वामी, दीप जगामी, तुम ढिग आमी, पुण्यदृशा । प्रभु ।।
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दश धूप सुरंगी गंध अभंगी वह्नि वरंगी माहिं हवै ।
 वसुकर्म जरावै धूम उड़ावै, तांडव भावै नृत्य पवै । प्रभु ।।
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ऋतुफल अतिपावन, नयनसुहावन, रसनाभावन, कर लीनें ।
 तुम विघन विदारक, शिवफलकारक, भवदधि तारक चरचीनें । प्रभु ।
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुचि स्वच्छ, पटीरं गंध गहीरं, तन्दुल शीरं पुष्पचरुं ।
 वर दीपं धूपं, आनन्दरूपं, लै फल भूपं अर्घ करुं ।।
 प्रभु दीनदयालं, अरिकुलकालं, विरदविशालं, सुकुमालम् ।
 हनि मम जंजालं, हे जगपालं, अरगुनमालं, वरभालम् ।।
 ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच कल्याणक

(छन्द चौपाई)

फागुन सुदी तीज सुखदाई, गरभसुमंगल ता दिन पाई ।
 मित्रादेवी उदर सु आये, जजे इन्द्र हम पूजन आये ।।
 ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लतृतीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 मंगसिर सुदी चतुर्दशि सोहै, गजपुर जनम भयो जग मोहै ।
 सुरगुरु जजे मेरुपर जाई, हम इत पूजें मन वच काई ।।
 ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री अरनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 मंगसिर सित दशमी दिन राजै, ता दिन संजम धरे विराजै ।
 अपराजित घर भोजन पाई, हम पूजें इत चित हरषाई ।।
 ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लदशम्यां निःक्रमणकल्याणप्राप्ताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 कार्तिक सित द्वादसि अरि चूरे, केवलज्ञान भयौ गुन पूरे ।
 समवसरन थित धरम बखाने, जजत चरन हम पातक भाने ।।
 ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चैत कृष्ण अमावसी सब कर्म, नाशि वास किय शिव थल पर्म ।
 निहचल गुन अनन्त भण्डारी, जजों देव सुधि लेहु हमारी ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
 अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

बाहर भीतर के जिते, जाहर अर दुखदाय।
ता हर करि अरजिन भये, साहर शिवपुर राय॥
राय सुदरशन जासु पितु, मित्रादेवी माय।
हेमवरन तन वरष वर, नब्बे सहस सुआय॥

(छन्द : तोटक)

जय श्रीधर श्रीकर श्रीपति जी, जय श्रीवर श्रीभर श्रीमति जी।
भव भीम भवोदधि तारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
गरभादिक मंगल सार धरे, जग जीवनि के दुखदंद हरे।
कुरु वंश शिखामणि तारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
करि राज छखण्ड विभूतिमई, तप धारत केवलबोध ठई।
गण तीस जहाँ भ्रमवारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
भवि जीवन को उपदेश दियो, शिवहेत सबै जन धारि लियो।
जगके सब संकट टारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
कहि बीस प्ररूपनसार तहाँ, निज शर्म सुधारस धार जहाँ।
गति चार हृषी पन धारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
षट काय तिजोग तिवेद मथा, पनवीस कषा वसु ज्ञान तथा।
सुर संजमभेद पसारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
रस दरशन लेश्या भव्य जुगं, षट सम्यक सैनिक भेद युगं।
जुग हार तथा सु अहारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
गुनथान चतुर्दश मारगना, उपयोग दुवादश भेद बना।

(313)

इमि बीस विभेद उचारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
इन आदि समस्त बखान कियो, भवि जीवन ने उरधार लियो।
कितने शिववादिन धारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
फिर आप अघाति विनाश सबै, शिवधामविषैं थित कीन तबै।
कृतकृत्यप्रभू जगतारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥
अब दीन दयाल दया धरिये, मम कर्म कलंक सबै हरिये।
तुमरे गुनको कछु पार न हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं॥

(घत्तानन्द छन्द)

जय श्रीअरदेवं, सुरकृतसेवं समता मे भेवं दातारं।
अरिकर्म विदारन, शिव सुख कारन, जय जिनवर जगत्रातारं॥
ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(आर्या छन्द)

अरजिनके पदसारं, जो पूजै द्रव्यभावसों प्रानी।
सो पावै भवपारं, अजरामर मोच्छथान सुखखानी॥
॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्॥

श्री मल्लिनाथ जिनपूजन

अपराजिततें आय नाथ मिथिलापुर जाये।
कुम्भराय के नन्द, प्रजापति मात बताये॥
कनक वरन तन तुंग, धनुस पच्चीस विराजें।
सो प्रभु तिष्ठहुँ आय निकट मम ज्यों भ्रमभाजें॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

(314)

(छन्द जोगीरासा)

सुर सरिता जल उज्ज्वल लै कर, मनिभृंगार भराई।
जनम जरामृत नाशनकारन, जजहुँ चरन जिनराई।।
राग दोष मद मोह हरनको, तुम ही हो वरवीरा।
यातें शरन गही जगपति जी, वेग हरो भवपीरा।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
बावन चन्दन कदली नन्दन कुंकुम संग घसायौ।
लेकर पूजौं चरनकमल प्रभु, भव आताप नसायौ।।राग.।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
तंदुल शशि सम उज्ज्वल लीनें, दीने पुंज सुहाई।
नाचत राचत भगति करत ही, तुरित अखयपद पाई।।राग.।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
पारिजात मंदार सुमन, सन्तान जनित महकाई।
मार सुभट मदभंजन कारन, जजहुँ चरण शिर नाई।।राग.।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
फेनी गोझा मोदन मोदक, आदिक सद्य उपाई।
सो लै क्षुधा निवारन कारन, जजहुँ चरन लवलाई।।राग.।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
तिमिर मोह उरमन्दिर मेरे, छाय रह्यो दुखदाई।
तासु नाश करन को दीपक, अद्भुतजोति जगाई।।राग.।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
अगर तगर कृष्णागर चन्दन, चूरि सुगन्ध बनाई।
अष्ट करम जारनको तुमढिग, खेवतु हौं जिनराई।।राग.।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

(315)

श्रीफल लौंग बदाम छुहारा, एला केला लाई।
मोखमहाफलदाय जानिके, पूजौं मन हरषाई।।राग.।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
जल फल अरघ मिलाय गाय गुण, पूजौं भगति बढ़ाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीधर शरण गही मैं आई।।
राग दोष मद मोह हरनको, तुम ही हो वरवीरा।
यातें शरन गही जगपति जी, वेग हरो भवपीरा।।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

(लक्ष्मीधरा छन्द : 12 वर्ण)

चैतकी शुद्ध एकैं भली राजई, गर्भकल्याण कल्याणको छाजई।
कुम्भराजा प्रजापति माता तने, देवदेवी जजे शीश नाये घने।।
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लप्रतिपदायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
मार्गशीर्ष सुदी ग्यारसी राजई, जन्मकल्याणको द्योस सो छाजई।
इन्द्र नागेन्द्र पूजें गिरेंद्र जिन्हें, मैं जजौं ध्याय के शीस नावौं उन्हें।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
मार्गशीर्ष सुदी ग्यारसी के दिना, राजको त्याग दीच्छ धरी है जिना।
दान गोछीर को नन्दसेने दयौ, मैं जजौं जासुके पंचचर्जे भयौ।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(316)

पौषकी श्यामदूजी हने घातिया, केवल ज्ञान साम्राज्य लक्ष्मी लिया।
 धर्मचक्री भये सेव शक्री करें, मैं जजों चरण ज्यों कर्मवक्री टरें।।
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णद्वितीयायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 फाल्गुनी सेत पांचें अघाती हते, सिद्ध आलैं बसे जाय सम्मेदतें।
 इन्द्र नागेन्द्र कीन्हींक्रिया आयकें, मैं जजों सो मही ध्यायकें गायकें।।
 ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लपंचम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(छन्द घत्तानन्द)

तुअ नमित सुरेशा, नरनागेशा, रजत नगेशा भगति भरा।
 भवभय हरनेशा सुखभरनेशा, जै जै जै शिव रमनि वरा।।
 (पद्धरि छन्द)
 जय शुद्ध चिदात्म देव एव, निरदोष सुगुन यह सहज टेव।
 जय भ्रम तम भंजन मारतण्ड, भवि भवदधि तारन कौ तरण्ड।।
 जय गरभ जनम मण्डित जिनेश, जय छायाक समकित बुद्ध भेस।
 चौथे किय सातों प्रकृति छीन, चौ अनन्तानु मिथ्यात तीन।।
 सातँय किय तीनों आयु नाश, फिर नवे अंश नवमें विलास।
 तिनमाहिं प्रकृति छत्तीस चूर, या भाँति कियौ तुम ज्ञानपूर।।
 पहिले महुँ सोलह कहँ प्रजाल, निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला।
 हनि थानगृद्धिकों सकल कुव्व, नर तिर्यगति गत्यानुपुव्व।।

इक वे ते चौ इन्द्रीय जात, थावर आतप उद्योत घात।
 सूच्छम साधारन एक चूर, पुनि दुतिय अंश वसु कर्यो दूर।।
 चौ प्रत्याप्रत्याख्यान चार, तीजे सु नपुंसकवेद टार।
 चौथे तियवेद विनास कीन, पांचै हास्यादिक छहों छीन।।
 नरवेद छठे छय नियत धीर, सातँये संज्वलनजु क्रोधचीर।
 आठवें संज्वलन मानभान, नवमें माया संज्वलनहान।।
 इमि घात नवें दशमें पधार, संज्वलनलोभ तित हू विदार।
 पुनि द्वादशके द्वय अंशमाहिं, सोलह चकचूर कियो जिनाहिं।।
 निद्रा प्रचला इक भागमाहिं दुति अंश चतुर्दश नाश जाहिं।
 ज्ञानावरनी पन दरश चार, अरि अन्तराय पाँचों प्रहार।।
 इमि छय त्रेसठ केवल उपाय, धरमोपदेश दीन्हों जिनाय।
 नव केवल लब्धि विराजमान, जय तेरम गुनथिति गुन अमान।।
 गत चौदहमें द्वै भाग तत्र, छय कीन बहत्तर तेरहत्र।
 वेदनी असाताको विनाश, औदारि विक्रियाहार नाश।।
 तेजस्य कारमानों मिलाय, तन पंच पंच बन्धन विलाय।
 संघात पंच घाते महन्त, त्रय अंगोपांग सहित भनन्त।।
 संठान संहनन छह छहेव, रसवर्ण पंच वसु फरस भेव।
 जुगगंध देवगति सहित पुव्व, पुनि अगुरु लघू उस्वास दुव्व।।
 परउपघातक सुविहाय नाम, जुत अशुभगमन प्रत्येक खाम।

जय रज थिर अथिर अशुभ सुमेव, दुरभाग सुसुर दुस्सर अमेव ।।
 अन आदर और अजस्य कित्त, निरमान नीच गोतौ विचित्त ।।
 ये प्रथम बहत्तर दिय खपाय, तब दूजे में तेरह नशाय ।।
 पहले सातावेदनी जाय, नर आयु मनुष्यगति को नशाय ।।
 मानुष्य गत्यानु सु पूरवीय, पंचेन्द्रिय जात प्रकृति विधीय ।।
 त्रसवादर परजापति सुभाग, आदरजुत उत्तम गोतपाग ।।
 जस कीरत तीरथ प्रकृत जुक्त, ए तेरह छय करि भये मुक्त ।।
 जय गुन अनन्त अविकार धार, वरनत गणधर नहीं लहत पार ।।
 ताकों में बंदों बार बार, मेरो आपद उद्धार धार ।।

सम्मेदशैल सुरपति नमन्त, तब मुक्तथान अनुपम लसंत ।।
 वृन्दावन वंदत प्रीतलाय, मम उरमें तिष्ठहु हे जिनाय ।।

दोहा

जय जय जिनस्वामी, त्रिभुवन नामी, मल्लि विमल कल्याण करा ।।
 भवदंद विदारन आनन्दकारन, भविकुमोद निशि ईश वरा ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामाति स्वाहा ।।

(शिखरिणी छन्द)

जजै हैं जो प्रानी, दरब अरु भावादि विधिसों ।।
 करैं नाना भांति, भगति थुति ओ नौति सुधिसों ।।
 लहै शक्री चक्री, सकल सुख सौभाग्य तिनको ।।
 तथा मोक्ष जावै, जजत जन जो मल्लिजिन को ।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

(319)

श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनपूजा

(मत्तगयन्द)

प्रानत स्वर्ग विहाय लियो जिन, जन्म सु राजगृहीमहँ आई ।।
 श्रीसुहमित्त पिता जिनके, गुनवान महापदमा जसु माई ।।
 बीस धनू तनु श्याम छबी, कछु अंक हरी वर वंश बताई ।।
 सो मुनिसुव्रतनाथ प्रभू कहँ थापतु हों इत प्रीति लगाई ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
 सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।।

(गीतिका)

उज्ज्वल सुजल जिमि जस तिहारौ, कनक झारी में भरों ।।
 जरमरन जामन हरन कारन, धार तुम पद तर करों ।।
 शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ, मुनिगुन माल हैं ।।
 तसु चरन आनन्दभरन तारन, तरन विरद विशाल हैं ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।।
 भवतापघायक शान्तिदायक, मलय हरि घसि ढिग धरों ।।
 गुनगाय शीस नमाय पूजत, विघनताप सबैं हरो ।। शिव. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा ।।
 तंदुल अखण्डित दमक शशिसम, गमक जुत थारी भरों ।।
 पद अखयदायक मुक्तिनायक, जानि पद पूजा करों ।। शिव. ।।
 ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामाति स्वाहा ।।

(320)

बेला चमेली रायबेली, केतकी करना सरों।
जगजीत मनमथहरन लखि प्रभु, तुम निकट ढेरी करो॥ शिव.॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
पकवान विविध मनोज्ञ पावन, सरस मृदुगुन विस्तरों।
सो लेय तुम पदतर धरत ही, छुधा डाइनको हरो॥ शिव.॥
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।
दीपक अमोलिक रतन मणिमय तथा पावनघृत भरो।
सो तिमिर मोह विनाश आतम, भास कारण ज्वै धरो॥ शिव.॥
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।
करपूर चन्दन चूरभूर, सुगन्ध पावकमें धरो।
तसु जरत जरत समस्त पातक सार निज सुखकों भरो॥ शिव.॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
श्रीफल अनार सु आम आदिक पक्कफल अति विस्तरों।
सो मोक्ष फलके हेत लेकर, तुम चरण आगे धरो॥ शिव.॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
जलगन्ध आदि मिलाय आठों दरब अरघ सजों वरो।
पूजों चरनरज भगतिजुत, जातें जगत सागर तरों॥ शिव.॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

(तोटक छन्द)

तिथि दोयज सावन श्याम भयो, गरभागम मंगल मोद थयो।
हरिवृन्द सची पितुमातु जजें हम पूजत ज्यों अघओघ भजें॥
ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(321)

वयसाख वदी दशमी वरनी, जनमें तिहि द्योस त्रिलोकधनी।
सुरमन्दिर ध्याय पुरन्दरने, मुनिसुव्रतनाथ हमें सरनै॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
तप दुद्धर श्रीधरने गहियो, वयसाख वदी दशमी कहियो।
निरुपाधि समाधि सुध्यावत हैं, हम पूजत भक्ति बढ़ावत हैं॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
वरकेवलज्ञान उद्योत किया, नवमी वयसाख वदी सुखिया।
घनि मोह निशा भनि मोख मगा, हम पूजि चहैं भवसिन्धु थगा॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
वदि बारसि फागुन मोच्छ गये, तिहुँ लोक शिरोमणि सिद्ध भये।
सु अनन्त गुनाकर विघ्न हरी, हम पूजत हैं मनमोद भरी॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णद्वादश्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

मुनिगणनायक मुक्ति पति, सूक्तव्रताकरयुक्त।
भुक्तिमुक्ति दातार लखि, वन्दों तनमन उक्त॥१॥

(छन्द तोटक)

जय केवलभान अमान धरं, मुनि स्वच्छ सरोज विकास करं।
भवसंकट भंजन लायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रत दायक हैं॥

(322)

घन घातवनं दव दीप्तभनं, भविबोध तृषातुर मेघघनं।
 नित मंगलवृन्द बधायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 गरभादिक मंगलसार धरे, जगजीवन के दुखदंद हरे।
 सब तत्त्वप्रकाशन नायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 शिवमारग मण्डन तत्त्व कह्यो, गुनसार जगत्रय शर्म लह्यो।
 रुज रागरु दोष मिटायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 समवसृति में सुरनार सही, गुनगावत नावत भालमही।
 अरु नाचत भक्ति बढ़ायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 पग नूपुर की धुनि होत भनं, झननं झननं झननं झननं।
 सुरलेत अनेक रमायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 घननं घननं घन घंट बजै, तननं तननं तनतान सजै।
 दृम-दृम मिरदंग बजायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 छिन में लघु औ छिन थूल बनें, युत हावविभाव विलासपने।
 मुखते पुनि यों गुनगायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 धृगतां धृगतां पग पावत हैं, सननं सननं सु नचावत हैं।
 अति आनन्द को पुनि पायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 अपने भवको फल लेत सही, शुभ भावनितैं सब पाप दही।
 तित तैं सुखको सब पायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 इन आदि समाज अनेक तहाँ, कही कौन सकै जु विभेद यहाँ।
 धन श्रीजिनचन्द सुधायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥

पुनि देशविहार कियौ जिनने, वृष अमृतवृष्टि कियो तुमने।
 हमको तुमरी शरनायक है मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 हम पै करुना करि देव अबै, शिवराज समाज सुदेहु सबैं।
 जिमि होहुं सुखाश्रम नायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥
 भविवृन्दतनी विनती जु यही, मुझ देहु अभयपद राज सही।
 हम आनि गही शरनायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं॥

(घत्तानन्द)

जय गुनगनधारी, शिवहितकारी, शुद्धबुद्ध चिदरूप पती।
 परमानंद-दायक, दाससहायक, मुनिसुव्रत जयवंत जती॥
 ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

श्री मुनिसुव्रत के चरन, जो पूजैं अभिनन्द।
 सो सुरनर सुख भोगिकें, पावै सहजानन्द॥
 ॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री नमिनाथ जिनपूजन

(रोड़क)

श्री नमिनाथ जिनेन्द्र नमों विजयारथ नन्दन,
 विख्यादेवी मातु सहज सब पापनिकन्दन।
 अपराजित तजि जये मिथिलापुर वर आनन्दन,
 तिन्हें सु थापों यहाँ त्रिधा करिके पदवन्दन॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
 परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

(द्रुतविलम्बित)

सुरनदी जल उज्ज्वल पावनं, कनकभृंग भरों मन भावनं।
जजतु हो नमिके गुणगायकें, जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
हरिमलय मिली केशर सों घसों, जगतनाथ भवातप को नसों।
जजतु हों नमि के गुणगायकें, जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
गुलक के सम सुन्दर तंदुलं, धरत पुंजसु भुंजत संकुलं।
जजतु हों नमि के गुणगायकें, जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
कमल केतुकी बेलि सुहावनी, समरसूल समस्त नशावनी।
जजतु हों नमिके गुणगायकें, जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
शशि सुधासम मोदक मोदनं, प्रबल दुष्ट छुधामद खोदनं।
जजतु हों नमिके गुणगायकें, जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शुचि घृताश्रित दीपक जोइया, असममोह महातम खोइया।
जजतु हों नमिके गुणगायकें, जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
अमर जिह्व विषे दश गन्ध को, दहत दाहत कर्म कबंधको।
जजतु हों नमिके गुणगायकें, जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

(325)

फल सुपक्व मनोहर पावनें, सकल विघ्नसमूह नशावनें।
जजतु हों नमिके गुणगायकें, जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
जल फलादि मिलाय मनोहरं, अरघ धारत ही भवभय हरं।
जजतु हों 'नमिके गुणगायकें', जुगपदाम्बुज प्रीति लगायकें।।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

(छन्द पाईता)

गरभागम मंगलाचारा, जुग आश्विन श्याम उदारा।
हरिहर्षि जजे पितुमाता, हम पूजें त्रिभुवन त्राता।।
ॐ ह्रीं आश्विनकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
जनमोत्सव श्याम असाढ़ा, दशमी दिन आनन्द बाढ़ा।
हरि मन्दर पूजे जाई, हम पूजै मन वच काई।।
ॐ ह्रीं आषाढ़ कृष्णदशम्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
तप दुद्धर श्रीधर धारा, दशमी कलि षाढ़ उदारा।
निज आतम रस झर लायौ, हम पूजत आनन्द पायौ।।
ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णदशम्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
सित मगसिर ग्यारस चूरे, चवघाति भये गुणपूरे।
समवसृत केवलधारी, तुमकों नित नौति हमारी।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां केवलज्ञानप्राप्तये श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(326)

वयसाख चतुर्दशि श्यामा, हनि शेष वरी शिववामा ।
सम्मोदथकी भगवन्ता, हम पूजै सुगुन अनन्ता ॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

आयु सहस्र दश वर्षकी, हेम वरन तनसार ।
धनुष पंचदश तुंग तनु, महिमा अपरम्पार ॥

(चौपाई)

जय जय जय नमिनाथ कृपाला, अरि कुल गहन दहन दव ज्वाला ।
जय जय धरम पयोधर धीरा, जय भव भंजन गुन गम्भीरा ॥
जय जय परमानन्द गुणधारी, विश्व विलोकन जन हितकारी ।
अशरनशरन उदार जिनेशा, जय जय समवशरन आवेशा ॥
जय जय केवल ज्ञान प्रकाशी, जय चतुरानन हनि भवफांसी ।
जय त्रिभुवनहित उद्यम वंता, जय जय जय जय नमि भगवंता ॥
जै तुम सप्ततत्त्व दरशायो, तास सुनत भवि निज रस पायो ।
एक शुद्ध अनुभव निज भाखे, दो विधि राग दोष छै आखे ॥
दो श्रेणी दो नय दो धर्म, दो प्रमाण आगमगुन शर्म ।
तीन लोक त्रयजोग तिकालं सल्ल पल्ल त्रय वात बलालं ॥
चार बन्ध संज्ञा गति ध्यानं, आराधन निछेप चउ दानं ।
पंचलब्धि आचार प्रमादं, बन्धहेतु पैताले सादं ॥

(327)

गोलक पंचभाव शिव भौने, छहों दरब सम्यक अनुकौने ।
हानिवृद्धि तप समय समेता, सप्तभंग वानी के नेता ॥
संयम समुद्घात भय सारा, आठ करम मद सिधगुनधारा ।
नवों लब्धि नवतत्त्व प्रकाशे, नोकषाय हरि तूप हुलाशे ॥
दशों बन्धके मूल नशाये, यों इन्द्र आदि सकल दरशाये ।
फेर विहरि जगजन उद्धार, जय जय ज्ञान दरश अविकारे ॥
जय वीरज जय सूछमवन्ता, जय अवगाहन गुण वरनंता ।
जय जय अगुरुलघू निरबाधा, इन गुन जुत तुम शिवसुख साधा ॥
ताकों कहत थके गनधारी, तौ को समरथ कहै प्रचारी ।
तातैं मैं अब शरनैं आया, भवदुख मेटि देहु शिवराया ॥
बार बार यह अरज हमारी, हे त्रिपुरारी हे शिवकारी ।
परपरणति को बेगि मिटावो, सहजानन्द स्वरूप भिटावो ॥
वृन्दावन जांचत शिरनाई, तुम मम उर निवसौ जिनराई ।
जबलों शिव नहिं पावों सारा, तबलों यही मनोरथ म्हारा ॥

(घत्तानन्द छन्द)

जय जय नमिनाथं हो शिवसाथं, औ अनाथके नाथ सदं ।
तातैं शिर नायौ, भगति बढ़ायौ, चिह्न चिह्न शत पत्र पदं ॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

श्रीनमिनाथ तने युगल, चरन जजें जो जीव ।
सो सुरनरसुख भोगकर होंवे शिवतिय पीव ॥
॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

(328)

श्री नेमिनाथ जिनपूजा

(छन्द : लक्ष्मी तथा अर्द्ध लक्ष्मीधरा)

जयति जय जयति जय जयति जय नेमकी,
धर्म अवतार दातार शिव चैन की।
श्रीशिवानंद भौफन्द निकन्द की,
ध्यावैं जिन्हें इन्द्र नागेन्द्र ओ मैनकी।।
परम कल्याण के देन हारे तुम्हीं,
देव हो एव तातें करौं ऐन की।
थापि हों बार त्रय शुद्ध उच्चारकें,
शुद्धता धार भौ पारकू लेन की।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
परिपुष्पांजलिं क्षिपामि।

दाता मोक्षके श्रीनेमिनाथ जिनराय।।दाता.।।टेक.।।
गंग नदी कुश प्रासुक लीनौ, कंचन भृंग भराय।
मन वच तनतें धार देत ही, सकल कलंक नशाय।
दाता मोक्ष के श्रीनेमिनाथ जिनराय।।दाता.।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
हरिचन्दन जुत कदलीनन्दन कुंकुम संग घसाय।
विघन ताप नाशन के कारन, जजौं तिहारे पाय।।दाता.।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
पुण्य राशि तुम यश सम उज्ज्वल, तन्दुल शुद्ध मंगाय।
अखय सौख्य भोगन के कारण, पुंज धरौ गुणगाय।।दाता.।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुंडरीक तृण द्रुमको आदिक, सुमन सुगन्धित लाय।
दर्पक मन्मथ भंजन कारन, जजहुं चरन लवलाय।।दाता.।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
घेवर बावर खाजे साजे, ताजे तुरित मंगाय।
क्षुधावेदनी नाश करन को, जजहुं चरण उमगाय।।दाता.।।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
कनक दीप नवनीत पूरकर, उज्ज्वल जोति जगाय।
तिमिर मोह नाशक तुम को लखि, जजहुं चरण हुलसाय।।दाता.।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
दशविध गन्ध मंगाय मनोहर, गुंजत अलिंगण आय।
दशों बन्ध जारन के कारण, खेवों तुम ढिग लाय।।दाता.।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
सुरस वरण रसना मनभावन पावन फल सु मंगाय।
मोक्ष महाफल कारन पूजों, हे जिनवर तुम पाय।।दाता.।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
जल फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय।
अष्टमछिति के राज करनकों, जजौं अंग वसु नाय।।
मनवचतनतें धार देत ही, सकल कलंक नशाय।
दाता मोक्ष के श्रीनेमिनाथ जिनराय।।दाता.।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

(छन्द पार्श्वता)

सित कार्तिक छट्ठि अमंदा, गरभागम आनन्दकन्दा।

शचि सेय शिवापद आई, हम पूजत मनवचकाई ।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सित सावन छट्ठ अमंदा, जनमे त्रिभुवन के चन्दा ।

पितु समुद्र महासुख पायो, हम पूजत विघन नशायो ।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तजि राजमती व्रतलीनों, सितसावन छट्ठ प्रवीनों ।

शिव नारि तबै हरषाई, हम पूजै पद शिरनाई ।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सित आश्विन एकम चूरे, चारों घाती अति कूरे ।

लहि केवल महिमा सारा, हम पूजै अष्ट प्रकारा ।।

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सितषाढ़ अष्टमी चूरे, चारों अघातिया कूरे ।

शिव ऊर्जयन्तते पाई, हम पूजै ध्यान लगाई ।।

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठ्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

श्याम छबी तनु चाप दश, उन्नत गुणनिधिधाम ।

शंख चिह्न पद में निरखि, पुनि पुनि करों प्रनाम ।।

(331)

(पद्धरि छन्द)

जय जय जय नेमि जिनिंद चन्द, पितु समुद सेन आनंदकंद ।

शिवमात कुमुद मन मोददाय, भविवृन्द चकोर सुखी कराय ।।

जय देव अपूरव मारतण्ड, तुम कीन ब्रह्मसुत सहस खण्ड ।

शिवतिय मुख जलज विकाशनेश, नहिं रही सृष्टि में तम अशेष ।।

भवि भीत कोक कीनों अशोक, शिवमग दरशायो शर्मथोक ।

जय जय जय जय तुम गुणगम्भीर, तुम आगम निपुण पुनीत धीर ।।

तुम केवलजोति विराजमान, जय जय जय जय करुणानिधान ।

तुम समवशरण में तत्त्वभेद, दरशायो जातें नशत खेद ।।

तित तुमको हरि आनन्दधार, पूजत भगतीजुत बहु प्रकार ।

पुनि गद्यपद्यमय सुजस गाय, जय बल अनन्त गुण वन्त राय ।।

जय शिवशंकर ब्रह्मा महेश, जय बुद्धि विधाता विष्णुवेश ।

जय कुमति मतंगनको मृगेन्द्र, जय मदन ध्वांत कों रवि जिनेन्द्र ।।

जय कृपासिन्धु अविरोद्ध बुद्ध, जय ऋद्धिसिद्धि दाता प्रबुद्ध ।

जय जग जन मन रंजन महान, जय भवसागर महँ सुष्टु यान ।।

तुम भगति करै ते धन्य जीव, ते पावैं दिव शिवपद सदीव ।

तुमरो गुण देव विविधप्रकार, गावत नित किन्नरकी जु नार ।।

वर भगति माहिं लवलीन होय, नाचै ताथेइ थेइ थेइ बहोय ।

तुम करुणासागर सृष्टिपाल, अब मोकों वेगि करो निहाल ।।

मैं दुख अनन्त वसु करम जोग, भोगे सदीव नहिं और रोग ।

तुमको जगमें जान्यो दयाल, हो वीतराग गुणरतनमाल ।।

(332)

तातैं शरणा अब गही आय, प्रभु करो वेगि मेरी सहाय ।
 यह विघन करम मम खण्डखण्ड, मनवांछित कारजमण्डमण्ड ॥
 संसार कष्ट चकचूर चूर, सहजानन्द मम उर पूर पूर ।
 निज पर प्रकाश बुद्धि देह देह, तजिके विलम्ब सुध लेह लेह ॥
 हम जांचत हैं यह बार-बार, भवसागर तैं मो तार तार ।
 नहिं सह्यो जात यह जगत दुख, तातैं विनवों हे सुगुनमुख ॥

(घत्तानन्द)

श्रीनेमिकुमारं जितमदमारं, शीलागारं, सुखकारं ।
 भवभयहरतारं, शिवकरतारं, दातारं धर्माधारं ॥
 ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुख, धन, जस सिद्धि, पुत्र पौत्रादि वृद्धि,
 सकल मनसि सिद्धि होति है ताहि ऋद्धि ।
 जजत हरष धारी नेमि को जो अगारी,
 अनुक्रम अरि जारी सो वरे मोक्ष नारी ॥
 ॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री पार्श्वनाथ जिनपूजन

वर स्वर्ग प्राणत को विहाय, सुमात वामा उर भये ।
 अश्वसेन के पारस जिनेश्वर, चरन जिनके सुर नये ॥
 नव हाथ उन्नत तन विराजै, उरग लच्छन पद लसैं ।
 थापूँ तुम्हें जिन आय तिष्ठो कर्म मेरे सब नसैं ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
 परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

क्षीर सोम के समान अम्बुसार लाइये ।
 हेमपात्र धारिकैं सु आपको चढ़ाइये ॥
 पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा ।
 दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चंदनादि केशरादि स्वच्छ गंध लीजिये ।
 आप चरणचर्च मोहताप को हनीजिये ॥ पार्श्व ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 फेन चंद के समान अक्षतान् लाइकैं ।
 चर्नके समीप सार पुंज को रचाइकैं ॥ पार्श्व ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
 केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाइके ।
 धार चर्नके समीप काम को नसाइकैं ॥ पार्श्व ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 घेवरादि बावरादि मिष्ठ सर्पि में सनें ।
 आप चर्न चर्चते क्षुधादिरोग को हनें ॥ पार्श्व ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 लाय रत्न दीपको सनेहपूर के भरूँ ।
 वातिका कपूर बारि मोह ध्वांतको हरूँ ॥ पार्श्व ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 धूप गंध लेयके सुअग्निसंग जारिये ।
 तास धूप के सुसंग अष्टकर्म बारिये ॥ पार्श्व ॥
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

खारिकादि चिरभटादि रत्न थाल में भरूँ ।
 हर्ष धारिकैं जजूं सुमोक्ष सौख्य को वरूँ ।।पार्श्व।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नीरगंध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये ।
 दीप धूप श्रीफलादि अर्घ तैं जजीजिए ।।पार्श्व।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच कल्याणक

शुभ प्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।
 वैशाख तनी दुतिकारी, हम पूजें विघ्न निवारी ।।
 ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
 जनमें त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता ।
 श्यामा तन अद्भुत राजें, रविकोटिक तेज सु लाजें ।।
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
 कलि पौष एकादशि आई, तब बारह भावन भाई ।
 अपने कर लौंच सु कीना, हम पूजें चरन जजीना ।।
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
 कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवल ज्ञान उपाई ।
 तब प्रभु उपदेश जु कीना, भविजीवन को सुखदीना ।।
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
 अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सित सातें सावन आई, शिवनारि वरी जिनराई ।
 सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजें मोक्ष कल्याना ।।
 ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

पारसनाथ जिनेन्द्रतने वच, पौन भखी जरते सुन पाये ।
 कर्यो सरधान लह्यो पर आन, भये पद्मावति शेष कहाये ।।
 नाम प्रताप टरैं संताप सु, भव्यन को शिवशर्म दिखाये ।
 है अश्वसैन के नंद भले, गुण गावत हैं तुमरे हरषाये ।।

दोहा-

केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
 लक्षण उरग निहार पग, वंदो पारसनाथ ।।

पद्धरी छन्द

रची नगरी छह मास अगार, बने चहुँ गोपुर शोभ अपार ।
 सु कोट तनी रचना छवि देत, कंगूरन पै लहकै बहुकेत ।।
 बनारस की रचना जु अपार, करी बहु भाँति धनेश तैयार ।
 तहाँ अश्वसेन नरेन्द्र उदार, करैं सुख वाम सु दे पटनार ।।
 तज्यो तुम प्रानत नाम विमान, भये तिनके वर नंदन आन ।
 तबै सुर इंद्र नियोगनि आय, गिरिन्द करी विधि न्हौन सुजाय ।।
 पिता-घर सौंपि गये निज धाम, कुबेर करै बसु जाम सुकाम ।
 बड़े जिन दोज मयंक समान, रमैं बहुबालक निर्जर आन ।।
 भए जब अष्टम वर्ष कुमार, धरे अणुव्रत महा सुखकार ।

पिता जब आन करी अरदास, करो तुम ब्याह वरो ममआस ।।
 करी तब नाहिं रहे जग चंद, किये तुम काम कषाय जुमंद ।
 चढ़े गजराज कुमारन संग, सुदेखत गंगतनी सुतरंग ।।
 लख्यो इक रंक करै तप घोर, चहुँ दिशि अगनि बलै अति जोर ।
 कहै जिननाथ अरे सुन भ्रात, करै बहुजीवन की मत घात ।।
 भयो तब कोप कहै कित जीव, जले तब नाग दिखाय सजीव ।
 लख्यो यह कारण भावन भाय, नये दिव ब्रह्मरिषिसुर आय ।।
 तबहिं सुर चार प्रकार नियोग, धरी शिविका निज कंध मनोग ।
 कियो वन माहिं निवास जिनंद, धरे व्रत चारित आनंदकंद ।।
 गहें तहँ अष्टम के उपवास, गये धनदत्त तने जु अवास ।
 दियो पयदान महासुखकार, भई पन वृष्टि तहाँ तिहिं बार ।।
 गये तब कानन मांहि दयाल, धरयो तुम योग सबहिं अघ टाल ।
 तबै वह धूम सुकेतु अयान, भयो कमठाचर को सुर आन ।।
 करै नभ गौन लखे तुम धीर, जु पूरब बैर विचार गहीर ।
 कियो उपसर्ग भयानक घोर, चली बहुतीक्षण पवन झकोर ।।
 रह्यो दशहूँ दिश में तम छाये, लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय ।
 सुरुण्डन के बिन मुण्ड दिखाय, पड़ें जल मूसलधार अथाय ।।
 तबै पद्मावति- कंत धनिंद, नये जुग आय जहाँ जिनचन्द ।
 भग्यो तब रंक सु देखत हाल, लह्यो तब केवलज्ञान विशाल ।।
 दियो उपदेश महाहितकार, सुभव्यन बोध सम्मेद पधार ।
 सुवर्णभद्र जहाँ कूट प्रसिद्ध, वरी शिवनारि लही वसुरिद्ध ।।

(333-डी)

जजुँ तुम चरन दोउ कर जोर, प्रभू लखिये अब ही मम ओर ।
 कहै 'बख्तावर रत्न' बनाय, जिनेश हमें भव पार लगाय ।।

(घत्ता छन्द)

जय पारस देवं सुरकृत सेवं, वंदत चरण सुनागपती ।
 करुणा के धारी, पर उपकारी, शिवसुखकारी, कर्महती ।।
 ॐ ह्रीं श्रीपार्ष्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अडिल्ल छन्द)

जो पूजै मन लाय भव्य पारस प्रभु नित ही ।
 ताके दुख सब जांय भीति व्यापै नहिं कित ही ।।
 सुख संपत्ति अधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे ।
 अनुक्रमसों शिव लहै, 'रतन' इमि कहै पुकारे ।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

श्री महावीर जिनपूजन

(मत्तगयंद छन्द)

श्रीमत वीर हरैं भवपीर, भरें सुख सीर अनाकुलताई ।
 केहरि अंक अरीकरदंक, नये हरिपंकति मौलि सुआई ।
 मैं तुमको इत थापतु हों प्रभु, भक्ति समेत हिये हरषाई ।
 हे करुणाधनधारक देव, इहाँ अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ।।
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
 परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

क्षीरोदधि सम शुचि नीर, कंचनभृंग भरों ।
 प्रभु वेग हरो भवपीर यातैं धार करों ।।

(333-ई)

श्रीवीर महा अतिवीर सन्मति-नायक हो।
 जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मति-दायक हो॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
 मलयागिरि चन्दन सार, केसर संग घसों।
 प्रभु भव आताप निवार, पूजत हिय हुलसों॥श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
 तन्दुल सित शशि सम शुद्ध, लीनों थार भरी।
 तसु पुंज धरों अविर्द्ध, पावों शिवनगरी॥श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
 सुरतरु के सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे।
 सो मनमथ-भंजन हेत, पूजों पद थारे॥श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
 रस रज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी।
 पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी॥श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
 तम खण्डित मण्डित नेह, दीपक जोवत हो।
 तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हो॥श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
 हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा।
 तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा॥श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 ऋतु-फल कलवर्जित लाय, कंचन थार भरों।
 शिवफल हित हे जिनराय, तुम ढिग भेंट धरों॥श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलफल वसुसजि हिमथार, तनमन मोद धरो।
 गुण गाऊँ भवदधितार, पूजत पाप हरो॥श्री.॥
 ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 पंचकल्याणक अर्घ
 मोहि राखों हो सरना, श्री वर्द्धमान जिनराय जी॥मो.॥
 गरभ साढ़ सित छट्ठ लियो तिथि, त्रिशला उर अघ हरना।
 सुर सुरपति तित सेव करौ नित मैं पूजों भव तरना॥मो.॥
 ॐ ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 जनम चैत सित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन वरना।
 सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भव हरना॥मो.॥
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 मंगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना।
 नृपकुमार घर पारन कीनों, मैं पूजों तुम चरना॥मो.॥
 ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 शुक्लदशै वैशाख दिवस अरि घाति चतुक छय करना।
 केवल लहि भवि भवसर तारे जजों चरन सुख भरना॥मो.॥
 ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय
 अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 कार्तिक श्याम अमावस शिवतिय पावापुरतैं वरना।
 गनफनिवृन्द जजैं तित बहुविधि, मैं पूजों भव हरना॥मो.॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्ण-अमावस्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

गनधर असनिधर, चक्रधर, हलधर गदाधर वरवदा,
अरु चापधर, विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा ।
दुखहरन आनन्द भरन तारन-तरन चरन रसाल हैं,
सुकुमाल गुनमनिमाल उन्नत, भालकी जयमाल हैं ।।

जय त्रिशलानन्दन हरिकृतवन्दन, जगदानन्दन चन्दवरं ।
भव तापनिकन्दन, तन-मन-कन्दन, रहित-सपन्दन नयन धरं ।।

छन्द त्रोटक

जय केवलभानु-कलासदनं, भवि-कोक-विकाशनकन्दवनं ।
जगजीत महारिपु मोहहरं, रज-ज्ञान-दृगांवर चूर करं ।।
गर्भादिक मंगलमण्डित हो, दुःखदारिद्र्य को नित खण्डित हो ।
जग माहिं तुम्हीं सत पण्डित हो, तुम ही भव-भाव विहंडित हो ।।
हरिवंश सरोजन को रवि हो, बलवन्त महन्त तुम्हीं कवि हो ।
लहि केवल धर्मप्रकाश कियो, अबलों सोई मारग राजतियो ।।
पुनि आप तने गुन माहिं सही, सुर मग्न रहैं जितने सब ही ।
तिनकी वनिता गुन गावत हैं, लय माननिसों मन भावत हैं ।।
पुनि नाचत रंग उमंग भरी, तुअ भक्ति विषै पग एम धरी ।
झननं झननं झननं झननं, सुर लेत तहाँ तननं तननं ।।
घननं घननं घन घंट बजै, दृमदं दृमदं मिरदंग सजै ।
गगनांगन-गर्भगता सुगता, ततता ततता अतता वितता ।।

धृगतां धृगतां गति बाजत है, सुरताल रसाल जु छाजत है।
सननं सननं सननं नभ में, इकरूप अनेक जु धारि भ्रमें॥
किन्नर सुबीन बजावत हैं, तुमरो जस उज्ज्वल गावत हैं।
करताल विषैं करताल धरैं, सुरताल विशाल जु नाद करें॥
इन आदि अनेक उछाह भरी, सुर भक्ति करें प्रभुजी तुमरी।
तुम ही जग जीवन के पितु हो, तुम ही बिन कारनतें हितु हो॥
तुम ही सब विघ्नविनाशन हो, तुम ही निज आनन्द भासन हो।
तुम ही चितचिंतितदायक हो, जगमाहिं तुम्हीं सब लायक हो॥
तुमरे पन मंगल माहिं सही, जिय उत्तम पुन्य लियो सब ही।
हमको तुमरी शरणागत है, तुमरे गुन में मन पागत है॥
प्रभु मो हिय आप सदा बसिये, जबलों वसुकर्म नहीं नसिये।
तबलों तुम ध्यान हिये वरतों, तबलों श्रुतचिन्तन चित्त रतों॥
तबलों व्रत चारित चाहतु हों, तबलों शुभ भाव सुगाहतु हो।
तबलों सतसंगति नित्य रहो, तबलों मम संजम चित्त गहो॥
जबलों नहिं नाश करो अरि को, शिवनारि वरों समता धरि को।
यह द्यो तबलों हमको जिनजी, हम जाचतु हैं इतनी सुनजी॥

घत्तानन्द

श्री वीर जिनेशा, नमित सुरेशा, नाग नरेशा भगति भरा।
‘वृन्दावन’ ध्यावै, विघन नशावै, बाँछित पावै शर्म वरा॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सन्मति के जुगलपद, जो पूजै धर प्रीति।
वृन्दावन सो चतुर नर, लहै मुक्ति नवनीत॥
॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

(333-आई)

सोलहकारण पूजन

(कविवर दयानाराय जी)

सोलह कारण भाय तीर्थकर जे भये।
हरषे इन्द्र अपार मेरु पे ले गये॥
पूजा करि निज धन्य लख्यौ बहु चावसों।
हमहूं षोडश कारन भावैं भावसों॥

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव
वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

कंचन-झारी निरमल नीर, पूजो जिनवर गुन-गंभीर।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥
दरशविशुद्धि भावना भाय सोलह तीर्थकर-पद-दाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं
नि.स्वाहा।

चंदन घसों कपूर मिलाय, पूजौ श्रीजिनवर के पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥दरश॥

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं
नि.स्वाहा।

तंदुल धवल सुगंध अनूप, पूजौ जिनवर तिहुं जग-भूप।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥दरश॥

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
नि.स्वाहा।

(334)

फूल सुगन्ध मधुप-गुंजार पूजों जिनवर जग-आधार ।
 परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।। दरश. ।।
 ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.स्वाहा ।
 सद नेवज बहुविधि पकवान, पूजों श्रीजिनवर गुणखान ।
 परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।। दरश. ।।
 ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.स्वाहा ।
 दीपक-ज्योति तिमिर छयकार, पूजूं श्रीजिन केवलधार ।
 परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।। दरश. ।।
 ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.स्वाहा ।
 अगर कपूर गंध शुभ खेय, श्रीजिनवर आगे महकेय ।
 परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।। दरश. ।।
 ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा ।
 श्रीफल आदि बहुत फलसार पूजों जिन वांछित-दातार ।
 परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।। दरश. ।।
 ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा ।
 जल फल आठों दरब चढ़ाय 'द्यानत' वरत करों मन लाय ।
 परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
 दरशविशुद्धि भावना भाय सोलह तीर्थकर-पद-दाय ।
 परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
 ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि. स्वाहा ।

जयमाला
 षोडश कारण गुण करै, हरै चतुरगति-वास ।
 पाप पुञ्ज सब नाशकै, ज्ञान-भान परकाश ।।
 चौपाई 16 मात्रा
 दरशविशुद्धि धरे जो कोई, ताको आवागमन न होई ।
 विनय महाधारै जो प्राणी, शिव-वनिताकी सखी बखानी ।।
 शील सदा दिढ़ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै ।
 ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं, ताके मोह-महातम नाहीं ।।
 जो संवेग-भाव विसतारै, सुरग-मुक्ति-पद आप निहारै ।
 दान देय मन हरष विशेषै, इह भव जस, परभव सुख देखै ।।
 जो तप तपै खपे अभिलाषा, चूरे करम-शिखर गुरु भाषा ।
 साधु-समाधि सदा मन लावै, तिहुं जगभोग भोगि शिव जावै ।।
 निश-दिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भव-नीर तिरैया ।
 जो अरहंत-भगति मन आनै, सो जन विषय कषाय न जानै ।।
 जो आचारज-भगति करै है, सो निर्मल आचार धरै है ।
 बहुश्रुतवंत-भगति जो करई, सो नर संपूरन श्रुत धरई ।।
 प्रवचन-भगति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानंद-दाता ।
 षट् आवश्यक काल जो साधै, सो ही रत्न-त्रय आराधै ।।
 धरम-प्रभाव करें जे ज्ञानी, तिन-शिव-मारग रीति पिछानी ।
 वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थकर पदवी पावै ।।

एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय ।
देव-इन्द्र-नर-वंद्य-पद, 'द्यानत' शिव-पद होय ।।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणभ्यो अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं नि. स्वाहा ।

(सवैया तेईसा)

सुन्दर षोडशकारण भावना निर्मल चित्त सुधारक धारै,
कर्म अनेक हने अति दुर्धर जन्म जरा भय मृत्यु निवारै ।।
दुःख दरिद्र विपत्ति हरै भव-सागरको पर पार उतारै,
'ज्ञान' कहे यही षोडशकारण कर्म निवारण सिद्ध सुधारै ।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

(सोलह अंगों के सोलह अर्घ)

सवैया तेईसा

दर्शन शुद्ध न होवत जो लग, तो लग जीव मिथ्याती कहावे ।
काल अनंत फिरो भव में, महादुःखनको कहूँ पार न पावे ।।
दोष पचीस रहित गुण-अम्बुधि, सम्यकदरशन शुद्ध ठरावै ।
'ज्ञान' कहे नर सोहि बड़ो, मिथ्यात्व तजे जिन-मारग ध्यावै ।।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।1।।
देव तथा गुरुराय तथा, तप संयम शील व्रतादिक-धारी ।
पाप के हारक कामके छारक, शल्य-निवारक कर्म-निवारी ।।
धर्म के धीर कषाय के भेदक, पंच प्रकार संसार के तारी ।
'ज्ञान' कहे विनयो सुखकारक, भाव धरो मन राखो विचारी ।।
ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नताभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।2।।
शील सदा सुखकारक है, अतिचार-विवर्जित निर्मल कीजे ।
दानव देव करें तसु सेव, विषानल भूत पिशाच पतीजे ।।

(337)

शील बड़ों जग में हथियार, जु शील को उपमा काहेकी दीजे ।
'ज्ञान' कहे नहिं शील बराबर, तातें सदा दृढ़ शील धरीजे ।।
ॐ ह्रीं निरतिचारशीलव्रतभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।3।।
ज्ञान सदा जिनराजको भाषित, आलस छोड़ पढ़े जो पढ़ावे ।
द्वादस दोउ अनेकहुँ भेद, सुनाम मती श्रुति पंचम पावे ।।
चारहुँ भेद निरन्तर भाषित, ज्ञान अभीक्षण शुद्ध कहावे ।
'ज्ञान' कहे श्रुत भेद अनेक जु, लोकालोक हि प्रगट दिखावे ।।
ॐ ह्रीं अभीक्षणज्ञानोपयोगभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।4।।
भ्रात न तात न पुत्र कलत्र न, संगम दुर्जन ये सब खोटो ।
मन्दिर सुन्दर काय सखा, सबको इसको हम अंतर मोटो ।।
भाउके भाव धरी मन भेदन, नाहिं संवेग पदारथ छोटो ।
'ज्ञान' कहे शिव-साधनको जैसो, साहको काम करे जु बणोटो ।।
ॐ ह्रीं संवेगभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।5।।
पात्र चतुर्विध देख अनुपम, दान चतुर्विध भावसुँ दीजे ।
शक्ति-समान अभ्यागतको, अति आदरसे प्रणिपत्य करीजे ।।
देवत जे नर दान सुपात्रहिं, तास अनेकहिं कारण सीजे ।
बोलत 'ज्ञान' देहि शुभ दान जु, भोग सुभूमि महासुख लीजे ।।
ॐ ह्रीं शक्तितस्त्यागभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।6।।
कर्म कठोर गिरावन को निज, शक्ति-समान उपोषण कीजे ।
बारह भेद तपे तप सुन्दर, पाप जलांजलि काहे न दीजे ।।
भाव धरी तप घोर करो नर, जन्म सदा फल काहे न लीजे ।
'ज्ञान' कहे तप जे नर भावत, ताके अनेकहिं पातक छीजे ।।
ॐ ह्रीं शक्तितस्तपोभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।7।।

(338)

साधुसमाधि करो नर भावक, पुण्य बड़ो उपजे अघ छीजे।
 साधु की संगति धर्मको कारण, भक्ति करे परमारथ सीजे।।
 साधु समाधि करे भव छूटत, कीर्ति-छटा त्रैलोक में गाजे।
 'ज्ञान' कहे यह साधु बड़ो, गिरि शृंग गुफा बिच जाय विराजे।।
 ॐ ह्रीं साधुसमाधिभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।
 कर्म के योग व्यथा उदई मुनि, पुंगव कुन्त सभेषज कीजे।
 पीत कफानल सांस भगन्दर, तापको सूल महागद छीजे।।
 भोजन साथ बनायके औषध, पथ्य कुपथ्य विचार के दीजे।
 'ज्ञान' कहे नित ऐसी वैयावृत करे तस देव पतीजे।
 ॐ ह्रीं वैयावृत्तकरणभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।
 देव सदा अरिहन्त भजो जई, दोष अठारह किये अति दूरा।
 पाप पखाल भये अति निर्मल, कर्म कठोर किए चकचूरा।।
 दिव्य अनन्त-चतुष्टयशोभित, घोर मिथ्यान्ध-निवारण सूरा।
 'ज्ञान' कहे जिनराज अराधो, निरन्तर जे गुण-मन्दिर पूरा।।
 ॐ ह्रीं अर्हद्भक्तिभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।
 देवत ही उपदेश अनेक सु, आप सदा परमारथ-धारी।
 देश-विदेश विहार करें, दश धर्म धरें भव-पार उतारी।।
 ऐसे अचारज भाव धरी भज, सो शिव चाहत कर्म निवारी।
 'ज्ञान' कहे गुरु-भक्ति करो नर, देखत ही मनमांहि विचारी।।
 ॐ ह्रीं आचार्यभक्तिभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।
 आगम छन्द पुराण पढ़ावत, साहित तर्क वितर्क बखाने।
 काव्य कथा नव नाटक पूजन, ज्योतिष वैद्यक शास्त्र प्रमाने।।

ऐसे बहुश्रुत साधु मुनीश्वर, जो मन में दोउ भाव न आने।
 बोलत 'ज्ञान' धरी मनसान जु, भाग्य विशेषतें जानहिं जाने।।
 ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्तिभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।
 द्वादस अंग उपांग सदागम, ताकी निरन्तर भक्ति करावे।
 वेद अनुपम चार कहे तस, अर्थ भले मन मांहि ठरावे।।
 पढ़ बहुभाव लिखो निज अक्षर, भक्ति करी बड़ि पूज रचावे।
 'ज्ञान' कहे जिन आगम-भक्ति, करो सद्-बुद्धि बहुश्रुत पावे।।
 ॐ ह्रीं प्रवचनभक्तिभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।
 भाव धरे समता सब जीवसु स्तोत्र पढ़े मुख से मनहारी।
 कायोत्सर्ग करे मन प्रीतसुं, वंदन देव-तणों भव तारी।।
 ध्यान धरी मद दूर करी, दोउ बेर करे पड़कम्मन भारी।
 'ज्ञान' कहे मुनि सो धनवन्त जु, दर्शन ज्ञान चरित्र उधारी।।
 ॐ ह्रीं आवश्यकपरिहाणभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।14।।
 जिन-पूजा रचो परमारथसुं, जिन आगे नृत्य महोत्सव ठाणो।
 गावत गीत बजावत ढोल, मृदंगके नाद सुधांग बखाणो।।
 संग प्रतिष्ठा रचो जल-जातरा, सद्गुरुको साहमो कर आणो।
 'ज्ञान' कहे जिन मार्ग-प्रभावन, भाग्य-विशेषसुं जानहिं जाणो।।
 ॐ ह्रीं मार्गप्रभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।15।।
 गौरव भाव धरो मनसे मुनि-पुंगवको नित वत्सल कीजे।
 शील के धारक भव्य के तारक, तासु निरन्तर स्नेह धरीजे।।
 धेनु यथा निजबालक के, अपने जिय छोड़ि न और पतीजे।
 'ज्ञान' कहे भवि लोक सुनो, जिन वत्सल भाव धरो अघ छीजे।।
 ॐ ह्रीं प्रवचन-वात्सल्यभावनायै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।16।।

जाप- ॐ ह्रीं दर्शनाविशुद्ध्यै नमः। ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नतायै नमः। ॐ ह्रीं शीलव्रताय नमः। ॐ ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोपयोगाय नमः। ॐ ह्रीं संवेगाय नमः। ॐ ह्रीं शक्तितस्त्यागाय नमः। ॐ ह्रीं शक्तितस्तपसे नमः। ॐ ह्रीं साधुसमाध्यै नमः। ॐ ह्रीं वैयावृत्यकरणाय नमः। ॐ ह्रीं अर्हद्भक्त्यै नमः। ॐ ह्रीं आचार्यभक्त्यै नमः। ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्त्यै नमः। ॐ ह्रीं प्रवचनभक्त्यै नमः। ॐ ह्रीं आवश्यकपरिहाण्यै नमः। ॐ ह्रीं मार्गप्रभावनायै नमः। ॐ ह्रीं प्रवचनवत्सल्पाय नमः।

पंचमेरु पूजन

(कविवर दानतराय जी कृत, गीता छन्द)

तीर्थकरो के न्हवन-जलतैं भये तीरथ शर्मदा,
तातैं प्रदच्छन देत सुर-गन पंच मेरुन की सदा ।
दो जलधि ढाई द्वीप में सब गनत-मूल विराजहीं,
पूजौं असी जिनधाम-प्रतिमा होहि सुख दुःखभाजहीं।

ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली-पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालस्थ
जिनप्रतिमा-समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ
तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चौपाई आंचलीबद्ध)

सीतल-मिष्ट-सुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।।
पाँचों मेरु असी जिन धाम, सब प्रतिमाजी को करो प्रणाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल केशर करपूर मिलाय, गंधसों पूजों श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अमल अखण्ड सुगंध सुहाय, अच्छतसों पूजों जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
बरन अनेक रहे महकाय, फूलसों पूजों श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ -जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
मन वाँछित बहु तुरत बनाय, चरुसौ पूजों श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
तम-हर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसों पूजों श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
खेऊँ अगर अमल अधिकाय, धूपसों पूजों श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय, फलसों पूजों श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों ॥
ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजों श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पाँचों मेरु असी जिन धाम, सब प्रतिमाजी को करो प्रणाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रींसुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्माली पंचमेरुसम्बन्धिजिन-
चैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
जयमाला
प्रथम सुदर्शन-स्वामि, विजय अचल मंदर कहा ।
विद्युन्माली नाम, पंच मेरु जगमें प्रगट ॥
(केसरी छन्द)
प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै, भद्रशाल वन भूपर छाजें ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ॥
ऊपर पंच-शतकपर सौहे, नंदन-वन देखत मन मोहै ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ॥
साढ़े बासठ सहस ऊँचाई, वन सुमनस शोभै अधिकाई ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ॥

ऊँचा जोजन सहस-छतीसं, पाण्डुक-वन सौहै गिरि-सीसं ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ।।
चारों मेरु समान बखानै, भूपर भद्रसाल चहुँ जाने ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ।।
ऊँचे पाँच शतक पर भाखे, चारों नंदनवन अभिलाखें ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ।।
साढ़े पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ।।
उच्च अठइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ।।
सुर नर चारन वंदन आवैं, सो शोभा हम किह मुख गावैं ।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ।।
ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धि अशीति-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये
महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

पंच मेरु की आरती, पढ़े सुनै जो कोय ।
'द्यानत' फल जाने प्रभू, तुरत महासुख होय ।।
।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपामि ।।

नन्दीश्वर द्वीप पूजन

(कविवर दानतराय जी)

सरब परव में बडो अठई परव है।

नन्दीश्वर सुर जाहिं लेय वसु दरब है।।

हमें सकति सो नाहिं इहाँ करि थापना।

पूजैं जिनगृह-प्रतिमा है हित आपना।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिण-दिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-
जिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ
ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं
क्षिपामि।

(चौपाई आंचलीबद्ध)

कंचन-मणि मय भृंगार, तीरथ-नीर भरा।

तिहुँ धार दई निरवार, जामन मरन जरा।।

नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पुंज करों।

वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद-भाव-धरो।।

नन्दीश्वर द्वीप महान चारों दिशि सोहें।

बावन जिन मन्दिर जान सुर नर मन मोहें।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिण-दिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-
जिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-तप-हर शीतल वास, सो चंदन नाहीं।

प्रभु यह गुन कीजै सांच, आयो तुम ठहीं।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिण-दिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-
जिनप्रतिमाभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सौहे।

सब जीते अक्ष-समाज, तुम सम अरु को है।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिण-दिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-
जिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊँ फूलनसों।

लहुं शील-लच्छमी एव, छूटों सूलनसों।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिण-दिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-
जिनप्रतिमाभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज इंद्रिय-बलकार, सो तुमने चूरा।

चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिण-दिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-
जिनप्रतिमाभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति-प्रकाश, तुम तन माहिं लसै।

टूटे करमन की राश, ज्ञान-कणी दरसै।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिण-दिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-
जिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु-धूप सुवास, दश-दिशि नारि वरें।

अति हरष-भाव परकाश, मानों नृत्य करें।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्मदहनाय
धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविधि फल ले तिहुँ काल, आनन्द राचत हैं।

तुम शिव-फल देहु दयाल, तुहि हम जाचत हैं।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये
फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
‘द्यानत’ कीज्यो शिव-खेत भूमि समरपतु हों। नंदी।।
ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घपदप्राप्तये
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

कार्तिक फागुन साढ़के अंत आठ दिन माहिं।
नन्दीश्वर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठाहिं।।
एकसौ त्रेसठ कोड़ि जोजन महा,
लाख चौरासिया एक दिश में लहा।
आठमों द्वीप नन्दीश्वरं भास्वरं,
भौन बावन प्रतिमा नमों सुखकरं।।
चार दिशि चार अंजनगिरी राजहीं,
सहस चौरासिया एक दिश छाजहीं।
ढोल सम गोल ऊपर तले सुन्दरं,
भौन बावन प्रतिमा नमों सुखकरं।।
एक एक चार दिशि चार शुभ बावरी,
एक एक लाख जोजन अमल-जल भरी।
चहुँ दिशा चार वन लाख जोजन वरं,
भौन बावन प्रतिमा नमों सुखकरं।।
सोल वापीन मधि सोल गिरि दधिमुखं,
सहस दश महाजोजन लखत ही सुखं।
बावरी कौन दो माहि दो रतिकरं,
भौन बावन प्रतिमा नमों सुखकरं।।

शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे,
चार सोलै मिले सर्व बावन लहे।
एक एक सीस पर एक जिनमंदिरं,
भौन बावन प्रतिमा नमों सुखकरं।।

बिंब अठ एक सौ रतनमयि सोह ही,
देव देवी सरव-नयन मन मोहही।
पाँचसै धनुष तन पद्म-आसन परं,
भौन बावन प्रतिमा नमों सुखकरं।।
लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं,
स्याम-रंग भौंह सिर केश छवि देत हैं।
बचन बोलत मनो हंसत कालुष हरं,
भौन बावन प्रतिमा नमों सुखकरं।।
कोटि-शशि-भानु-दुति-तेज छिप जात है,
महा-वैराग-परिणाम ठहरात है।
वयन नहिं कहै लखि होत सम्यकधरं,
भौन बावन प्रतिमा नमों सुखकरं।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तर-दक्षिणदिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-
जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

नन्दीश्वर-जिन-धाम, प्रतिमा-महिमा को कहै।
‘द्यानत’ लीनो नाम, यही भगति शिव-सुख करै।।
।। इत्याशीर्वाद : पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।।

दशलक्षणधर्म-पूजा

(द्यानतरायजी कृत)

उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव हैं।

शौच सत्य संयम तप त्याग उपाव हैं।।

आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं।

चहुंगति-दुखतैं काढ़ि मुक्ति करतार हैं।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणम्।

हेमाचल की धार, मुनि-चित सम शीतल सुरभि।

भव-आताप निवार, दस लक्षण पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा।

भव-आताप निवार, दस लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अमल अखण्डित सार, तंदुल चन्द्र समान शुभ।

भव-आताप निवार, दस लक्षण पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरध-लोकलों।

भव-आताप निवार, दस लक्षण पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

नेवज विविध निहार, उत्तम षट्-रस-संजुगत।

भव-आताप निवार, दस लक्षण पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

बाति कपूर सुधार, दीपक-जोति सुहावनी।

भव-आताप निवार, दस लक्षण पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगंधता।

भव-आताप निवार, दस लक्षण पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल की जाति अपार, घ्राण-नयन-मन-मोहने।

भव-आताप निवार, दस लक्षण पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसों।

भव-आताप निवार, दस लक्षण पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्माय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा चौपाई एवं हरिगीतिका)

पीड़ें दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करें।

धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा।।

उत्तम छिमा गहो रे भाई, इह भव जस, पर भव सुखदाई।

गाली सुनि मन खेद न आनो, गुनको औगुन कहै अयानो।।

कहि है अयानो वस्तु छीनै, बाँध मार बहुविधि करें।

घरतैं निकारे, तन विदारैं, बैर जो न तहाँ धरैं।।

तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा।

अति क्रोध-अगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-धर्मागाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मान महाविषरूप, करहिं नीच गति-जगत में।
 कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ॥
 उत्तम मार्दव-गुन मन माना, मान करन को कौन ठिकाना।
 वस्यो निगोद माँहिलें आया, दमरी रूकन भाग बिकाया ॥
 रूकन बिकाया भाग-वशतैं, देव इक इन्द्री भया।
 उत्तम मुआ चाण्डाल हूवा, भूप कीड़ों में गया ॥
 जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करें जल-बुदबुदा।
 करि विनय बहु-गुन बड़े जन की, ज्ञान का पावें उदा ॥
 ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मागाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 कपट न कीजै कोय, चोरन के पुर ना बसै।
 सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा ॥
 उत्तम आर्जव-रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी।
 मन में हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सौं करिये।
 करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निरमल आरसी।
 मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट प्रीति अंगारसी ॥
 नहिं लहै लक्ष्मी अधिक छल करि, कर्म-बंध विशेषता।
 भय त्यागि दूध बिलाव पीवे, आपदा नहिं देखता ॥
 ॐ ह्रीं उत्तमआर्जव-धर्मागाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 धरि हिरदै संतोष, करहु तपस्या देह सों।
 शौच सदा निरदोष, धरम बड़ों संसार में ॥
 उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना।
 आशा-पास महा दुखदानी, सुख पावें संतोषी प्राणी ॥

प्रानी सदा शुचि शील जप तप, ज्ञान ध्यान प्रभावतैं।
 नित गंग जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि-दोष सुभावतैं ॥
 ऊपर अमल मल भर्यो भीतर, कौन विधि घट शुचि कहै।
 बहु देह मैली सुगुन-थैली, शौच-गुन साधू लहै ॥
 ॐ ह्रीं उत्तमशौच-धर्मागाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 कठिन वचन मत बोल, पर निंदा अरु झूठ तज।
 सांच जवाहर खोल, सतवादी जग मे सुखी ॥
 उत्तम सत्य-वरत पालीजे, पर विश्वासघात नहिं कीजे।
 सांचे झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो ॥
 पेखो तिहायत पुरुष सांचे को दरब सब दीजिए।
 मुनिराज-श्रावक की प्रतिष्ठा साँच गुण लख लीजिये।
 ऊँचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया।
 वच झूठ सेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया ॥
 ॐ ह्रीं उत्तमसत्य-धर्मागाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो।
 संजम-रतन-संभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं ॥
 उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजें अघ तेरे।
 सुरग-नरक-पशु गति में नाहीं, आलस-हरन-करन सुख ठाहीं ॥
 ठाहीं पृथ्वी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो।
 सपरसन रसना घान नैना, कान मन सब वश करो ॥
 जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रूल्यो जग कीच में।
 इक घरी मत विसरो करो नित आवजम-मुख बीच में ॥
 ॐ ह्रीं उत्तमसंयम-धर्मागाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तप चाहे सुरराय, करम-सिखरकों वज्र है।
 द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम॥
 उत्तम तप सब माँहि बखाना, करम-शैलको वज्र समाना।
 वस्यो अनादि-निगोद-मँझारा, भू-विकलत्रय-पशु-तन धारा॥
 धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता।
 श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता॥
 अति महा दुर्लभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरै।
 नर-भव अनुपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरै॥
 ॐ ह्रीं उत्तमतप-धर्मांगाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 दान चार परकार, चार संघ को दीजिए।
 धन बिजुली उनहार, नर-भव लाहो लीजिए॥
 उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा।
 निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान सँभारै॥
 दोनों सँभारे कूप-जलसम, दरब घर में परिनया।
 निज हाथ दीजे साथ लीजे खाय खोया बह गया॥
 धनि साध शास्त्र अभय-दिवैया, त्याग राग विरोध को।
 बिन दान श्रावक साधु दोनों, लहै नाहीं बोध को॥
 ॐ ह्रीं उत्तमत्याग-धर्मांगाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 परिग्रह चौबीस भेद, त्याग करै मुनिराज जी।
 तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए॥
 उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिंता दुख ही मानो।
 फाँस तनकसी तन में सालै, चाह लंगोटी की दुख भालै॥

भालै न समता सुख कभी नर, बिना मुनि-मुद्रा धरै।
 धनि नगन पर तन-नगन ठाढ़े, सुर-असुर पायनि परै॥
 घरमाहिं तिसना जो घटावे, रुचि नहीं संसार सौं।
 बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर उपगारसौं॥
 ॐ ह्रीं उत्तम आकिंचन्य-धर्मांगाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
 शील-बाढ़ नौ राख, ब्रह्म-भाव अन्तर लखो।
 करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नर-भव सदा॥
 उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता बहिन सुता पहिचानौं।
 सहै बान-वरषा बहु सूरे, टिकै न नैन-बान लखि कूरे॥
 कूरे तिया के अशुचि तन में, काम रोगी रति करें।
 बहु मृतक सड़हि मसान माही, काक ज्यों चौचें भरें॥
 संसार में विषयाभिलाषा, तजि गये जोगीश्वरा।
 'द्यानत' धरम दस पैँडि चढ़िकै, शिव महल में पग धरा॥
 ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्य-धर्मांगाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

दश लच्छन वंदों सदा, मन वांछित फलदाय।
 कहों आरती भारती, हम पर होहु सहाय॥

(चौपाई)

उत्तम छिमा जहाँ मन होई, अंतर-बाहिर शत्रु न कोई।
 उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नानाभेद ज्ञान सब भासै॥
 उत्तम आर्जव कपट मिटावे, दुरगति त्यागि सुगति उपजावे।
 उत्तम शौच लोभ-परिहारी, संतोषी गुण-रत्न भंडारी॥

उत्तम सत्य-वचन मुख बोले, सो प्रानी संसार न डोलै।
 उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नर-भव सफल करै ले साता।।
 उत्तम तप निरवांछित पालै, सो नर करम-शत्रु को टालै।
 उत्तम त्याग करे जो कोई, भोग-भूमि-सुर शिवसुख होई।।
 उत्तम आकिंचन व्रत धारे, परम समाधि दशा विस्तारे।
 उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावै, नर-सुर सहित मुक्ति-फल पावै।।
 ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दव-आर्जव-शौच-सत्य-संयम-तपःत्याग-आकिंचन्य-
 ब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

करै करम की निरजरा, भव पीजरा विनाश।
 अजर अमर पद को लहै, 'द्यानत' सुख की राश।।
 ।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

रत्नत्रय-पूजन

चहुंगति फनि विष हरन मणि दुख पावक जलधार।
 शिव सुख सुधा सरोवरी, सम्यक् त्रयी निहार।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र
 तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।
 (सोरठा छन्द)

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो।
 जनम -रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
 चन्दन-केसर गारि, परिमल-महा-सुगंध-मय।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

(353)

तंदुल अमल चितार, वासमती-सुखदास के।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
 महकें फूल अपार, अलि गुंजें ज्यों थुति करें।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
 लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगंधयुत।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
 दीप रतनमय सार, जोत प्रकाशै जगत में।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
 धूप सुवास विथार, चंदन अगर कपूर की।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 फल शोभा अधिकार, लोंग छुहारे जायफल।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 आठ दरब निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये।
 जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्न-त्रय भज्जूं।।
 ॐ ह्रीं सम्यग्-रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(354)

सम्यक् दरशनज्ञान, व्रत शिव-मग-तीनों मयी ।
पार उतारन यान, 'द्यानत' पूजों व्रतसहित ।।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यग्दर्शन-पूजा

(दोहा छन्द)

सिद्ध अष्ट-गुणमय प्रगट, मुक्त-जीव-सोपान ।
ज्ञान चरित जिहं बिन अफल, सम्यक्दर्श प्रधान ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
तिष्ठतिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।

(सोरठा छन्द)

नीर सुगंध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

(355)

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दीप-ज्योति तमहार, घट पट परकाशै महा ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
धूप घान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप निहचै लखै, तत्त्व-प्रीति व्योहार ।
रहित दोष पच्चीस हैं, सहित अष्ट गुण सार ।।
सम्यक् दरशन-रत्न गहीजै, जिन-वच में संदेह न कीजै ।
इह भव विभव-चाह दुखदानी, पर-भव भोग चहै मत प्रानी ।।
प्राणी गिलान न करि अशुचि लिखि, धरम गुरु प्रभु परखिये ।
पर-दोष ढकिये, धरम डिगते को सुथिर कर हरखिये ।।

(356)

चहुँ संघको वात्सल्य कीजै, धरम की परभावना ।
गुन आठसों गुन आठ लहिकै, इहाँ फेर न आवना ।।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यग्ज्ञान पूजा

पंच भेद जाके प्रकट, ज्ञेय-प्रकाशन-भान ।
मोह-तपन-हर चंद्रमा, सोई सम्यग्ज्ञान ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं
परिपुष्पांजलिं क्षिपामि ।
नीर सुगंध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय क्षुधारोगविनाशनाय नेवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप-जोति तम-हार, घट-पट परकाशै महा ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
धूप घान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।। 9 ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा
आप आप जानै नियत, ग्रन्थ पठन व्यौहार ।
संशय विभ्रम मोह बिन, अष्ट अंग गुनकार ।।
सम्यक् ज्ञान-रतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया ।
अच्छर शुद्ध अर्थ पहिचानो, अच्छर अरथ उभय सँग जानो ।।
जानो सुकाल-पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।
तप रीति गहि बहु मौन देकै, विनय गुण चित लाइये ।।
ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान-दर्पण देखना ।
इस ज्ञान ही सों भरत सीझा, और सब पट पेखना ।।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यक्-चारित्र पूजा

विषय रोग औषध महा, दव-कषाय-जल-धार ।

तीर्थकर जाको धरै, सम्यक्चारित सार ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधिकरणम् ।

नीर सुगंध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा ।

जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा ।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा ।

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा ।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा ।

दीप-जोति तम-हार, घट-पट परकाशै महा ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा ।

धूप घान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।

सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप थिर नियत नय, तप संजम व्योहार ।

स्व-पर-दया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥

(चौपाई मिश्रित गीताछन्द)

सम्यक्चारित्र रतन सँभालौ, पाँच पाप तजिके व्रत पालौ ।

पंच समिति त्रय गुपति गहीजै, नरभव सफल करहु तन छीजै ॥

छीजै सदा तनको जतन यह, एक संजम पालिये ।

बहु रूल्यो नरक-निगोद माहीं, विषय-कषायनि टालिये ॥

शुभ करम योग सुघाट आयो, पार हो दिन जात है ।

‘द्यानत’ धरम की नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय-जयमाला

दोहा

सम्यक्दर्शन-ज्ञान-व्रत, इन बिन मुक्ति न होय।

अन्ध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दव-लोय॥

(चौपाई 16 मात्रा)

जापै ध्यान सुथिर बन आवै, ताके करम-बंध कट जावै।

तासों शिव-तिय प्रीति बढ़ावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥

ताको चहुँ गति के दुख नाहीं, सो न परै भव-सागर माहीं।

जनम-जरा-मृत दोष मिटावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥

सोई दश लच्छनको साधै, सो सोलह कारण आराधै।

सो परमात्म पद उपजावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥

सोई शक्र-चक्रिपद लेई, तीन लोकके सुख विलसेई।

सो रागादि भाव बहावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥

सोई लोकालोक निहारै, परमानंद दशा विसतारै।

आप तिरै औरन तिरवावै, जो सम्यक् रत्न-त्रय ध्यावै॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्राय अनर्घपदप्राप्तये महार्घं नि.स्वाहा।

(दोहा)

एक स्वरूप-प्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय।

तीन भेद व्योहार सब, 'द्यानत' को सुखदाय॥

॥ इत्याशीर्वाद : पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

(361)

क्षमावाणी पूजन

अंग क्षमा जिन धर्म तनों दृढ़ मूल बखानो।

सम्यक् रत्न संभाल हृदय में निश्चय जानो॥

तज मिथ्या विष मूल और चित निरमल ठानो।

जिन धर्मी सों प्रीत करों सब पातक भानो॥

रत्नत्रय गह भविक जन, जिन आज्ञा सम चालिये।

निश्चय कर आराधना, करम रासको जालिये॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रय अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं। अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

क्षमा गहो उर जीवड़ा जिनवर वचन गहाय।।टेक॥

नीर सुगन्ध सुहावनो पद्म द्रह को लाय।

जन्म रोग निवारिये सम्यक् रत्न लहाय॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः जलं नि. स्वाहा।

केसर चंदन लीजिये, संग कपूर घसाय।

अलि पंकति आवत घनी, बास सुगंध सुहाय॥क्ष.॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः चंदनं नि. स्वाहा।

शालि अखंडित लीजिये, कंचन थाल भराय।

जिनपद पूजों भावसों, अक्षय पदको पाय॥क्ष.॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः अक्षतान् नि. स्वाहा।

(362)

पारिजात अरु केतकी, पहुप सुगन्ध गुलाब ।
 श्रीजिन चरण सरोजकूं, पूज हरष चितभाव ॥क्ष.॥
 ॐ ह्री सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः पुष्पं नि. स्वाहा ।
 शक्कर घृत सुरभी तनो, व्यञ्जन षट्स स्वाद ।
 जिनके निकट चढ़ाय कर हिरदे धरि आह्लाद ॥क्ष.॥
 ॐ ह्री सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः नैवेद्यं नि. स्वाहा ।
 हाटक मय दीपक रचो, बाति कपूर सुधार ।
 शौधित घृत कर पूजिये, मोह तिमिर निरवार ॥क्ष.॥
 ॐ ह्री सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः दीपं नि. स्वाहा ।
 कृष्णागर करपूर हो, अथवा दस विधि जान ।
 जिन चरणन ढिग खेड़ये, अष्ट करम की हान ॥क्ष.॥
 ॐ ह्री सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः धूपं नि. स्वाहा ।
 केला अम्ब अनार हो, नारिकेल ले दाख ।
 अग्र धरो जिनपद तने, मोक्ष होय जिन भाख ॥क्ष.॥
 ॐ ह्री सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः फलं नि. स्वाहा ।
 जलफल आदि मिलाय के, अरघ करो हरषाय ।
 दुःख जलांजलि दीजिये, श्रीजिन होय सहाय ॥क्ष.॥
 ॐ ह्री सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः अर्घं नि. स्वाहा ।

जयमाला

उततिस अंग की आरती, सुनो भविक चितलाय ।
 मन वच तन सरधा करो, उत्तम नर भव पाय ॥

चौपाई

जैनधर्म में शंक न आनै, सो निःशंकित गुण चित ठानै ।
 जप तप कर फल वांछे नाहीं, निःकांक्षित गुण हो जिस माहीं ॥
 पर को देख गिलान न आने, सो तीजा सम्यक् गुण ठानै ।
 आन देवको रंच न माने, सो निर्मूढ़ता गुण पहिचाने ॥
 पर को औगुण देख जु ढाकें, सो उपगूहन श्री जिन भाखै ।
 जैन धर्म तैं डिगता देखें, थापै बहुरि थिति कर लेखै ॥
 जिनधरमी सों प्रीत निवहिये, गऊ बच्छावत् बच्छल कहिये ।
 ज्यों त्यों जैन उद्योत बढ़ावै, सो प्रभावना अंग कहावै ॥
 अष्ट अंग यह पालें जोई, सम्यक्दृष्टि कहिये सोई ।
 अब गुण आठ ज्ञान के कहिये, भाखै श्री जिन मनमें गहिये ॥
 व्यञ्जन अक्षर सहित पढ़ीजें, व्यञ्जन व्यंजित अंग कहीजै ।
 अर्थ सहित शुद्ध शब्द उचारै, दूजा अर्थ समग्र धारै ॥
 तदुभय तीजा अंग लखीजै, अक्षर अर्थ सहित जु पढ़ीजै ।
 चौथा कालाध्ययन विचारै, काल समय लखि सुमरण धारै ॥
 पंचम अंग उपधान बतावै, पाठ सहित तब बहु फल पावै ।
 षष्ठम विनय सुलब्धि सुनीजै, बाणी बहुत विनयसु पढ़ीजै ॥
 जापै पढ़ै न लौपै जाई, अंग सप्तम गुरुवाद कहाई ।
 गुरुकी बहुत विनय जु करीजै, सो अष्टम अंगधर सुख लीजै ॥
 यह आठों अंग ज्ञान बढ़ावै, ज्ञाता मन वच तन कर ध्यावै ।
 अब आगै चारित्र सुनीजै, तेरह विधि धर शिव सुख लीजे ॥

छहों कायकी रक्षा करहै, सोई अहिंसा व्रत चित धर है।
 हित मित सत्य वचन मुख कहिये, सो सतवादी केवल लहिये ॥
 मन वच काय न चोरी करिये, सोई अचौर्यव्रत चित धरिये।
 मन्मथ भय मन रंच न आनै, सो मुनि ब्रह्मचर्य व्रत ठनै ॥
 परिग्रह देख न मूर्छित होई, पंच महाव्रत धारक सोई।
 ये पाँचों महाव्रत सु खरे हैं, सब तीर्थकर इनको करै हैं ॥
 मन में विकल्प रंच न होई, मनोगुप्ति मुनि कहिये सोई।
 वचन अलीक रंच नहिं भाखै, वचन गुप्ति सो मुनिवर राखै ॥
 कायोत्सर्ग परीषहसहे है, ता मुनि काय गुप्ति जिन कहे है।
 पंच समिति अब सुनिये भाई, अर्थ सहित भाखों जिन राई ॥
 हाथ चार जब भूमि निहारैं, तब मुनि ईर्या मग पद धारैं।
 मिष्ट वचन मुख बोलै सोई, भाषा समिति तास मुनि होई ॥
 भोजन छयालिस दूषण टारैं, सो मुनि एषण शुद्ध विचारे।
 देखकै पोथी ले अरु धरि हैं, सो आदान निक्षेपण वरि हैं ॥
 मल मूत्र एकान्त जु डारैं, परतिष्ठापन समिति संभारै।
 यह सब अंग उनतीस कहे हैं, श्रीजिन भाखै गणधर गहे हैं ॥
 आठ आठ तेरह विधि जानो, दर्शन ज्ञान चारित्र सु ठनों।
 तातैं शिवपुर पहुँचो जाई, रत्नत्रय की यह विधि भाई ॥
 रतनत्रय पूरण जब होई, क्षिमा क्षिमा करियौ सब कोई।
 चैत माघ भादों त्रय वारा, क्षिमा क्षिमा हम उर मैं धारा ॥

यह क्षमावाणी आरती, पढ़ै सुनै जो कोय।
 कहे 'मल्ल' सरधा करो, मुक्ति श्री फल होय ॥
 ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्ररूप-रत्नत्रयाय नमः महार्घ नि.
 स्वाहा।

सोरठ
 दोष न गहिये कोय, गुणगण गहिये भाव सौं।
 भूल चूक जो होय, अर्थ विचारि जु शोधिये ॥
 ॥ इत्याशीर्वाद : पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

रक्षाबन्धन पर्व-पूजन

(श्री अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनिवर पूजन)

(छन्द तांटक)

जय अकम्पनाचार्य आदि सात सौ साधु मुनिव्रत धारी।
 बलि ने कर नरमेघ यज्ञ उपसर्ग किया भीषण भारी ॥
 जय जय विष्णु कुमार महामुनि ऋद्धि विक्रिया के धारी।
 किया शीघ्र उपसर्ग निवारण वात्सल्य करुणा धारी ॥
 रक्षा-बन्धन पर्व मना मुनियों का जय जयकार हुआ।
 श्रावण शुक्ल पूर्णिमा के दिन घर घर मंगलाचार हुआ ॥
 श्रीमुनि चरण कमल में वन्दूँ पाऊँ प्रभु सम्यग्दर्शन।
 भक्तिभाव से पूजन करके निज स्वरूप में रहूँ मगन ॥
 ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादि सप्तशतकमुनयः ! अत्र अवतर
 अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

जन्म मरण के नाश हेतु प्रासुक जल करता हूँ अर्पण।
 रागद्वेष परिणति अभावकर निज परिणति में करूँ रमण।
 श्री अकम्पनाचार्य आदि मुनि सप्तशतक को करूँ नमन।
 मुनि उपसर्ग निवारक विष्णुकुमार महामुनि को वन्दन॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो जलं नि.
 भव सन्ताप मिटाने को मैं चन्दन करता हूँ अर्पण।
 देहभोग भवसे विरक्त हो निजपरिणति में करूँ रमण॥श्री.॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः चन्दनं नि.
 अक्षयपद अखंड पाने को अक्षत धवल करूँ अर्पण।
 हिंसादिक पापों को क्षयकर निजपरिणति में करूँ रमण॥श्री.॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो अक्षतान् नि.
 कामबाण विध्वंस हेतु मैं सहज पुष्प करता अर्पण।
 क्रोधादिक चारों कषायहर निज परिणति में करूँ रमण॥श्री.॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः पुष्पं नि.
 क्षुधा रोग के नाश हेतु नैवेद्य सरस करता अर्पण।
 विषयभोगकी आकाँक्षाहर निजपरिणति में करूँ रमण॥श्री.॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो नैवेद्यं नि.
 चिर मिथ्यात्व तिमिर हरने को दीप ज्योति करता अर्पण।
 सम्यग्दर्शन का प्रकाशपा निजपरिणति में करूँ रमण॥श्री.॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः दीपं नि.

अष्ट कर्म के नाश हेतु यह धूप सुगन्धित है अर्पण।
 सम्यग्ज्ञान हृदय प्रगटाऊँ निज परिणति में करूँ रमण॥श्री.॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः धूपं नि.
 मुक्तिप्राप्ति हेतु उत्तम फल चरणों में करता अर्पण।
 मैं सम्यक् चारित्र प्राप्तकर निज परिणति में करूँ रमण॥श्री.॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः फलं नि.
 शाश्वत पद अनर्घ पाने को उत्तम अर्घ करूँ अर्पण।
 रत्नत्रय की तरणी खेऊँ निज परिणति में करूँ रमण॥श्री.॥
 ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो अर्घं नि.

जयमाला

वात्सल्य के अंग की महिमा अपरम्पार।
 विष्णुकुमार मुनीन्द्र की गूँजी जय जयकार॥

(तांटक)

उज्जयनी नगरी के नृप श्री वर्मा के मन्त्री थे चार।
 बलि, प्रह्लाद, नमुचि, वृहस्पति चारों अभिमानी सविकार॥
 जब अकम्पनाचार्य संघ मुनियों का नगरी में आया।
 सात शतक मुनि के दर्शन कर नृप श्रीवर्मा हर्षाया॥
 सब मुनि मौन ध्यान में रत, लख बलि आदिक ने निंदा की।
 कहा कि मुनि सब मूर्ख, इसी से नहीं तत्त्व की चर्चा की॥
 किन्तु लौटते समय मार्ग में, श्रुतसागर मुनि दिखलाये।
 वाद विवाद किया श्रीमुनि से, हारे जीत नहीं पाये॥

अपमानित होकर निशि में मुनि पर प्रहार करने आये।
 खड्ग उठाते ही कीलित हो गये हृदय में पछताये।।
 प्रातः होते ही राजा ने आकर मुनि को किया नमन।
 देश निकाला दिया मंत्रियों को तब राजा ने तत्क्षण।।
 चारों मन्त्री अपमानित हो पहुँचे नगर हस्तिनापुर।
 राजा पद्मराय को अपनी सेवाओं से प्रसन्न कर।।
 मुँह माँगा वरदान नृपति ने बलि को दिया तभी तत्पर।
 जब चाहूँगा तब ले लूँगा, बलि ने कहा नम्र होकर।।
 फिर अकम्पनाचार्य सात सौ मुनियों सहित नगर आये।
 बलि के मन में मुनियों की हत्या के भाव उदय आये।।
 कुटिल चालचल बलि ने नृप से आठ दिवस का राज्य लिया।
 भीषण अग्नि जलाई चारों ओर द्वेष से कार्य किया।।
 हाहाकार मचा जगती में, मुनि स्वध्यान में लीन हुए।
 नश्वर देह भिन्न चेतन से, यह विचार निज लीन हुए।।
 यह नरमेघ यज्ञ रच बलि ने किया दान का ढोंग विचित्र।
 दानकिमिच्छक देता था, परमन था अतिहिंसक अपवित्र।।
 पद्मराय नृप के लघु भाई, विष्णुकुमार महामुनिवर।
 वात्सल्य का भाव जगा, मुनियों पर संकट का सुनकर।।
 किया गमन आकाश मार्ग से, शीघ्र हस्तिनापुर आये।
 ऋद्धि विक्रिया द्वारा याचक, वामन रूप बना लाये।।

बलि से माँगी तीन पाँव भू, बलिराजा हँसकर बोला।
 जितनी चाहों उतनी ले लो, वामन मूर्ख बड़ा भोला।।
 हँसकर मुनि ने एक पाँव में ही सारी पृथ्वी नापी।
 पग द्वितीय में मानुषोत्तर पर्वत की सीमा नापी।।
 ठौर न मिला तीसरे पग को, बलि के मस्तक पर रखा।
 क्षमा क्षमा कह कर बलि ने, मुनि चरणों में मस्तक रखा।।
 शीतल ज्वाला हुई अग्नि की, श्रीमुनियों की रक्षा की।
 जय जयकार धर्म का गूँजा, वात्सल्य की शिक्षा दी।।
 नवधा भक्तिपूर्वक सबने मुनियों को आहार दिया।
 बलि आदिक का हुआ हृदय परिवर्तन जयजयकार किया।।
 रक्षासूत्र बाँधकर तब जन-जन ने मंगलाचार किये।
 साधर्मी वात्सल्य भाव से, आपस में व्यवहार किये।।
 समकित के वात्सल्य अंग की महिमा प्रगटी इस जग में।
 रक्षाबन्धन पर्व इसी दिन से प्रारम्भ हुआ जग में।।
 श्रावण शुक्ल पूर्णिमा का दिन था रक्षासूत्र बंधा कर में।
 वात्सल्य की प्रभावना का आया अवसर घर घर में।।
 प्रायश्चित्त ले विष्णुकुमार ने पुनः व्रत ले तप ग्रहण किया।
 अष्ट कर्मबन्धन को हरकर इस भव से ही मोक्ष लिया।।
 सब मुनियों ने भी अपने-अपने परिणामों के अनुसार।
 स्वर्ग मोक्ष पद पाया जग में हुई धर्म की जय जयकार।।

धर्म भावना रहे हृदय में, पापों के प्रतिकूल चलूँ।
रहे शुद्ध आचरण सदा ही धर्म मार्ग अनुकूल चलूँ॥
आत्मज्ञान रुचि जगे हृदय में, निज पर को मैं पहिचानूँ।
समकित के आठों अंगों की, पावन महिमा को जानूँ॥
तभी सार्थक जीवन होगा सार्थक होगी यह नर देह।
अन्तर घट में जब बरसेगा पावन परम ज्ञान रस मेह॥
पर से मोह नहीं होगा, होगा निजात्म से अति नेह।
तब पायेंगे अखंड अविनाशी निज सुखमय शिवगेह॥
रक्षाबन्धन पर्व धर्म का, रक्षा का त्यौहार महान।
रक्षाबन्धन पर्व ज्ञान का, रक्षा का त्यौहार प्रधान॥
रक्षाबन्धन पर्व चरित का, रक्षा का त्यौहार महान।
रक्षाबन्धन पर्व आत्म का, रक्षा का त्यौहार प्रधान॥
श्री अकम्पनाचार्य आदि मुनि, सात शतक को करूँ नमन।
मुनि उपसर्ग निवारक विष्णुकुमार महामुनि को वन्दन॥
ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः पूर्णार्घं नि.
रक्षाबन्धन पर्व पर, श्रीमुनि पद उर धार।
मन वच तन जो पूजते, पाते सौख्य अपार॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्री आदिनाथ चालीसा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करूँ प्रणाम।
उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम॥1॥
सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार।
आदिनाथ भगवान् को, मन मन्दिर में धार॥2॥

॥ चौपाई ॥

जै जै आदिनाथ जिन स्वामी, तीन काल तिहुँ जग में नामी।
वेष दिगम्बर धार रहे हो, करमों को तुम नाश रहे हो॥3॥
हो सर्वज्ञ बात सब जानो, सारी दुनिया को पहचानो।
नगर अजुध्या जो कहलाये, राजा नाभिराय बतलाये॥4॥
मरुदेवी माता के उदर से, चैत वदी नवमी को जन्मे।
तुमने जग को ज्ञान सिखाया, कर्मभूमि का बीज उपाया॥5॥
कल्पवृक्ष जब लगे विघटने, जनता आई दुःखड़ा कहने।
सब का संशय तभी भगाया, सूर्य चन्द्र का ज्ञान कराया॥6॥
खेती करना भी सिखलाया, न्याय दण्ड आदिक समझाया।
तुमने राज्य किया नीति का, सबक आपसे जग ने सीखा॥7॥
पुत्र आपका भरत बताया, चक्रवर्ती जग में कहलाया।
बाहुबली जो पुत्र तुम्हारे, सबसे पहले मोक्ष सिधारे॥8॥
सुता आपकी दो बतलाई, ब्राह्मी और सुन्दरी कहलाई।
उनको भी विद्या सिखलाई, अक्षर और गिनती बतलाई॥9॥
एक दिन राज सभा के अन्दर, एक अप्सरा नाच रही थी।

आयु बहुत थोड़ी थी बाकी, इसलिए वह थी थोड़ा नाची॥10॥
जभी मर गई जिसे देख कर, झट आया वैराग्य उमड़कर।
बेटों को झट पास बुलाया, राजपाट सब में बँटवाया॥11॥
छोड़ सभी झंझट संसारी, वन जाने की करी तैयारी।
राव हजारों साथ सिधाये, राजपाट तज वन को धाये॥12॥
लेकिन जब तुमने तप कीना, सबने अपना रस्ता लीना।
वेष दिगम्बर तजकर सबने, छाल आदि के कपड़े पहिने॥13॥
भूख प्यास से जब घबराये, फल आदिक खा भूख मिटाये।
और धर्म इस भाँति फैलाये, जो अब दुनिया में दिखलाये॥14॥
छै महीने तक ध्यान लगाये, फिर भोजन करने को आये।
भोजन विधि जाने नहीं कोई, कैसे प्रभु का भोजन होई॥15॥
इसी तरह बस चलते चलते, छै महीने भोजन को बीते।
नगर हस्तिनापुर में आये, राजा सोम श्रेयांस बताये॥16॥
याद तभी पिछला भव आया, तुमको फौरन ही पड़गाया।
रस गन्ने का तुमने पाया, दुनिया को उपदेश सुनाया॥17॥
तप कर केवल ज्ञान उपाया, मोक्ष गये सब जग हर्षाया।
अतिशय युक्त तुम्हारा मन्दिर, एक है मरसलगंज के अन्दर॥18॥
उसका यह अतिशय बतलाया, कष्ट क्लेश का होय सफाया।
मानतुंग पर दया दिखाई, जंजीरें सब काट गिराई॥19॥
राज सभा में नाम बढ़ाया, जैन धर्म जग में फैलाया।
मुझ पर भी महिमा दिखलाओ, कष्ट चन्द्र का दूर भगाओ॥20॥

॥ सोरठा ॥

नित चालीस ही बार, पाठ करे चालीस दिन।
खेवे धूप अपार, मरसलगंज में आय के।।
होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
जिसके नहिं संतान, नाम वंश जग में चले।।

जाप- ॥ ॐ ह्रीं अर्हं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय नमः ॥

श्रीपद्मप्रभ चालीसा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करूँ प्रणाम।
उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम।।
सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार।
पद्मपुरी के पद्म को, मन मन्दिर में धार।।

॥ चौपाई ॥

जय श्री पद्मप्रभ गुणधारी, भविजन को तुम हो हितकारी।
देवों के तुम देव कहाओ, पाप भक्त के दूर हटाओ।।1॥
तुम जग में सर्वज्ञ कहायो, छूटे तीर्थकर कहलाओ।
तीन काल तिहुँ जग की जानो, सब बातें क्षण में पहचानों।।2॥
वेष दिगम्बर धारण हारे, तुम से कर्म शत्रु भी हारे।
मूर्ति तुम्हारी कितनी सुन्दर, दृष्टि सुखद जमती नासा पर।।3॥
क्रोध मान मद लोभ भगाया, राग द्वेष का लेश न पाया।
वीतराग तुम कहलाते हो, सब जग के मन को भाते हो।।4॥
कौशाम्बी नगरी कहलाये, राजा धारण जी बतलाये।
सुन्दर नाम सुसीमा उनके, जिनके उर से स्वामी जन्मे।।5॥

(373)

कितनी लम्बी उमर कहाई, तीस लाख पूरब बतलाई।
इक दिन हाथी बँधा निरख कर, झट आया वैराग्य उमड़कर।।6॥
कार्तिक सुदी त्रयोदशि भारी, तुमने मुनि पद दीक्षा धारी।
सारे राजपाट को तज के, तभी मनोहर वन में पहुँचे।।7॥
तप कर केवल ज्ञान उपाया, चैत सुदी पूनम कहलाया।
एक सौ दस गणधर बतलाये, मुख्य वज्र चामर कहलाये।।8॥
लाखों मुनि आर्यिका लाखों, श्रावक और श्राविका लाखों।
असंख्यात तिर्यञ्च बताये, देवी देव गिनत नहीं पाये।।9॥
फिर सम्मेदशिखर पर जाकर, शिव-रमणी को ली परणाकर।
पंचम काल महा दुखदाई, जब तुमने महिमा दिखलाई।।10॥
जयपुर राज ग्राम बाड़ा है, स्टेशन शिवदासपुरा है।
मूला नाम जाट का लड़का, घर की नींव खोदने लागा।।11॥
खोदत खोदत मूर्ति दिखाई, उसने जनता को बतलाई।
चिह्न कमल लख लोग लुगाई, पद्मप्रभु की मूर्ति बताई।।12॥
मन में अति हर्षित होते हैं, अपने दिल का मल धोते हैं।
तुमने यह अतिशय दिखलाया, भूत प्रेत को दूर भगाया।।13॥
भूत-प्रेत दुःख देते जिसको, चरणों में लेते हो उसको।
जब गंधोदक छींटे मारे, भूत प्रेत तब आप बकारे।।14॥
जपने से प्रभु नाम तुम्हारा, भूत प्रेत सब करे किनारा।
ऐसी महिमा बतलाते हैं, अन्धे भी आँखें पाते हैं।।15॥

(374)

प्रतिमा श्वेत वर्ण कहलाये, देखत ही हिरदय को भाये।
 ध्यान तुम्हारा जो धरता है, इस भव से वह नर तरता है॥16॥
 अन्धा देखे गूंगा गावे, लँगड़ा पर्वत पर चढ़ जावे।
 बहरा सुन-सुन कर खुश होवे, जिस पर कृपा तुम्हारी होवे॥17॥
 मैं हूँ स्वामी दास तुम्हारा, मेरी नैय्या कर दो भव पारा।
 चालीसे को चन्द्र बनावे, पद्मप्रभ को शीश नवावें॥18॥
 पूरनमल रचकर चालीसा, हे प्रभु ! तोहि नवावत शीशा॥

॥ सोरठा ॥

नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन।
 खेय सुगन्ध अपार, पद्मपुरी में आय के॥
 होय कुबेर समान, जनम दरिद्री होय जो।
 जिसके नहिं संतान, नाम वंश जग में चले॥
 ॥ जाप-ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः ॥

श्रीचन्द्रप्रभ चालीसा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करुं प्रणाम।
 उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम॥
 सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार।
 चन्द्रपुरी के चन्द्र को, मन मन्दिर में धार॥
 ॥ चौपाई ॥
 जय-जय स्वामी श्री जिन चन्दा, तुमको निरख भये आनन्दा।
 तुम हो प्रभु देवन के देवा, करूँ तुम्हारे पद की सेवा॥1॥
 वेश दिगम्बर कहलाता है, सब जग के मन को भाता है।

(375)

नाशा पर है दृष्टि तुम्हारी, मोहनि मूरति कितनी प्यारी॥2॥
 तीन लोक की बातें जानों, तीन काल क्षण में पहचानो।
 नाम तुम्हारा कितना प्यारा, भूत प्रेत सब करें निवारा॥3॥
 तुम जग में सर्वज्ञ कहाओ, अष्टम तीर्थकर कहलाओ।
 महासेन जो पिता तुम्हारे, लक्ष्मणा के दिल के प्यारे॥4॥
 तज वैजंत विमान सिधाये, लक्ष्मणा के उर में आये।
 पोष वदी एकादश नामी, जन्म लिया चन्दा प्रभु स्वामी॥5॥
 मुनि समन्तभद्र थे स्वामी, उन्हें भस्म व्याधि बीमारी।
 वैष्णव धर्म जभी अपनाया, अपने को पण्डित कहलाया॥6॥
 कहा राव से बात बताऊँ, महादेव को भोग खिलाऊँ।
 प्रतिदिन उत्तम भोजन आवे, उसको मुनि छिपाकर खावे॥7॥
 इसी तरह निज रोग भगाया, बन गई कंचन जैसी काया।
 इक लड़के ने पता चलाया, फौरन राजा को बतलाया॥8॥
 तब राजा फरमाया मुनि को, नमस्कार करो शिवपिंडी को।
 राजा से तब मुनि जी बोले, नमस्कार पिंडी नहीं झेले॥9॥
 राजा ने जंजीर मंगाई, उस शिवपिंडी में बंधवाई।
 मुनि ने स्वयंभू पाठ बनाया, पिंडी फटी अचम्भा छाया॥10॥
 चन्द्रप्रभु की मूर्ति दिखाई, सब ने जय-जयकार मनाई।
 नगर फिरोजाबाद कहाये, पास नगर चन्दवार बताये॥11॥
 चन्द्रसैन राजा कहलाया, उस पर दुश्मन चढ़कर आया।
 राव तुम्हारी स्तुति गाई, सब फौजों को मार भगाई॥12॥

(376)

दुश्मन को मालूम हो जावे, नगर घेरने फिर आ जावे।
 प्रतिमा जमना में पधराई, नगर छोड़कर परजा धाई॥13॥
 बहुत समय ही बीता है कि, एक यती को सपना दीखा।
 बड़े जतन से प्रतिमा पाई, मन्दिर में लाकर पधराई॥14॥
 वैष्णवों ने चाल चलाई, प्रतिमा लक्ष्मण की बतलाई।
 अब तो जैनी जन घबरावें, चन्द्र प्रभु की मूर्ति बतावें॥15॥
 चिह्न चन्द्रमा का बतलाया, तब स्वामी तुमको था पाया।
 सोनागिरि में सौ मन्दिर हैं, एक से बढ़कर एक सुन्दर हैं॥16॥
 समवशरण था यहाँ पर आया, चन्द्र प्रभु उपदेश सुनाया।
 चन्द्रप्रभु का मन्दिर भारी, जिसको पूजे सब नर-नारी॥17॥
 सात हाथ की मूर्ति बताई, लाल रंग प्रतिमा बतलाई।
 मन्दिर और बहुत बतलाये, शोभा वरणत पार न पाये॥18॥
 पार करो मेरी यह नैया, तुम बिन कोई नहीं खिवैया।
 प्रभु मैं तुमसे कुछ नहीं चाहूँ, भव-भव में दर्शन पाऊँ॥19॥
 मैं हूँ स्वामी दास तिहारा, करो नाथ अब तो निस्तारा।
 स्वामी आप दया दिखलाओ, चन्द्रदास को चन्द्र बनाओ॥20॥

॥ सोरठा ॥

नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन।
 खेय सुगन्ध अपार, चन्द्रपुरी में आय के॥
 होय कुबेर समान, जनम दरिद्री होय जो।
 जिसके नहीं संतान, नाम वंश जग में चले॥

॥ जाप-ॐ ह्रीं अर्ह श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय नमः॥

(377)

श्रीचन्द्रप्रभ चालीसा तिजारा

वीतराग सर्वज्ञ जिन, जिनवाणी को ध्याय,
 लिखने का साहस करूँ, चालीसा सिर नाय।
 देहरे के श्री चन्द्र को, पूजो मन वच काय,
 रिद्धि सिद्धि मंगल करें, विघ्न दूर हो जाय॥

॥ चौपाई ॥

जय श्रीचन्द्र दया के सागर, देहरे वाले ज्ञान उजागर।
 शान्ति छवि मूरति अति प्यारी, भेष दिगम्बर धारा भारी॥1॥
 नासा पर है दृष्टि तुम्हारी, मोहनी मूरति कितनी प्यारी।
 देवों के तुम देव कहावो, कष्ट भक्त के दूर हटावो॥2॥
 समन्तभद्र मुनिवर ने ध्याया, पिंडी फटी दर्श तुम पाया।
 तुम जग में सर्वज्ञ कहावो, अष्टम तीर्थकर कहलावो॥3॥
 महासेन के राजदुलारे, मात सुलक्षणा के हो प्यारे।
 चन्द्रपुरी नगरी अति नामी, जन्म लिया चन्द्रप्रभ स्वामी॥4॥
 पौष वदी ग्यारस को जन्मे, नर नारी हरषे तब मन में।
 काम क्रोध तृष्णा दुखकारी, त्याग सुखद मुनि दीक्षा धारी॥5॥
 फाल्गुन वदी सप्तमी भाई, केवल ज्ञान हुआ सुखदाई।
 फिर सम्मेद शिखर पर जाके, मोक्ष गये प्रभु आप वहाँ से॥6॥
 लोभ मोह और छोड़ी माया, तुमने मान कषाय नसाया।
 रागी नहीं, नहीं तू द्वेषी, वीतराग तू हित उपदेशी॥7॥
 पंचम काल महा दुखदाई, धर्म कर्म भूले सब भाई।
 अलवर प्रान्त में नगर तिजारा, होय जहाँ पर दर्शन प्यारा॥8॥

(378)

उत्तर दिशि से देहरा माहीं, वहाँ आकर प्रभुता प्रगटाई।
 सावन सुदी दशमी शुभनामी, आन पधारे त्रिभुवन स्वामी॥9॥
 चिह्न चन्द्र का लख नर-नारी, चन्द्रप्रभु की मूर्ति मानी।
 मूर्ति आपकी अति उजियाली, लगता हीरा भी है जाली॥10॥
 अतिशय चन्द्रप्रभु का भारी, सुनकर आते यात्री भारी।
 फाल्गुन सुदी सप्तमी प्यारी, जुड़ता है मेला यहाँ भारी॥11॥
 कहलाने को तो शशि धर हो, तेज पुञ्ज रवि से बढ़कर हो।
 नाम तुम्हारा जग में साँचा, ध्यावत भागत भूत पिशाचा॥12॥
 राक्षस भूत प्रेत सब भागें, तुम सुमरत भय कभी न लागे।
 कीर्ति तुम्हारी है अति भारी, गुण गाते नित नर और नारी॥13॥
 जिस पर होती कृपा तुम्हारी, संकट झट कटता है भारी।
 जो भी जैसी आस लगाता, पूरी उसे तुरत कर पाता॥14॥
 दुखिया दर पर जो आते हैं, संकट सब खोकर जाते हैं।
 खुला सभी को प्रभु द्वार है, चमत्कार को नमस्कार है॥15॥
 अन्धा भी यदि ध्यान लगावे, उसके नेत्र शीघ्र खुल जावें।
 बहरा भी सुनने लग जावे, पगले का पागलपन जावे॥16॥
 अखण्ड ज्योति का घृत जो लगावे, संकट उसका सब कट जावे।
 चरणों की रज अति सुखकारी, दुख दरिद्र सब नाशन हारी॥17॥
 चालीसा जो मन में ध्यावे, पुत्र पौत्र सब सम्पत्ति पावै।
 पार करो दुखियों की नैया, स्वामी तुम बिन नहीं खिवैया॥18॥
 प्रभु मैं तुमसे कुछ नहीं चाहूँ, दर्श तिहारा निशदिन पाऊँ ॥

॥ दोहा ॥
 करूँ वन्दना आपकी, श्री चन्द्र प्रभ जिनराज।
 जंगल में मंगल कियो, रखो 'सुरेश' की लाज॥
 ॥ जाप-३ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः ॥

श्री पुष्पदन्त चालीसा

दुःख से तप्त मरुस्थल भव में, सघन वृक्ष सम छायाकार।
 पुष्पदन्त पद-छत्र-छाँव में, हम आश्रय पावें सुखकार॥1॥
 जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में, काकन्दी नामक नगरी में।
 राज्य करें सुग्रीव बलधारी, जयरामा रानी थी प्यारी॥2॥
 नवमी फाल्गुन कृष्ण बखानी, षोडश स्वप्न देखती रानी।
 सुत तीर्थकर गर्भ में आए, गर्भ कल्याणक देव मनायें॥3॥
 प्रतिपदा मंगसिर उजियारी, जन्मे पुष्पदन्त हितकारी।
 जन्मोत्सव की शोभा न्यारी, स्वर्गपुरी सम नगरी प्यारी॥4॥
 आयु थी दो लक्ष पूर्व की, ऊँचाई शत एक धनुष की।
 थामी जब राज्य बागडोर, क्षेत्र वृद्धि हुई चहुँ ओर॥5॥
 इच्छाएँ थी उनकी सीमित, मित्र प्रभु को हुए असीमित।
 एक दिन उल्कापात देखकर, दृष्टिपात किया जीवन पर॥6॥
 स्थिर कोई पदार्थ ना जग में, मिले ना सुख किंचित् भव मग में।
 ब्रह्मलोक से सुरगण आये, जिनवर का वैराग्य बढ़ाये॥7॥
 'सुमति' पुत्र को देकर राज, शिविका में प्रभु गये विराज।
 पुष्पक वन में गये हितकार, दीक्षा ली संगभूप हजार॥8॥

गये शैलपुर दो दिन बाद, हुआ आहार वहाँ निराबाध।
 पात्रदान से हर्षित होकर, पंचाश्चर्य करें सुर आकर॥9॥
 प्रभुवर लौट गये उपवन को, तत्पर हुये कर्म-छेदन को।
 लगी समाधि नाग वृक्ष तल, केवलज्ञान उपाया निर्मल॥10॥
 इन्द्राज्ञा से समोशरण की, धनपति ने आकर रचना की।
 दिव्य देशना होती प्रभु की, ज्ञान पिपासा मिटी जगत की॥11॥
 अनुप्रेक्षा द्वादश समझाई, धर्म स्वरूप विचारो भाई।
 शुक्लध्यान की महिमा गाई, शुक्लध्यान से हों शिवराई॥12॥
 चारों भेद सहित धारों मन, मोक्षमहल में पहुँचो तत्क्षण।
 मोक्षमार्ग दर्शाया प्रभु ने, हर्षित हुए सकल जन मन में॥13॥
 इन्द्र करें प्रार्थना जोड़ कर, सुखद विहार हुआ श्री जिनवर।
 गये अन्त में शिखर सम्मेद, ध्यान में लीन हुए निरखेद॥14॥
 शुक्लध्यान से किया कर्मक्षय, सन्ध्या समय पाया पद अक्षय।
 भादव अष्टमी शुक्ल महान, मोक्ष कल्याणक करें सुर आन॥15॥
 सुप्रभ कूट की करते पूजा, सुविधि नाथ नाम है दूजा।
 'मगरमच्छ' है चिह्न प्रभु का, मंगलमय जीवन था उनका॥16॥
 शिखर सम्मेद में भारी अतिशय, प्रभु प्रतिमा है चमत्कारमय।
 कलियुग में भी आते देव, प्रतिदिन नृत्य करें स्वयमेव॥17॥
 घुँघरु की झँकार गूँजती, सबके मन को मोहित करती।
 ध्वनि सुनी हमने कानों से, पूजा की बहु उपमानों से॥18॥
 हमको है ये दृढ़ श्रद्धान, भक्ति से पायें शिवथान।
 भक्ति में शक्ति है न्यारी, राह दिखायें करुणाधारी॥19॥

पुष्पदन्त गुणगान से, निश्चित हो कल्याण।
 'अरुणा' अनुक्रम से मिले, अन्तिम पद निर्वाण॥20॥

॥ जाप्य : ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय नमः ॥

श्री वासुपूज्य चालीसा

वासुपूज्य महाराज का चालीसा सुखकार।
 विनय प्रेम से बाँचिये करके ध्यान विचार॥

॥ चौपाई ॥

जय श्री वासुपूज्य सुखकारी, दीन दयाल बाल ब्रह्मचारी।
 अद्भुत चम्पापुर रजधानी, धर्मी न्यायी ज्ञानी दानी॥1॥
 वासुपूज्य यहाँ के थे राजा, करते राज काज निष्काजा।
 आपस में सब प्रेम बढ़ाते, बारह शुद्धभावना भाते॥2॥
 गऊ शेर आपस में मिलते, तीनों मौसम सुख में कटते।
 सब्जी फल घी दूध हों घर-घर, आते जाते मुनि निरन्तर॥3॥
 वस्तु समय पर होती सारी, जहाँ न हों चोरी बीमारी।
 जिन मन्दिर पर ध्वजा फैरायें, घण्टे घरनावल झन्नायें॥4॥
 शोभित अतिशयमयी प्रतिमायें, मन वैराग्य देख छा जाये।
 पूजन दर्शन न्हवन करायें, करें आरती दीप जलायें॥5॥
 राग रागनी गायन गाये, तरह-तरह के साज बजायें।
 कोई अलौकिक नृत्य दिखाये, श्रावक भक्ति में भर जायें॥6॥
 होती निशदिन शास्त्र सभायें, पद्मासन करते-स्वाध्यायें।
 विषय कषायें पाप नशायें, संयम नियम विवेक सुहाये॥7॥

रागद्वेष अभिमान नशाते, गृहस्थी त्यागी धर्म निभाते ।
मिटें परिग्रह सब तृष्णायें, अनेकान्त दश धर्म रमायें ॥8॥
छठ आषाढ़ वदी उर आये, विजया रानी भाग्य जगायें ।
सुन रानी से सोलह सुपने, राजा मन में लगे हरषाने ॥9॥
तीर्थकर लें जन्म तुम्हारे, होंगे अब उद्धार हमारे ।
तीनों वक्त नित रत्न बरसाते, विजया माँ के आँगन भरते ॥10॥
साढ़े दस करोड़ थी गिनती, परजा अपनी झोली भरती ।
फागुन चौदस वदी जन्माये, सुरपति अद्भुत जिन गुण गाये ॥11॥
मति श्रुति अवधि ज्ञान भंडारी, चालीस गुण सब अतिशय धारी ।
नाटक ताण्डव नृत्य दिखायें, नव भव प्रभुजी के दरशायें ॥12॥
पाण्डु शिला पर न्हवन करायें, वस्त्राभूषण वदन सजायें ।
सब जग उत्सव हर्ष मनायें, नारी नर सुर झूला झुलायें ॥13॥
बीते सुख में दिन बचपन के, हुए अठारह लाख वर्ष के ।
आप बारहवें हो तीर्थकर, भैसा चिह्न आपका जिनवर ॥14॥
धनुष पचास वदन केशरिया, निस्पृह पर उपकार करइया ।
दर्शन पूजा जप तप करते, आत्म चिन्तवन में नित रमते ॥15॥
गुरु मुनियों का आदर करते, पाप विषय भोगों से बचते ।
शादी अपनी नहीं कराई, हारे तात मात समझाई ॥16॥
मात पिता राज तज दीने, दीक्षा ले दुद्धर तप कीने ।
माघ सुदी दोयज दिन आया, केवलज्ञान आपने पाया ॥17॥

समवशरण सुर रचे जहाँ पर, छयासठ उसमें रहते गणधर ।
 वासुपूज्य की खिरती वाणी, जिसको गणधरवों ने जानी ॥18॥
 मुख से उनके वो निकली थी, सब जीवों ने वह समझी थी ।
 आपा आप आप प्रगटावा, निज गुण ज्ञान ज्ञान चमकाया ॥19॥
 पथ भूलों को राह दिखाई, रत्नत्रय की जोत जलाई ।
 आतम गुण अनुभव करवाया, सुमत जैन मत जग फैलाया ॥20॥
 सुदी भादवा चौदश आई, चम्पा नगरी मुक्ति पाई ।
 आयु बहत्तर लाख वर्ष की, बीती सारी हर्ष धर्म की ॥21॥
 और चौरानवें थे श्री मुनिवर, पहुँच गये वो भी सब शिवपुर ।
 तभी तहाँ इन्दर सुर आये, उत्सव मिल निर्वाण मनाये ॥22॥
 देह उड़ी कर्पूर समाना, मधुर सुगन्धी फैली नाना ।
 फैलाई रत्नों की माला, चारों दिश चमके उजियाला ॥23॥
 कहै 'सुमत' क्या गुण जिन राई, तुम पर्वत हो मैं हूँ राई ।
 जब ही भक्ति भाव हुआ है, चम्पापुर का ध्यान किया है ॥24॥
 लगी आश मैं भी कभी जाऊँ, वासुपूज्य के दर्शन पाऊँ ।

॥ सोरठा ॥

खेय धूप सुगन्ध, वासुपूज्य प्रभु ध्याय के ।
 कर्म भार सब तार, रूप-स्वरूप निहार के ॥
 मति जो मन में होय, रहें वैसी ही गति आय के ।
 करो सुमत रसपान, सरल निजागम पाय के ॥

॥ जाप-ॐ ह्रीं अर्ह श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः ॥

(381-सी)

श्री शान्तिनाथ चालीसा

॥ दोहा ॥

शान्तिनाथ महाराज का, चालीसा सुखकार ।
 मोक्ष प्राप्ति के लिए, कहूँ सुनो चित्तधार ॥
 चालीसा चालीस दिन तक, कह चालीस बार ।
 बड़े जगत सम्पन्न, सुमत, अनुपम शुद्ध विचार ॥

॥ चौपाई ॥

शान्तिनाथ तुम शान्तिनाथक, पञ्चम चक्री जग सुखदायक ।
 तुम्हीं सोलवें हो तीर्थकर, पूजें देव भूप सुर गणधर ॥1॥
 पञ्चाचार गुणों के धारी, कर्म रहित आठों गुणकारी ।
 तुमने मोक्ष मार्ग दर्शाया, निज गुण ज्ञान भानु प्रगटाया ॥2॥
 स्याद्वाद विज्ञान उचारा, आप तिरे औरन को तारा ।
 ऐसे जिन को नमस्कार कर, चढ़ूँ सुमत शान्ति नौका पर ॥3॥
 सूक्ष्म सो कुछ गाथा गाता, हस्तिनापुर जग में विख्याता ।
 विश्वसेन ऐरा पितु, माता, सुर तिहुँ काल रत्न वर्षाता ॥4॥
 साढ़े दस करोड़ नित गिरते, ऐरा माँ के आँगन भरते ।
 पन्द्रह माह तक हुई लुटाई, ले गये भर-भर लोग लुगाई ॥5॥
 भादों वदी सप्तमी गर्भाते, उत्तम सोलह स्वप्न आते ।
 सुर चारों कायों के आये, नाटक गायन नृत्य दिखाये ॥6॥
 सेवा में जो रही देवियाँ, रखती खुश माँ को दिन रतियाँ ।
 जन्म जेठ वदी चौदस के दिन, घण्टे अनहद बजे गगन घन ॥7॥

(382)

तीनों ज्ञान लोक सुखदाता, मंगल सकल हर्ष गुण लाता।
 इन्द्र देव सुर सेवा करते, विद्या कला ज्ञान गुण बढ़ते।।8।।
 अंग अंग सुन्दर मनमोहन, रत्न जड़ित तन वस्त्राभूषण।
 बल विक्रम यश वैभव काजा, जीते छहों खण्ड के राजा।।9।।
 न्यायवान दानी उपकारी, परजा हर्षित निर्भय सारी।
 दीन अनाथ दुःखी नहीं कोई, होती उत्तम वस्तु बोई।।10।।
 ऊँचे आप साठ सौ गज थे, वदन स्वर्ण और चिह्न हिरण थे।
 शक्ति ऐसी थी जिनस्वामी, बरीं हजार छियानवें रानी।।11।।
 लख चौरासी हाथी रथ थे, घोड़े क्रोड अठारह शुभ थे।
 सहस पचास भूप के राजन, अरबों सेवा में सेवक जन।।12।।
 तीन करोड़ थी सुन्दर गइयाँ, इच्छा पूर्ण करें नौ निधियाँ।
 चौदह रत्न व चक्र सुदर्शन, उत्तम भोग वस्तुयें अनगिन।।13।।
 थीं अड़तालिस करोड़ ध्वजायें, कुण्डल चन्द्र सूर्य सम छाये।
 अमृतगर्भ नाम का भोजन, लाजवाब ऊँचा सिंहासन।।14।।
 लाखों मन्दिर भवन सुसज्जित, नार सहित तुम जिनमें शोभित।
 जितना सुख था शांतिनाथ को, अनुभव होता ज्ञानवान को।।15।।
 चल जीव को त्याग धर्म पर, मिलें ठाठ उनको ये सुखकर।
 पच्चिस सहस वर्ष सुख पाकर, उमड़ा त्याग हितंकर तुम पर।।16।।
 जग तुमने क्षणभंगुर जाना, वैभव सब सुपने सम जाना।
 ज्ञानोदय जब हुआ तुम्हारा, पाये शिवपुर तज संसारा।।17।।

कामी मनुज काम को त्यागे, पापी पाप करम से भागे।
 सुत नारायण तख्त बिठया, तिलक चढ़ा अभिषेक कराया।।18।।
 नाथ आपको बिठा पालकी, देव चले ले राह गगन की।
 इत उत इन्दर चंवर दुरावें, मंगल गाते वन पहुँचावें।।19।।
 भेष दिगम्बर अपना कीना, केशलोंच पंच मुष्ठी कीना।
 पूर्ण हुआ उपवास छठा जब, शुद्धाहार चले लेने तब।।20।।
 कर तीनों वैराग चिंतवन, चारों ज्ञान किये सम्पादन।
 चार हाथ मग लखते चलते, षट्कायिक की रक्षा करते।।21।।
 मनहर मीठे वचन उचरते, प्राणी मात्र का दुखड़ा हरते।
 नाशवान काया यह प्यारी, इससे ही यह रिश्तेदारी।।22।।
 इससे मात पिता सुत नारी, इनके कारण फिरे दुखारी।
 गर यह तन ही प्यारा लगता, तरह-तरह का रहेगा मिलता।।23।।
 तज नेह काया माया का, हो भरतार मोक्ष दारा का।
 विषय भोग सब दुख के कारण, त्याग धर्म ही शिव के साधन।।24।।
 निधि लक्ष्मी जो कोई त्यागे, उसके पीछे-पीछे भागे।
 प्रेम रूप जो इसे बुलावे, उसके पास कभी नहीं आवे।।25।।
 करने को जग का निस्तारा, छहों खण्ड का राज विसारा।
 देवी देव सुरासुर आये, उत्सव तप कल्याण मनाये।।26।।
 पूजन नृत्य करें नत मस्तक, गाई महिमा प्रेमपूर्वक।
 करते तुम आहार जहाँ पर, देव रतन वर्षाते उस घर।।27।।
 जिस घर दान पात्र को मिलता, घर वह नित्य फूलता फलता।
 आठों गुण सिद्धों के ध्याकर, दशों धर्म चित काय तपाकर।।28।।

केवल ज्ञान आपने पाया, लाखों प्राणी पार लगाया।
 समवशरण में ध्वनि विखराई, प्राणी मात्र की समझ में आई॥29॥
 समवशरण प्रभु का जहाँ जाता, कोस चार सौ तक सुख पाता।
 फूल फलादिक मेवा आती, हरी भरी खेती लहराती॥30॥
 सेवा में छत्तीस थे गणधर, महिमा मुझसे क्या हो वर्णन।
 नकुल, सर्प मृग हरि से प्राणी, प्रेम सहित मिल पीते पानी॥31॥
 आप चतुरमुख विराजमान थे, मोक्ष मार्ग को दिव्यवान थे।
 करते आप विहार गगन में, अन्तरीक्ष थे समवशरण में॥32॥
 तीनों जग आनन्दित कीने, हित उपदेश हजारों दीने।
 पौने लाख बरस हित कीना, उम्र रही जब एक महीना॥34॥
 श्री सम्मेदशिखर पर आये, अजर अमर पद तुमने पाये।
 निष्पृह कर उद्धार जगत के, गये मोक्ष तुम लाख बरस के॥35॥
 आंक सकें क्या छवि ज्ञान की, जोत सूर्य सम अटल आपकी।
 बहे सिन्धु सम गुण की धारा, रहे 'सुमत' चित नाम तुम्हारा॥36॥

॥ सोरठ ॥

नित चालीसहिं बार, पाठ करें चालीस दिन।
 खेवे धूप सुसार, शान्तिनाथ के सामने॥
 होवे चित्त प्रसन्न, भय चिन्ता शंका मिटै।
 पाप होय सब हन्न, बल विद्या वैभव बढ़े॥

॥ जाप-ॐ ह्रीं अर्हं सर्वं शान्तिकराय श्रीशान्तिनाथाय नमः॥

(385)

श्री कुन्थुनाथ चालीसा

कुन्थुनाथ भगवान का, चालीसा सुखकार।
 चालीस दिन नित प्रेम से, पढ़िये चालीस बार॥
 तीर्थ वन्दना के समय, करिये इसका पाठ।
 दुःख, चिन्ता, बाधा मिटें, छाएँ 'सुमत' विचार॥

॥ चौपाई ॥

जय श्री कुन्थुनाथ तीर्थकर, हस्तिनापुर के चक्रेश्वर।
 सोलहकारण भावन चित धर, तुम सर्वार्थसिद्ध से चलकर॥
 दशमी श्रावण सुदी हितंकर, आये श्रीमती माता के उर।
 छप्पन सेवा करें देवियाँ, हर्षायें माँ को दिन रतियाँ॥
 महिमा क्या कह सकें गरभ की, वर्षा हो तिहुँ बार रतन की।
 साढ़े दस करोड़ नित गिरते, सूर्यसैन नृप के घर भरते॥
 एकम सुदी बैसाख की आई, कुरुवंश जन्मे जिनराई।
 मनहर बाजे बजे बजाये, इन्द्राणी सुर इन्दर आये॥
 गायन अद्भुत नृत्य दिखाये, पाण्डु शिला पर न्हवन कराये।
 इन्द्र ने जब शृंगार कराये, सहस नेत्र लख नहीं अघाये॥
 सुख पाये सारे चक्री के, भूपति छहों खण्ड भूमी के।
 रमन छवी नव निधी सहाई, सहस छानवें नार रिझाई॥
 भोगे भोग सतधर्मपूर्वक, पौने चौबीस सहस वर्ष तक।
 पैतिस धनुष वदन सम सुवरण, चिह्न बने बकरे के चरन॥
 पूरव भव स्मरण हुआ था, कुन्थुनाथ वैराग्य लिया था।
 कीना तप दुद्धर जिनराजा, दीक्षित और सहस थे राजा॥

(386)

इन्द्रदेव सुर नर सब आये, नृत्य कला दर्शा गुण गाये।
 चैत सुदी दिन तीज का आया, केवलज्ञान कुन्थु ने पाया॥
 नव लब्धि दश अतिशय पाये, चौदह अतिशय देव रचाये।
 कर प्रभु ने गमन गगन में, वाणी खिराई समवशरण में॥
 चार चार सौ कोस चकोरा, मौसम उत्तम हो चहुँ ओरा।
 समवशरण को देव रचावें, सबके लिए स्थान बनावें॥
 पैतिस थे सेवा में गणधर, समझें सब उपदेश हितंकर।
 पाँच वर्ष कम लाख वर्ष के, सिद्ध हुये जब अघ तम हर के॥
 उन्नीस वर्ष कठिन तप धारे, आप तरे औरन को तारे।
 इकम सुदि बैसाख की आई, तुमने मुक्ति वधू अपनाई॥
 आप सतरहवें थे तीर्थंकर, गये मोक्ष सम्मेशिखर पर।
 गुण सागर क्या जायें बखाने, हैं सूरज को दीप दिखाने॥
 उनके वचन आप अपनायें, अपना आवागमन मिटायें।
 काल अनादि बीते भटके, अनगिन कष्ट उठाते भव के॥
 जैनागम अपना अपनायें, विषय कषायें पाप मिटायें।
 अपना आपा आप चितायें, निजानन्द रस पियें पिलायें॥
 चालीसा यह पढ़ें पढ़ायें, स्याद्वाद पर चलें चलायें।
 क्रोध, लोभ, मोह माया नाशै, अद्भुत 'सुमत' स्वरूप प्रकाशै॥

॥ सोरठा ॥

नित चालीसहिं बार, पाठ करें चालीस दिन।
 खेये धूप सुसार, हस्तिनागपुर आय के॥
 वन्दे नशियाँ सार, पूजन मन्दिर में करें।
 उपजे 'सुमत' विचार मन वाँछित कारज सरे॥

जाप-ॐ ह्रीं अहं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय नमः॥

(387)

श्री अरनाथ चालीसा

अरनाथ महाराज का, चालीसा हितकार।
 चालीस दिन तुम प्रेम से, बोलो चालीस बार॥
 दर्शन को चलते समय, कहो कहाओ आप।
 दुःख चिन्ता बाधा मिटें, उपजें 'सुमत' विचार॥

॥ चौपाई ॥

जय श्री अरनाथ तीर्थंकर, हस्तिनापुर के चक्रेश्वर।
 कुरुवंशी तुम जगोपकारी, तीनों काल लोक हितकारी॥
 पिता सुदर्शन ज्ञानी दानी, मात मित्रसेना पटरानी।
 फागुन सुदी तीज दिन आये, अरनाथ माता गर्भाये॥
 इन्द्र देव सुर नर हर्षाये, उत्सव गर्भ कल्याण मनाये।
 पन्द्रह मास रतन वर्षाये, प्राणीमात्र महा सुख पाये॥
 मंगसिर शुक्ला चौदश आई, अरनाथ जन्मे सुखदाई।
 इन्द्र देव सब सुरगण आये, गुण गायक अतिशय दिखलाये॥
 ऐरावत प्रभु को पधराये, मेरु शिखर पर न्हवन कराये।
 क्षीरोदधि से सुर जल लाये, सहस्र अठारह कलश दुराये॥
 इतने सुर दल वहाँ खड़े थे, बिन गन्धोदक बहुत रहे थे।
 सब शृंगार इन्द्राणी कीने, माता को आ सची दे दीने॥
 इक्किस सहस्र वर्ष कुँवर रह, जगोपकारता कीनी निस्पृहे।
 इक्किस सहस्र वर्ष तक शासन, कीना बन सुखदाई राजन॥
 फिर छः खण्ड अखण्ड विजय की, इक्किस सहस्र वर्ष थे चक्री।
 मंगसिर सुदि दशमी दिन आया, देखी फटती बादल छाया॥

(388)

मन में झट वैराग समाया, छोड़ी सब चक्री की माया ।
 धन्य धन्य तुम अरनाथ जी, महिमा क्या गा सकें आपकी ॥
 वदन मोहनी स्वर्ण वर्ण था, मछली का शुभ चिह्न वर्ण था ।
 तन धन जग क्षण भंगुर जाना, संयम त्याग अमोलक माना ॥
 सोलह सहस्र वर्ष तप कीना, निज गुण आतम अनुभव कीना ।
 तीस धनुष ऊँचे शरीर थे, अलख निरञ्जन धर्म वीर थे ॥
 कार्तिक शुक्ला द्वादश आई, केवलज्ञान हुआ जिनराई ।
 भूख प्यास मल निद्रा भागी, पूरन परोपकारता जागी ॥
 पाँच हजार साल सुखदाई, समवशरण तिष्ठे जिनराई ।
 अपने तीस गणधरों द्वारा, लाखों प्राणी पार उतारा ॥
 दिव्यध्वनी अर्हन्त खिराई, मोक्ष मार्ग निश्चय वर्षाई ।
 चैत सुदी हितकर पन्दरस को, अरनाथ पाये शिव पद को ॥
 उम्र चौरासी सहस्र वर्ष की, गई दिखाते राह धर्म की ।
 ये अट्ठारहवें थे तीर्थकर, दयावान गुणवान हितंकर ॥
 धारें गुणोपदेश तुम्हारे, भाग्योदय हो जायें हमारे ।
 सुख दुख पाप पुण्य मिट जावें, आठों कर्म बन्ध कट जावें ॥

॥ सोरठा ॥

नित चालीस ही बार, पाठ करें चालीस दिन ।
 खेय धूप सुसार, हस्तिनापुर आय के ॥
 ध्यायें निशियाँ सार, चारों मन वच काय से ।
 उपजें सुमत विचार, मन वाँछित कारज सरे ॥
 जाप-ॐ ह्रीं अर्ह श्रीअरनाथजिनेन्द्राय नमः ॥

(389)

श्रीमल्लिनाथ चालीसा

मल्लिनाथ महाराज का, चालीसा मनहार ।
 चालीस दिन तुम नियम से, पढ़िये चालीस बार ॥
 दर्शन को चलते समय, करिये इसका पाठ ।
 दुःख चिन्ता बाधा मिटें, उपजें सुमत विचार ॥

॥ चौपाई ॥

जय श्री मल्लिनाथ जिनराजा, मिथिला नगरी के महाराजा ।
 पिता कुम्भ प्रभावति माता, इक्ष्वाकु कुल जग विख्याता ॥1॥
 तज कर शादी की तैयारी, आकर दीक्षा वन में धारी ।
 अथिर असार समझ जग माया, राजकुमार त्याग मन भाया ॥2॥
 ऐसा तुमने ध्यान लगाया, केवलज्ञान छठे दिन पाया ।
 ऊँचा पच्चीस धनुष वदन था, चिह्न कलश का रंग स्वर्ण था ॥3॥
 दिये उपदेश महान निरन्तर, समवशरण अठाइस गणधर ।
 आयु पचपन सहस्र साल की, बीती पर हित दीनदयाल की ॥4॥
 करते हुए हितकार हितंकर, समवशरण आया हस्तिनापुर ।
 बनी याद में निशियाँ उनकी, दे शिवधाम वन्दना जिनकी ॥5॥
 धन्य धन्य श्री मल्लिजिनेश्वर, मुक्ति गये सम्मेद शिखर पर ।
 पहली निशियाँ शांतिनाथ की, दूजी निशियाँ कुन्धुनाथ की ॥6॥
 तीजी निशियाँ अरनाथ की, चौथी निशियाँ मल्लिनाथ की ।
 पूजे जिनको द्रव्य चढ़ावें, सोलह शुद्ध भावना भावें ॥7॥
 अजब विशाल है मन्दिर मन हित, चार जगह प्रतिमा स्थापित ।

(390)

मानस्तम्भ बने मुख्य द्वार पर, बिम्ब विराजें चौमुख जिस पर ॥८॥
 बीते छः माह करत विहारा, मिलो ठीक तब प्रथम अहारा।
 यहीं दियो श्रेयांस राव ने, यहीं लियो रस आदिनाथ ने ॥९॥
 कष्ट सात सौ मुनि पर आया, आकर विष्णुकुमार हटाया।
 पाण्डव दो इक भव शिव लीनों, बाकी चर्म शरीरी तीनों ॥१०॥
 यहीं द्रौपदी चीर बढ़े थे, कौरव पाण्डव राज किये थे।
 मेरठ जिला श्रीहस्तिनापुर, आते जाते निश दिन मोटर ॥११॥
 बना गुरुकुल सबसे अच्छा, सभी तरह की मिलती शिक्षा।
 स्वस्थ सदाचारी हो रहकर, ज्ञानी गुणी बनें पढ़-पढ़कर ॥१२॥
 होती रहती शास्त्र सभाएँ, जाती रहती मन शंकाएँ।
 ब्रह्मचारी त्यागी गृहस्थी जन, करें करायेँ आत्म चिन्तवन ॥१३॥
 उत्तम छः हों धर्मशालायेँ, नर नारी रह कर सुख पायेँ।
 बिजली लगे नल जल के, सुन्दर पौधे मीठे फल के ॥१४॥
 करें प्रबन्ध मन्त्री जी मैनेजर, बढ़ें अधिक छवि महोत्सवों पर।
 जेठ व कार्तिक निर्वाण के, लड्डू चढ़ते शांति वीर के ॥१५॥
 आयें हजारों बहना भाई, आते जब दिन पर्व अठाई।
 मेला हो कार्तिक में भारी, चीज मिले बाजार में सारी ॥१६॥
 लाता 'सुमत' सदा से पुस्तक, सर्वोपयोगी धर्म प्रचारक।
 दर्शन, पूजा, भजन, आरती, कर कर होते मुदित यात्री ॥१७॥
 परिग्रह त्याग त्याग मन धरते गुण अपने अवलोकन करते।
 मानव धर्म मिला उपयोगी, मत करना ये विषयन भोगी ॥१८॥

तरुणाई मत व्यर्थ लुटाना, वृद्धावस्था मत दुःख उठाना।
 उत्तमोत्तम यह भरी जवानी, निश्चय यही सकल सुखदानी ॥१९॥
 करना मत अपने मन मानी, अच्छी इच्छायें मन लानी।
 रत्नत्रय दश धर्म सुहाना, धर्म कर्म नित 'सुमत' निभाना ॥२०॥

॥ सोरठा ॥

नित चालीस ही बार, पाठ करें चालीस दिन।
 खेय धूप सुसार, हस्तिनापुर में आयके ॥
 ध्यायेँ निशियाँ सार, चारों मन वच काय से।
 उपजेँ सुमत विचार, मन वाँछित कारज सरे ॥

॥ जाप-ॐ ह्रीं अहं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः ॥

श्री मुनिसुव्रतनाथ चालीसा

अरिहन्त सिद्ध आचार्य को करुँ प्रणाम।
 उपाध्याय सर्वसाधु करते स्वपर कल्याण।
 जिनधर्म, जिनागम, जिनमन्दिर पवित्र धाम।
 वीतराग की मूर्ति को कोटि कोटि प्रणाम ॥

जय मुनिसुव्रत दया के सागर, नाम प्रभु का लोक उजागर।
 सुमित्रा राजा के तुम नन्दा, माँ शामा की आँखों के चन्दा ॥१॥
 श्याम वर्ण मूरत प्रभु की प्यारी, गुणगान करें निशदिन नर नारी।
 मुनिसुव्रत जिन हो अन्तर्यामी, श्रद्धा भाव सहित तुम्हें प्रणामी ॥२॥
 भक्ति आपकी जो निशदिन करता, पाप ताप भय संकट हरता।
 प्रभु संकट मोचन नाम तुम्हारा, दीन दुःखी जीवों का सहारा ॥३॥

कोई दरिद्री या तन का रोगी, प्रभु दर्शन से होते हैं निरोगी।
 मिथ्या तिमिर भयो अति भारी, भव भव की बाधा हरो हमारी॥4॥
 यह संसार महा दुःखदाई, सुख नहीं यहाँ दुःख की खाई।
 मोहजाल में फंसा है बंदा, काटो प्रभु भव भव का फन्दा॥5॥
 रोग शोक भय व्याधि मिटावो, भव सागर से पार लगावो।
 घिरा कर्म से चौरासी भटका, मोह माया बंधन में अटका॥6॥
 संयोग-वियोग भव भव का नाता, राग द्वेष जग में भटकाता।
 हित मित प्रिय प्रभु की वाणी, स्वपर कल्याण करें मुनि ध्यानी॥7॥
 भव सागर बीच नाव हमारी, प्रभु पार करो यह विरद तिहारी।
 मन विवेक मेरा अब जागा, प्रभु दर्शन से कर्ममल भागा॥8॥
 नाम आपका जपे जो भाई, लोकालोक सुख सम्पदा पाई।
 कृपादृष्टि जब आपकी होवे, धन आरोग्य सुख समृद्धि पावे॥9॥
 प्रभु चरणन में जो जो आवे, श्रद्धा भक्ति फल वांछित पावे।
 प्रभु आपका चमत्कार है न्यारा, संकट मोचन प्रभु नाम तुम्हारा॥10॥
 सर्वज्ञ अनन्त चतुष्टय के धारी, मन वच तन वंदना हमारी।
 सम्मेद शिखर से मोक्ष सिधारे, उद्धार करो मैं शरण तिहारे॥11॥
 महाराष्ट्र का पैठण तीर्थ, सुप्रसिद्ध यह अतिशय क्षेत्र।
 मनोज्ञ मन्दिर बना है भारी, वीतराग की प्रतिमा सुखकारी॥12॥
 चतुर्थकालीन मूर्ति है निराली, मुनिसुव्रत प्रभु की छवि है प्यारी।
 मानस्तम्भ उत्तंग की शोभा न्यारी, देखत गलत मान कषाय भारी॥
 मुनिसुव्रत शनिग्रह अधिष्ठाता, दुःख संकट हरे देवे सुख साता।
 शनि अमावस की महिमा भारी, दूर-दूर से आते नर-नारी॥14॥

दर्शन कर मन वांछा पाते, प्रभु दर्शन पा मन हर्षाते।
 मुनिसुव्रत दर्शन यहाँ हितकारी, मन वचन तन वंदना हमारी॥15॥
 सम्यक् श्रद्धा से चालीसा, चालीस दिन पढ़िये नर-नारी।
 मुक्ति पथ के राही बन, भक्ति से होवे भव पार॥16॥

॥ जाप्य : ॐ ह्रीं शनिग्रह अरिष्ट निवारक श्री मुनिसुव्रतनाथ
 जिनेन्द्राय नमः॥

श्री पार्श्वनाथ चालीसा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करूँ प्रणाम।
 उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम॥
 सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार।
 अहिच्छत्र और पार्श्व को, मन मन्दिर में धार॥

॥ चौपाई ॥

पारसनाथ जगत हितकारी, हो स्वामी तुम व्रत के धारी।
 सुर नर असुर करें तुम सेवा, तुम ही सब देवन के देवा॥1॥
 तुमसे करम शत्रु भी हारा, तुम कीना जग का निस्तारा।
 अश्वसैन के राजदुलारे, वामा की आँखों के तारे॥2॥
 काशीजी के स्वामी कहाये, सारी परजा मौज उड़ाये।
 इक दिन सब मित्रों को लेके, सैर करन को वन में पहुँचे॥3॥
 हाथी पर कसकर अम्बारी, इक जंगल में गई सवारी।
 एक तपस्वी देख वहाँ पर, उससे बोले वचन सुनाकर॥4॥
 तपसी ! तुम क्यों पाप कमाते, इस लक्कड़ में जीव जलाते।
 तपसी तभी कुदाल उठाया, उस लक्कड़ को चीर गिराया॥5॥

निकले नाग-नागनी कारे, मरने को थे निकट बिचारे ।
रहम प्रभु के दिल में आया, तभी मन्त्र नवकार सुनाया ॥6॥
मरकर वो पाताल सिधाये, पद्मावती धरणेन्द्र कहाये ।
तपसी मरकर देव कहाया, नाम कमठ ग्रन्थों में गाया ॥7॥
एक समय श्री पारस स्वामी, राज छोड़कर वन की ठानी ।
तप करते थे ध्यान लगाये, इक दिन कमठ वहाँ पर आये ॥8॥
फौरन ही प्रभु को पहिचाना, बदला लेना दिल में ठाना ।
बहुत अधिक बारिस बरसाई, बादल गरजे बिजली गिराई ॥9॥
बहुत अधिक पत्थर बरसाये, स्वामी तन को नहीं हिलाये ।
पद्मावती धरणेन्द्र भी आये, प्रभु की सेवा में चित लाये ॥10॥
धरणेन्द्र ने फन फैलाया, प्रभु के सर पर छत्र बनाया ।
पद्मावती ने फन फैलाया, उस पर स्वामी को बैठाया ॥11॥
कर्मनाश प्रभु ज्ञान उपाया, समवशरण देवेन्द्र रचाया ।
यही जगह अहिच्छत्र कहाये, पात्र केशरी जहाँ पर आये ॥12॥
शिष्य पाँच सौ संग विद्वाना, जिनको जाने सकल जहाना ।
पार्श्वनाथ का दर्शन पाया, सबने जैन धरम अपनाया ॥13॥
अहिच्छत्र थी सुन्दर नगरी, जहाँ सुखी थी परजा सगरी ।
राजा श्री वसुपाल कहाये, वो इक जिन मन्दिर बनवाये ॥14॥

प्रतिमा पर पालिश करवाया, फौरन इक मिस्त्री बुलवाया।
 वह मिस्तरी माँस खाता था, इससे पालिश गिर जाता था।।15।।
 मुनि ने उसे उपाय बताया, पारस दर्शन व्रत दिलवाया।
 मिस्त्री ने व्रत पालन कीना, फौरन ही रंग चढ़ा नवीना।।16।।
 गदर सतावन का किस्सा है, इक माली को यो लिक्खा है।
 माली एक प्रतिमा को लेकर, झट छुप गया कुए के अन्दर।।17।।
 उस पानी का अतिशय भारी, दूर होये सारी बीमारी।
 जो अहिच्छत्र हृदय से ध्यावे, सो नर उत्तम पदवी पावे।।18।।
 पुत्र सम्पदा की बढ़ती हो, पापों की इकदम घटती हो।
 है तहसील आँवला भारी, स्टेशन पर मिले सवारी।।19।।
 रामनगर इक ग्राम बराबर, जिसको जाने सब नारी नर।
 चालीसे को 'चन्द्र' बनाये, हाथ जोड़कर शीश नवाये।।20।।

॥ सोरठा ॥

नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन।
 खेय सुगन्ध अपार, अहिच्छत्र में आय के।।
 होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
 जिसके नहीं सन्तान, नाम वंश जग में चले।।

॥ जाप-ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचिन्तामणिपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः॥

श्री महावीर चालीसा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करूँ प्रणाम।
 उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम।।
 सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार।
 महावीर भगवान को, मन मन्दिर में धार।।

॥ चौपाई ॥

जय महावीर दयालु स्वामी, वीर प्रभु तुम जग में नामी।
 वर्द्धमान है नाम तुम्हारा, लगे हृदय को प्यारा-प्यारा।।1।।
 शांति छवि और मोहनी मूरत, शान हंसीली सोहनी सूरत।
 तुमने वेश दिगम्बर धारा, कर्म शत्रु भी तुमसे हारा।।2।।
 क्रोध मान और लोभ भगाया, माया मोह ने तुमसे डर खाया।
 तू सर्वज्ञ सर्व का ज्ञाता, तुझको दुनिया से क्या नाता।।3।।
 तुझमें नहीं राग और द्वेष, वीतराग तू हित उपदेश।
 तेरा नाम जगत में सच्चा, जिसको जाने बच्चा-बच्चा।।4।।
 भूत प्रेत तुम से भय खावें, व्यन्तर राक्षस सब भग जावें।
 महा व्याध मारी न सतावे, महा विकराल काल डर खावे।।5।।
 काला नाग होय फनधारी, या हो शेर भयंकर भारी।
 ना हो कोई बचाने वाला, स्वामी तुमहीं करो प्रतिपाला।।6।।
 अग्नि दावानल सुलग रही हो, तेज हवा से भड़क रही हो।
 नाम तुम्हारा सब दुख खोवे, आग एकदम ठण्डी होवे।।7।।
 हिंसामय था भारत सारा, तब तुमने कीना निस्तारा।

जन्म लिया कुण्डलपुर नगरी, हुई सुखी तब प्रजा सगरी॥८॥
 सिद्धारथ जी पिता तुम्हारे, त्रिशला की आँखों के तारे।
 छोड़ सभी झंझट संसारी, स्वामी हुए बाल ब्रह्मचारी॥९॥
 पंचम काल महा दुखदाई, चाँदनपुर महिमा दिखलाई।
 टीले में अतिशय दिखलाया, एक गाय का दूध गिराया॥१०॥
 सोच हुआ मन में ग्वाले के, पहुँचे एक फावड़ा लेके।
 सारा टीला खोद भगाया, तब तुमने दर्शन दिखलाया॥११॥
 जोधराज को दुख ने घेरा, उसने नाम जपा जब तेरा।
 ठण्डा हुआ तोप का गोला, तब सब ने जयकारा बोला॥१२॥
 मन्त्री ने मन्दिर बनवाया, राजा ने भी दरब लगाया।
 बड़ी धर्मशाला बनवाई, तुमको लाने की ठहराई॥१३॥
 तुमने तोड़ी बीसों गाड़ी, पहिया मसका नहीं अगाड़ी।
 ग्वाले ने जो हाथ लगाया, फिर तो रथ चलता ही पाया॥१४॥
 पहिले दिन वैशाख वदी के, रथ जाता है तीर नदी के।
 मीना गूजर सब ही आते, नाच-कूद सब चित्त उमगाते॥१५॥
 स्वामी तुमने प्रेम निभाया, ग्वाले का तुम मान बढ़ाया।
 हाथ लगे ग्वाले का जब ही, स्वामी रथ चलता है तब ही॥१६॥
 मेरी है टूटी सी नैया, तुम बिन कोई नहीं खिचैया।
 मुझ पर स्वामी जरा कृपा कर, मैं हूँ प्रभु तुम्हारा चाकर॥१७॥
 तुम से मैं अरु कछु नहीं चाहूँ, जन्म-जन्म तेरे दर्शन पाऊँ।
 चालीसे को 'चन्द्र' बनावें, वीर प्रभु को शीश नवावें॥१८॥

॥ सोरठा ॥

नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन।
 खेय सुगन्ध अपार, वर्द्धमान के सामने॥
 होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
 जिसके नहीं सन्तान, नाम वंश जग में चले॥

॥ जाप-ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय नमः॥

णमोकार-चालीसा

दोहा

बंदू श्री अरिहंत पद, सिद्ध नाम सुखकार।
 सूरीपाठक साधुगण, हैं जग के आधार॥१॥
 इन पाँचों परमेष्ठि से, सहित मूल यह मंत्र।
 अपराजित व अनादि है, णमोकार शुभ मंत्र॥२॥
 णमोकार महामंत्र को, नमन् करूँ शतबार।
 चालीसा पढ़कर लहूँ, स्वात्मधाम साकार॥३॥

चौपाई

हो जैवन्त अनादि मंत्रम्, णमोकार अपराजित मंत्रम्।
 पंच पदों से युक्त संयत्रम्, सर्व मनोरथ सिद्धि सुतंत्रम्॥४॥
 पैतीस अक्षर माने इसमें, अट्ठावन मात्राएँ भी हैं।
 अतिशयकारी मंत्र जगत में, सब मंगल में कहा प्रथम है॥५॥
 जिसने इसका ध्यान लगाया, मन मंदिर में इसे बिठाया।
 उसका बेड़ा पार हो गया, भवदधि से उद्धार हो गया॥६॥
 अंजन बना निरंजन क्षण में, सूलि बदली सिंहासन में।

नाग बना फूलों की माला, हो गई शीतल अग्नि ज्वाला ॥7॥
जीवन्धर से इसी मंत्र को, सुना श्वान ने मरणासन्न हो।
शांतभाव से काया तजकर, गया स्वर्ग यक्षेन्द्र बना तब ॥8॥
एक बैल ने मंत्र सुना था, राजघराने में जन्मा था।
जातिस्मरण हुआ जब उसको, उसने खोजा उपकारी को ॥9॥
पद्मरुचि को गले लगाया, आगे मैत्री भाव निभाया।
कालान्तर में वही पद्मरुचि, राम बने तब बहुत धर्मरुचि ॥10॥
बैल बना सुग्रीव बन्धुवर, दोनों के सम्बन्ध मित्रवर।
रामायण की सत्य कथा है, णमोकार से मिटी व्यथा है ॥11॥
ऐसी ही कितनी घटनाएँ, नये पुराने ग्रन्थ बताएँ।
इसीलिए इस मंत्र की महिमा, कही सभी ने इसकी गरिमा ॥12॥
हो अपवित्र, पवित्र दशा में, सदा करें स्मरण हृदय में।
जपे शुद्ध तन से जो माला, वे पाते हैं सौर्य निराला ॥13॥
अन्तर्मन पावन होता है, बाहर का अधमल धोता है।
णमोकार के पैंतीस व्रत हैं, श्रावक करते श्रद्धायुत हैं ॥14॥
हर घर के दरवाजे पर तुम, महामंत्र को लिखो जैनगण।
जैनी संस्कृति दर्शाएगा, सुख-समृद्धि भी दिलवाएगा ॥15॥
एक तराजू के पलड़े पर, सारे गुण भी रख देने पर।
दूजा पलड़ा मंत्र सहित जो, उठा न पाए कोई उसको ॥16॥
उठते चलते सभी क्षणों में, जंगल पर्वत या महलों में।
महामंत्र को कभी ना छोड़ो, सदा इसी से नाता जोड़ो ॥17॥

देखो ! इक सुभौम चक्री था, उसने मन में इसे जपा था।
 देव मार पाया नहीं उनको, तब छल युक्ति बताई नृप को।।18।।
 उसके चंगुल में फंस करके, लिखा मंत्र राजा ने जल में।
 ज्यों ही उस पर कदम रख दिया, देव की शक्ति प्रकट कर दिया।।19।।
 देव ने उसको मार गिराया, नरक धरा को नृप ने पाया।
 मंत्र का यह अपमान कथानक, सचमुच ही है हृदय विदारक।।20।।
 भावों से भी कभी न करना, सदा मंत्र पर श्रद्धा करना।
 इसके लेखन में भी फल हैं, हाथ-नेत्र हो जाए सफल हैं।।21।।
 णमोकार की बैंक खुली है, ज्ञानमती प्रेरणा मिली है।
 जम्बूदीप हस्तिनापुर में, मंत्रों का व्यापक संग्रह है।।22।।
 इसकी किरण प्रभा से जग में, फैले सुख शान्ति जन-जन में।
 मन-वच-तन से नमन् करूँ मैं, महामंत्र का करूँ स्मरण मैं।।23।।

शंभू छन्द

यह महामंत्र का चालीसा, जो चालीस दिन तक पढ़ते हैं।
 ॐ अथवा अ सि आ उ सा मंत्र, या पूर्ण मंत्र जो जपते हैं।।24।।
 ॐ कारमयी दिव्यध्वनि के वे एक दिन स्वामी बनते हैं।
 परमेष्ठि पद को पाकर, वे खुद णमोकार मय बनते हैं।।25।।
 पच्चीस सौ बाईस वीर शब्द, अश्विनी शुक्ला एकम् तिथि में।
 रच दिया ज्ञानमति गणिनी, की शिष्या 'चन्दनामती' जी ने।।26।।
 मैं भी परमेष्ठि पद पाऊँ, प्रभु कब ऐसा दिन आयेगा।
 जब मेरा मन अन्तर्मन में, रमकर पावन बन जायेगा।।27।।

(397-ए)

श्री प्राकृत पञ्चगुरु भक्ति

मणुय-णाइंद-सुर-धरिय-छत्तत्तया, पंचकल्लाण-सोक्खावली-पत्तया।
 दंसणं णाण-झाणं अणंतं बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं।1।
 जेहिं झाणग्गि-बाणेहिं अइ-दड्ढयं, जम्म-जर-मरण-णयरत्तयं दड्ढयं।
 जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं।2।
 पंच-आचार-पंचग्गि-संसाहया, बारसंगाइ-सुअ-जलहि-अवगाहया।
 मोक्ख-लच्छी महंती महंते सया, सूरिणो दिंतु मोक्खं गया-संगया।3।
 घोर-संसार-भीमाडवी-काणणे, तिक्ख-वियराल-णहपाव-पंचाणणे।
 णट्ठ-मग्गाण-जीवाण-पहदेसिया, वंदिमो ते उवज्झाय अमहे सया।4।
 उग तव चरण करणेहिं झीणं गया, धम्मवर-झाण-सुक्केक्क-झाणं गया।
 णिब्भरं तव सिसी ए समा लिंगया, साहवो ते महं मोक्ख-पहमग्गया।5।
 एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए, गुरुय संसार- घणवेल्लि सो छिंदए।
 लहइ सो सिद्धि सोक्खाइं वरमाणं, कुणइ कम्मिंधणं पुंज पज्जालणं।6।

अरुहा सिद्धाइरिया, उवज्झाया साहु पंच परमेट्ठी।

एयाण णमोयारा, भवे भवे मम सुहं दिंतु।7।

इच्छामि भंते ! पंचमहागुरुभक्तिं काउस्सग्गो कओ तस्सालो-
 चेऊं अट्ठमहा-पाडिहेर-संजुत्ताणं अरिहंताणं अट्ठगुण-संपण्णाणं
 उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं अट्ठपवयण-माउसंजुत्ताणं
 आयरियाणं आयारादि-सुदणाणोव-देसयाणं उवज्-झायाणं
 तिरयणगुण-पालणरयाणं सव्वसाहूणं सया णिच्चकालं अंचेमि,
 पूजेमि, वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो
 सुगइ गमणं समाहि मरणं जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं।

(398)

सुप्रभात-स्तोत्रम्

यत्स्वर्गाव-तरोत्सवे य - दभवज्, जन्माभिषेकोत्सवे,
यद्-दीक्षा ग्रहणोत्सवे य-दखिल-, ज्ञान - प्रकाशोत्सवे।
यन् - निर्वाण - गमोत्सवे जिनपतेः, पूजाद्भुतं तद्भवैः,
संगीत-स्तुति-मंगलैः प्रसरतां, मे सुप्रभातोत्सवः॥१॥

श्रीमन् - नतामर - किरीट - मणि - प्रभाभि,

रालीढ - पाद - युग - दुर्द्धर - कर्मदूर।

श्रीनाभिनन्दन ! जिनाजित ! शम्भवाख्य !

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥२॥

छत्रत्रय - प्रचल - चामर - वीज्यमान,

देवाभि - नन्दन - मुने ! सुमते ! जिनेन्द्र !

पद्मप्रभारुण - मणि - द्युतिभासुरांग,

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥३॥

अर्हन् ! सुपार्श्व ! कदली - दलवर्ण - गात्र,

प्रालेयतार - गिरि-मौक्तिक - वर्णगौर।

चन्द्रप्रभ ! स्फटिक - पाण्डुर - पुष्पदन्त !

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥४॥

सन्तप्त - काञ्चन - रुचे जिन - शीतलाख्य,

श्रेयन् ! विनष्ट - दुरिताष्ट - कलंक - पंक।

बंधूक - बंधुररुचे जिन - वासुपूज्य,

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥५॥

उद्दण्ड - दर्पक - रिपो विमला - मलांग,

स्थेमन् - ननन्त - जि - दनन्त - सुखाम्बुराशे।

दुष्कर्म - कल्मष - विवर्जित - धर्मनाथ,

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥६॥

देवामरी - कुसुम - सन्निभ - शान्तिनाथ,

कुन्थो ! दयागुण - विभूषण - भूषितांग।

देवाधिदेव - भगवन् - नरतीर्थ - नाथ,

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥७॥

यन्मोह - मल्लमद - भञ्जन - मल्लि - नाथ,

क्षेमंकरा - वितथ - शासन - सुव्रताख्य।

सत् - सम्पदा प्रशमितो नमि नामधेय,

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥८॥

तापिच्छ - गुच्छ - रुचिरोज्ज्वल - नेमिनाथ,

घोरोपसर्ग - विजयिन् जिन - पार्श्वनाथ।

स्याद्वाद - सूक्ति - मणि - दर्पण - वर्द्धमान,

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥९॥

प्रालेय - नील - हरि - तारुण - पीत - भासं,

यन्मूर्ति - मव्यय - सुखावसथं मुनीन्द्राः।

ध्यायन्ति सप्तति-शतं जिन - वल्लभाना,

त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥१०॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, मांगल्यं परिकीर्तितम्।

चतुर्विंशति तीर्थानां, सुप्रभातं दिने दिने॥११॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम्।

देवता ऋषयः सिद्धाः, सुप्रभातं दिने दिने॥१२॥

सुप्रभातं तवैकस्य, वृषभस्य महात्मनः ।
येन प्रवर्तितं तीर्थं, भव्यसत्त्व-सुखावहम् ॥13॥
सुप्रभातं जिनेन्द्राणां, ज्ञानोन्मीलित - चक्षुषाम् ।
अज्ञानतिमिरान्धानां, नित्यमस्तमितो रविः ॥14॥
सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य, वीरः कमललोचनः ।
येन कर्माटवी दग्धा, शुक्लध्यानोग्रवहनिना ॥15॥
सुप्रभातं सुनक्षत्रं, सुकल्याणं सुमंगलम् ।
त्रैलोक्यहितकर्तृणां, जिनानामेव शासनम् ॥16॥

॥ इति सुप्रभात-स्तोत्रम् ॥

गोम्मटेस-शुद्धि (स्तुति)

विसट्ट-कंदोट्ट-दलाणुयारं, सुलोयणं चंद-समाण-तुण्डं ।
घोणाजियं चम्पय- पुण्फसोहं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ॥1॥
अच्छाय-सच्छं जलकंत-गंडं, आबाहु-दोलंत-सुकण्ण- पासं ।
गइंद- सुण्डुज्जल- बाहुदण्डं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ॥2॥
सुकण्ठ-सोहा-जियदिव्व-संखं, हिमालयुद्दाम-विसालकंधं ।
सुपेक्ख-णिज्जायल-सुट्ठु मज्झं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ॥3॥
विंज्झायलगे पविभासमाणं, सिंहामणि सव्व- सुचेदियाणं ।
तिलोय- संतोसय- पुण्णचंदं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ॥4॥
लया-समक्कंत- महासरीरं, भव्वा-वलीलद्ध-सुकप्प-रुक्खं ।
देविंद- विंदच्चिय- पायपोम्मं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ॥5॥

दियंबरो जो ण च भीइ- जुत्तो, ण चांबरे सत्तमणो विसुद्धो ।
सप्पादि-जंतुप्फुसदो ण कंपो, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ॥6॥
आसां ण जो पोक्खदि सच्छदिट्ठि, सोक्खे ण वंछा हयदोसमूलं ।
विरायभावं भरहे विसल्लं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ॥7॥
उपाहि-मुत्तं धण-धाम-वज्जियं, सुसम्मजुत्तं मय-मोह- हारयं ।
वरस्सेय-पज्जंतमुववास-जुत्तं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ॥8॥
(इति गोम्मटेस-स्तुतिः)

श्री पार्श्वनाथ स्तोत्र

नरेन्द्रं, फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीशं, शतेन्द्रं सु पूजै भजै नाथ शीशं ।
मुनीन्द्रं गणेन्द्रं नमो जोड़ि हाथै, नमो देव-देवं सदा पार्श्वनाथं ॥1॥
गजेन्द्रं मृगेन्द्रं गह्यो तू छुड़ावै, महा आगतें नागतें तू बचावै ।
महावीरतें युद्ध में तू जितावै, महा रोगतें बंधतें तू छुड़ावै ॥2॥
दुखी दुःखहर्ता सुखी सुखकर्ता, सदा सेवकों को महानन्द भर्ता ।
हरे यक्ष राक्षस भूतं पिशाचं, विषं डांकिनी विघ्न के भय अवाचं ॥3॥
दरिद्रीन को द्रव्य के दान देने, अपुत्रीन को तू भले पुत्र कीने ।
महासंकटों से निकारे विधाता, सबै संपदा सर्व को देहि दाता ॥4॥
महाचोर को वज्र को भय निवारे, महापौन के पुंजतै तू उबारै ।
महाक्रोध की अग्नि को मेघ-धारा, महालोभ-शैलेश को वज्र भारा ॥5॥
महा मोह अंधेर को ज्ञान भानं, महा कर्म कांतार को दौ प्रधानं ।
किये नाग नागिन अधोलोक स्वामी, हर्यो मान तू दैत्य को हो अकामी ॥6॥
तुही कल्पवृक्षं तुही कामधेनं, तुही दिव्य चिंतामणी नाग एनं ।
पशु नर्क के दुःखतै तू छुड़ावै, महास्वर्गतै मुक्ति मैं तू बसावै ॥7॥

करै लोह को हेम पाषाण नामी, रटै नाम सो क्यों न हो मोक्षगामी ।
करै सेव ताकी करै देव सेवा, सुने वैन सोही लहै ज्ञान मेवा ।8।
जपै जाप ताको नहीं पाप लागै, धरे ध्यान ताके सबै दोष भागै ।
बिना तोहि जाने धरे भव घनेरे, तुम्हारी कृपा तै सरै काज मेरे ।9।

दोहा-

गणधर इन्द्र न कर सकैं, तुम विनती भगवान् ।
'द्यानत' प्रीति निहारिकैं, कीजे आप समान ॥10॥

दृष्टाष्टकस्तोत्रम्

दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं भव - ताप - हारि,
भव्यात्मनां विभव - संभव - भूरि - हेतु ।
दुग्धाब्धि - फेन - धवलोज् - ज्वल - कूटकोटी-,
नद्ध - ध्वज - प्रकर - राजि - विराजमानम् ॥1॥
दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं भुवनैक - लक्ष्मी-,
धार्मिद्धि - वर्द्धित - महामुनि - सेव्यमानम् ।
विद्या - धरामर - वधू - जन - मुक्त - दिव्य-,
पुष्पाञ्जलि - प्रकर - शोभित - भूमिभागम् ॥2॥
दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं भवनादि - वास-,
विख्यात - नाक - गणिका - गण - गीयमानम् ।
नानामणि - प्रचय - भासुर - रश्मिजाल-,
व्यालीढ - निर्मल - विशाल - गवाक्ष - जालम् ॥3॥
दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं सुर - सिद्ध - यक्ष-,
गन्धर्व - किन्नर - करार्षित - वेणु - वीणा ।

संगीत - मिश्रित - नमस्कृत - धीरनादै-,
रापूरि - ताम्बर - तलोरु - दिगन्तरालम् ॥4॥
दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं विलसद् - विलोल-,
मालाकुलालि - ललितालक - विभ्रमाणम् ।
माधुर्यवाद्य - लय - नृत्य - विलासिनीनां,
लीला - चलद् - वलय - नूपुर - नाद - रम्यम् ॥5॥
दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं मणि - रत्न - हेम-
सारोज्ज्वलैः कलश - चामर - दर्पणाद्यैः ।
सन्मंगलैः सतत - मष्ट - शतप्रभेदैर्-
विभ्राजितं विमल - मौक्तिक - दामशोभम् ॥6॥
दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं वर - देवदारु-
कर्पूर - चन्दन - तरुष्क - सुगन्धिधूपैः ।
मेघाय - मान - गगनं पवनाभि - घात-
चञ्चच् - चलद् - विमल - केतन - तुंगशालम् ॥7॥
दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं धवलात - पत्रच् -
छाया - निमग्न - तनु - यक्षकुमार - वृन्दैः ।
दोधूयमान - सित - चामर - पङ्क्ति - भासं,
भामण्डल - द्युतियुत - प्रतिमाभिरामम् ॥8॥
दृष्टं जिनेन्द्र - भवनं विविध - प्रकार-,
पुष्पोपहार - रमणीय - सुरत्न - भूमिः ।
नित्यं वसन्त - तिलक - श्रियमादधानं,
सन्मंगलं सकल - चन्द्र - मुनीन्द्र - वन्द्यम् ॥9॥

दृष्टं मयाद्य मणि - काञ्चन - चित्र - तुंग -,
सिंहासनादि - जिनबिम्ब - विभूतियुक्तम्।
चैत्यालयं य - दतुलं परि - कीर्तितं मे,
सन्मंगलं सकल - चन्द्र - मुनीन्द्र - वन्द्यम्॥10॥

॥ इति दृष्टाष्टकम् ॥

अद्याष्टकस्तोत्रम्

अद्य मे सफलं जन्म, नेत्रे च सफले मम।
त्वामद्राक्षं यतो देव, हेतु - मक्षय - संपदः॥1॥
अद्य संसार-गंभीर-पारावारः सुदुस्तरः।
सुतरोऽयं क्षणेनैव, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥2॥
अद्य मे क्षालितं गात्रं, नेत्रे च विमले कृते।
स्नातोऽहं धर्म - तीर्थेषु, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥3॥
अद्य मे सफलं जन्म, प्रशस्तं सर्वमंगलम्।
संसारार्णव - तीर्णोऽहं, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥4॥
अद्य कर्माष्टक-ज्वालं, विधूतं सकषायकम्।
दुर्गते - विनिवृत्तोऽहं, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥5॥
अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे, शुभाश् चैकादश-स्थिताः।
नष्टानि विघ्न - जालानि, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥6॥
अद्य नष्टो महाबन्धः, कर्मणां दुःखदायकः।
सुख - संगं समापन्नो, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥7॥
अद्य कर्माष्टकं नष्टं, दुःखोत्पादन - कारकम्।
सुखाम्भोधि - निमग्नोऽहं, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥8॥

(405)

अद्य मिथ्यान्ध - कारस्य, हन्ता ज्ञान - दिवाकरः।
उदितो मच्छरीरेऽस्मिन्, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥9॥
अद्याहं सुकृतीभूतो, निर्धूता - शेष - कल्मषः।
भुवन - त्रय - पूज्योऽहं, जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥10॥
अद्याष्टकं पठेद्यस्तु, गुणानन्दित - मानसः।
तस्य सर्वार्थ - संसिद्धि - , जिनेन्द्र तव दर्शनात्॥11॥

॥ इति अद्याष्टकम् ॥

श्री महावीराष्टक-स्तोत्रम्

(शिखरिणी छन्द)

यदीये चैतन्ये, मुकुर इव भावाश् चि - दचितः,
समं भान्ति ध्रौव्य - , व्यय - जनि - लसन्तोऽन्त - रहिताः।
जगत्साक्षी मार्ग, - प्रकटन - परो भानुरिव यो,
महावीर - स्वामी, नयन - पथ - गामी भवतु मे॥1॥
अताम्रं यच्चक्षुः, कमल - युगलं स्पन्द - रहितं,
जनान् कोपापायं, प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि।
स्फुटं मूर्ति - र्यस्य, प्रशमित - मयी वाति - विमला,
महावीर - स्वामी, नयन - पथ - गामी भवतु मे॥2॥
नमन् - नाकेन्द्राली - , मुकुट - मणि -भा-जाल जटिलं,
लसत् - पादाम्भोज - , द्वयमिह यदीयं तनु - भृताम्।
भवज्वाला - शान्त्यै, प्रभवति जलं वा स्मृतमपि,
महावीर - स्वामी, नयन - पथ - गामी भवतु मे॥3॥
यदर्चा - भावेन, प्रमुदित - मना दर्दुर इह,
क्षणादासीत् स्वर्गी, गुण - गण - समृद्धः सुख - निधिः।

(406)

लभन्ते सद्भक्ताः, शिव - सुख - समाजं किमु तदा,
 महावीर - स्वामी, नयन - पथ - गामी भवतु मे॥४॥
 कनत् - स्वर्णाभासो -, ऽप्यपगत - तनुर्ज्ञान - निवहो,
 विचित्रात्माप्येको, नृपति - वर - सिद्धार्थ - तनयः।
 अजन्मापि श्रीमान्, विगत - भव - रागोद्भुत - गतिर्,
 महावीर - स्वामी, नयन - पथ - गामी भवतु मे॥५॥
 यदीया वाग् -गंगा, विविध - नय - कल्लोल - विमला,
 बृहज् - ज्ञानाम्भोभि, - र्जगति जनतां या स्नपयति।
 इदानी - मप्येषा, बुध - जन - मरालैः परिचिता,
 महावीर - स्वामी, नयन - पथ - गामी भवतु मे॥६॥
 अनि-र्वा-रोद्रे - कस्, त्रिभुवन - जयी काम - सुभटः,
 कुमारवस्थाया -, मपि निज - बलाद्येन विजितः।
 स्फुरन् नित्यानन्द -, प्रशम - पद - राज्याय स जिनो,
 महावीर - स्वामी, नयन - पथ - गामी भवतु मे॥७॥
 महा - मोहांतक -, प्रशमन - पराकस्मिक - भिषङ्,
 निरापेक्षो बन्धु, - विदित - महिमा मंगलकरः।
 शरण्यः साधूनां, भव - भयभृता - मुत्तम - गुणो,
 महावीर - स्वामी, नयन - पथ - गामी भवतु मे॥८॥
 महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतम्।
 यः पठेच् छृणुयाच् चापि, स याति परमां गतिम्॥९॥
 ॥ इति श्रीमहावीराष्टकस्तोत्रम् ॥

श्री भक्तामर स्तोत्रम्

(श्री मानतुंगाचार्य विरचितम्)

(वसन्ततिलका छन्द)

भक्तामर - प्रणत - मौलि - मणि - प्रभाणा-,
 मुद्योतकं दलित - पाप - तमो वितानम्।
 सम्यक् - प्रणम्य जिन - पाद - युगं युगादा-,
 वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥१॥
 यः संस्तुतः सकल - वाङ्मय - तत्त्व - बोधा-,
 दुद्भूत - बुद्धि - पटुभिः सुर - लोक - नाथैः।
 स्तोत्रै - र्जगत् - त्रितय - चित्त - हरै - रुदारैः,
 स्तोष्ये किलाह - मपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥२॥
 बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित - पाद - पीठ,
 स्तोतुं समुद्यत - मति - विगत - त्रपोऽहम्।
 बालं विहाय जल - संस्थित - मिन्दु - बिम्ब-
 मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्॥३॥
 वक्तुं गुणान् गुण - समुद्र ! शशांक - कान्तान्,
 कस्ते क्षमः सुरगुरु - प्रतिमोऽपि बुद्ध्या।
 कल्पान्त - काल - पवनोद्धत - नक्र - चक्रं
 को वा तरीतु - मल - मम्बु - निधिं भुजाभ्याम्॥४॥
 सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश,
 कर्तुं स्तवं विगत - शक्ति - रपि प्रवृत्तः।

प्रीत्यात्म - वीर्य - मवि - चार्य मृगी मृगेन्द्रं,
 नाभ्येति किं निज - शिशोः परि-पाल - नार्थम्॥5॥
 अल्पश्रुतं श्रुत - वतां परि - हास - धाम,
 त्वद् - भक्ति - रेव मुखरी - कुरुते बलान्माम्।
 यत्कोकिलः किल - मधौ मधुरं विरौति,
 तच्चात्र - चारु - कलिका - निक - रैक - हेतु॥6॥
 त्वत्संस्तवेन भव - सन्तति - सन् - निबद्धं,
 पापं क्षणात् क्षय - मुपैति शरीर - भाजाम्।
 आक्रान्त - लोक - मलि - नील - मशेष - माशु,
 सूर्याशु - भिन्न - मिव शार्वर - मन्धकारम्॥7॥
 मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद-
 मारभ्यते तनु - धियापि तव प्रभावात्।
 चेतो हरिष्यति सतां नलिनी - दलेषु,
 मुक्ता - फल - द्युति - मुपैति ननूद - बिन्दुः॥8॥
 आस्तां तव स्तवन - मस्त - समस्त - दोषं,
 त्वत् - संकथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति।
 दूरे सहस्र - किरणः कुरुते प्रभैव,
 पद्माकरेषु जलजानि विकास - भाज्जि॥9॥
 नात्यद्-भुतं भुवन-भूषण भूतनाथ !,
 भूतै - गुणै - भुवि भवन्त - मभिष्टु - वन्तः।
 तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
 भूत्या-श्रितं य इह नात्मसमं करोति॥10॥

दृष्ट्वा भवन्त - मनि - मेष - विलोक - नीयम्,
 नान्यत्र तोष - मुपयाति जनस्य चक्षुः।
 पीत्वा पयः शशिकर - द्युति - दुग्ध - सिन्धोः,
 क्षारं जलं जल - निधे - रसितुं क इच्छेत्॥11॥
 यैः शान्त - राग - रुचिभिः परमाणु - भिस्त्वं,
 निर्मापितस् त्रिभुवनैक - ललामभूत !।
 तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्याम्,
 यत्ते समान - मपरं न हि रूप - मस्ति॥12॥
 वक्त्रं क्व ते सुर - नरो - रग - नेत्र - हारि,
 निःशेष - निर्जित - जगत् - त्रितयोप - मानम्।
 बिम्बं कलंक - मलिनं क्व निशा - करस्य,
 यद् - वासरे भवति पाण्डु - पलाश - कल्पम्॥13॥
 सम्पूर्ण - मण्डल - शशांक - कला - कलाप,
 शुभ्रा गुणास् त्रिभुवनं तव लंघयन्ति।
 ये संश्रितास् त्रिजग - दीश्वर - नाथ - मेकम्,
 कस् तान् निवार-यति सञ्चरतो यथेष्टम्॥14॥
 चित्रं कि - मत्र यदि ते त्रिदशांग - नाभिर्
 नीतं मना - गपि मनो न विकार - मार्गम्।
 कल्पान्त - काल - मरुता चलिताचलेन,
 किं मन्द - राद्रि - शिखरं चलितं कदाचित्॥15॥
 निर्धूम - वर्ति - रप - वर्जित - तैल - पूरः
 कृत्स्नं जगत् - त्रय - मिदं प्रकटी - करोषि।

गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानाम्,
 दीपोऽपरस्त्व - मसि नाथ ! जगत् - प्रकाशः ।।16।।
 नास्तं कदाचि - दुप - यासि न राहु - गम्यः,
 स्पष्टी - करोषि सहसा युगपज् - जगन्ति ।
 नाम्भोधरोदर - निरुद्ध - महा - प्रभावः,
 सूर्याति - शायि - महि - मासि मुनीन्द्र ! लोके ।।17।।
 नित्योदयं दलित - मोह - महान्ध - कारं,
 गम्यं न राहु - वदनस्य न वारि - दानाम् ।
 विभ्राजते तव मुखाब्ज - मनल्प - कान्ति,
 विद्यो - तयज् - जग - दपूर्व - शशांक - बिम्बम् ।।18।।
 किं शर्वरीषु शशि - नाहनि विवस्वता वा,
 युष्मन् - मुखेन्दु - दलितेषु तमःसु नाथ ! ।
 निष्पन्न - शालि - वन - शालिनि जीव - लोके,
 कार्यं कियज् - जलधरै - र्जलभार - नम्रैः ।।19।।
 ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृताव - काशं,
 नैवं तथा हरि - हरादिषु नायकेषु ।
 तेजो महामणिषु याति यथा महत्त्वं,
 नैवं तु काच - शकले किरणाकुलेऽपि ।।20।।
 मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा,
 दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोष - मेति ।
 किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
 कश्चिन् मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ।।21।।

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
 नान्या सुतं त्व - दुपमं जननी प्रसूता ।
 सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र - रश्मिम्,
 प्राच्येव दिग्जनयति स्फुर - दंशु - जालम् ।।22।।
 त्वा - मा - मनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
 मादित्य - वर्ण - ममलं तमसः पुरस्तात् ।
 त्वा - मेव सम्य - गुप - लभ्य जयन्ति मृत्युम्,
 नान्यः शिवः शिव - पदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ।।23।।
 त्वा - मव्ययं विभु - मचिन्त्य - मसंख्य - माद्यं,
 ब्रह्माण - मीश्वर - मनन्त - मनंग - केतुम् ।
 योगीश्वरं विदित - योग - मनेक - मेकं,
 ज्ञान - स्वरूप - ममलं प्रवदन्ति सन्तः ।।24।।
 बुद्धस्त्व - मेव विबुधार्चित - बुद्धि - बोधात्,
 त्वं शंकरोऽसि भुवन - त्रय - शंकरत्वात् ।
 धातासि धीर ! शिव - मार्ग - विधे - विधानाद्,
 व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ।।25।।
 तुभ्यं नमस् त्रिभुव - नार्ति - हराय नाथ !
 तुभ्यं नमः क्षिति - तलामल - भूषणाय ।
 तुभ्यं नमस् त्रिजगतः परमेश्वराय,
 तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि-शोषणाय ।।26।।
 को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणै - रशेषैस्,
 त्वं संश्रितो निरवकाश - तया मुनीश ।

दोषै - रूपात्त - विविधाश्रय - जात - गर्वैः,
 स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचि-दपीक्षितोऽसि ।।27।।
 उच्चै - रशोक - तरु - संश्रित - मुन्मयूख,
 माभाति रूप - ममलं भवतो नितान्तम्।
 स्पष्टोल् - लसत् - किरण - मस्त-तमो- वितानं,
 बिम्बं रवे - रिक् पयोधर - पार्श्व - वर्ति ।।28।।
 सिंहासने मणि - मयूख - शिखा - विचित्रे,
 विभ्राजते तव वपुः कनका - वदातम्।
 बिम्बं वियद्-विलस - दंशु - लता - वितानम्,
 तुंगोदयाद्रि - शिर - सीव सहस्र - रश्मेः ।।29।।
 कुन्दा - वदात - चल - चामर - चारु - शोभम्,
 विभ्राजते तव वपुः कल - धौत - कान्तम्।
 उद्यच् - छांशक - शुचि - निर्झर - वारिधार-,
 मुच्चैस्तटं सुर - गिरे - रिक् शात - कौम्भम् ।।30।।
 छत्र - त्रयं तव विभाति शशांक - कान्त-,
 मुच्चैः स्थितं स्थगित - भानुकर - प्रतापम्।
 मुक्ताफल - प्रकर - जाल - विवृद्ध - शोभम्,
 प्रख्यापयत् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ।।31।।
 गम्भीर - तार - रव - पूरित - दिग्विभागस्,
 त्रैलोक्य - लोक - शुभ - संगम - भूति - दक्षः।
 सद् - धर्मराज - जय - घोषण - घोषकः सन्,
 खे दुन्दुभि - ध्वनति ते यशसः प्रवादी ।।32।।

मन्दार - सुन्दर - नमेरु - सुपारि - जात-,
 सन्तान - कादि - कुसुमोत्कर - वृष्टि - रुद्धा।
 गन्धोद - बिन्दु - शुभ - मन्द - मरुत् - प्रपाता,
 दिव्या दिवः पतति ते वचसां तति-र्वा ।।33।।
 शुम्भत् - प्रभा - वलय - भूरि - विभा - विभोस्ते,
 लोक - त्रये द्युतिमतां द्युति - मा - क्षिपन्ती।
 प्रोद्यद् - दिवाकर - निरन्तर - भूरि - संख्या,
 दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम - सौम्याम् ।।34।।
 स्वर्गापवर्ग - गम - मार्ग - विमार्ग - णेष्टः,
 सद्धर्म - तत्त्व - कथनैक - पटुस् त्रिलोक्याः।
 दिव्यध्वनि - भवति ते विशदार्थ - सर्व-,
 भाषा - स्वभाव - परिणाम - गुणैः प्रयोज्यः ।।35।।
 उन् - निद्र - हेमनव - पंकज - पुञ्ज - कान्ति,
 पर्युल् - लसन् - नख - मयूख - शिखाभि - रामौ।
 पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र ! धत्तः,
 पद्मानि तत्र विबुधाः परि - कल्प - यन्ति ।।36।।
 इत्थं यथा तव विभूति - रभूज् - जिनेन्द्र !,
 धर्मोपदेशन - विधौ न तथा परस्य।
 यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
 तादृक् कुतो ग्रह - गणस्य विकसिनोऽपि ।।37।।
 श्च्योतन् - मदाविल - विलोल - कपोल-मूल-,
 मत्त - भ्रमद् - भ्रमर - नाद - विवृद्ध - कोपम्।

ऐरा - वताभ - मिभ - मुद्धत - मा - पतन्तं,
 दृष्ट्वा भयं भवति नो भव - दाश्रितानाम्॥३८॥
 भिन्नेभ - कुम्भ - गल - दुज्ज्वल - शोणिताक्त,
 मुक्ताफल - प्रकर - भूषित - भूमिभागः।
 बद्ध - क्रमः क्रम - गतं हरिणाधिपोऽपि,
 नाक्रामति क्रम - युगाचल - संश्रितं ते॥३९॥
 कल्पान्त - काल - पवनोद्धत - वह्नि - कल्पम्,
 दावानलं ज्वलित - मुज्ज्वल - मुत्स्फुलिगम्।
 विश्वं जिघत्सु - मिव सम्मुख - मापतन्तं,
 त्वन्नाम-कीर्तन-जलं शमयत्यशेषम्॥४०॥
 रक्तेक्षणं समद - कोकिल - कण्ठ - नीलं,
 क्रोधोद्धतं फणिन - मुत्फण - मा - पतन्तम्।
 आक्रामति क्रमयुगेण निरस्त - शंकस्-
 त्वन् - नाम - नाग - दमनी - हृदि यस्य पुंसः॥४१॥
 वल्गात् - तुरंग - गज - गर्जित - भीमनाद -
 माजौ बलं बलवता - मपि भूपतीनाम्।
 उद्यद् - दिवाकर - मयूख - शिखा - पविद्धं,
 त्वत् - कीर्तनात् - तम इवाशु भिदा - मुपैति॥४२॥
 कुन्ताग्र - भिन्न - गज - शोणित - वारि - वाह-
 वेगाव - तार - तर - णातुर - योध - भीमे।
 युद्धे जयं विजित - दुर्जय - जेय - पक्षास्-
 त्वत्पाद - पंकज - वनाश्रयिणो लभन्ते॥४३॥

अम्भो - निधौ क्षुभित - भीषण - नक्र - चक्र-
 पाठीन - पीठ - भय - दोल्वण - वाड - वाग्नौ।
 रंगत् - तरंग - शिखर - स्थित - यान - पात्रास्,
 त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति॥४४॥
 उद्भूत - भीषण - जलोदर - भार - भुग्नाः,
 शोच्यां दशा - मुप - गताश् च्युत - जीवि - ताशाः।
 त्वत् - पाद - पंकज - रजोऽमृत - दिग्ध - देहा,
 मर्त्या भवन्ति मकर - ध्वज - तुल्य - रूपाः॥४५॥
 आपाद - कण्ठ - मुरु - शृङ्खल - वेष्टितांगा,
 गाढं बृहन् - निगड - कोटि - निघृष्ट - जंघाः।
 त्वन् - नाम - मन्त्र - मनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
 सद्यः स्वयं विगत - बन्ध - भया भवन्ति॥४६॥
 मत्त - द्विपेन्द्र - मृगराज - दवान - लाहि-
 संग्राम - वारिधि - महोदर - बन्धनोत्थम्।
 तस्याशु नाश - मुपयाति भयं भियेव,
 यस् तावकं स्तव - मिमं मतिमा - नधीते॥४७॥
 स्तो - त्रस्रजं तव जिनेन्द्र ! गुणैर् - निबद्धां,
 भक्त्या मया विविध - वर्ण - विचित्र - पुष्पाम्।
 धत्ते जनो य इह कण्ठ - गता - मजस्रं,
 तं “मानतुंग”- मवशा समुपैति लक्ष्मीः॥४८॥
 ॥ इति श्रीभक्तामर-स्तोत्रम् ॥

कल्याण मन्दिर स्तोत्रम्

(आचार्य कुमुदचन्द्र विरचितम्)

(वसन्ततिलका छन्द)

कल्याण - मन्दिर - मुदार - मवद्य - भेदि,
भीताभय - प्रद - मनिन्दित - मंग्रि - पद्मम्।
संसार - सागर - निमज्ज - दशेष - जंतु,
पोताय - मान - मभि - नम्य जिनेश्वरस्य॥1॥
यस्य स्वयं सुर - गुरु - र्गरि - माम्बु - राशेः,
स्तोत्रं सु - विस्तृत - मति- न विभु - विधातुम्।
तीर्थेश्वरस्य कमठ - स्मय - धूम - केतोस्,
तस्याह - मेष किल संस्तवनं करिष्ये॥2॥
सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप,-
मस्मादृशाः कथ - मधीश ! भवन्त्यधीशाः।
धृष्टोऽपि कौशिक - शिशु - र्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्म - रश्मेः॥3॥
मोह - क्षया - दनु - भवन् - नपि नाथ ! मर्त्यो,
नूनं गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत।
कल्पान्त - वान्त - पयसः प्रकटोऽपि यस्मान्,
मीयेत केन जलधे - ननु रत्न - राशिः॥4॥
अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लस - दसंख्य - गुणाकरस्य।

(416-ए)

बालोऽपि किं न निज - बाहु - युगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बु - राशेः॥5॥
ये योगिना - मपि न यान्ति गुणास् तवेश,
वक्तुं कथं भवति तेषु ममाव - काशः।
जाता तदेव - मस - मीक्षित - कारितेयं,
जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि॥6॥
आस्ता - मचिन्त्य महिमा जिन ! संस्तवस्ते,
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति।
तीव्रातपोऽप - हत - पान्थ - जनान् निदाघे,
प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनिलोऽपि॥7॥
हृद् - वर्तिनि त्वयि विभो ! शिथिली - भवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्मबन्धाः।
सद्यो भुजंगम - मया इव मध्यभाग,-
मभ्यागते वन - शिखण्डिनि चन्दनस्य॥8॥
मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र !,
रौद्रै - रुपद्रव - शतैस् त्वयि वीक्षितेऽपि।
गोस्वामिनि स्फुरित - तेजसि दृष्टमात्रे,
चौरै - रिवाशु पशवः प्रपलाय - मानैः॥9॥
त्वं तारको जिन ! कथं भविनां त एव,
त्वा - मुद् - वहन्ति हृदयेन यदुत् - तरन्तः।
यद्वा दृतिस् तरति यज् - जल - मेष नून,-
मन्त - र्गतस्य मरुतः स किलानुभावः॥10॥

(416-बी)

यस्मिन् हर - प्रभृतयोऽपि हत - प्रभावाः,
 सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन।
 विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
 पीतं न किं तदपि दुर्द्धर - वाडवेन॥11॥
 स्वामिन् - ननल्प - गरिमाण - मपि प्रपन्नास्-
 त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः।
 जन्मोदधिं लघु तरन्त्यति - लाघवेन,
 चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः॥12॥
 क्रोधस् त्वया यदि विभो! प्रथमं निरस्तो,
 ध्वस् - तास् तदा वद कथं किल कर्मचौराः।
 प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
 नील - द्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी॥13॥
 त्वां योगिनो जिन! सदा परमात्मरूप-
 मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज - कोश - देशे।
 पूतस्य निर्मल - रुचे - र्यदि वा कि - मन्य-
 दक्षस्य सम्भव - पदं ननु कर्णिकायाः॥14॥
 ध्यानाज् - जिनेश! भवतो भविनः क्षणेन,
 देहं विहाय परमात्म - दशां व्रजन्ति।
 तीव्रानला - दुपल - भाव - मपास्य लोके,
 चामी - करत्व - मचिरा - दिव धातुभेदाः॥15॥
 अन्तः सदैव जिन! यस्य विभाव्यसे त्वं,
 भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्।

एतत् स्वरूप - मथ मध्य - विवर्तिनो हि,
 यद् - विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः॥16॥
 आत्मा मनीषि - भि - रयं त्व - दभेद - बुद्ध्या,
 ध्यातो जिनेन्द्र! भव - तीह भवत् - प्रभावः।
 पानीय - मप्यमृत - मित्यनु - चिन्त्य - मानं,
 किं नाम नो विष - विकार - मपाकरोति॥17॥
 त्वामेव वीत - तमसं पर - वादि - नोऽपि,
 नूनं विभो! हरि - हरादि - धिया प्रपन्नाः।
 किं काच - कामलि - भिरीश! सितोऽपि शंखो,
 नो गृह्यते विविध - वर्ण - विपर्ययेण॥18॥
 धर्मोपदेश - समये सविधानु - भावा-
 दास्तां जनो भवति ते तरु - रप्यशोकः।
 अभ्युद्गते दिनपतौ समही - रुहोऽपि,
 किं वा विबोध - मुपयाति न जीवलोकः॥19॥
 चित्रं विभो कथ - मवाङ् - मुख - वृन्त - मेव,
 विष्वक् - पतत्यविरला सुर - पुष्प - वृष्टिः।
 त्वद्गोचरे सुनमसां यदि वा मुनीश!,
 गच्छन्ति नून - मध एव हि बन्धनानि॥20॥
 स्थाने गभीर - हृदयोदधि - सम्भवायाः,
 पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति।
 पीत्वा यतः परम - संमद - संग - भाजो,
 भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम्॥21॥

स्वामिन् सुदूर - मवनम्य समुत्पतन्तो,
 मन्ये वदन्ति शुचयः सुर - चाम - रौघाः ।
 येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुंगवाय,
 ते नून - मूर्ध्व - गतयः खलु शुद्धभावाः ॥22॥
 श्यामं गभीर - गिर - मुज्ज्वल - हेमरत्न,-
 सिंहासनस्थ - मिह भव्य - शिखण्डिनस् त्वाम् ।
 आलोकयन्ति रभसेन नदन्त - मुच्चैश्,-
 चामीकराद्रि - शिर - सीव नवाम्बु - वाहम् ॥23॥
 उद्गच्छता तव शिति - द्युति - मण्डलेन,
 लुप्तच् - छदच् - छवि - रशोक - तरु - बर्भूव ।
 सान्-निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग !,
 नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥24॥
 भोः भोः प्रमाद - मव - धूय भजध्व - मेन,-
 मागत्य निर्वृति - पुरीं प्रति सार्थ - वाहम् ।
 एतन् - निवेदयति देव जगत् - त्रयाय,
 मन्ये नदन् - नभिनभः सुर - दुन्दु - भिस् ते ॥25॥
 उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ !,
 तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः ।
 मुक्ताकलाप - कलितोल् - लसि - तात - पत्र,
 व्याजात् - त्रिधा धृत - तनु - ध्रुव - मभ्युपेतः ॥26॥
 स्वेन प्रपूरित - जगत् - त्रय - पिण्डि - तेन,
 कांति - प्रताप - यशसा - मिव सञ्चयेन ।

माणिक्य - हेम - रजत - प्रविनिर्मितेन,
 साल - त्रयेण भगवन् - नभितो विभासि ॥27॥
 दिव्य - स्रजो जिन ! नमत् - त्रि - दशाधिपाना,-
 मुत्सृज्य रत्न - रचिता - नपि मौलि - बन्धान् ।
 पादो श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र,
 त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव ॥28॥
 त्वं नाथ ! जन्म - जलधे - विपराङ् - मुखोऽपि,
 यत् - तारयस्यसुमतो निज - पृष्ठ - लग्नान् ।
 युक्तं हि पार्थिव - नृपस्य सतस् तवैव,
 चित्रं विभो ! यदसि कर्म - विपाक - शून्यः ॥29॥
 विश्वेश्वरोऽपि जनपालक ! दुर्गतस्त्वं,
 किं वाक्षर - प्रकृति - रप्यलिपिस् त्वमीश ।
 अज्ञान - वत्यपि सदैव कथंचि - देव,
 ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व - विकास - हेतु ॥30॥
 प्राग्भार - सम्भृत - नभांसि रजांसि रोषा,-
 दुत्था - पितानी कमठेन शठेन यानि ।
 छायापि तैस् तव न नाथ ! हता हताशो,
 ग्रस्तस् त्वमी - भि - रय - मेव परं दुरात्मा ॥31॥
 यद् - गर्ज - दूर्जित - घनौघ - मदभ्र - भीम
 भ्रश्यत् - तडिन् - मुसल - मांसल - घोर - धारम् ।
 दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर - वारि दग्ने,
 तेनैव तस्य जिन ! दुस्तर - वारि - कृत्यम् ॥32॥

ध्वस्-तोर्ध्व -केश -विकृताकृति - मर्त्य -मुण्ड-,
 प्रालम्ब - भृद् - भयद - वक्त्र - विनिर्य - दग्निः ।
 प्रेतव्रजः प्रति भवन्त - मपीरितो यः,
 सोऽस्याऽभवत् प्रति - भवं भव - दुःख - हेतुः ॥३३॥
 धन्यास् त एव भुवनाधिप ! ये त्रिसन्ध्य-
 माराधयन्ति विधिवद् विधुतान्यकृत्याः ।
 भक्त्योल् -लसत् -पुलक -पक्ष्मल -देह -देशाः,
 पाद - द्वयं तव विभो ! भुवि जन्मभाजः ॥३४॥
 अस्मिन् - नपार - भव - वारि - निधौ मुनीश !,
 मन्ये न मे श्रवण - गोचरतां गतोऽसि ।
 आकर्णिते तु तव गोत्र - पवित्र - मन्त्रे,
 किं वा विपद् - विषधरी सविधं समेति ॥३५॥
 जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं न देव !,
 मन्ये मया महित - मीहित - दान - दक्षम् ।
 तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानां,
 जातो निकेतन - महं मथिताशयानाम् ॥३६॥
 नूनं न मोह - तिमिरावृत - लोचनेन,
 पूर्वं विभो ! सकृ - दपि प्रविलोकितोऽसि ।
 मर्माविधो विधुरयन्ति हि मा - मनर्थाः,
 प्रोद्यत् - प्रबन्ध - गतयः कथ - मन्य - थैते ॥३७॥
 आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
 नूनं च चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ।

(416-जी)

जातोऽस्मि तेन जनबान्धव ! दुःखपात्रं,
 यस्मात् - क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः ॥३८॥
 त्वं नाथ ! दुःखि - जनवत्सल ! हे शरण्य !,
 कारुण्य - पुण्य - वसते वशिनां वरेण्य ।
 भक्त्या नते मयि महेश ! दयां विधाय,
 दुःखांकुरोद् - दलन - तत्परतां विधेहि ॥३९॥
 निःसख्य - सार - शरणं शरणं शरण्य-
 मासाद्य सादित - रिपु - प्रथितावदानम् ।
 त्वत्पाद - पंकज - मपि प्रणिधान - वन्ध्यो,
 वन्ध्योऽस्मि चेद् - भुवनपावन हा हतोऽस्मि ॥४०॥
 देवेन्द्रवन्द्य ! विदिताखिल - वस्तुसार !,
 संसार - तारक ! विभो ! भुवनाधिनाथ ।
 त्रायस्व देव करुणाहृद मां पुनीहि,
 सीदन्त - मद्य भयदव्य - सनाम्बुराशेः ॥४१॥
 यद्यस्ति नाथ ! भवदंघ्रि - सरोरुहाणां,
 भक्तेः फलं किमपि सन्तत - सञ्चितायाः ।
 तन्मे त्वदेक - शरणस्य शरण्य ! भूयाः,
 स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ॥४२॥
 इत्थं समाहित - धियो विधिवज् - जिनेन्द्र !,
 सान्द्रोल् - लसत्-पुलक- कच्चु -किताङ्ग-भागाः ।
 त्वद् -बिम्ब -निर्मल -मुखाम्बुज - बद्ध - लक्ष्याः,
 ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः ॥४३॥

(416-एच)

जन-नयन-कुमुद - चन्द्र - प्रभास्वराः स्वर्ग - सम्पदो भुक्त्वा ।
ते विगलित - मल - निचया अचिरान् मोक्षं प्रपद्यन्ते ॥४४॥

॥ इति श्रीकल्याणमन्दिर-स्तोत्रम् ॥

एकीभाव स्तोत्रम्

(आचार्य वादिराज विचरितम्)

(मन्दाक्रान्ताच्छन्द)

एकी - भावं, गत इव मया, यः स्वयं कर्मबन्धो,
घोरं दुःखं, भव - भव - गतो, दुर्निवारः करोति ।
तस्याप्यस्य, त्वयि जिनरवे, भक्तिरुन्मुक्तये चेत्,
जेतुं शक्यो, भवति न तया, कोऽपरस्तापहेतुः ॥१॥
ज्योतीरूपं, दुरित - निवह, - ध्वान्त - विध्वंस - हेतुं,
त्वा -मे - वाहुर, - जिनवर चिरं, तत्त्व - विद्याभि - युक्ताः ।
चेतोवासे, भवसि च मम, स्फार - मुद् - भासमानस्,-
तस्मिन् - नहः, कथमिव तमो, वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥२॥
आनन्दाश्रु, - स्नपित - वदनं, गद्गदं चाभि - जल्पन्,
यश् चायेत, त्वयि दृढमनाः, स्तोत्र - मन्त्रैर् भवन्तम् ।
तस्याभ्यस्ता, - दपि च सुचिरं, देह -वल्मीक- मध्यान्,-
निष्कास्यन्ते, विविध - विषम, - व्याधयः काद्रवेयाः ॥३॥
प्रागेवेह, त्रिदिव - भवना, - देष्यता भव्यपुण्यात्,
पृथ्वीचक्रं, कनक - मयतां, देव निन्ये त्वयेदम् ।
ध्यान - द्वारं, मम रुचिकरं, स्वान्त - गेहं प्रविष्टस्,
तत् किं चित्रं, जिन ! वपु - रिदं, यत् - सुवर्णी - करोषि ॥४॥

(४१६-आई)

लोकस्यैकस्, त्वमसि भगवन्, निर्निमित्तेन बन्धुस्,-
त्वय्ये - वासौ, सकल - विषया, शक्ति - रप्रत्यनीका ।
भक्तिस्फीतां, चिर - मधि - वसन्, मामिकां चित्तशय्यां,
मय्युत्पन्नं, कथमिव ततः, क्लेश - यूथं सहेथाः ॥५॥
जन्माटव्यां, कथमपि मया, देव दीर्घ भ्रमित्वा,
प्राप्तैवेयं, तव नयकथा, स्फार - पीयूष - वापी ।
तस्या मध्ये, हिमकरहिम, - व्यूह - शीते नितान्तं,
निर्मग्नं मां, न जहति कथं, दुःख - दावोप - तापाः ॥६॥
पादन्यासा, - दपि च पुनतो, यात्रया ते त्रिलोकीं,
हेमाभासो, भवति सुरभिः, श्रीनिवासश् च पद्मः ।
सर्वाङ्गेण, स्पृशति भगवंस्, त्वय्यशेषं मनो मे,
श्रेयः किं तत्, स्वय - मह - रहर्, यन् न मा - मभ्युपैति ॥७॥
पश्यन्तं त्वद्, वचनममृतं, भक्तिपात्र्या पिबन्तं,
कर्मारण्यात् पुरुष -मसमा, - नन्दधाम - प्रविष्टम् ।
त्वां दुर्वार, - स्मर -मद-हरं, त्वत् -प्रसा-दैक- भूमिं,-
क्रूराकाराः, कथमिव रुजा, कण्टका निर्लुठन्ति ॥८॥
पाषाणात्मा, तदितरसमः, केवलं रत्नमूर्तिर्,
मानस्तम्भो, भवति च परस्, तादृशो रत्नवर्गः, ।
दृष्टिप्राप्तो, हरति स कथं, मानरोगं नराणां,
प्रत्यासत्तिर्, - यदि न भवतस्, तस्य तच् - छक्ति - हेतुः ॥९॥
हृद्यः प्राप्तो, मरुदपि भवन्, मूर्ति - शैलोप - वाही,
सद्यः पुसां, नि -रवधि - रुजा, - धूलिबन्धं धुनोति ।

(४१६-जे)

ध्यानाहूतो, हृदय - कमलं, यस्य तु त्वं प्रविष्टस्,
 तस्याशक्यः, क इह भुवने, देव ! लोकोपकारः ॥10॥
 जानासि त्वं, मम भव - भवे, यच् च यादृक् च दुःखं,
 जातं यस्य, स्मरणमपि मे, शस्त्रवन् - निष् - पिनष्टि।
 त्वं सर्वेशः, सकृप इति च, त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या,
 यत् - कर्त्तव्यं, त - दिह विषये, देव एव प्रमाणम् ॥11॥
 प्रापद्-दैवं, तव नुति - पदैर्, जीव - केनोप - दिष्टैः
 पापाचारी, मरण - समये, सारमेयोऽपि सौख्यम्।
 कः संदेहो, यदुप - लभते, वासव - श्री - प्रभुत्वं,
 जल्पज्जाप्यैर्, मणिभि -रमलैस्, त्वन्-नमस्कार - चक्रम् ॥12॥
 शुद्धे ज्ञाने, शुचिनि चरिते, सत्यपि त्वय्यनीचा,
 भक्तिर्नो चे,-दन - वधि - सुखा, - वञ्चिका कुञ्चिकेयम्।
 शक्योद्घाटं, भवति हि कथं, मुक्ति - कामस्य पुंसो,
 मुक्तिद्वारं, परि-दृढ-महा, - मोह - मुद्रा - कवाटम् ॥13॥
 प्रच्छन्नः खल्,-वय-मघ-मयै,- रन्धकारैः समन्तात्,
 पन्था मुक्तेः, स्थ-पुटित-पदः, क्लेश - गर्तै - रगाधैः।
 तत्कस्तेन, व्रजति सुखतो, देव तत्त्वाव - भासी,
 यद्यग्रेऽग्रे, न भवति भवद्,-भारती - रत्न-दीपः ॥14॥
 आत्मज्योतिर्, -निधि-रन-वधिर्, द्रष्टुरानन्दहेतुः,
 कर्मक्षोणी,-पटल - पिहितो, योऽनवाप्यः परेषाम्।
 हस्ते कुर्वन्, त्यनति-चिर-तस्, तं भवद्-भक्ति-भाजः,
 स्तोत्रै-र्बन्ध, - प्रकृति-परुषोद्, दामधात्री - खनित्रैः ॥15॥

प्रत्युत्पन्ना, नय-हिम-गिरे,- रायता चामृताब्धेः,
 या देव ! त्वत्, - पद-कमलयोः, संगता भक्तिगंगा।
 चेतस् तस्यां, मम रुचिवशा, - दाप्लुतं क्षालितांहः,
 कल्माषं यद्,-भवति किमियं, देव सन्देह - भूमिः ॥16॥
 प्रादुर्भूत, - स्थिर - पद - सुख !, त्वामनुध्यायतो मे,
 त्वय्येवाहं, स इति मतिरुत्, - पद्यते निर्विकल्पा।
 मिथ्यैवेहं, तदपि तनुते, तृप्ति - मभ्रेष - रूपां,
 दोषात्मानोऽ,-प्यभि-मत-फलास्, त्वत्प्रसादाद् भवन्ति ॥17॥
 मिथ्यावादं, मल-मपनुदन्, सप्त-भङ्गी-तरंगैर्,-
 वागम्भोधिर, भुवन-मखिलं, देव ! पर्येति यस्ते।
 तस्यावृत्तिं, सपदि विबुधाश्, चेतसैवाचलेन,
 व्यातन्वन्तः, सुचिर - ममृता,- सेवया तृप्नुवन्ति ॥18॥
 आहार्येभ्यः, स्पृहयति परं, यः स्वभावा - दहृद्यः,
 शस्त्रग्राही, भवति सततं, वैरिणा यश्च शक्यः।
 सर्वाङ्गेषु, त्वमसि सुभगस्, त्वं न शक्यः परेषां,
 तत्-किं भूषा,-वसनकुसुमैः, किं च शस्त्रै-रुदस्त्रैः ॥19॥
 इन्द्रः सेवां, तव सुकुरुतां, किं तया श्लाघनं ते,
 तस्यैवेयं, भव-लय-करी, श्लाघ्यता - मातनोति।
 त्वं निस्तारी, जनन-जलधेः, सिद्धि-कान्तापतिस् त्वं,
 त्वं लोकानां, प्रभुरिति तव, श्लाघ्यते स्तोत्र-मित्थं ॥20॥
 वृत्तिर्वाचा,- मपर-सदृशी, न त्वमन्येन तुल्यः,
 स्तुत्युद्गाराः, कथमिव ततस्, त्वय्यमी नः क्रमन्ते।

मैवं भूवंस्, तदपि भगवन्, भक्ति-पीयूष-पुष्टास्,
 ते भव्यानां, - मभि-मत-फलाः, पारिजाता भवन्ति ।।21।।
 कोपावेशो, न तव न तव, क्वापि देव ! प्रसादो,
 व्याप्तं चेतस्, तव हि परमो, -पेक्षयैवा-नपेक्षम् ।
 आज्ञावश्यं, तदपि भुवनं, सन्-निधि-वैर-हारी,
 क्वैवंभूतं, भुवनतिलक, ! प्राभवं त्वत्परेषु ।।22।।
 देव स्तोतुं, त्रिदिव-गणिका, - मण्डली-गीत-कीर्तिम्
 तोतूति त्वां, सकल-विषय, -ज्ञानमूर्ति जनो यः ।
 तस्य क्षेमं, न पदमटतो, जातु जोहूर्ति पन्थास्,
 तत्त्वग्रन्थ, -स्मरण -विषये, नैष मोमूर्ति मर्त्यः ।।23।।
 चित्ते कुर्वन्, - निरवधिसुख, - ज्ञान-दृग्वीर्य-रूपं,
 देव ! त्वां यः, समयनियमा, -दादरेण स्तवीति ।
 श्रेयोमार्गं, स खलु सुकृती, तावता पूरयित्वा,
 कल्याणानां, भवति विषयः, पञ्चधा-पञ्चितानाम् ।।24।।
 भक्ति-प्रह्व-महेन्द्र-पूजित-पद !, त्वत्कीर्तने न क्षमाः,
 सूक्ष्म - ज्ञान -दृशोऽपि संयमभृतः, के हन्त मन्दा वयम् ।
 अस्माभिः स्तवनच्छलेन तु परस्, त्वय्यादरस् तन्यते
 स्वात्माधीन -सुखैषिणां स खलु नः, कल्याण कल्पद्रुमः ।।25।।
 वादिराजमनु शाब्दिकलोको, वादिराजमनु तार्किकसिंहः
 वादिराजमनु काव्यकृतस्ते, वादिराजमनु भव्यसहायः ।।26।।
 ।। इति श्रीएकीभाव -स्तोत्रम् ।।

विषापहार-स्तोत्रम्

(महाकवि धनञ्जय प्रणीतम्)

(उपजाति छन्द)

स्वात्म - स्थितः सर्वगतः समस्त-, व्यापार- वेदी विनिवृत्तसंगः ।
 प्रवृद्ध- कालोऽप्यजरो वरेण्यः, पाया-दपायात् पुरुषः पुराणः ।।1।।
 परै-रचिन्त्यं युग-भार-मेकः, स्तोतुं वहन्योगिभि-रप्यशक्यः ।
 स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न भानोः, किमप्रवेशे विशति प्रदीपः ।।2।।
 तत्याज शक्रः शकनाभि-मानं, नाहं त्यजामि स्तवनानुबन्धम् ।
 स्वल्पेन बोधेन ततोऽधिकार्थं, वातायनेनेव निरूपयामि ।।3।।
 त्वं विश्व-दृश्वा सकलै-रदृश्यो, विद्वा-नशेषं निखिलै-रवेद्यः ।
 वक्तुं कियान्कीदृशमित्यशक्यः, स्तुतिस्ततोऽशक्तिकथा तवास्तु ।।4।।
 व्यापीडितं बाल-मिवात्म-दोषै, रुल्लाघतां लोक-मवापिपस् त्वं ।
 हिताहितान्वेषण-माद्यभाजः, सर्वस्य जन्तोरसि बालवैद्यः ।।5।।
 दाता न हर्ता दिवसं विवस्वा-, नद्यश्च इत्यच्युत-दर्शिताशः ।
 संव्याजमेवं गमयत्यशक्तः, क्षणेन दत्सेऽभिमतं नताय ।।6।।
 उपैति भक्त्या सुमुखः सुखानि, त्वयि स्वभावाद् विमुखश्च दुःखं ।
 सदावदातद्युति-रेकरूपस्, तयोस् त्वमादर्श इवावभासि ।।7।।
 अगाधताब्धेः स यतः पयोधिर्, मेरोश्च तुङ्गा प्रकृतिः स यत्र ।
 द्यावापृथिव्योः पृथुता तथैव, व्याप त्वदीया भुवनान्तराणि ।।8।।
 तवानवस्था परमार्थतत्त्वं, त्वया न गीतः पुनरागमश्च ।
 दृष्टं विहाय त्व-मदृष्ट-मैषीर्-, विरुद्धवृत्तोऽपि समञ्जसस्त्वं ।।9।।

स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मिन्- , नुद्धूलितात्मा यदि नाम शम्भुः ।
 अशेत वृन्दोपहतोऽपि विष्णुः, किं गृह्यते येन भवा-नजागः ।10 ।
 स नीरजाः स्या-दपरोऽघवान् वा, तद्-दोष-कीर्त्यैव न ते गुणित्वं ।
 स्वतोऽम्बु-राशेर्महिमा न देव !, स्तोकापवादेन जलाशयस्य ।11 ।
 कर्मस्थितिं जन्तु-रनेक-भूमिं, नयत्यमुं सा च परस्परस्य ।
 त्वं नेतृभावं हि तयोर्भवाब्धौ, जिनेन्द्र नौनाविकयो-रिवाख्यः ।12 ।
 सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्, धर्माय पापानि समाचरन्ति ।
 तैलाय बालाः सिकतासमूहं, निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः ।13 ।
 विषापहारं मणिमौषधानि, मन्त्रं समुद्-दिश्य रसायनं च ।
 भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति, पर्यायनामानि तवैव तानि ।14 ।
 चित्ते न किञ्चित्कृतवानसि त्वं, देवः कृतश्चैतसि येन सर्वम् ।
 हस्ते कृतं तेन जगद्-विचित्रं, सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः ।15 ।
 त्रिकाल-तत्त्वं त्वमवैस् त्रिलोकी, स्वामीति संख्यानियते-रमीषाम् ।
 बोधाधिपत्यं प्रति नाभविष्यंस्, तेऽन्येऽपि चेद्वाप्यदमूनपीदं ।16 ।
 नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं, नागम्यरूपस्य तवोपकारि ।
 तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य भानो- ,रुद्विभ्रतच्-छत्रमिवादरेण ।17 ।
 क्वोपेक्षकस्त्वं क्व सुखोपदेशः, स चेत्किमिच्छाप्रतिकूलवादः ।
 क्वासौ क्व वा सर्वजगत्-प्रियत्वं, तन् नो यथातथ्यमवेविचं ते ।18 ।
 तुङ्गात्फलं यत्-त-दकिंचनाच्च, प्राप्यं समृद्धान् न धनेश्वरादेः ।
 निरम्भसोऽप्युच्चतमादिवाट्रे, नैकापि निर्याति धुनी पयोधेः ।19 ।

त्रैलोक्य - सेवानियमाय दण्डं, दध्ने यदिन्द्रो विनयेन तस्य ।
 तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं, तत्कर्मयोगाद्यदि वा तवास्तु ।20 ।
 श्रिया परं पश्यति साधु निःस्वः, श्रीमान् न कश्चित्कृपणं त्वदन्यः ।
 यथा प्रकाशस्थित-मन्धकार-, स्थायीक्षतेऽसौ न तथा तमःस्थम् ।21 ।
 स्ववृद्धि-निःश्वास-निमेषभाजि, प्रत्यक्ष-मात्मानुभवेऽपि मूढः ।
 किं चाखिल-ज्ञेय-विवर्तिबोध-, स्वरूप-मध्यक्ष-मवैति लोकः ।22 ।
 तस्यात्मजस्तस्य पितेति देव, त्वां येऽवगायन्ति कुलं प्रकाशय ।
 तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं, पाणौ कृतं हेम पुनस्त्यजन्ति ।23 ।
 दत्तस् त्रिलोक्यां पटहोभिभूताः, सुरासुरास्तस्य महान् स लाभः ।
 मोहस्य मोहस् त्वयि को विरोद्धुं, मूलस्य नाशो बलवद्-विरोधः ।24 ।
 मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्तेश्, चतुर्गतीनां गहनं परेण ।
 सर्वं मया दृष्टमिति स्मयेन, त्वं मा कदाचिद्-भुजमालुलोकः ।25 ।
 स्वर्भानु-रर्कस्य हविर्भुजोऽम्भः, कल्पान्त-वातोऽम्बुनिर्धेर्विघातः ।
 संसारभोगस्य वियोगभावो, विपक्ष-पूर्वाभ्यु-दयास् त्वदन्ये ।26 ।
 अजानतस्त्वां नमतः फलं यत्, तज्जानतोऽन्यं न तु देवतेति ।
 हरिन्मणिं काचधिया दधानस्, तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः ।27 ।
 प्रशस्त-वाचश् चतुराः कषायै- ,र्दग्धस्य देव-व्यवहार-माहुः ।
 गतस्य दीपस्य हि नन्दितत्वं, दृष्टं कपालस्य च मंगलत्वम् ।28 ।
 नानार्थ-मेकार्थ-मदस् त्वदुक्तं, हितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः ।
 निर्दोषतां के न विभावयन्ति, ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण ।29 ।
 न क्वापि वाञ्छा ववृते च वाक् ते, काले क्वचित्कोऽपि तथा नियोगः ।
 न पूरयाम्यम्बुधि-मित्युदंशुः, स्वयं हि शीतद्युति-रभ्युदेति ।30 ।

गुणा गभीराः परमाः प्रसन्ना, बहुप्रकारा बहवस्तवेति ।
 दृष्टोऽयमन्तः स्तवने न तेषां, गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति ।31 ।
 स्तुत्या परं नाभिमतं हि भक्त्या, स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि ।
 स्मरामि देवं प्रणमामि नित्यं, केनाप्युपायेन फलं हि साध्यम् ।32 ।
 ततस् त्रिलोकी-नगराधिदेवं, नित्यं परं ज्योति-रनन्तशक्तिम् ।
 अपुण्य-पापं पर-पुण्य-हेतुं, नमाम्यहं वन्द्य-मवन्दि-तारम् ।33 ।
 अशब्द-मस्पर्श-मरूप-गन्धं, त्वां नीरसं तद्-विषयाव-बोधम् ।
 सर्वस्य माता-रममेय-मन्यैर्, जिनेन्द्र-मस्मार्य-मनुस्मरामि ।34 ।
 अगाध-मन्यैर्-मनसाप्यलंघ्यं, निष्किचनं प्रार्थित-मर्थवद्भिः ।
 विश्वस्य पारं त-मदृष्टपारं, पतिं जिनानां शरणं ब्रजामि ।35 ।
 त्रैलोक्य-दीक्षागुरवे नमस्ते, यो वर्धमानोऽपि निजोन्नतोऽभूत् ।
 प्रागण्डशैलः पुनरद्रिकल्पः, पश्चान् न मेरुः कुलपर्वतोऽभूत् ।36 ।
 स्वयं प्रकाशस्य दिवा निशा वा, न बाध्यता यस्य न बाधकत्वम् ।
 न लाघवं गौरव-मेकरूपं, वन्दे विभुं कालकलामतीतम् ।37 ।
 इति स्तुतिं देव विधाय दैन्याद्, वरं न याचे त्वमुपेक्षकोऽसि ।
 छायातरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्, कश्छायया याचित-यात्मलाभः ।38 ।
 अथास्ति दित्सा यदि वोपरोधस्, त्वय्येव सक्तां दिश भक्तिबुद्धिम् ।
 करिष्यते देव तथा कृपां मे, को वात्मपोष्ये सुमुखो न सूरिः ।39 ।
 वितरति विहिता यथाकथञ्चिज्, जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः ।
 त्वयि नुतिविषयाऽपुनर्विशेषाद्, दिशति सुखानि यशो धनंजयं च ।40 ।
 ॥ इति श्रीविषापहार-स्तोत्रम् ॥

जिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्रम्

(भूपाल कवि प्रणीता)

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

श्रीलीलायतनं महीकुलगृहं, कीर्तिप्रमोदास्पदं,
 वाग्देवी-रतिकेतनं जयरमा, -क्रीडानिधानं महत् ।
 सः स्यात्सर्वमहोत्सवैक-भवनं, यः प्रार्थितार्थ-प्रदं
 प्रातः पश्यति कल्प-पाद-पदलच्, -छायं जिनांघ्रिद्वयम् ।।1॥

(वसन्ततिलका छन्द)

शान्तं वपुः श्रवणहारि वचश्चरित्रं,
 सर्वोपकारि तव देव ततः श्रुतज्ञाः ।
 संसार - मारव - महास्थल - रुन्द्रसान्द्रच्-
 छाया - मही - रुह भवन्त - मुपाश्रयन्ते ।।2॥

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

स्वामिन् नद्य विनिर्गतोऽस्मि जननी, - गर्भान्ध-कूपोदरा, -
 दद्योद्-घाटित-दृष्टि-रस्मि फलवज्, -जन्मास्मि चाद्य स्फुटम् ।
 त्वा-मद्राक्ष-महं य-दक्षय- पदा, -नन्दाय लोकत्रयी, -
 नेत्रेन्दीवर - काननेन्दु - ममृत, -स्यन्दि-प्रभाचन्द्रिकम् ।।3॥
 निःशेष-त्रिदशेन्द्र- शेखर-शिखा, - रत्नप्रदीपावली, -
 सान्द्री - भूत - मृगेन्द्र - विष्टर - तटी, - माणिक्य-दीपावलिः,
 क्वेयं श्रीः क्व च निःस्पृहत्व-मिद-मि, -त्यूहातिगस् त्वादृशः,
 सर्व-ज्ञान-दृशश्-चरित्र-महिमा, लोकेश लोकोत्तरः ।।4॥
 राज्यं शासन-कारि-नाक-पति यत्, -त्यक्तं तृणावज्ञया,
 हेला-निर्दलित-त्रिलोक-महिमा, यन्मोह-मल्लो जितः ।

लोकालोकमपि स्वबोध-मुकुर,-स्यान्तः कृतं यत्-त्वया
सैषाश्चर्य-परम्परा जिनवर, क्वान्यत्र सम्भाव्यते।।5।।

दानं ज्ञान-धनाय दत्त-मसकृत्, पात्राय सद्वृत्तये,
चीर्णान्युग्र-तपांसि तेन सुचिरं, पूजाश्च बह्वयः कृताः।
शीलानां निचयः सहामलगुणैः, सर्वः समासादितो,
दृष्टस् त्वं निज येन दृष्टि-सुभगः श्रद्धापरेण क्षणम्।।6।।
प्रज्ञा-पारमितः स एव भगवान्, पारं स एव श्रुत,-
स्कन्धाब्धे-गुण-रत्न-भूषण इति, श्लाघ्यः स एव ध्रुवं।
नीयन्ते जिन येन कर्ण-हृदया,-लंकारतां त्वद्गुणाः,
संसाराहि - विषापहार - मणयस्, त्रैलोक्य-चूडामणेः।।7।।

(मालिनी छन्द)

जयति दिविज-वृन्दान्,- दोलितै - रिन्दु - रोचिर्,-
निचय - रुचिभि - रुच्चैश्, चामरै - र्वीज्यमानः।
जिन -पति -रनु - रज्यन्, मुक्ति - साम्राज्य -लक्ष्मी,-
युवति - नव - कटाक्ष - क्षेप - लीलां दधानैः।।8।।

(स्रग्धरा छन्द)

देवः श्वे-तात-पत्र,-त्रय-चमरि-रुहा,-शोक-भाश् चक्र-भाषा,-
पुष्पौघा - सार - सिंहा,- सन - सुर -पटहै,-रष्टभिः प्रातिहार्यैः।
साश्चर्यै - भ्राजमानः, सुर - मनुज - सभाम्,-भोजिनी-भानुमाली,
पायान् नः पाद-पीठी,-कृत-सकल जगत्,-पाल-मौलि-जिनेन्द्रः।।9।।

नृत्यत्-स्व-दन्ति-दन्ताम्,-बुरुह-वन-नटन्,-नाक-नारी-निकायः,
सद्यस् त्रैलोक्य-यात्रोत्,-सव-कर-निनदा,-तोद्य-माद्यन्-निलिम्पः।

(416-एस)

हस्ताम्भो-जात-लीला,-विनिहित-सुमनोद्,-दाम-रम्यामर-स्त्री,-
काम्यः कल्याण-पूजा,-विधेषु विजयते, देव देवागमस्ते।।10।।

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

चक्षुष्मा-नह-मेव देव भुवने, नेत्रामृतस्यन्दिनं,
त्वद्-वक्त्रेन्दु-मति-प्रसाद-सुभगैस्, तेजोभि-रुद्भासितम्।
येनालोकयता मयाऽनति-चिराच्, चक्षुः कृतार्थीकृतं,
दृष्टव्या-वधि-वीक्षण-व्यति-कर,-व्याजृम्भ-माणोत्सवम्।।11।।

(वसन्ततिलका छन्द)

कन्तोः सकान्त - मपि मल्ल - मवैति कश्चिन्,
मुग्धो मुकुन्द - मर - विन्दज - मिन्दु - मौलिम्।
मोघी - कृत - त्रिदश - योषि - दपांग - पातस्,
तस्य त्वमेव विजयी जिनराज ! मल्लः।।12।।

(मालिनी छन्द)

किसलयित - मनल्पं त्वद् - विलोकाभि - लाषात्,
कुसुमित - मति - सान्द्रं, त्वत् - समीप - प्रयाणात्।
मम फलित - ममन्दं, त्वन् - मुखेन्दो - रिदानीं,
नयन - पथ - मवाप् - ताद्, - देव ! पुण्यद्रुमेण।।13।।
त्रिभुवन - वन - पुष्प्यत्, - पुष्पको - दण्ड - दर्प-
प्रसर - दव - नवाम्भो, - मुक्ति - सूक्ति - प्रसूतिः।
स जयति जिन - राज, - व्रात - जीमूत - संघः
शत - मख - शिखि - नृत्या, - रम्भ - निर्बन्ध - बन्धुः।।14।।

(स्रग्धरा छन्द)

भूपाल-स्वर्ग-पाल, - प्रमुख-नर-सुर, - श्रेणि-नेत्रालि-माला,-
लीला-चैत्यस्य चैत्या, -लय-मखिल-जगत्, -कौमुदीन्दो-जिनस्य।

(416-टी)

उत्तंसी-भूत-सेवाञ्, - जलि-पुट-नलिनी, - कुङ्मलस्-त्रिःपरीत्य,
श्रीपादच्-छायया-पच्-छिद-भव-दवथुः, संश्रितोऽस्मीव मुक्तिम्।15।

(वसन्ततिलका छन्द)

देव त्वदंघ्रि - नख - मण्डल - दर्पणेऽस्मिन्,-
नर्घ्ये निसर्ग - रुचिरे चिर - दृष्ट - वक्त्रः।
श्री - कीर्ति - कान्ति - धृति - संगम - कारणानि,
भव्यो न कानि लभते शुभ - मंगलानि।।16।।

(मालिनी छन्द)

जयति सुर - नरेन्द्र, - श्री - सुधा - निर्झरिण्याः,
कुल - धरणि - धरोयं, जैन - चैत्याभि - रामः।
प्रविपुल - फल - धर्मा, - नोक - हाग्र - प्रवाल,-
प्रसर - शिखर - शुम्भत्, - केतनः श्रीनिकेतः।।17।।
विनम - दमर - कान्ता, - कुन्तला क्रान्त-कीर्तिसू,
स्फुरित - नख - मयूख, - द्योतिता - शान्त - रालः।
दिविज - मनुज - राज, - व्रात - पूज्य - क्रमाब्जो,
जयति विजित - कर्मा, - राति - जालो जिनेन्द्रः।।18।।

(वसन्ततिलका छन्द)

सुप्तोत् - थितेन सुमुखेन सुमंगलाय,
दृष्टव्य - मस्ति यदि मंगल - मेव वस्तु।
अन्येन किं तदिह नाथ तवैव वक्त्रं,
त्रैलोक्य - मंगल - निकेतन - मीक्षणीयम्।।19।।

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

त्वं धर्मोदय-तापसा-श्रम-शुकस्, -त्वं काव्य-बन्ध-क्रम,-
क्रीडा-नन्दन-कोकिलस् त्व-मुचितः, श्रीमल्लिका-षट्-पदः।

(416-यू)

त्वं पुन-नाग-कथार-विन्द-सरसी, हंसस्-त्वमुत्-तंसकैः,
कैर्-भूपाल न धार्यसे गुण-मणि, -स्रङ्-मालिभिर्-मौलिभिः।।20।।

(मालिनी छन्द)

शिव - सुख - मजर, - श्रीसंगमं चाभिलष्य,-
स्व - मभि - नियम - यन्ति, क्लेश - पाशेन केचित्।
वयमिह तु वचस् ते, भूपतेर् - भाव - यन्तस्
तदुभय - मपि शश्वल्, - लीलया निर्विशामः।।21।।

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

देवेन्द्रास् तव मज्जनानि विदधुर् - देवांगना मंगला,-
न्यापेठुः शर - दिन्दु - निर्मल - यशो, गन्धर्व - देवा जगुः।
शेषाश्-चापि यथा-नियोग-मखिलाः, सेवां सुराश् चक्रिरे
तत् - किं देव वयं विदध्म इति नश्, चित्तं तु दोलायते।।22।।
देव त्वज्-जनना-भिषेक - समये, रोमाञ्च - सत् - कञ्चुकैर्-
देवेन्द्रैर् - य - दनर्ति - नर्तन - विधौ, लब्धि - प्रभावैः स्फुटम्।
किञ्चान्यत् - सुर - सुन्दरी - कुचतट, - प्रान्तावनद् - धोत्तम-
प्रेङ्खद्-वल्लकि-नाद - झंकृत - महो, तत्केन संवर्ण्यते।।23।।
देव त्वत्प्रति - बिम्ब - मम्बुज - दल, - स्मरेक्षणं पश्यतां,
यत्रास्माक - महो महोत्सव - रसो, दृष्टे - रियान् - वर्तते।
साक्षात् - तत्र भवन्त - मीक्षित - वतां, कल्याण - काले तदा,
देवाना-मनि-मेष-लोचन - तया, वृत्तः सः किं वण्यते।।24।।
दृष्टं धाम - रसाय - नस्य महतां, दृष्टं निधीनां पदं,
दृष्टं सिद्ध - रसस्य सद्म सदनं, दृष्टं च चिन्तामणेः।

(416-व्ही)

किं दृष्टे - रथवानु - षड्गिक - फलै, - रेभि - रम्याद्य ध्रुवं,
दृष्टं मुक्ति - विवाह - मंगल - गृहं, दृष्टे जिनश्रीगृहे ।।25।।
दृष्टस् त्वं जिन-राज-चन्द्र ! विकसद्, - भूपेन्द्र - नेत्रोत्-पले,
स्नातं त्वन् -नुति- चन्द्र काम्भसि - भवद् - विद्वच् - चकारोत्सवे ।
नीतश् - चाद्य निदाघजः क्लम - भरः, शान्तिं मया गम्यते,
देव ! त्वद्-गत - चेत-सैव भवतो, भूयात् पुनर्दर्शनम् ।।26।।

।। इति श्रीजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्रम् ।।

तत्त्वार्थसूत्रम्

श्रीमद्-उमास्वामी विरचितम्

(आर्यागीतिका)

त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं, नव-पद-सहितं जीव-षट्काय-लेश्याः,
पञ्चान्ये चास्तिकाया, व्रत-समिति-गति-ज्ञान-चारित्र-भेदाः ।
इत्येतन्मोक्षमूलं, त्रिभुवन-महितैः, प्रोक्त-महद्-भिरिशैः,
प्रत्येति श्रद्धधाति, स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ।।1।।
सिद्धे जयप्प - सिद्धे, चउव् - विहारा - हणाफलं पत्ते ।
वंदित्ता अरहंते, वोच्छं आराहणा कमसो ।।2।।
उज्जोवण-मुज्जवणं, णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसण-णाण-चरित्तं, तवाण-माराहणा भणिया ।।3।।
मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये ।।

प्रथमो अध्यायः

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गः ।।1।। तत्त्वार्थ-
श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ।।2।। तन्-निसर्गा-दधिगमाद् वा ।।3।।
जीवाजी-वास्रव-बन्ध-संवर-निर्जरा-मोक्षास् तत्त्वम् ।।4।। नाम-
स्थापना-द्रव्य-भावतस् तन्-न्यासः ।।5।। प्रमाण-नयै-रधिगमः
।।6।। निर्देश-स्वामित्व-साध-नाधि-करण-स्थिति-विधानतः
।।7।। सत्संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-कालान्तर-भावाल्प-बहुत्वैश्च
।।8।। मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि ज्ञानम् ।।9।।
तत्प्रमाणे ।।10।। आद्ये परोक्षम् ।।11।। प्रत्यक्ष-मन्यत् ।।12।।
मतिः स्मृतिः संज्ञा-चिन्ताऽभिनि-बोध इत्यनर्थान्तरम् ।।13।।
त-दिन्द्रियानिन्द्रिय-निमित्तम् ।।14।। अवग्रहेहावाय-धारणाः
।।15।। बहु-बहुविध-क्षिप्रानिःसृतानुक्त-ध्रुवाणां सेतराणाम्
।।16।। अर्थस्य ।।17।। व्यञ्जनस्यावग्रहः ।।18।। न चक्षु-
रनिन्द्रियाभ्याम् ।।19।। श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेक-द्वादश-भेदम्
।।20।। भव-प्रत्ययोऽवधिर्देव नारकाणाम् ।।21।। क्षयोपशम-
निमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ।।22।। ऋजु-विपुलमती मनः
पर्ययः ।।23।। विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ।।24।। विशुद्धि-
क्षेत्र-स्वामि-विषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ।।25।। मतिश्रुतयो-
र्निबन्धो द्रव्येष्व-वसर्व-पर्यायेषु ।।26।। रूपिष्ववधेः ।।27।। त-
दनन्त-भागे मनःपर्ययस्य ।।28।। सर्व-द्रव्य-पर्यायेषु केवलस्य
।।29।। एकादीनि भाज्यानि युगप-देकस्मिन् - नाचतुर्भ्यः ।।30।।
मतिश्रुताऽवधयो विपर्ययश्च ।।31।। स-दसतो-रवि-शेषाद्

यदृच्छोप-लब्धे-रुन्मत्तवत् ।।32।। नैगम-संग्रह-व्यवहा-रर्जु-सूत्र-
शब्द-समभि-रूढै-वं-भूतानयाः ।।33।।

।। इति तत्त्वार्थसूत्रे (मोक्षशास्त्रे) प्रथमोऽध्यायः ।।

द्वितीयो अध्यायः

औपशमिक-क्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्व-
मौदयिक-पारिणामिकौ च ।।1।। द्वि-नवाष्ट्य-दशैक-विंशति-त्रि-
भेदा यथाक्रमम् ।।2।। सम्यक्त्व-चारित्र्ये ।।3।। ज्ञान-दर्शन-
दान-लाभ-भोगोप-भोग-वीर्याणि च ।।4।। ज्ञानाज्ञान-दर्शन-
लब्धयश्च चतुस् त्रि-त्रि-पंच-भेदाः सम्यक्त्व-चारित्र्य-संयमासंयमाश्च
।।5।। गति-कषाय-लिंग-मिथ्या-दर्शनाज्ञानासंयताऽसिद्ध-लेश्याश्च
चतुश् चतुस् त्र्येकै-कै-कै-षड् भेदाः ।।6।। जीव-भव्याभव्य-
त्वानि च ।।7।। उपयोगो लक्षणम् ।।8।। स द्वि-विधोऽष्ट-
चतुर्भेदः ।।9।। संसारिणो मुक्ताश्च ।।10।। समनस्कामनस्काः
।।11।। संसारिणस् त्रसस्थावराः ।।12।। पृथि-व्यप्तेजो-वायु-
वनस्पतयः स्थावराः ।।13।। द्वीन्द्रियादयस्-त्रसाः ।।14।।
पञ्चेन्द्रियाणि ।।15।। द्विविधानि ।।16।। निर्वृत्युपकरणे
द्रव्येन्द्रियम् ।।17।। लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ।।18।। स्पर्शन-
रसन-घ्राण-चक्षुः श्रोत्राणि ।।19।। स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-शब्दास्
तदर्थाः ।।20।। श्रुत-मनिन्द्रियस्य ।।21।। वनस्पत्यन्ताना-मेकम्
।।22।। कृमि-पिपीलिका-भ्रमर-मनुष्यादीना-मेकैक-वृद्धानि
।।23।। संज्ञिनः समनस्काः ।।24।। विग्रह-गतौ कर्म-
योगः ।।25।। अनुश्रेणि गतिः ।।26।। अविग्रहा जीवस्य ।।27।।

विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ।।28।। एकसमयाऽविग्रहा
।।29।। एकं द्वौ त्रीन् वाऽनाहारकः ।।30।। सम्मूर्च्छन-गर्भोपपादा
जन्म ।।31।। सचित्त-शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्च चैकशस्
तद्योनयः ।।32।। जरायु-जाण्डज-पोतानां गर्भः ।।33।। देव-
नारकाणा-मुपपादः ।।34।। शेषाणां सम्मूर्च्छनम् ।।35।।
औदारिक-वैक्रियि-काहारक-तैजस-कर्मणानि शरीराणि ।।36।।
परं परं सूक्ष्मम् ।।37।। प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात्
।।38।। अनन्तगुणे परे ।।39।। अप्रतीघाते ।।40।। अनादि-
सम्बन्धे च ।।41।। सर्वस्य ।।42।। तदादीनि भाज्यानि युगप-
देकस्याचतुर्भ्यः ।।43।। निरुपभोग-मन्त्यम् ।।44।। गर्भ-
सम्मूर्च्छनज-माद्यम् ।।45।। औपपादिकं वैक्रियिकम् ।।46।।
लब्धि-प्रत्ययं च ।।47।। तैजस-मपि ।।48।। शुभं विशुद्ध-
मव्याघाति चाहारकं प्रमत्त-संयतस्यैव ।।49।। नारक-सम्मूर्च्छिनो
नपुंसकानि ।।50।। न देवाः ।।51।। शेषास् त्रिवेदाः ।।52।।
औपपादिक - चरमोत्तम - देहाऽसंख्येय - वर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः
।।53।।

।। इति तत्त्वार्थ सूत्रे (मोक्षशास्त्रे) द्वितीयोऽध्यायः ।।

तृतीयो अध्यायः

रत्न-शर्करा-बालुका-पंक-धूम-तमो-महातमः प्रभा भूमयो
घनाम्बु-वाता-काश-प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ।।1।। तासु त्रिंशत्-
पंचविंशति-पंचदश-दश-त्रि-पंचोनैक-नरक-शत-सहस्राणि पञ्च-
चैव यथाक्रमम् ।।2।। नारका नित्याशुभतर-लेश्या परिणाम-

देह-वेदना-विक्रियाः ॥३॥ परस्पर-दीरित-दुःखाः ॥४॥
 संक्लिष्टा-सुरोदीरित-दुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेक-
 त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्-त्रिंशत् सागरोपमा सत्त्वानां
 परा स्थितिः ॥६॥ जम्बूद्वीप-लवणोदादयः शुभनामानो द्वीप-
 समुद्राः ॥७॥ द्वि-द्वि-विष्कम्भाः पूर्व-पूर्व-परिक्षेपिणो वलया-
 कृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरु-नाभिर्वृत्तो योजन-शत-सहस्र-विष्कम्भो
 जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरत-हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्य-वतैरा-
 वत-वर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्
 महाहिमवन् निषध-नील-रुक्मि-शिखरिणो वर्षधर-पर्वताः ॥११॥
 हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेम-मयाः ॥१२॥ मणि-विचित्र-
 पार्श्वा उपरि मूले च तुल्य-विस्ताराः ॥१३॥ पद्म-महापद्म-
 तिगिच्छ-केशरि-महापुण्डरीक-पुण्डरीका हृदास्तेषामुपरि ॥१४॥
 प्रथमो योजन-सहस्रायामस् तदूर्ध्व-विष्कम्भो हृदः ॥१५॥ दश-
 योजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥१७॥ तद्-
 द्विगुण-द्विगुणा हृदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन् निवासिन्यो
 देव्यः श्री-ही-धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यः पल्योपम-स्थितयः
 ससामानिक-परिषत्काः ॥१९॥ गंगासिन्धु-रोहिद्रोहि-तास्या-
 हरिद्-धरिकान्ता-सीतासीतोदा-नारीनरकान्ता-सुवर्ण-रूप्य-कूला-
 रक्तारक्तोदाः सरितस् तन् मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः
 पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास् त्वपरगाः ॥२२॥ चतुर्दश-नदी-सहस्र-
 परिवृता गंगासिन्धवादयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षट् विंशति-
 पञ्च-योजन-शत-विस्तारः षट् चैकोन-विंशति-भागा योजनस्य

॥२४॥ तद्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर-वर्षा विदेहान्ताः
 ॥२५॥ उत्तरा दक्षिण-तुल्याः ॥२६॥ भर-तैरा-वतयो-वृद्धि-
 हासौ षट् समयाभ्या-मुत्सर्पिण् यवसर्पिणीभ्याम् ॥२७॥ ताभ्या-
 मपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एक-द्वि-त्रि-पल्योपम-स्थितयो
 हैमवतक-हारिवर्षक-दैव-कुरवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥
 विदेहेषु संख्येयकालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य
 नवति-शतभागः ॥३२॥ द्विर्धातकी-खण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धं
 च ॥३४॥ प्राङ् मानुषोत्तरान् मनुष्याः ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च
 ॥३६॥ भरतैरावतविदेहाः कर्म-भूमयोऽन्यत्र देव-कुरुत्तर-
 कुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्त-मुहूर्ते ॥३८॥
 तिर्यग्-योनिजानां च ॥३९॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे (मोक्षशास्त्रे) तृतीयोऽध्यायः ॥

चतुर्थो अध्यायः

देवाश् चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस् त्रिषु पीतान्त-लेश्याः
 ॥२॥ दशाष्ट-पञ्च-द्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्न-पर्यन्ताः ॥३॥
 इन्द्र-सामानिक-त्रायस्-त्रिंश-पारिषदात्म-रक्ष-लोकपालानीक-
 प्रकीर्ण-काभियोग्य-किल्बिषिकाश् चैकशः ॥४॥ त्रायस् त्रिंश-
 लोकपाल-वर्ज्या व्यन्तर-ज्योतिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्द्विन्द्राः ॥६॥
 काय-प्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-
 मनः प्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥ भवन-वासिनोऽसुर-
 नाग-विद्युत्सुपर्णाग्नि-वातस्तनितो-दधि-द्वीप-दिक्कुमाराः ॥१०॥
 व्यन्तराः किन्नर-किं-पुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-

पिशाचाः ॥11॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्र-मसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-
तारकाश् च ॥12॥ मेरु-प्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥13॥
तत्कृतः कालविभागः ॥14॥ बहि-खस्थिताः ॥15॥ वैमानिकाः
॥16॥ कल्पोप-पन्नाः कल्पातीताश् च ॥17॥ उपर्युपरि
॥18॥ सौधमैशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-लान्तव-
कापिष्ठ-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत-प्राणतयो-रारणा-
च्युतयो-र्नवसु-ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्ता-पराजितेषु
सर्वार्थसिद्धौ च ॥19॥ स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-विशुद्धी-
न्द्रियावधि-विषयतोऽधिकाः ॥20॥ गति-शरीर-परिग्रहाभि-मानतो
हीनाः ॥21॥ पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या द्वि-त्रि-शेषेषु ॥22॥ प्राग्
ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥23॥ ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥24॥
सारस्वता-दित्य-वहन्यरुण-गर्दतोय-तुषि-ताव्या-बाधारिष्टाश् च
॥25॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥26॥ औपपादिक-मनुष्येभ्यः
शेषास् तिर्यग्योनयः ॥27॥ स्थिति-रसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीप-शेषाणां
सागरोपम-त्रिपल्योपमार्द्ध-हीनमिताः ॥28॥ सौधमैशानयोः
सागरोपमे अधिके ॥29॥ सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ॥30॥
त्रि-सप्त-नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभि-रधिकानि तु ॥31॥
आरणाच्युता-दूर्ध्व-मेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ
च ॥32॥ अपरा पल्योपम-मधिकम् ॥33॥ परतः परतः
पूर्वापूर्वानन्तरा ॥34॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥35॥ दशवर्ष-
सहस्राणि प्रथमायाम् ॥36॥ भवनेषु च ॥37॥ व्यन्तराणां
च ॥38॥ परा पल्योपम-मधिकम् ॥39॥ ज्योतिष्काणां च

॥40॥ त-दष्टभागोऽपरा ॥41॥ लौकान्तिकाना-मष्टौ सागरो-
पमाणि सर्वेषाम् ॥42॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे (मोक्षशास्त्रे) चतुर्थोऽध्यायः ॥

पंचमो अध्यायः

अजीव-काया-धर्माधर्माकाश-पुद्गलाः ॥1॥ द्रव्याणि
॥2॥ जीवाश् च ॥3॥ नित्यावस्थितान्-यरूपाणि ॥4॥
रूपिणः पुद्गलाः ॥5॥ आ आकाशा-देकद्रव्याणि ॥6॥
निष्क्रियाणि च ॥7॥ असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैक-जीवानाम्
॥8॥ आका-शस्यानन्ताः ॥9॥ संख्येयासंख्येयाश् च
पुद्गलानाम् ॥10॥ नाणोः ॥11॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥12॥
धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥13॥ एक-प्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम्
॥14॥ असंख्येय-भागादिषु जीवानाम् ॥15॥ प्रदेश-संहार-
विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥16॥ गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयो-रुपकारः
॥17॥ आकाशस्यावगाहः ॥18॥ शरीर-वाङ्-मनःप्राणापानाः
पुद्गलानाम् ॥19॥ सुख-दुःख-जीवित-मरणोप-ग्रहाश् च ॥20॥
परस्पर-पग्रहो जीवानाम् ॥21॥ वर्तना-परिणाम-क्रिया-परत्वा-
परत्वे च कालस्य ॥22॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः
॥23॥ शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्-
छायातपोद्योत-वन्तश् च ॥24॥ अणवः स्कन्धाश् च ॥25॥
भेद-संघातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥26॥ भेदा-दणुः ॥27॥ भेद-
संघाताभ्यां चाक्षुषः ॥28॥ सद्-द्रव्य-लक्षणम् ॥29॥ उत्पाद-
व्यय-ध्रौव्य-युक्तं सत् ॥30॥ तद्-भावाव्ययं नित्यम् ॥31॥

अर्पितानर्पित-सिद्धेः ॥32॥ स्निग्ध-रूक्षत्वाद् बन्धः ॥33॥
न जघन्यगुणानाम् ॥34॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥35॥
द्व्यधिकादि-गुणानां तु ॥36॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ
च ॥37॥ गुण-पर्ययवद् द्रव्यम् ॥38॥ कालश् च ॥39॥
सोऽनन्तसमयः ॥40॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥41॥ तद्भावः
परिणामः ॥42॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥

षष्ठो अध्यायः

काय-वाङ्-मनः कर्मयोगः ॥1॥ स आस्रवः ॥2॥ शुभः
पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥3॥ सकषायाकषाययोः साम्प्रयायि-
केर्यापथयोः ॥4॥ इन्द्रिय-कषायाव्रत-क्रियाः पञ्च चतुः पञ्च-
पञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥5॥ तीव्र-मन्द-ज्ञाताज्ञात-
भावाधिकरण-वीर्य-विशेषेभ्यस् तद्विशेषः ॥6॥ अधिकरणं
जीवाजीवाः ॥7॥ आद्यं संरम्भ-समारम्भारम्भ-योग-कृत
कारितानु-मत-कषाय-विशेषैस् त्रिस् त्रिस् त्रिश् चतुश् चैकशः ॥8॥
निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-भेदाः परम् ॥9॥
तत्प्रदोष-निहन्व-मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः
॥10॥ दुःख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-परिदेव-नान्यात्म-परोभय-
स्थानान्-यसद्-वेद्यस्य ॥11॥ भूत-व्रत्यनुकम्पादान-सराग
संयमादि-योगः क्षान्तिः शौच-मिति सद्देद्यस्य ॥12॥ केवलि-
श्रुत-संघ-धर्म-देवावर्ण-वादो दर्शन-मोहस्य ॥13॥ कषायोदयात्
तीव्र-परिणामश् चारित्र-मोहस्य ॥14॥ बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं

नारकस्यायुषः ॥15॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥16॥ अल्पारम्भ-
परिग्रहत्वं मानुषस्य ॥17॥ स्वभाव-मार्दवं च ॥18॥ निःशील-
व्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥19॥ सराग-संयम-संयमासंयमाकाम-निर्जरा-
बालतपांसि दैवस्य ॥20॥ सम्यक्त्वं च ॥21॥ योगवक्रता
विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥22॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥23॥
दर्शनविशुद्धि-विनय-सम्पन्नता-शीलव्रतैर्ष-वनतीचारोऽभीक्षण-
ज्ञानोपयोग-संवेगौ शक्तिरतस्-त्याग-तपसी-साधु-समाधि-वैयावृत्य-
करण-मर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन-भक्ति-रावश्यक-परिहाणि-मार्ग-
प्रभावना-प्रवचन-वत्सलत्व-मिति तीर्थकरत्वस्य ॥24॥ परात्म-
निन्दाप्रशंसे स-दसद्-गुणोच्-छादनोद्-भावने च नीचैर्गोत्रस्य
॥25॥ तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥26॥
विघ्नकरण-मन्तरायस्य ॥27॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे (मोक्षशास्त्रे) षष्ठोऽध्यायः ॥

सप्तमो अध्यायः

हिंसानृत-स्तेयाब्रह्म-परिग्रहेभ्यो विरति-व्रतम् ॥1॥ देश-
सर्वतोऽणुमहती ॥2॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥3॥
वाङ्-मनोगुप्तीर्यादान-निक्षेपण-समित्यालोचित-पानभोजनानि पञ्च
॥4॥ क्रोध-लोभ-भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्-यनुवीचि-भाषणं
च पञ्च ॥5॥ शून्यागार विमोचितावास-परोपरोधाकरण-
भैक्ष्यशुद्धि-सधर्मा-विसंवादाः पञ्च ॥6॥ स्त्रीरागकथाश्रवण-
तन्मनोहरांग-निरीक्षण-पूर्वरतानुस्मरण-वृष्येष्टरस-स्वशरीरसंस्कार-
त्यागाः पञ्च ॥7॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय-विषय-राग-द्वेष-वर्जनानि

पञ्च ॥८॥ हिंसादिष्-विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥९॥ दुःख-
मेव वा ॥१०॥ मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ्यानि च सत्व-
गुणाधिक-क्लिश्य-मानाविनयेषु ॥११॥ जगत्कायस्वभावौ वा
संवेग-वैराग्यार्थम् ॥१२॥ प्रमत्तयोगात् प्राण-व्यपरोपणं हिंसा
॥१३॥ अस-दभिधान-मनृतम् ॥१४॥ अदत्तादानं स्तेयम्
॥१५॥ मैथुन-मब्रह्म ॥१६॥ मूर्च्छा परिग्रहः ॥१७॥ निःशल्यो
व्रती ॥१८॥ अगार्यनगारश्च ॥१९॥ अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥
दिग्देशानर्थदण्ड-विरति-सामायिक-प्रोषधोप-वासोपभोग-परिभोग-
परिमाणातिथि-संविभाग-व्रत-सम्पन्नश्च ॥२१॥ मारणान्तिकीं
सल्लेखनां जोषिता ॥२२॥ शंका-कांक्षा-विचिकित्-सान्यदृष्टि-
प्रशंसा संस्तवाः सम्यग्दृष्टे-रतीचाराः ॥२३॥ व्रत-शीलेषु पञ्च
पञ्च यथाक्रमम् ॥२४॥ बन्ध-वधच्छेदाति-भारारोपणान्न-
पाननिरोधाः ॥२५॥ मिथ्योपदेश-रहोभ्याख्यान-कूटलेख-क्रिया-
न्यासापहार-साकारमन्त्रभेदाः ॥२६॥ स्तेनप्रयोग-तदाहतादान-
विरुद्ध-राज्यातिक्रम-हीनाधिक-मानोन्मान-प्रतिरूपक-व्यवहाराः
॥२७॥ परविवाह-करणेत्व-रिकापरिगृहीता-परिगृहीता-गमनानंग-
क्रीडा-काम-तीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षेत्र-वास्तु-हिरण्य-सुवर्ण-
धन-धान्य-दासी-दास-कुप्य-प्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्-
तिर्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्र-वृद्धि-स्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥ आनयन-
प्रेष्यप्रयोग-शब्दरूपानुपात-पुद्गलक्षेपाः ॥३१॥ कन्दर्प-कौत्कुच्य-
मौखर्या-समीक्ष्याधि-करणोप-भोग-परिभोगानर्थक्यानि ॥३२॥ योग-
दुःप्रणिधानानादर-स्मृत्यनु-पस्थानानि ॥३३॥ अप्रत्य-वेक्षिता-
प्रमार्जितोत्-सर्गादान-संस्तरोप-क्रमणानादर-स्मृत्यनु-पस्थानानि

॥३४॥ सचित्त-सम्बन्ध-सम्मिश्राभि-षव-दुःपक्वाहाराः ॥३५॥
सचित्त-निक्षेपापिधान-परव्यपदेश-मात्सर्य्य-कालातिक्रमाः ॥३६॥
जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि ॥३७॥
अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ॥३८॥ विधि-द्रव्य-दातृपात्र-
विशेषात् तद्विशेषः ॥३९॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे (मोक्षशास्त्रे) सप्तमोऽध्यायः ॥

अष्टमो अध्यायः

मिथ्यादर्शनाविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्धहेतवः ॥१॥
सकषायत्वाज् जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥२॥
प्रकृति-स्थित्यनुभव-प्रदेशास् तद्विधयः ॥३॥ आद्यो ज्ञान-
दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायु-र्नामगोत्रान्तरायाः ॥४॥ पञ्च-
नव-द्व्यष्टाविंशति-चतुर्द्वि-चत्वारिंशद्-द्विपञ्चभेदा यथाक्रमम्
॥५॥ मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानाम् ॥६॥ चक्षु-रचक्षु-
रवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यान-
गृह्ययश् च ॥७॥ स-दसद्-वेद्ये ॥८॥ दर्शनचारित्र-मोहनी-
याकषाय-कषाय-वेदनीयाख्यास् त्रि-द्वि-नव-षोडश भेदाः सम्यक्त्व-
मिथ्यात्व-तदुभयान्-यकषायकषायौ हास्य-रत्यरति-शोक-भय-
जुगुप्सा-स्त्री-पुन्रपुंसकवेदा अनन्तानु-बन्ध्यप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान-
संज्वलन-विकल्पाश् चैकशः क्रोध-मान-माया-लोभाः ॥९॥
नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि ॥१०॥ गति-जाति-शरीरांगोपांग-
निर्माण-बन्धन-संघात-संस्थान-संहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णानु-
पूर्व्यगुरु-लघूपघात-परघातातपोद्योतोच्छ्वास-विहायोगतयः
प्रत्येकशरीर-त्रस-सुभग-सुस्वर-शुभ-सूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरादेययशः

कीर्ति-सेतराणि तीर्थकरत्वं च॥11॥ उच्चैर्नीचैश्च॥12॥
दान-लाभ-भोगोप-भोग-वीर्याणाम्॥13॥ आदितस् तिसृणा-
मन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम-कोटीकोट्यः परा स्थितिः॥14॥
सप्तति-मोहनीयस्य॥15॥ विंशति-र्नाम-गोत्रयोः॥16॥ त्रयस्-
त्रिंशत् सागरो-पमाण्यायुषः॥17॥ अपरा द्वादश-मुहूर्ता वेदनीयस्य
॥18॥ नामगोत्रयो-रष्टौ॥19॥ शेषाणा-मन्तर्मुहूर्ता॥20॥
विपाकोऽनुभवः॥21॥ स यथानाम॥22॥ ततश्च निर्जरा
॥23॥ नाम-प्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात् सूक्ष्मैक-क्षेत्रावगाह-
स्थिताः सर्वात्म-प्रदेशेषु-वनन्तानन्त-प्रदेशाः॥24॥ सद्देद्यशुभायु-
र्नाम-गोत्राणि-पुण्यम्॥25॥ अतोऽन्यत्पापम्॥26॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे (मोक्षशास्त्रे) अष्टमोऽध्यायः ॥

नवमो अध्यायः

आस्रव-निरोधः संवरः॥1॥ स गुप्ति-समिति-धर्मानुप्रेक्षा-
परीषहजय-चारित्र्यैः॥2॥ तपसा निर्जरा च॥3॥ सम्यग्योग-
निग्रहो गुप्तिः॥4॥ ईर्याभाषैषणादान-निक्षेपोत्सर्गाः समितयः
॥5॥ उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्-त्यागा-
किञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्मः॥6॥ अनित्याशरण-संसारै-
कत्वान्यत्वा-शुच्यास्रव- संवर-निर्जरा-लोक-बोधिदुर्लभ-धर्म-
स्वाख्या-तत्त्वानुचिन्तन-मनुप्रेक्षाः॥7॥ मार्गाच्यवन-निर्जरार्थ
परिषोढव्याः परीषहाः॥8॥ क्षुत्पिपासा-शीतोष्ण-दंशमशक-
नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या-निषद्या-शय्याक्रोश-वध-याचनालाभ-रोग-
तृणस्पर्श-मलसत्कार-पुरस्कार-प्रज्ञाज्ञानादर्शनानि॥9॥ सूक्ष्म-
साम्परायच्-छद्मस्थ-वीतरागयोश् चतुर्दश॥10॥ एकादश

जिने॥11॥ बादरसाम्पराये सर्वे॥12॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने
॥13॥ दर्शनमोहान्तराययो-रदर्शनालाभौ॥14॥ चारित्र्यमोहे
नाग्न्यारति-स्त्री - निषद्याक्रोश-याचना-सत्कारपुरस्काराः॥15॥
वेदनीये शेषाः॥16॥ एकादयो भाज्या युगप-देकस्मिन्-नैकोन-
विंशतेः॥17॥ सामायिकच्-छेदोपस्थापना-परिहारविशुद्धि-सूक्ष्म-
साम्पराय-यथाख्यात-मिति चारित्र्यम्॥18॥ अनशनाव-मौढ्य-
वृत्ति-परिसंख्यान-रसपरित्याग-विविक्तशय्यासन-कायक्लेशा बाह्यं
तपः॥19॥ प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-
ध्यानान्युत्तरम्॥20॥ नव-चतु-र्दश-पञ्च-द्वि-भेदा यथाक्रमं
प्राग्ध्यानात्॥21॥ आलोचना-प्रतिक्रमण-तदुभय-विवेक-
व्युत्सर्ग-तपश्छेद-परिहारोप-स्थापनाः॥22॥ ज्ञान-दर्शन-
चारित्र्योपचाराः॥23॥ आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष्य-ग्लान-
गण-कुल-संघ-साधु-मनोज्ञानाम्॥24॥ वाचना-पृच्छनानु-
प्रेक्षाम्नाय धर्मोपदेशाः॥25॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः॥26॥
उत्तम-संहननस्यैकाग्र-चिन्तानिरोधो ध्यान-मान्तर्मुहूर्तात्॥27॥
आर्त-रौद्र-धर्म्य-शुक्लानि॥28॥ परे मोक्षहेतू॥29॥ आर्त-
ममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृति-समन्वाहारः॥30॥
विपरीतं मनोज्ञस्य॥31॥ वेदनायाश्च॥32॥ निदानं च॥33॥
त-दविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम्॥34॥ हिंसानृत-स्तेय-
विषय-संरक्षणेभ्यो रौद्र-मविरत-देशविरतयोः॥35॥ आज्ञापाय-
विपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम्॥36॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः
॥37॥ परे केवलिनः॥38॥ पृथक्त्वैकत्व-वितर्क-सूक्ष्मक्रिया-
प्रतिपाति-व्युपरत-क्रिया-निवर्तानि॥39॥ त्र्येकयोग-काय-

योगायोगानाम् ॥40॥ एकाश्रये सवितर्क-वीचारे पूर्वे ॥41॥
 अवीचारं द्वितीयम् ॥42॥ वितर्कः श्रुतम् ॥43॥ वीचारोऽर्थ-
 व्यञ्जन-योग-संक्रान्तिः ॥44॥ सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्त-
 वियोजक-दर्शन-मोह-क्षपकोप-शमकोप-शान्तमोह-क्षपक-
 क्षीणमोह-जिनाः क्रमशोऽसंख्येय-गुणनिर्जराः ॥45॥ पुलाक-
 वकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः ॥46॥ संयम-श्रुत-
 प्रति-सेवना-तीर्थलिंग-लेश्योप-पादस्थान-विकल्पतः साध्याः
 ॥47॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे (मोक्षशास्त्रे) नवमोऽध्यायः ॥

दशमो अध्यायः

मोहक्षयाज् ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच् च केवलम्
 ॥1॥ बन्धहेत्व-भाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः
 ॥2॥ औप-शमिकादि-भव्यत्वानां च ॥3॥ अन्यत्र केवल-
 सम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः ॥4॥ त-दनन्तर-मूर्ध्वं
 गच्छत्यालोकान्तात् ॥5॥ पूर्व-प्रयोगा-दसंगत्वाद्-बन्धच्छेदात्
 तथागतिपरिणामाच् च ॥6॥ आविद्ध-कुलाल-चक्रवद् व्यपगत-
 लेपालांबु-वदेरण्ड-बीजवदग्नि शिखावच् च ॥7॥ धर्मास्ति-
 कायाभावात् ॥8॥ क्षेत्र-काल-गति-लिंग-तीर्थ-चारित्र-प्रत्येकबुद्ध-
 बोधित-ज्ञानावगाहनान्तर-संख्याल्प-बहुत्वतः साध्याः ॥9॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे (मोक्षशास्त्रे) दशमोऽध्यायः ॥

अक्षर - मात्र - पदस्वर - हीनं, व्यञ्जनसंधि - विवर्जितरेफम् ।
 साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं, को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥1॥

दशाध्याये परिच्छिन्ने, तत्त्वार्थे पठिते सति ।

फलं स्यादुपवासस्य, भाषितं मुनिपुंगवैः ॥2॥

तत्त्वार्थ-सूत्रकर्तारं, गृद्ध-पिच्छोप-लक्षितम् ।

वन्दे गणीन्द्रसंजात, मुमास्वामीमुनीश्वरम् ॥3॥

पढम चउक्के पढमं, पंचमे जाणि पुग्गलं तच्च ।

छहसत्तमे हि आसव, अट्ठमे बंध णायव्वो ॥4॥

णवमे संवर णिज्जर, दहमे मोक्खं वियाणे हि ।

इह सत्त तच्च भणियं, दह सुत्ते मुणिवरिं देहिं ॥5॥

जं सक्कइ तं कीरइ, जं च ण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।

सद्दहमाणो जीवो, पावई अजरामरं ठाणं ॥6॥

तवयरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीवदयाकरणं ।

अन्ते समाहिमरणं, चउगइ दुक्खं णिवारेई ॥7॥

कोटिशतं द्वादशचैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस् त्र्यधिकानि चैव ।

पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्य, - मेतच्छ्रुतं पंचपदं नमामि ॥8॥

अरहंत-भासियत्थं, गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं ।

पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवयं सिरसा ॥9॥

गुरवः पांतु नो नित्यं, ज्ञानदर्शननायकाः ।

चारित्रार्णवगम्भीरा, मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥10॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रम् ॥

श्रीजिनसहस्रनाम स्तोत्रम्

(श्रीमद्भगवज्जिनसेनाचार्य कृत)

प्रस्तावना

स्वयम्भुवे नमस्तुभ्य-, मुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूत, वृत्तयेऽचिन्त्यवृत्तये ॥1॥
नमस्ते जगतां पत्ये, लक्ष्मीभर्त्रे नमोऽस्तु ते ।
विदांवर नमस्तुभ्यं, नमस्ते वदतांवर ॥2॥
कर्म-शत्रु-हणं देव, मामनन्ति मनीषिणः ।
त्वामानमत्सुरेणमौलि, भामालाऽभ्यर्चितक्रमम् ॥3॥
ध्यान-दुर्घण-निर्भिन्न, घनघाति-महातरुः ।
अनन्त-भव-सन्तान-, जयादासी-रनन्तजित् ॥4॥
त्रैलोक्य-निर्जयावाप्त-, दुर्दर्प-मतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्, जिन ! मृत्युञ्जयो भवान् ॥5॥
विधूताशेष-संसार, बन्धनो भव्य-बान्धवः ।
त्रिपुराऽरिस् त्वमीशाऽसि, जन्ममृत्युजराऽन्तकृत् ॥6॥
त्रिकालविषयाऽशेष-, तत्त्वभेदात् त्रिधोत्थितम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्, त्रिनेत्रोऽसि त्वमीशितः ॥7॥
त्वामन्धकाऽन्तकं प्राहुः, मोहान्धासुरमर्दनात् ।
अर्द्धं ते नारयो यस्मा-, दर्धनारीश्वरोऽस्यतः ॥8॥
शिवः शिवपदाध्यासाद्, दुरिताऽरिहरो हरः ।
शंकरः कृतशं लोके, शम्भवस्त्वं भवन्मुखे ॥9॥

वृषभोऽसि जगज्ज्येष्ठः, पुरुः पुरुगुणोदयैः ।

नाभेयो नाभिसम्भूते, रिक्वाकुकुलनन्दनः ॥10॥

त्वमेकः पुरुषस्कन्धस्, त्वं द्वे लोकस्य लोचने ।

त्वं त्रिधा बुद्ध सन्मार्गस्, त्रिज्ञस् त्रिज्ञानधारकः ॥11॥

चतुः शरणमांगल्य, मूर्तिस् त्वं चतुरस्रधीः ।

पञ्च-ब्रह्म-मयो देव, पावनस्त्वं पुनीहि माम् ॥12॥

स्वर्गाऽवतरिणे तुभ्यं, सद्योजातात्मने नमः ।

जन्माभिषेकवामाय, वामदेव नमोऽस्तु ते ॥13॥

सन्निष्क्रान्ताव- घोराय, परं प्रशम-मीयुषे ।

केवल-ज्ञान-संसिद्धा, वीशानाय नमोऽस्तु ते ॥14॥

पुरस्तत्-पुरुषत्वेन, विमुक्ति-पद-भाजिने ।

नमस्तत्पुरुषाऽवस्थां, भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ॥15॥

ज्ञानावरण-निर्हासान्, नमस्तेऽनन्त-चक्षुषे ।

दर्शनावरणोच्छेदान्, नमस्ते विश्वदृश्वने ॥16॥

नमो दर्शनमोहघ्ने, क्षायिकाऽमलदृष्टये ।

नमश्चारित्रमोहघ्ने, विरागाय महौजसे ॥17॥

नमस्तेऽनन्त-वीर्याय, नमोऽनन्त-सुखात्मने ।

नमस्तेऽनन्तलोकाय, लोकालोकावलोकने ॥18॥

नमस्तेऽनन्त-दानाय, नमस्तेऽनन्त-लब्धये ।

नमस्तेऽनन्त-भोगाय, नमोऽनन्तोपभोगिने ॥19॥

नमः परम-योगाय, नमस्तुभ्य-मयोनये ।
 नमः परम- पूताय, नमस्ते परमर्षये ।।20।।
 नमः परम-विद्याय, नमः पर-मतच्छिदे ।
 नमः परम-तत्त्वाय, नमस्ते परमात्मने ।।21।।
 नमः परम-रूपाय, नमः परम-तेजसे ।
 नमः परम-मार्गाय, नमस्ते परमेष्ठिने ।।22।।
 परमर्धजुषे धाम्ने, परम-ज्योतिषे नमः ।
 नमः पारेतमः प्राप्त, धाम्ने परतरात्मने ।।23।।
 नमः क्षीणकलंकाय, क्षीणबन्ध ! नमोऽस्तु ते ।
 नमस्ते क्षीणमोहाय, क्षीणदोषाय ते नमः ।।24।।
 नमः सुगतये तुभ्यं, शोभनां गतिमीयुषे ।
 नमस्तेऽतीन्द्रियज्ञान, सुखायाऽनिन्द्रियात्मने ।।25।।
 कायबन्धन- निर्मोक्षा-, दकायाय नमोऽस्तु ते ।
 नमस्तुभ्य-मयोगाय, योगिनामधि-योगिने ।।26।।
 अवेदाय नमस्तुभ्य-, मकषायाय ते नमः ।
 नमः परमयोगीन्द्र-, वन्दिताङ्घ्रिद्वयाय ते ।।27।।
 नमः परम-विज्ञान ! नमः परम-संयम ! ।
 नमः परम- दृग्दृष्ट, परमार्थाय तायिने ।।28।।
 नमस्तुभ्य- मलेश्याय, शुक्ल- लेश्यांशक-स्पृशे ।
 नमो भव्येतराऽवस्था, व्यतीताय विमोक्षणे ।।29।।

सञ्ज्य-सञ्जिद्वया-वस्था, व्यतिरिक्ताऽमलात्मने ।
 नमस्ते वीतसञ्ज्ञाय, नमः क्षायिकदृष्टये ।।30।।
 अनाहाराय तृप्ताय, नमः परम-भाजुषे ।
 व्यतीताऽशेषदोषाय, भवाब्धेः पारमीयुषे ।।31।।
 अजराय नमस्तुभ्यं, नमस्ते स्तादजन्मने ।
 अमृत्यवे नमस्तुभ्य-, मचलायाऽक्षरात्मने ।।32।।
 अलमास्तां गुण-स्तोत्र-, मनन्तास्तावका-गुणाः ।
 त्वां नाम-स्मृति- मात्रेण, पर्युपासि-सिषामहे ।।33।।
 एवं स्तुत्वा जिनं देवं, भक्त्या परमया सुधीः ।
 पठेदष्टोत्तरं नाम्नां, सहस्रं पापशान्तये ।।34।।
 प्रसिद्धाऽष्ट-सहस्रेद्ध, लक्षणं त्वां गिरांपतिम् ।
 नाम्ना-मष्टसहस्रेण, तोष्टुमोऽभीष्ट-सिद्धये ।।35।।
 ।। इति प्रस्तावना ।।
 श्रीमान् स्वयम्भूर्वृषभः, शम्भवः शम्भुरात्मभूः ।
 स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता, विश्वभू-रपुनर्भवः ।।36।।
 विश्वात्मा विश्व-लोकेशो, विश्वतश्चक्षुरक्षरः ।
 विश्वविद् विश्व-विद्येशो, विश्वयोनिरनश्वरः ।।37।।
 विश्वदृश्वा, विभुर्धाता, विश्वेशो विश्वलोचनः ।
 विश्वव्यापी विधिर्वेधाः, शाश्वतो विश्वतोमुखः ।।38।।
 विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो, विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
 विश्वदृग् विश्वभूतेशो, विश्वज्योतिरनीश्वरः ।।39।।

जिनो जिष्णुरमेयात्मा, विश्वरीशो जगत्पतिः ।
 अनन्तजि-दचिन्त्यात्मा, भव्यबन्धु- रबन्धनः ॥40॥
 युगादि- पुरुषो ब्रह्मा, पञ्च ब्रह्ममयः शिवः ।
 परः परतरः सूक्ष्मः, परमेष्ठी सनातनः ॥41॥
 स्वयं ज्योति-रजोऽजन्मा, ब्रह्मयोनि-रयोनिजः ।
 मोहारि-विजयी जेता, धर्मचक्री दयाध्वजः ॥42॥
 प्रशान्तारि-रनन्तात्मा, योगी योगीश्वरार्चितः ।
 ब्रह्मविद् - ब्रह्मतत्त्वज्ञो, ब्रह्मोद्या-विद्यतीश्वरः ॥43॥
 शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा, सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
 सिद्धसिद्धान्तविद्ध्येयः, सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥44॥
 सहिष्णु-रच्युतोऽनन्तः, प्रभविष्णु-र्भवोद्भवः ।
 प्रभूष्णु-रजरोऽजर्यो, भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥45॥
 विभावसु-रसम्भूष्णुः, स्वयम्भूष्णुः पुरातनः ।
 परमात्मा परं ज्योतिस्, त्रिजगत्परमेश्वरः ॥46॥
 ॥ इति श्रीमदादिशतम् ॥1॥
 दिव्यभाषा-पतिर्दिव्यः, पूतवाक्पूत-शासनः ।
 पूतात्मा परमज्योतिर्-, धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥47॥
 श्रीपति-र्भगवानर्हन्, नरजा विरजाः शुचिः ।
 तीर्थकृत्केवलीशानः, पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥48॥
 अनन्तदीप्ति-ज्ञानात्मा, स्वयम्बुद्धः प्रजापतिः ।
 मुक्तः शक्तो निराबाधो, निष्कलो भुवनेश्वरः ॥49॥

निरञ्जनो जगज्ज्योति, निरुक्तोक्ति-रनामयः ।
 अचलस्थिति-रक्षोभ्यः, कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥50॥
 अग्रणी- ग्रामणी- नेता, प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।
 शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो, धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥51॥
 वृषध्वजो वृषाधीशो, वृषकेतु- वृषायुधः ।
 वृषो वृषपतिर्भर्ता, वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥52॥
 हिरण्यनाभि-र्भूतात्मा, भूतभृद् भूतभावनः ।
 प्रभवो विभवो भास्वान्, भवो भावो भवान्तकः ॥53॥
 हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः, प्रभूत-विभवोऽभवः ।
 स्वयम्प्रभुः प्रभूतात्मा, भूतनाथो जगत्प्रभुः ॥54॥
 सर्वादिः सर्वदिक् सार्वः, सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
 सर्वात्मा सर्वलोकेशः, सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥55॥
 सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुत्, सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः ।
 विश्रुतो विश्वतः पादो, विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥56॥
 सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः, सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
 भूतभव्य-भवद्भर्ता, विश्वविद्यामहेश्वरः ॥57॥
 ॥ इति दिव्यादिशतम् ॥2॥
 स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः, प्रष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः ।
 स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः, श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठगीः ॥58॥
 विश्वभृद् विश्वसृङ् विश्वेङ्, विश्वभृग् विश्वनायकः ।
 विश्वाशीर्विश्व रूपात्मा, विश्वजिद् विजितान्तकः ॥59॥

विभवो विभवो वीरो, विशोको विजरो जरन् ।
 विरागो विरतोऽसंगो, विविक्तो वीतमत्सरः ॥60॥
 विनेयजनता-बन्धु, विलीना-शेषकल्मषः ।
 वियोगो योगविद् विद्वान्, विधाता सुविधिः सुधीः ॥61॥
 क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः, शान्तिभाक्सलिलात्मकः ।
 वायुमूर्ति-रसंगात्मा, वह्निमूर्ति-रधर्मधृक् ॥62॥
 सुयज्वा यजमानात्मा, सुत्वा सूत्रामपूजितः ।
 ऋत्विग्यज्ञपतिर्याज्यो, यज्ञांगममृतं हविः ॥63॥
 व्योममूर्ति-रमूर्तात्मा, निर्लेपो निर्मलोऽचलः ।
 सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा, सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥64॥
 मन्त्र-विन्मन्त्र-कृन्मन्त्री, मन्त्रमूर्ति-रनन्तगः ।
 स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वन्तः, कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥65॥
 कृती कृतार्थः सत्कृत्यः, कृतकृत्यः कृतक्रतुः ।
 नित्यो मृत्युञ्जयोऽमृत्यु, -रमृतात्माऽमृतोद्भवः ॥66॥
 ब्रह्मनिष्ठः परम्ब्रह्म, ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः ।
 महाब्रह्म- पतिर्ब्रह्मेड्, महाब्रह्मपदेश्वरः ॥67॥
 सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा, ज्ञान-धर्मदम-प्रभुः ।
 प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा, पुराण-पुरुषोत्तमः ॥68॥
 ॥ इति स्थविष्ठादिशतम् ॥3॥
 महाऽशोकध्वजोऽशोकः, कः सृष्ट्या पद्मविष्टरः ।
 पद्मेशः पद्म- सम्भूतिः, पद्मनाभिरनुत्तरः ॥69॥

पद्मयोनिर्जगद्योनि, रित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
 स्तवनार्हो हृषीकेशो, जितजेयः कृतक्रियः ॥70॥
 गणाधिपो गणज्येष्ठो, गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।
 गुणाकरो गुणाम्भोधि-, गुणज्ञो गुणनायकः ॥71॥
 गुणादरी गुणोच्छेदी, निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः ।
 शरण्यः पुण्यवाक्यपूतो, वरेण्यः पुण्यनायकः ॥72॥
 अगण्यः पुण्य-धीर्गुण्यः, पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।
 धर्मारामो गुणग्रामः, पुण्यापुण्य- निरोधकः ॥73॥
 पापापेतो विपापात्मा, विपाप्मा वीतकल्मषः ।
 निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो, निर्मोहो निरुपद्रवः ॥74॥
 निर्निमेषो निराहारो, निष्क्रियो निरुपप्लवः ।
 निष्कलंको निरस्तैना, निर्धूतागा निरास्रवः ॥75॥
 विशालो विपुलज्योति-, रतुलोऽचिन्त्यवैभवः ।
 सुसंवृतः सुगुप्तात्मा, सुभुत् सुनयतत्त्ववित् ॥76॥
 एकविद्यो महाविद्यो, मुनिः परिवृढः पतिः ।
 धीशो विद्यानिधिः साक्षी, विजेता विहतान्तकः ॥77॥
 पिता पितामहः पाता, पवित्रः पावनो गतिः ।
 त्राता भिषग्वरो वर्यो, वरदः परमः पुमान् ॥78॥
 कविः पुराणपुरुषो, वर्षीयान् वृषभः पुरुः ।
 प्रतिष्ठा-प्रसवो हेतु, भुवनैकपितामहः ॥79॥
 ॥ इति महाशोकध्वजादिशतम् ॥4॥

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो, लक्षण्यः शुभलक्षणः ।
 निरक्षः पुण्डरीकाक्षः, पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥४०॥
 सिद्धिदः सिद्धसंकल्पः, सिद्धात्मा सिद्धसाधनः ।
 बुद्धबोध्यो महाबोधि-, वर्धमानो महर्द्धिकः ॥४१॥
 वेदांगो वेदविद् वेद्यो, जातरूपो विदांवरः ।
 वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो, विवेदो वदतांवरः ॥४२॥
 अनादि- निधनोऽव्यक्तो, व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः ।
 युगादिकृद्- युगाधारो, युगादि र्जगदादिजः ॥४३॥
 अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो, महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक् ।
 अनिन्द्रियोऽहमिन्द्रार्च्यो, महेन्द्रमहितो महान् ॥४४॥
 उद्भवः कारणं कर्ता, पारगो भवतारकः ।
 अगाह्यो गहनं गुह्यं, परार्घ्यः परमेश्वरः ॥४५॥
 अनन्तर्द्धि-रमेयर्द्धि, रचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः ।
 प्राग्रयः प्राग्रहरोऽभ्यग्रः, प्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रजः ॥४६॥
 महातपा महातेजा, महोदको महोदयः ।
 महायशा महाधामा, महासत्त्वो महाधृतिः ॥४७॥
 महाधैर्यो महावीर्यो, महासम्पन् महाबलः ।
 महाशक्ति-महाज्योति-, महाभूतिर्महाद्युतिः ॥४८॥
 महामति-महानीतिर्, महाक्षान्ति र्महोदयः ।
 महाप्राज्ञो महाभागो, महानन्दो महाकविः ॥४९॥

महामहा महाकीर्तिर्-, महाकान्ति-महावपुः ।
 महादानो महाज्ञानो, महायोगो महागुणः ॥५०॥
 महा- महपतिः प्राप्त-, महाकल्याण-पञ्चकः ।
 महाप्रभु-महाप्राति-हार्याधीशो महेश्वरः ॥५१॥
 ॥ इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥५॥
 महामुनि-महामौनी, महा-ध्यानी महादमः ।
 महाक्षमो महाशीलो, महायज्ञो महामखः ॥५२॥
 महाव्रत-पतिर्मह्यो, महाकान्ति-धरोऽधिपः ।
 महामैत्री-मयोऽमेयो, महोपायो महोदयः ॥५३॥
 महा-कारुणिको मन्ता, महामन्त्रो महायतिः ।
 महानादो महाघोषो, महेज्यो महसांपतिः ॥५४॥
 महाध्वरधुरो धुर्यो, महौदार्यो महिष्ठवाक् ।
 महात्मा महसांधाम, महर्षि-र्महितोदयः ॥५५॥
 महा-क्लेशाङ्कुशः शूरो, महाभूत-पतिर्गुरुः ।
 महापराक्रमोऽनन्तो, महाक्रोध-रिपुर्वशी ॥५६॥
 महाभवाब्धि-संतारी, महामोहाऽद्रिसूदनः ।
 महागुणाकरः क्षान्तो, महायोगीश्वरः शमी ॥५७॥
 महा-ध्यानपतिर्ध्यात, महाधर्मा महाव्रतः ।
 महा-कर्मरिहात्मज्ञो, महादेवो महेशिता ॥५८॥
 सर्वक्लेशापहः साधुः, सर्वदोषहरो हरः ।
 असंख्येयोऽप्रमेयात्मा, शमात्मा प्रशमाकरः ॥५९॥

सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः, श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः ।
 दान्तात्मा दमतीर्थेशो, योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥100॥
 प्रधान-मात्मा प्रकृतिः, परमः परमोदयः ।
 प्रक्षीण-बन्धः कामारिः, क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥101॥
 प्रणवः प्रणतः प्राणः, प्राणदः प्रणतेश्वरः ।
 प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो, दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥102॥
 आनन्दो नन्दनो नन्दो, वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः ।
 कामहा कामदः काम्यः, कामधेनुररिञ्जयः ॥103॥

॥ इति महामुन्यादिशतम् ॥6॥

असंस्कृत - सुंस्कारः, प्राकृतो वैकृतान्तकृत् ।
 अन्तकृतकान्तगुः कान्तश्, चिन्तामणि-रभीष्टदः ॥104॥
 अजितो जितकामारि, रमितोऽमित-शासनः ।
 जितक्रोधो जितामित्रो, जितक्लेशो जितान्तकः ॥105॥
 जिनेन्द्रः परमानन्दो, मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः ।
 महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो, यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ॥106॥
 नाभेयो नाभिजोऽजातः, सुव्रतो मनुरुत्तमः ।
 अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वा, नधिकोऽधिगुरुः, सुगीः ॥107॥
 सुमेधा विक्रमी स्वामी, दुराधर्षो निरुत्सुकः ।
 विशिष्टः शिष्टभुक्शिष्टः, प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥108॥
 क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः, क्षेमधर्मपतिः क्षमी ।
 अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो, ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥109॥

सुकृती धातु- रिज्यार्हः, सुनयश्चतुराननः ।
 श्रीनिवासश्- चतुर्वक्त्रश्- चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥110॥
 सत्यात्मा सत्यविज्ञानः, सत्यवाक् सत्यशासनः ।
 सत्याशीः सत्यसन्धानः, सत्यः सत्यपरायणः ॥111॥
 स्थेयान् स्थवीयान् नेदीयान्, दवीयान् दूरदर्शनः ।
 अणोरणीयाननणु, - गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥112॥
 सदायोगः सदाभोगः, सदातृप्तः सदाशिवः ।
 सदागतिः सदासौख्यः, सदाविद्यः सदोदयः ॥113॥
 सुघोषः सुमुखः सौम्यः, सुखदः सुहितः सुहृत् ।
 सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता, लोकाध्यक्षो दमेश्वरः ॥114॥

॥ इति असंस्कृतादिशतम् ॥7॥

बृहद्-बृहस्पति-वाग्मी, वाचस्पति-रुदारधीः ।
 मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिराम्पतिः ॥115॥
 नैकरूपो नयोत्तुंगो, नैकात्मा नैकधर्मकृत् ।
 अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा, कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥116॥
 ज्ञानगर्भो दयागर्भो, रत्नगर्भः प्रभास्वरः ।
 पद्मगर्भो जगद्गर्भो, हेमगर्भः सुदर्शनः ॥117॥
 लक्ष्मीवांस् त्रिदशाध्यक्षो, दृढीयानिन ईशिता ।
 मनोहरो मनोजांगो, धीरो, गम्भीरशासनः ॥118॥
 धर्मयूपो दयायागो, धर्मनेमि-र्मुनीश्वरः ।
 धर्मचक्रायुधो देवः, कर्महा धर्मघोषणः ॥119॥

अमोघवागमोघाज्ञो, निर्मलोऽमोघ- शासनः ।
 सुरूपः सुभगस् त्यागी, समयज्ञः समाहितः ॥120॥
 सुस्थितः स्वास्थ्यभावस्वस्थो, नीरजस्को निरुद्धवः ।
 अलेपो निष्कलंकात्मा, वीतरागो गतस्पृहः ॥121॥
 वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा, निःसपत्नो जितेन्द्रियः ।
 प्रशान्तोऽनन्तधामर्षि-, मंगलं मलहानयः ॥122॥
 अनीदृगुप-माभूतो, दिष्टि-दैवमगोचरः ।
 अमूर्तो मूर्तिमानेको, नैको नानैक- तत्त्वदृक् ॥123॥
 अध्यात्म-गम्योऽगम्यात्मा, योगविद्योगि-वन्दितः ।
 सर्वत्रगः सदाभावी, त्रिकाल-विषयार्थदृक् ॥124॥
 शंकरः शंवदो दान्तो, दमी क्षान्तिपरायणः ।
 अधिपः परमानन्दः, परात्मज्ञः परात्परः ॥125॥
 त्रिजगद्-बल्लभोऽभ्यर्च्यस्, त्रिजगन्-मंगलोदयः ।
 त्रिजगत्पतिपूज्यांग्रिस्, त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥126॥

॥ इति बृहदादिशतम् ॥४॥

त्रिकालदर्शी लोकेशो, लोकधाता दृढव्रतः ।
 सर्वलोकातिगः पूज्यः, सर्वलोकैक- सारथिः ॥127॥
 पुराणः पुरुषः पूर्वः, कृतपूर्वांग-विस्तरः ।
 आदिदेवः पुराणाद्यः, पुरुदेवोऽधिदेवता ॥128॥
 युगमुख्यो युगज्येष्ठो, युगादिस्थिति-देशकः ।
 कल्याणवर्णः कल्याणः, कल्यः कल्याणलक्षणः ॥129॥

कल्याणप्रकृतिर्दीप्रः, कल्याणात्मा विकल्मषः ।
 विकलंकः कलातीतः, कलिलघ्नः कलाधरः ॥130॥
 देवदेवो जगन्नाथो, जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
 जगद्धितैषी लोकज्ञः, सर्वगो जगदग्रजः ॥131॥
 चराचरगुरु-गोप्यो, गूढात्मा गूढगोचरः ।
 सद्योजातः प्रकाशात्मा, ज्वलज्ज्वलनसत्प्रभः ॥132॥
 आदित्यवर्णो भर्माभः, सुप्रभः कनकप्रभः ।
 सुवर्ण-वर्णो रुक्माभः, सूर्यकोटि-समप्रभः ॥133॥
 तपनीय-निभस्तुंगो, बालार्काभोऽनल-प्रभः ।
 सन्ध्याभ्रबभ्रुर्हेमा भस्, तप्तचामीकरच्छविः ॥134॥
 निष्टप्त-कनकच्छायः, कनत्काञ्चन-सन्निभः ।
 हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः, शातकुम्भ- निभप्रभः ॥135॥
 द्युम्नाभो जातरूपाभस्, तप्तजाम्बू- नदद्युतिः ।
 सुधौतकल- धौतश्रीः, प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ॥136॥
 शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः, स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः ।
 शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः, प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥137॥
 शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः, शिवतातिः शिवप्रदः ।
 शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः, कान्तिमान् कामितप्रदः ॥138॥
 श्रेयोनिधिरधिष्ठान-, मप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
 सुस्थिरः स्थावरः स्थास्नुः, प्रथीयान् प्रथितः पृथुः ॥139॥

॥ इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥९॥

दिग्वासा वात-रसनो, निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः ।
 निष्किञ्चनो निराशंसो, ज्ञानचक्षु- रमोमुहः ॥140॥
 तेजोराशि-रनन्तौजा, ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।
 तेजोमयोऽमित-ज्योतिर्, ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥141॥
 जगच्चूडामणि-दीप्तः, शंवान्- विघ्न-विनायकः ।
 कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो, लोकालोक- प्रकाशकः ॥142॥
 अनिद्रालु-रतन्द्रालु, जर्गरुकः प्रमामयः ।
 लक्ष्मीपतिर् जगज्ज्योतिर्, धर्मराजः प्रजाहितः ॥143॥
 मुमुक्षुर्बन्ध-मोक्षज्ञो, जिताक्षो जितमन्मथः ।
 प्रशान्त-रसशैलूषो, भव्यपेटक-नायकः ॥144॥
 मूलकर्ताऽखिल-ज्योतिः, र्मलघ्नो मूलकारणः ।
 आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥145॥
 प्रवक्ता वचसा- मीशो, मारजिद्- विश्वभाववित् ।
 सुतनुस्तनु-निर्मुक्तः, सुगतो हतदुर्नयः ॥146॥
 श्रीशः श्रीश्रित-पादाब्जो, वीतभी-रभयंकरः ।
 उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो, निश्चलो लोक-वत्सलः ॥147॥
 लोकोत्तरो लोकपतिः, लोचक्षु-रपारधीः ।
 धीरधी-र्बुद्धसन्मार्गः, शुद्धः सुनृत-पूतवाक् ॥148॥
 प्रज्ञा-पारमितः प्राज्ञो, यति-नियमितेन्द्रियः ।
 भदन्तो भद्रकृद्भद्रः, कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥149॥

समुन्मूलित - कर्मारिः, कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः ।
 कर्मण्यः कर्मठः प्रांशु, हेयादेयविचक्षणः ॥150॥
 अनन्तशक्ति-रच्छेद्यस्, त्रिपुरारिस्-त्रिलोचनः ।
 त्रिनेत्रस् त्र्यम्ब-कस् त्र्यक्षः, केवलज्ञान-वीक्षणः ॥151॥
 समन्तभद्रः शान्तारिर्, धर्माचार्यो दयानिधिः ।
 सूक्ष्मदर्शी जितानंगः, कृपालुर्धर्मदेशकः ॥152॥
 शुभंयुः सुख- साद्भूतः, पुण्यराशि- रनामयः ।
 धर्मपालो जगत्पालो, धर्मसाम्राज्यनायकः ॥153॥
 ॥ इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ॥10॥
 धाम्नांपते तवा-मूनि, नामान्यागम-कोविदैः ।
 समुच्चितान्-यनुध्यायन्, पुमान् पूतस्मृतिर्भवेत् ॥154॥
 गोचरोऽपि गिरामासां, त्व-मवाग्नोचरो मतः ।
 स्तोता तथाप्यसन्दिग्धं, त्वत्तोऽभीष्टफलं भजेत् ॥155॥
 त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्, त्वमतोऽसि जगद्भिषक् ।
 त्वमतोऽसि जगद्धाता, त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥156॥
 त्वमेकं जगतां ज्योतिस्, त्वं द्विरूपोपयोगभाक् ।
 त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यंगं, स्वोत्थानन्तचतुष्टयः ॥157॥
 त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा, पञ्चकल्याणनायकः ।
 षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्, त्वं सप्तनयसङ्ग्रहः ॥158॥
 दिव्याष्ट-गुणमूर्तिस्त्वं, नवकेवल-लब्धिकः ।
 दशावतार-निर्धार्यो, मां पाहि परमेश्वर ! ॥159॥

युष्मन्नामा-वलीदृब्ध, विलसत्स्तोत्र-मालया ।
 भवन्तं वरिवस्यामः, प्रसीदानु-गृहाण नः ॥160॥
 इदं स्तोत्र-मनुस्मृत्य, पूतो भवति भाक्तिकः ।
 यः संपाठं पठत्येनं, स स्यात्कल्याण-भाजनम् ॥161॥
 ततः सदेदं पुण्यार्थी, पुमान् पठतु पुण्यधीः ।
 पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं, परमा-मभिलाषुकः ॥162॥
 स्तुत्विति मघवा देवं, चराचर-जगद्गुरुम् ।
 ततस्तीर्थ-विहारस्य, व्यधात्प्रस्तावना-मिमाम् ॥163॥
 स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः, स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः ।
 निष्ठितार्थो भवान् स्तुत्यः, फलं नैश्रेयसं सुखम् ॥164॥
 यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः, स्तोता स्वयं कस्यचिद्,
 ध्येयो योगि-जनस्य यश्च न तरां, ध्याता स्वयं कस्यचित् ।
 यो नन्तृन् नयते नमस्कृति-मलं, नन्तव्य-पक्षेक्षणः,
 स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च गुरु-, देवः पुरुः पावनः ॥165॥
 तं देवं त्रिदशाधि-पार्चितपदं, घाति-क्षयानन्तरं,
 प्रोत्थानन्त-चतुष्टयं जिनमिनं, भव्याब्जिनीना-मिनम् ।
 मानस्तम्भ-विलोकनानत-जगन्, मान्यं त्रिलोकी-पतिं,
 प्राप्ताचिन्त्य-बहिर्विभूति-मनघं, भक्त्या प्रवन्दामहे ॥166॥
 ॥ इति श्रीभगवज्जिनाष्टोत्तर-सहस्रनामस्तोत्रम् समाप्तम् ॥

भावना द्वात्रिंशतिका

॥ उपजाति छन्द ॥

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
माध्यस्थ्य-भावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव ॥1॥
शरीरतः कर्तुमनन्त-शक्तिं, विभिन्न-मात्मान-मपास्तदोषम् ।
जिनेन्द्र कोषादिव खड्गयष्टिं, तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ॥2॥
दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे, योगे वियोगे भवने वने वा ।
निराकृताशेष-ममत्व-बुद्धेः, समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ॥3॥
मुनीश लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निखाताविव बिम्बिताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ॥4॥
एकेन्द्रियाद्या यदि देव देहिनः, प्रमादतः सञ्चरता यतस्ततः ।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीडितास्, तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ॥5॥
विमुक्तिमार्ग-प्रतिकूल वर्तिना, मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया ।
चारित्रशुद्धे-र्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥6॥
विनिन्दनालोचन गर्हणैरहं, मनोवचः, कायकषाय-निर्मितम् ।
निहन्मि पापं भवदुःखकारणं, भिषग्विषं मन्त्रगुणैरिवाखिलम् ॥7॥
अतिक्रमं यद्विमतेर्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं सुचरित्रकर्मणः ।
व्यधामनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥8॥
क्षतिं मनःशुद्धि-विधेरतिक्रमं, व्यतिक्रमं शीलवृत्ते-विलंघनम् ।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं, वदन्त्यनाचारमिहातिसक्तताम् ॥9॥

यदर्थ-मात्रा-पद-वाक्य-हीनं, मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् ।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवलबोधलब्धिम् ॥10॥
बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः, स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः ।
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने, त्वां वन्दमानस्य ममास्तु देवि ॥11॥
यः स्मर्यते सर्व-मुनीन्द्र-वृन्दैः, र्यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः ।
यो गीयते वेद-पुराण-शास्त्रैः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥12॥
यो दर्शन-ज्ञान-सुख-स्वभावः, समस्त-संसार-विकार-बाह्यः ।
समाधिगम्यः परमात्म-सञ्ज्ञः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥13॥
निषूदते यो भव-दुःख-जालं, निरीक्षते यो जगदन्तरालम् ।
योऽन्तर्गतो योगि-निरीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥14॥
विमुक्ति-मार्ग-प्रतिपादको यो, यो जन्म-मृत्यु-व्यसनाद्यतीतः ।
त्रिलोकलोकी विकलोऽकलंकः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥15॥
क्रोडीकृताशेष-शरीरि-वर्गा, रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः ।
निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥16॥
यो व्यापको विश्वजनीनवृत्तेः, सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबन्धः ।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥17॥
न स्पृश्यते कर्मकलंकदोषैर्, यो ध्वान्त संघैरिव तिग्म रश्मिः ।
निरञ्जनं नित्य-मनेक-मेकं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥18॥
विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुवनावभासि ।
स्वात्मस्थितं बोधमय-प्रकाशं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥19॥

विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्ट-मिदं विविक्तम् ।
 शुद्धं शिवं शान्त-मना-द्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥20॥
 येन क्षता मन्मथ-मान-मूर्च्छा, विषाद-निद्राभय-शोक-चिन्ताः ।
 क्षतोऽनलेनेव तरु-प्रपञ्चस्, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥21॥
 न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी विधानतो नो फलको विनिर्मितः ।
 यतो निरस्ताक्षकायविद्विषः सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥22॥
 न संस्तरो भद्र समाधि- साधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनम् ।
 यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं, विमुच्य सर्वमपि बाह्यवासनाम् ॥23॥
 न सन्ति बाह्या मम केचनार्था, भवामि तेषां न कदाचनाहम् ।
 इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र ! मुक्त्यै ॥24॥
 आत्मान-मात्मन्यव-लोकमानस्, त्वं दर्शन-ज्ञानमयो विशुद्धः ।
 एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र, स्थितोऽपि साधुर्लभते समाधिम् ॥25॥
 एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा, विनिर्मलः साधिगमस्वभावः ।
 बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ता, न शाश्वतः कर्मभवाः स्वकीयाः ॥26॥
 यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्र-कलत्र-मित्रैः ।
 पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः, कुतो हि तिष्ठन्ति शरीर मध्ये ॥27॥
 संयोगतो दुःख- मनेकभेदं, यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी ।
 ततस् त्रिधासौ परिवर्जनीयो, यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् ॥28॥
 सर्वं निराकृत्य विकल्प- जालं, संसार- कान्तार- निपात हेतुम् ।
 विविक्त-मात्मान-मवेक्षमाणो, निलीयसे त्वं परमात्म तत्त्वे ॥29॥

स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम् ।
 परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा ॥30॥
 निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोऽपि कस्यापि ददाति किञ्चन ।
 विचारयन्-नेवमनन्यमानसः, परो ददातीति विमुञ्च शेमुषीम् ॥31॥
 यैः परमात्माऽमित गतिवन्धः, सर्व-विविक्तो-भृश-मनवद्यः ।
 शश्वदधीतो मनसि लभन्ते, मुक्ति निकेतं विभववरं ते ॥32॥

इति द्वात्रिंशता वृत्तैः, परमात्मान-मीक्षते ।
 योऽनन्यगतचेतस्को, यात्यसौ पदमव्ययम् ॥33॥

स्तुति (सकल ज्ञेय ज्ञायक)

(पं. दौलतराम जी कृत)

दोहा

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द रस लीन ।
 सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि रज रहस विहीन ॥1॥
 जय वीतराग विज्ञान पूर, जय मोह तिमिर को हरन सूर ।
 जय ज्ञान अनन्तानन्तधार, दृग सुख वीरज मण्डित अपार ॥2॥
 जय परम शान्त मुद्रा समेत, भविजन को निज अनुभूति हेत ।
 भवि भागन वच जोगे वशाय, तुम धुनि है सुनि विभ्रम नशाय ॥3॥
 तुम गुण चिन्तत निज पर विवेक, प्रगटे विघटे आपद अनेक ।
 तुम जगभूषण दूषण विमुक्त, सब महिमा युक्त विकल्प मुक्त ॥4॥
 अविरुद्ध, शुद्ध चेतन स्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप ।
 शुभ-अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वभाविक परणतिमय अछीण ॥5॥

अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्व चतुष्टय मय राजत गम्भीर ।
मुनि गणधरादि सेवत महंत, नव केवल लब्धिरमा धरन्त ॥6॥
तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहें सदीव ।
भवसागर में दुख छार वारि, तारण को और न आप टारि ॥7॥
यह लख निज दुखगद हरण काज, तुम ही निमित्त कारण इलाज ।
जाने ताते मैं शरण आय, उचरो निज दुःख जो चिर लहाय ॥8॥
मैं भ्रम्यो अपनपो बिसरि आप, अपनाये विधि फल पुण्य पाप ।
निज को पर का कर्ता पिछान, पर में अनिष्टता इष्ट ठान ॥9॥
आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि ।
तन परणति में आपो चितार, कबहूँ न अनुभवों स्वपद सार ॥10॥
तुमको बिन जाने जो क्लेष, पायो सो तुम जानत जिनेश ।
पशु नारक नर सुरगति मझार, भव धर धर मरयो अनंत वार ॥11॥
अब काल लब्धि बलतै दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ।
मन शान्त भयो मिटि सकलद्वंद, चाख्यो स्वात्म रस दुःखनिकंद ॥12॥
तातैं अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरै न कभी तुम चरण साथ ।
तुम गुणगण को नहिं छेव देव, जगतारण को तुम विरद एव ॥13॥
आतम के अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परणति न जाय ॥
मैं रहूँ आप में आप लीन, सो करो होऊँ जो निजाधीन ॥14॥
मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश ।
मुझ कारज के कारण सु आप, शिव करो हरो मम मोह ताप ॥15॥

शशि शान्ति करण तप हरण हेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ।
पीवत पीयूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभवतै भव नशाय ॥16॥
त्रिभुवन तिहुँ काल मँझार कोय, नहिं तुम बिन निज सुखदाय होय ।
मो उर यह निश्चय भयो आज, दुःख जलधि उतारन तुम जहाज ॥17॥

दोहा

तुम गुणगण मणि गणपति, गणत न पावहिं पार ।
‘दौल’ स्वल्पमति किम कहे, नमौ त्रियोग सम्हार ॥18॥

स्तुति (अहो जगत गुरु)

(पं. भूधरदास कृत स्तुति)

अहो ! जगतगुरु, देव सुनियो अरज हमारी ।
तुम प्रभु दीनदयाल, मैं दुखिया संसारी ॥1॥
इस भव वन के माहि, काल अनादि गमायो ।
भ्रमत चहुँगति माहिं, सुख नहिं, दुख बहु पायो ॥2॥
कर्म महारिपु जोर, एक न कान करें जी ।
मनमने दुख देहिं, काहूँसों नाहिं डरें जी ॥3॥
कबहूँ इतर निगोद, कबहूँ नरक दिखावैं ।
सुर-नर-पशुगति माहिं, बहुविधि नाच नचावैं ॥4॥
प्रभु ! इनके परसंग, भव भव माहिं बुरो जी ।
जे दुख देखे देव ! तुमसों नाहिं दुरो जी ॥5॥
एक जनम की बात, कहि न सकौ सुनि स्वामी ।
तुम अनन्त परजाय, जानत अन्तर्यामी ॥6॥

मैं तो एक अनाथ, ये मिल दुष्ट घनेरे ।
कियो बहुत बेहाल, सुनियो साहिब मेरे ॥7॥
ज्ञान महानिधि लूटि रंक निबल करि डार्यो ।
तुम ही इन मुझ माहिं, हे जिन ! अन्तर पारयो ॥8॥
पाप पुण्य मिल दोइ, पायनि बेड़ी डारी ।
तन कारागृह माहिं मोहि दियो दुख भारी ॥9॥
इनको नेक विगार, मैं कछु नाहिं कियो जी ।
विन कारन जगवंद्य ! बहुविधि वैर लियो जी ॥10॥
अब आयो तुम पास, सुनि कर सुजस तिहारो ।
नीति निपुण महाराज, कीजै न्याय हमारो ॥11॥
दुष्टन देहु निकाल, साधुन को रखि लीजे ।
विनवै 'भूधरदास' हे प्रभु ! ढील न कीजै ॥12॥

गुरु स्तुति (ते गुरु मेरे मन वसो)

(पं. भूधरदास कृत स्तुति)

ते गुरु मेरे मन बसो, जे भवजलधि जहाज ।
आप तिरैं पर तारही, ऐसे श्री ऋषिराज ।।टेक।।
मोह महारिपु जानिकै, छांड्यो सब घरबार ।
होय दिगम्बर वन बसे, आतम शुद्ध विचार ।।ते।।
रोग उरग बिल वपु गिण्यो, भोग भुजंग समान ।
कदली तरु संसार है, त्यागो सब यह जान ।।ते।।
रतनत्रय निधि उर धरैं, अरु निरग्रन्थ त्रिकाल ।

मार्यो काम खबीस को, स्वामी परम दयाल॥ते॥
 पंच महाव्रत आचरें, पाँचों समिति समेत।
 तीन गुप्ति पालें सदा, अजर अमर पद हेत॥ते॥
 धर्म धरें दश लक्ष्मी, भावें भावना सार।
 सहैं परीषह बीस द्वै चारित रतन भण्डार॥ते॥
 जेठ तपै रवि आकरो सूखै सरवर नीर।
 शैल शिखर मुनि तप तपैं दाझै नगन शरीर॥ते॥
 पावस रैन डरावनी बरसै जलधर धार।
 तरु तल निवसैं साहसी चालै झंझा बयार॥ते॥
 शीत पड़े कपि-मद गले, दाहै सब वनराय।
 ताल तरंगनिके तटै, ठाडे ध्यान लगाय॥ते॥
 इह विधि दुद्धर तप तपैं, तीनों कालमंझार।
 लागे सहज सरूपमें, तनसों ममत निवार॥ते॥
 पूरब भोग न चिन्तवै, आगम वांछा नाहिं।
 चहुँगति के दुःखों से डरै, सुरति लगी शिवमाहिं॥ते॥
 न रंग महल में पोढ़ते, न कोमल सेज बिछाय।
 ते पश्चिम निशि भूमि में सोवै संवरि काय॥ते॥
 गज चढ़ि चलते गरब सों, सेना सजि चतुरंग।
 निरखि निरखि पग ते धरें, पालैं करुणा अंग॥ते॥
 वे गुरु चरण जहाँ धरें, जग में तीरथ जेह।
 सो रज मम मस्तक चढ़ो! 'भूधर' माँगे एह॥

निर्वाणकाण्ड (भाषा)

दोहा-

वीतराग वंदौ सदा, भावसहित सिरनाय।
 कहूं काण्ड निर्वाण की, भाषा सुगम बनाय॥1॥

अष्टापद आदीश्वर स्वामि, वासुपूज्य चंपापुरि नामि।
 नेमिनाथ स्वामी गिरनार, बंदौ भाव-भगति उर धार॥2॥
 चरम तीर्थकर चरम-शरीर, पावापुरि स्वामी महावीर।
 शिखर सम्मेद जिनेसुर बीस, भाव सहित बंदौ निश-दीस॥3॥
 वरदत्तराय रु इन्द्र मुनीन्द्र, सायरदत्त आदि गुणवृन्द।
 नगर तारवर मुनि उठकोड़ि, बंदौ भावसहित कर जोड़ि॥4॥
 श्रीगिरनार शिखर विख्यात, कोड़ि बहत्तर अरु सौ सात।
 संबु-प्रद्युम्न कुमार द्वै भाय, अनिरुद्ध आदि नमूँ तसु पाय॥5॥
 रामचन्द्र के सुत द्वै वीर, लाड-नरिंद आदि गुणधीर।
 पांच कोड़ि मुनि मुक्ति मँझार, पावागिरि वंदौ निरधार॥6॥
 पांडव तीन द्रविड-राजान, आठ कोड़ि मुनि मुक्ति पयान।
 श्रीशत्रुंजय-गिरि के सीस, भावसहित वंदौ निश-दीस॥7॥
 जे बलभद्र मुक्ति में गये, आठ कोड़ि मुनि औरहु भये।
 श्रीगजपंथ सिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूँ तिहूँ काल॥8॥
 राम हणू सुग्रीव सुडील, गवय गवाख्य नील महानील।
 कोड़ि निन्याणवें मुक्ति पयान, तुंगीगिरि वंदौ धरि ध्यान॥9॥

नंग अनंग कुमार सुजान, पाँच कोड़ि अरु अर्ध प्रमान।
 मुक्ति गये सोनागिरि-शीश, ते वंदौं त्रिभुवनपति ईस॥10॥
 रावण के सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवा-तट सार।
 कोटि पंच अरु लाख पचास, ते वंदौं धरि परम हुलास॥11॥
 रेवानदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट।
 द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठ कोड़ि वंदौं भव पार॥12॥
 बड़वानी बड़नयन सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग।
 इन्द्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण, ते वंदौं भव-सागर तर्ण॥13॥
 सुवरण-भद्र आदि मुनि चार, पावागिरि-वर-शिखर मँझार।
 चेलना-नदी तीर के पास, मुक्ति गये वंदौं नित तास॥14॥
 फलहोड़ी बड़गाम अनूप, पच्छिम दिशा द्रोणगिरि रूप।
 गुरुदत्तादि-मुनीसुर जहाँ, मुक्ति गये वंदौं नित तहाँ॥15॥
 बाल महाबाल मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय।
 श्रीअष्टापद मुक्ति मँझार, ते वंदौं नित सुरत संभार॥16॥
 अचलापुर की दिश इसान, जहाँ मेढ़गिरि नाम प्रधान।
 साढ़े तीन कोड़ि मुनिराय, तिनके चरण नमूँ चित लाय॥17॥
 वंशस्थल वनके ढिग होय, पच्छिम दिशा कुंथुगिरि सोय।
 कुलभूषण देशभूषण नाम, तिनके चरणनि करूँ प्रणाम॥18॥
 जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पाँचसौ लहे।
 कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वंदन करूँ जोड़ जुग पान॥19॥
 समवशरण श्रीपार्श्व-जिनंद, रेसिंदीगिरि नयनानंद।
 वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते वंदौं नित धरम-जिहाज॥20॥

मथुरापुर पवित्र उद्यान, जम्बूस्वामी जी निर्वाण।
 चरमकेवली पंचमकाल, ते वन्दौं नित दीन दयाल॥21॥
 तीन लोक के तीरथ जहाँ, नित प्रति वंदन कीजै तहाँ।
 मन वच काय सहित सिरनाय, वंदन करहिं भविक गुणगाय॥22॥
 संवत सतरह सौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल।
 'भैया' वंदन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकांड गुणमाल॥23॥
 ॥ इति निर्वाणकाण्ड ॥

मस्तकाभिषेक

बाहुबली भगवान का मस्तकाभिषेक।
 धन्य धन्य वे लोग यहाँ जो आज रहे सिर टेक॥
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक।
 पर्वत पर नर नारी चले कलशों में नीर भरे।
 होड़ लगी अभिषेक प्रभु का पहले कौन करे॥
 नीर क्षीर की बहती धारा फिर भी न भीगा तन सारा।
 ऐसी अन्य विशाल मूर्ति का कहीं नहीं उल्लेख॥
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक।
 धन्य धन्य वे लोग यहाँ जो आज रहे सिर टेक।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक।
 ऐसा ध्यान लगाया प्रभु को रहा न ये आभास।
 किस किस ने चरणारविंद में बना लिया है वास॥
 बात उन्हें यह भी न पता थी तनलिपटी माधवी लता थी,
 ये लाखों में एक नहीं हैं दुनिया भर में एक॥

मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 धन्य धन्य वे लोग यहाँ जो आज रहे सिर टेक ।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 महक रहे चन्दन केशर पुष्पों की झड़ी लगी ।
 देखन को यह दृश्य भीड़ यहाँ कितनी बड़ी लगी ।।
 ऐसी छटा लगे मन भावन फागुन बन बरसे ज्यों सावन ।
 आज यहाँ वे जुड़े जिन्होंने जोड़े पुण्य अनेक ।।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 धन्य धन्य वे लोग यहाँ जो आज रहे सिर टेक ।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 बीते वर्ष सहस्र मूर्ति यह कब की गढ़ी हुई ।
 खड़े तपस्वी का प्रतीक बन कब से खड़ी हुई ।।
 श्री चामुण्डराय की माता इसका श्रेय उन्हीं को जाता ।
 उनके लिये गढ़ी प्रतिमा से लाभान्वित प्रत्येक ।।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 धन्य धन्य वे लोग यहाँ जो आज रहे सिर टेक ।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 ऋषभ देव पितु मात सुनन्दा भ्राता भरत समान ।
 घुट्टी में श्री बाहुबली को मिला धर्म का ज्ञान ।।
 चक्रवर्ती का शीश झुकाकर, प्रभुता छोड़ी प्रभुता पाकर ।
 विजय गर्व से पहले प्रभु ने धरा दिगम्बर भेष ।।

मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 धन्य धन्य वे लोग यहाँ जो आज रहे सिर टेक ।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 गोम्मटेश का है संदेश धारो अपरिग्रहवाद ।
 सब कुछ होते सब कुछ त्यागो वो भी बिना विषाद ।।
 भौतिक बल पर मत इतराओ, दया क्षमा की शक्ति बढ़ाओ ।
 आत्महित के हेतु हृदय में जागृत करो विवेक ।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
 धन्य धन्य वे लोग यहाँ जो आज रहे सिर टेक ।
 मस्तकाभिषेक महा- मस्तकाभिषेक ।
गोमटेश अष्टक
 (आचार्य श्री विद्यासागर जी द्वारा विरचित)
 ज्ञानोदय छन्द (लय- मेरी भावना)
 नीलकमल के दल- सम जिन के युगल सुलोचन विकसित हैं ।
 शशि सम मनहर सुखकर जिनका, मुख-मण्डल मृदु प्रमुदित है ।।
 चम्पक की छवि शोभा जिनकी, नम्र नासिका ने जीती ।
 गोमटेश जिन- पाद- पद्म की, पराग नित मम मति पीती ।।
 गोल-गोल दो कपोल जिनके उजल सलिल सम छवि धारे ।
 ऐरावत- गज की सूण्डासम बाहुदण्ड उज्ज्वल- प्यारे ।।
 कन्धों पर आ, कर्ण-पाश वे नर्तन करते नन्दन हैं ।
 निरालम्ब वे नभ सम शुचि मम गोमटेश को वन्दन है ।।

दर्शनीय तव मध्य भाग है गिरि-सम निश्चल अचल रहा।
 दिव्य शंख भी आप कण्ठ से, हार गया वह विफल रहा।।
 उन्नत विस्तृत हिमगिरि-सम है स्कन्ध आपका विलस रहा।
 गोमटेश प्रभु तभी सदा मम तुम पद में मन निवस रहा।।
 विन्ध्याचल पर चढ़ कर खरतर, तप में तत्पर हो बसते।
 सकल विश्व के मुमुक्षु जन के शिखामणी तुम हो लसते।।
 त्रिभुवन के सब भव्य कुमुद ये खिलते तुम पूरण शशि हो।
 गोमटेश मम नमन तुम्हें हो, सदा चाह बस मन वशि हो।।
 मृदुतम बेल लताएँ लिपटीं, पग से उर तक तुम तन में।
 कल्पवृक्ष हो अनल्प फल दो, भवि-जन को तुम त्रिभुवन में।।
 तुम पद-पंकज में अलि बन सुर-पति गण करता गुन गुन है।
 गोमटेश प्रभु के प्रति प्रतिपल वन्दन अर्पित तन-मन है।।
 अम्बर तज अम्बर-तल थित हो दिग अम्बर नहीं भीत रहे।
 अम्बर आदिक विषयन से अति विरत रहें, भव भीत रहें।।
 सर्पादिक से घिरे हुए पर अकम्प निश्चल शैल रहे।
 गोमटेश स्वीकार नमन हो, धुलता मन का मैल रहे।।
 आशा तुमको छू नाहिं सकती, समदर्शन के शासक हो।
 जग के विषयन में वाञ्छा नाहिं दोष मूल के नाशक हो।।
 भरत-भ्रात में शल्य नाहिं अब विगत-राग हो रोष जला।
 गोमटेश तुम में मम इस विध सतत राग हो होत चला।।
 काम-धाम से धन-कंचन से, सकल संग से दूर हुए।
 शूर हुए मद मोह-मार कर समता से भर-पूर हुए।।

एक वर्ष तक एक थान थित निराहार उपवास किये।
 इसीलिए बस गोमटेश जिन मम मन में अब वास किये।।
 नेमिचन्द्र गुरु ने किया, प्राकृत में गुण-गान।
 गोमटेश थुति अब किया, भाषा-मय सुख खान।।
 गोमटेश के चरण में, नत हो बारम्बार।
 विद्यासागर फिर बँनूँ, भवसागर कर पार।।

स्वयम्भूस्तोत्र-दोहा थुदि

(आचार्य श्री विद्यासागर जी द्वारा विरचित)

आदिम तीर्थकर प्रभो, आदिनाथ मुनिनाथ।
 आधि व्याधि अध मद मिटे, तुम पद में मम माथ।।
 शरण चरण हैं आपके, तारण तरण जहाज।
 भव-दधि-तट तक ले चलो, करुणाकर जिनराज।।1।।
 जित-इन्द्रिय जित-मदबने, जित-भवविजित-कषाय।
 अजित-नाथ को नित नमूँ, अर्जित दुरित पलाय।
 कोंपल पल-पल को पले, वन में ऋतु-पति आय।
 पुलकित मम जीवन-लता, मन में जिन पद पाय।।2।।
 तुम-पद-पंकज से प्रभो, झर-झर-झरी पराग।
 जब तक शिव-सुख ना मिले, पीऊँ षट्पद जाग।।
 भव-भव, भव-वन भ्रमित हो, भ्रमता-भ्रमता आज।
 संभव-जिन भव शिव मिले, पूर्ण हुआ मम काज।।3।।

विषयों को विष लख तजूँ, बनकर विषयातीत।
 विषय बना ऋषि ईश को, गाऊँ उनका गीत॥
 गुण धारे पर मद नहीं, मृदुतम हो नवनीत।
 अभिनन्दन जिन! नित नमूँ, मुनि बन मैं भवभीत॥4॥
 सुमतिनाथ प्रभु सुमति हो, मम मति है अति मंद।
 बोध कली खुल-खिल उठे, महक उठे मकरन्द॥
 तुम जिन मेघ मयूर मैं, गरजो बरसो नाथ।
 चिर प्रतीक्षित हूँ खड़ा, ऊपर करके माथ॥5॥
 शुभ्र-सरल तुम, बाल तव, कुटिल कृष्ण-तम नाग।
 तव चिति चित्रित ज्ञेय से, किन्तु न उसमें दाग॥
 विराग पद्मप्रभु आपके, दोनों पाद-सराग।
 रागी मम मन जा वहीं, पीता तभी पराग॥6॥
 अबंध भाते काटके, वसु विध विधिका बंध।
 सुपाश्वर्ष प्रभु निज प्रभु-पना, पा पाये आनन्द॥
 बाँध-बाँध विधि-बंध मैं, अन्ध बना मति-मन्द।
 ऐसा बल दो अंध को, बंधन तोड़ूँ द्वन्द॥7॥
 चंद्र कलंकित, किन्तु हो, चन्द्र प्रभु अकलंक।
 वह तो शंकित केतु से, शंकर तुम निःशंक॥
 रंक बना हूँ मम अतः, मेटो मन का पंक।
 जाप जपूँ जिन-नाम का, बैठ सदा पर्यंक॥8॥
 सुविध! सुविधि के पूर हो, विधि से हो अति दूर।
 मम मन से मत दूर हो, विनती हो मंजूर॥

बाल मात्र भी ज्ञान ना, मुझ में मैं मुनिबाल।
 वबाल भव का मम मिटे, प्रभु-पद में मम भाल॥9॥
 शीतल चन्दन है नहीं, शीतल हिम ना नीर।
 शीतल जिन! तव मत रहा, शीतल हरता पीर॥
 सुचिर काल से मैं रहा, मोह-नींद से सुप्त।
 मुझे जगा कर, कर कृपा, प्रभु करो परितृप्त॥10॥
 अनेकान्त की कान्ति से, हटा तिमिर एकान्त।
 नितान्त हर्षित कर दिया, क्लान्त विश्व को शान्त॥
 निश्च्रेयस सुख-धाम हो, हे जिनवर श्रेयांस।
 तव थुति अविरल मैं करूँ जब लौं घट में श्वांस॥11॥
 वसुविध मंगल द्रव्य ले, जिन पूजो सागार।
 पाप-घटे फलतः फले, पावन पुण्य अपार॥
 बिना द्रव्य शुचि भाव से, जिन पूजों मुनि लोग।
 बिन निज शुभ उपयोग के, शुद्ध न हो उपयोग॥12॥
 कराल काला व्याल सम, कुटिल चाल का काल।
 मार दिया तुमने उसे, फाड़ा उसका गाल॥
 मोह अमल वश समल बन, निर्बल मैं भगवान।
 विमलनाथ तुम अमल हो, संबल दो भगवान॥13॥
 अनन्त गुण पा कर दिया, अनन्त भव का अन्त।
 अनन्त सार्थक नाम तव, अनन्त जिन जयवन्त॥

अनन्त सुख पाने सदा, भव से हो भयवन्त ।
अन्तिम क्षण तक मैं तुम्हें, स्मरूँ स्मरें सब सन्त ॥14॥
दया धर्म वर धर्म है, अदया- भाव अधर्म ।
अधर्म तज प्रभु धर्म ने, समझाया पुनि धर्म ॥
धर्मनाथ को नित नमूँ, सधे शीघ्र शिव शर्म ।
धर्म-मर्म को लख सकूँ, मिटे मलिन मम कर्म ॥15॥
शान्तिनाथ हो शान्त कर, सातासाता सान्त ।
केवल, केवल-ज्योतिमय, क्लान्ति मिटी सब ध्वान्त ॥
सकल ज्ञान से सकल को, जान रहे जगदीश ।
विकल रहे जड़ देह से, विमल नमूँ नत शीश ॥16॥
ध्यान-अग्नि से नष्ट कर, प्रथम पाप परिताप ।
कुन्थुनाथ पुरुषार्थ से, बने न अपने- आप ॥
ऐसी मुझ पै हो कृपा, मम मन मुझमें आय ।
जिस विध पल में लवण है, जल में घुल मिल जाय ॥17॥
नाम-मात्र भी नहीं रखों, नाम-काम से काम ।
ललाम आतम में करो, विराम आठों याम ॥
नाम धरो 'अर' नाम तव, अतः स्मरूँ अविराम ।
अनाम बन शिव-धाम में, काम बनूँ कृत-काम ॥18॥
मोहमल्ल को मार कर, मल्लि नाथ जिनदेव ।
अक्षय बनकर पा लिया, अक्षय सुख स्वयमेव ॥
बाल ब्रह्मचारी विभो, बाल समान विराग ।
किसी वस्तु से राग ना, मम तव पद से राग ॥19॥

मुनि बन मुनिपन में निरत, हो मुनि यति बिन स्वार्थ ।
 मुनिव्रत का उपदेश दे, हमको किया कृतार्थ ॥
 यही भावना मम रही, मुनिव्रत पाल यथार्थ ।
 मैं भी मुनिसुव्रत बनूँ, पावन पाय पदार्थ ॥20॥
 अनेकान्त का दास हो, अनेकान्त की सेव ।
 करूँ गहूँ मैं शीघ्र से, अनेक गुण स्वयमेव ॥
 अनाथ मैं जगनाथ हो, नमिनाथ दो साथ ।
 तव पद में दिन-रात हूँ, हाथ जोड़ नत-माथ ॥21॥
 नील गगन में अधर हो, शोभित निज में लीन ।
 नील कमल आसीन हो, नीलम से अति नील ॥
 शील-झील में तैरते, नेमि जिनेश सलील ।
 शील डोर मुझ बाँध दो, डोर करो मत ढील ॥22॥
 खास दास की आस बस, श्वास-श्वास पर वास ।
 पार्श्व करो मत दासको, उदासता का दास ॥
 ना तो सुर-सुख चाहता, शिव-सुख की ना चाह ।
 तव थुति-सरवर में सदा, होवे मम अवगाह ॥23॥
 नीर- निधी- से धीर हो, वीर बने गंभीर ।
 पूर्ण तैर कर पा लिया, भव सागर का तीर ॥
 अधीर हूँ मुझ धीर दो, सहन करूँ सब पीर ।
 चीर-चीर कर चिर लखूँ, अन्तर की तस्वीर ॥24॥

स्वयंभू स्तोत्र भाषा

चौपाई

राजविषै जुगलनि सुख कियो, राजत्याग भवि शिव पद लियो ।
 स्वयंबोध स्वयंभू भगवान, बंदों आदिनाथ गुणखान ॥1॥
 इन्द्र क्षीरसागर जल लाय, मेरु न्हावाये गाय बजाय ।
 मदनविनाशक सुखकरतार, बंदों अजित अजित-पदकार ॥2॥
 शुक्लध्यानकरि करमविनाशि, घाति-अघाति सकलदुखराशि ।
 लह्यो मुक्तिपद सुख अविकार, बंदों संभव भव दुख टार ॥3॥
 माता पश्चिम रयन मँझार, सुपने देखे सोलह सार ।
 भूप पूछि फल सुनि हरषाय, बंदों अभिनन्दन मन लाय ॥4॥
 सब कुवाद वादी सरदार, जीते स्याद्वाद धुनिधार ।
 जैनधरम परकाशक स्वाम, सुमतिदेवपद करहुँ प्रणाम ॥5॥
 गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर शोभा अधिकाय ।
 बरसे रतन पंचदश मास, नमों पदमप्रभु सुख की राश ॥6॥
 इन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र त्रिकाल, बानी सुनि सुनि होहिं खुशाल ।
 द्वादश सभा ज्ञानदातार, नमों सुपारस नाथ निहार ॥7॥
 सुगुन छियालिस हैं तुम मांहि, दोष अठारह कोऊ नाहिं ।
 मोहमहातम नाशक दीप, नमों चंद्रप्रभ राख समीप ॥8॥
 द्वादश विध तप करम विनाश, तेरह विध चारित्र परकाश ।
 निज अनिच्छ भवि इच्छकदान, बंदों पुष्पदंत मन आन ॥9॥

भवि सुखदाय सुरगतैं आय, दशविधि धरम कह्यो जिनराय ।
 आप समान सबनि सुख देह, बंदों शीतल धर्मसनेह ॥10॥
 समता सुधा कोपविष नाश, द्वादशांग वाणी परकाश ।
 चारसंघ-आनन्द-दातार, नमों श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥11॥
 रतनत्रय चिर मुकुट विशाल, शौभै कंठ सुगुन मनिमाल ।
 मुक्ति नार भरता भगवान, वासुपूज्य वंदों धर ध्यान ॥12॥
 परम समाधि-स्वरूप जिनेश, ज्ञानी ध्यानी हित उपदेश ।
 कर्म नाशि शिवसुख विलसंत, वंदों विमलनाथ भगवंत ॥13॥
 अन्तर बाहिर परिग्रह डारि, परम दिगम्बर व्रत को धारि ।
 सर्व जीव हित-राह दिखाय, नमों अनन्त वचन-मनलाय ॥14॥
 सात तत्त्व पंचास्तिकाय, नव पदार्थ छह द्रव्य बताय ।
 लोक अलोक सकल परकास, बंदों धर्मनाथ अविनाश ॥15॥
 पंचम चक्रवर्ति निधिभोग, कामदेव द्वादशम मनोग ।
 शांतिकरण सोलम जिनराय, शांतिनाथ बंदों हरषाय ॥16॥
 बहुथुति करे हरष नहिं होय, निंदे दोष गहैं नहिं कोय ।
 शीलवान पर ब्रह्म स्वरूप, बंदों कुंथुनाथ शिवभूप ॥17॥
 द्वादशगण पूजें सुखदाय, थुति वंदना करें अधिकाय ।
 जाकी निजथुति कबहुँ न होय, बंदों अर जिनवर-पद दोय ॥18॥
 परभव रतनत्रय-अनुराग, इह भव ब्याह समय वैराग ।
 बाल ब्रह्म-पूरन व्रत धार, बंदों मल्लिनाथ जिनसार ॥19॥

बिन उपदेश स्वयं वैराग, थुति लौकांत करें पगलाग ।
 नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहिं, वंदों मुनिसुव्रत व्रत देहिं ॥20॥
 श्रावक विद्यावंत निहार, भगति भाव सों दियो आहार ।
 बरसी रतन-राशि तत्काल, बंदों नमिप्रभु दीनदयाल ॥21॥
 सब जीवन की बंदी छोर, रागद्वेष द्वै बंधन तोर ।
 राजुल तज शिवतिय सों मिले, नेमिनाथ बंदों सुखनिले ॥22॥
 दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फनधार ।
 गयो कमठ शठ मुखकर श्याम, नमो मेरुसम पारस स्वाम ॥23॥
 भवसागरतैं जीव अपार, धरम पोत में धरे निहार ।
 डूबत काढ़े दया विचार, वर्द्धमान बंदों बहुबार ॥24॥

दोहा

चौबीसों पदकमलजुग, बंदों मन वच काय ।
 “द्यानत” पढ़ै सुने सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥

दर्शन पाठ

दर्शन श्री देवाधिदेव का, दर्शन पाप विनाशन है ।
 दर्शन है सोपान स्वर्ग का, और मोक्ष का साधन है ॥
 श्री जिनेन्द्र के दर्शन औ, निर्ग्रन्थ साधु के वंदन से ।
 अधिक देर अघ नहीं रहै, जल छिद्र सहित कर में जैसे ॥
 वीतराग-मुख के दर्शन की, पद्मराग सम शांत-प्रभा ।
 जन्म-जन्म के पातक क्षण में, दर्शन से हों शांत विदा ॥

दर्शन श्रीजिनदेव सूर्य, संसार-तिमिर का करता नाश।
 बोधिप्रदाता चित्तपद्म को, सकल अर्थ का करे प्रकाश॥
 दर्शन श्रीजिनेन्द्रचन्द्र का, सद्-धर्मामृत बरसाता।
 जन्मदाह को करे शांत औ, सुख वारिधि को विकसाता॥
 सकलतत्त्व के प्रतिपादक, सम्यक्त्व आदिगुण के सागर।
 शान्त दिगम्बररूप नमूँ, देवाधिदेव तुमको जिनवर॥
 चिदानन्दमय एकरूप, वंदन जिनेन्द्र परमात्मा को।
 हो प्रकाश परमात्म नित्य, मम नमस्कार सिद्धात्मा को॥
 अन्य शरण कोई न जगत में, तुम्हीं शरण मुझको स्वामी।
 करुण भाव से रक्षा करिये, हे जिनेश अन्तर्यामी॥
 रक्षक नहीं शरण कोई नहीं, तीन जगत में दुखत्राता।
 वीतराग प्रभु सा न देव है, न हुआ न होगा सुखदाता॥
 दिन दिन पाऊँ जिनवर भक्ति, जिनवर भक्ति, जिनवर भक्ति।
 सदा मिले वह सदा मिले, जब तक न मिले मुझको मुक्ति॥
 नहीं चाहता जैन धर्म बिना, चक्रवर्ती होना।
 नहीं अखरता जैन धर्म से सहित, दरिद्री भी होना॥
 जन्म-जन्म के किये पाप औ बन्धन कोटि-कोटि भव के।
 जन्म-मृत्यु औ जरा रोग, सब कट जाते जिनदर्शन से॥
 आज युगल दृगहुए सफल, तुम चरण कमल से हे प्रभुवर।
 हे त्रिलोक के तिलक, आज लगता भव सागर चुल्लू भर॥

आराधना पाठ

(हरिगीतिका)

मैं देव नित अरहंत चाहूँ, सिद्ध का सुमिरन करौं।
 मैं सुर गुरु मुनि तीन पद ये, साधु पद हिरदय धरौं॥
 मैं धर्म करुणामय जु चाहूँ, जहाँ हिंसा रंच ना।
 मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहूँ, जासु में परपंच ना॥
 चौबीस श्री जिनदेव चाहूँ, और देव न मन बसैं,
 जिन बीस क्षेत्र विदेह चाहूँ, वंदिते पातक नसैं।
 गिरनार शिखर सम्मेद चाहूँ, चम्पापुरी पावापुरी,
 कैलाश श्री जिनधाम चाहूँ, भजत भाजैं भ्रम जुरी॥
 नव तत्त्व का सरधान चाहूँ, और तत्त्व न मन धरौं।
 षट् द्रव्य गुण परजाय चाहूँ, ठीक तासों भय हरौं॥
 पूजा परम जिनराज चाहूँ, और देव न चहूँ कदा।
 तिहुँकाल की मैं जाप चाहूँ, पाप नहीं लागे कदा॥
 सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्र, सदा चाहूँ भाव सों।
 दशलक्षणी मैं धर्म चाहूँ, महा हर्ष उछाव सों॥
 सोलह जु कारण दुःख निवारण, सदा चाहूँ प्रीति सों।
 मैं नित अठई पर्व चाहूँ, महामंगल रीति सों॥
 अनुयोग चारों सदा चाहूँ, आदि अन्त निवाह सों।
 पाये धरम के चार चाहूँ, अधिक चित्त उछाह सों॥

मैं दान चारों सदा चाहूँ, भुवनवशि लाहो लहूँ।
 आराधना मैं चार चाहूँ, अन्त में ये ही गहूँ।
 भावना बारह जु भाऊँ, भाव निरमल होत हैं।
 मैं व्रत जु बारह सदा चाहूँ, त्याग भाव उद्योत हैं।
 प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूँ, ध्यान आसन सोहना।
 वसुकर्म तैं मैं छुटा चाहूँ, शिव लहूँ जहँ मोहना।।
 मैं साधुजन को संग चाहूँ, प्रीति तिनही सों करौं।
 मैं पर्व के उपवास चाहूँ, आरम्भ मैं सब परिहरौं।।
 इस दुखद पंचमकाल माहीं, सुकुल श्रावक मैं लह्यो।
 अरु महाव्रत धरि सकौं नाहीं, निबल तन मैंने गह्यो।।
 आराधना उत्तम सदा चाहूँ, सुनो जिनराय जी।
 तुम कृपानाथ अनाथ 'द्यानत', दया करना न्याय जी।।
 वसुकर्म नाश विकास ज्ञान, प्रकाश मुझको दीजिये।
 करि सुगति गमन समाधि मरन, सुभक्ति चरनन दीजिये।।

आत्म-कीर्तन

(मनोहर वर्णी कृत)

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता दृष्टा आत्म राम।टेक।
 मैं वह हूँ जो हैं भगवान, जो मैं हूँ वह हैं भगवान्।
 अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यहँ राग- वितान।।1।।
 मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति सुख-ज्ञान निधान।
 किन्तु आश वश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान।।2।।

सुख-दुख-दाता कोई न आन, मोह राग रुष दुख की खान।
 निज को निज, पर को पर जान, फिर दुख का नहीं लेश निदान।।3।।
 जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम।
 राग त्यागि पहुँचूँ निज धाम, आकुलता का फिर क्या काम।।4।।
 होता स्वयं जगत- परिणाम, मैं जग का करता क्या काम।
 दूर हटो पर-कृत परिणाम, 'सहजानन्द' रहूँ अभिराम।।5।।

मेरी भावना

(रचियता-पं. जुगलकिशोर जी मुख्तार)

जिसने राग द्वेष कामादिक जीते सब जग जान लिया।
 सब जीवों को मोक्षमार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया।।
 बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो।
 भक्ति-भाव से प्रेरित हो यह चित्त उसी में लीन रहो।।1।।
 विषयों की आशा नहीं जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं।
 निज-परके हित-साधन में जो निश-दिन तत्पर रहते हैं।।
 स्वार्थ-त्याग की कठिन तपस्या बिना खेद जो करते हैं।
 ऐसे ज्ञानी साधु जगत के दुःख-समूह को हरते हैं।।2।।
 रहे सदा सत्संग उन्हीं का ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
 उन हीं जैसी चर्या में यह चित्त सदा अनुरक्त रहे।।
 नहीं सताऊँ किसी जीव को झूठ कभी नहीं कहा करूँ।
 परधन-वनिता पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ।।3।।

अहंकार का भाव न रखूँ नहीं किसी पर क्रोध करूँ ।
 देख दूसरों की बढ़ती को कभी न ईर्ष्या-भाव धरूँ ॥
 रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूँ ।
 बने जहाँ तक इस जीवन में औरों का उपकार करूँ ॥4॥
 मैत्रीभाव जगत में मेरा सब जीवों से नित्य रहे ।
 दीन-दुखी जीवों पर मेरे उर से करुणा-स्रोत बहे ।
 दुर्जन-क्रूर-कुमार्ग-रतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवे ।
 साम्यभाव रखूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥5॥
 गुणी जनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे ।
 बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे ॥
 होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे ।
 गुण-ग्रहण का भाव रहे नित दृष्टि न दोषों पर जावे ॥6॥
 कोई बुरा कहो या अच्छा लक्ष्मी आवे या जावे ।
 लाखों वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावे ॥
 अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे ।
 तो भी न्याय-मार्ग से मेरा कभी न पग डिगने पावे ॥7॥
 होकर सुख में मग्न न फूलें दुःख में कभी न घबरावें ।
 पर्वत-नदी-श्मशान भयानक अटवी से नहीं भय खावे ॥
 रहे अडोल-अकंप निरंतर यह मन दृढ़तर बन जावे ।
 इष्ट-वियोग-अनिष्ट-योग में सहन-शीलता दिखलावे ॥8॥
 सुखी रहें सब जीव जगत के कोई कभी न घबरावे ।
 बैर-पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे ॥

घर-घर चर्चा रहे धर्म की दुष्कृत दुष्कर हो जावें ॥
 ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज-जन्म-फल सब पावें ॥9॥
 ईति भीति व्यापे नहिं जग में वृष्टि समय पर हुआ करे ।
 धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करे ॥
 रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले प्रजा शांति से जिया करे ।
 परम अहिंसा-धर्म जगत में फैले सर्वहित किया करे ॥10॥
 फैले प्रेम परस्पर जग में मोह दूर ही रहा करे ।
 अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं कोई मुख से कहा करे ॥
 बनकर सब 'युगवीर' हृदय से देशोन्नति-रत रहा करें ।
 वस्तु-स्वरूप-विचार खुशी से सब दुख संकट सहा करें ॥11॥

बारह भावना

(कविवर भूधरदास जी कृत)

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार ।
 मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार ॥1॥
 दल-बल देवी देवता, मात-पिता परिवार ।
 मरती बिरिया जीवको, कोई न राखनहार ॥2॥
 दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान ।
 कहूँ न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ॥3॥
 आप अकेला अवतरै, मरै अकेलो होय ।
 यूँ कबहूँ इस जीव को, साथी सगा न कोय ॥4॥

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय ।
घर संपत्ति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ॥5॥
दिपै चाम-चादर मढ़ी, हाड पींजरा देह ।
भीतर या सम जगत में, अवर नहीं घिन-गेह ॥6॥
मोह-नींद के जोर, जगवासी घूमैं सदा ।
कर्म-चोर चहुँ ओर, सरबस लूटैं सुध नहीं ॥7॥
सतगुरु देय जगाय, मोह-नींद जब उपशमें ।
तब कछु बनें उपाय, कर्म-चोर आवत रुकैं ॥8॥
ज्ञान-दीप तप-तेल भर, घर शोधै भ्रम छोर ।
या विध बिन निकसै नहीं, बैठे पूरब चोर ॥9॥
पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच परकार ।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार ॥10॥
चौदह राजु उत्तंग नभ, लोक पुरुष-संठान ।
तामें जीव अनादितैं, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥11॥
धन कन कंचन राजसुख, सबहि सुलभकर जान ।
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान ॥12॥
जाँचे सुर-तरु देय सुख, चिंतत चिंतारैन ।
बिन जाचै बिन चिंतये, धर्म सकल सुख दैन ॥13॥

वैराग्य भावना

बीज राख फल भोगवै, ज्यों किसान जगमाहिं ।
त्यों चक्री नृप सुख करें, धर्म विसारै नाहिं ।।

॥ जोगीरासा वा नरेन्द्र छंद ॥

इहविधि राज करै नरनायक, भोगै पुण्य विशालो ।
सुखसागर मैं रमत निरंतर, जात न जान्यो कालो ।।
एक दिवस शुभ कर्म-संजोगे क्षेमंकर मुनि बंदे ।
देखि शिरीगुरु के पदपंकज, लोचन अलि आनन्दे ।।2॥
तीन प्रदक्षिण दे शिर नायो, कर पूजा थुति कीनी ।
साधु-समीप विनय कर बैठ्यो, चरननमें दृष्टि दीनी ।।
गुरु उपदेश्यो धर्म-शिरोमणि, सुन राजा वैरागे ।
राजरमा वनितादिक जे रस, ते रस बेरस लागे ।।3॥
मुनि-सूरज-कथनी-किरणावलि लगत भरम बुधि भागी ।
भव-तन-भोग-स्वरूप विचारयो, परम धरम अनुरागी ।।
इह संसार महावन भीतर, भरमत ओर न आवै ।
जामन मरन जरा दव दाहै जीव महादुख पावै ।।4॥
कबहुँ जाय नरक थिति भुंजै, छेदन भेदन भारी ।
कबहुँ पशु परजाय धरै तहँ, बध बंधन भयकारी ।
सुरगति में परसंपति देखे राग उदय दुख होई ।
मानुषयोनि अनेक विपतिमय, सर्वसुखी नहिं कोई ।।5॥

कोई इष्ट वियोगी विलखे, कोई अनिष्ट संयोगी ।
कोई दीन-दरिद्री विलखे, कोई तन के रोगी ।।
किस ही घर कलिहारी नारी, कै बैरी सम भाई ।
किसही के दुख बाहिर दीखै, किसही उर दुचिताई ।।6॥
कोई पुत्र बिना नित झूरै, होय मरै तब रोवै ।
खोटी संततिसों दुख उपजै, क्यों प्राणी सुख सोवै ।।
पुण्य उदय जिनके तिनके भी नाहिं सदा सुख साता ।
यह जगवास जथारथ देखे, सब दीखै दुखदाता ।।7॥
जो संसार विषै सुख होता, तीर्थकर क्यों त्यागै ।
काहे को शिवसाधन करते, संजमसो अनुरागै ।।
देह अपावन अथिर घिनावन, यामें सार न कोई ।
सागर के जलसों शुचि कीजे, तो भी शुद्ध न होई ।।8॥
सात कुधातु भरी मलमूरत, चर्म लपेटी सोहै ।
अंतर देखत या सम जग में, अवर अपावन को है ।।
नव-मल-द्वार स्रवैं निशि-वासर, नाम लिये घिन आवैं ।
व्याधि-उपाधि अनेक जहाँ तहँ, कौन सुधी सुख पावै ।।9॥
पोषत तो दुख दोष करै अति, सोषत सुख उपजावै ।
दुर्जन-देह-स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावै ।।
राचन-जोग स्वरूप न याको, विरचन-जोग सही है ।
यह तन पाय महातप कीजे, यामें सार यही है ।।10॥

भोग बुरे भवरोग बढ़ावैं, बेरी हैं जग जीके।
 बेरस होंय विपाक समय अति, सेवत लागैं नीके॥
 वज्र-अग्नि विषसे विषधरसे, ये अधिके दुखदाई।
 धर्म-रतन के चोर चपल अति, दुर्गति-पंथ सहाई॥11॥
 मोह-उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जानै।
 ज्यों कोई जन खाय धतूरा, सो सब कंचन माने॥
 ज्यों ज्यों भोग संजोग मनोहर, मन-वांछित जन पावैं।
 तृष्णा नागिन त्यों-त्यों डंके, लहर जहर की आवे॥12॥
 मैं चक्रीपद पाय निरंतर, भोगे भोग घनेरे।
 तौ भी तनक भये नहिं पूरन, भोग मनोरथ मेरे॥
 राजसमाज महा अघ-कारण, बैर बढ़ावन-हारा।
 वेश्या-सम लछमी अतिचंचल, याका कौन पत्यारा॥13॥
 मोह-महा-रिपु बैर विचार्यो, जग-जिय संकट डारे।
 घर-कारागृह वनिता बेड़ी, परिजन जन रखवारे॥
 सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप, ये जियके हितकारी।
 ये ही सार असार और सब, यह चक्री चितधारी॥14॥
 छोड़े चौदह रत्न नवों निधि, अरु छोड़े संग साथी।
 कोटि अठारह घोड़े छोड़े चौरासी लख हाथी॥
 इत्यादिक संपति बहुतेरी जीरण-तृण-सम त्यागी।
 नीति विचार नियोगी सुतकों, राज दियो बड़भागी॥15॥

होय निशल्य अनेक नृपति संग, भूषण वसन उतारे।
 श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा, पंच महाव्रत धारे॥
 धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह धीरज-धारी।
 ऐसी संपति छोड़ बसे वन, तिन पद धोक हमारी॥16॥

दोहा

परिग्रहपोट उतार सब, लीनों चारित, पंथ।
 निज स्वभाव में थिर भये, वज्रनाभि निरग्रंथ।
 ॥ इति श्री वज्रनाभि चक्रवर्ती की वैराग्य भावना ॥

आलोचना पाठ

वंदो पाँचों परम-गुरु, चौबीसों जिनराज।
 करुँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि-करन के काज॥1॥
 सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
 तिनकी अब निवृत्ति काजा, तुम सरन लही जिनराजा॥2॥
 इक बे ते चउ इन्द्री वा, मनरहित सहित जे जीवा।
 तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदइ ह्वै घात विचारी॥3॥
 समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारम्भ।
 कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं॥4॥
 शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने परिछेदन तैं।
 तिनकी कहुँ कोलों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी॥5॥
 विपरीत एकान्त विनय के, संशय अज्ञान कुनय के।
 वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहिं जाय कहीने॥6॥

कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदया करि भीनी।
 या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँगति मधि दोष उपायो॥7॥
 हिंसा पुनि झूठ जू चोरी, पर वनिता सों दृग जोरी।
 आरम्भ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो॥8॥
 सपरस रसना घनन को, चखु कान विषय सेवनको।
 बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने॥9॥
 फल पंच उदम्बर खाये, मधु मांस मद्य चित चाहे।
 नहिं अष्ट मूलगुण धारे, सेये कुविसन दुखकारे॥10॥
 दुइबीस अभख जिन गाये, सो भी निश-दिन भुंजाये।
 कछु भेदाभेद ना पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो॥11॥
 अनंतानु जु बंधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
 संज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये॥12॥
 परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद संयोग।
 पनबीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम॥13॥
 निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई।
 फिर जागि विषय वन धायो, नाना विध विष-फल खायो॥14॥
 आहार विहार नीहारा, इनमें नहिं जतन विचारा।
 बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई॥15॥
 तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकल्प उपजायो।
 कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्यामति छाग गई है॥16॥

मरजादा तुम ढिग लीनी, ताहू में दोष जु कीनी।
 भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञान विषैं सब पड़ये॥17॥
 हा हा! मैं दुठ अपराधी, त्रस-जीवन-राशि विराधी।
 थावर की जतन न कीनी, उर में करुणा नहिं लीनी॥18॥
 पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागौं चिनाई।
 पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखातैं पवन बिलोल्यो॥19॥
 हा हा! मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी।
 तामधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनंदा॥20॥
 हा हा! परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई।
 तामध्य जीव जे आये, ते हूँ परलोक सिधाये॥21॥
 बीध्यो अन राति पिसायो, ईधन बिन सोधि जलायो।
 झाड़ू ले जागां बुहारी, चींटी आदिक जीव बिदारी॥22॥
 जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी।
 नहिं जल-थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई॥23॥
 जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहु घात करायो।
 नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये॥24॥
 अन्नादिक शोध कराई, तातैं जु जीव निसराई।
 तिनका नहिं जतन कराया, गरियालैं धूप डराया॥25॥
 पुनि द्रव्य कमावन काजैं, बहु आरंभ हिंसा साजैं।
 किये तिसनावश अघ भारी, करुणा नहिं रंच विचारी॥26॥

इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता।
 संतति चिरकाल उपाई, वाणी तैं कहिय न जाई॥27॥
 ताको जु उदय अब आयो, नाना विध मोहि सतायो।
 फल भुंजत जिय दुख पावै, वचतैं कैसे करि गावै॥28॥
 तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी।
 हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है॥29॥
 इक गाँवपती जो होवे, सो भी दुःखिया दुःख खोवै।
 तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी॥30॥
 द्रोपदि को चीर बढ़ायो, सीता-प्रति कमल रचायो।
 अंजन से किये अकामी, दुःख मेटो अंतरजामी॥31॥
 मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद सम्हारो।
 सब दोष-रहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी॥32॥
 इंद्रादिक पदवी नहिं चाहूँ, विषयनि में नाहिं लुभाऊँ।
 रागादिक दोष हरीजे, परमात्म निज पद दीजे॥33॥

दोहा

दोष-रहित जिनदेवजी, निज-पद दीज्यो मोय।
 सब जीवन के सुख बढ़ै, आनंद मंगल होय॥
 अनुभव माणिक पारखी, जौहरि आप जिनन्द।
 ये ही वर मोहि दीजिये, चरण शरण आनन्द॥

बारह भावना

(श्री मंगतराय जी कृत)

वंदूँ श्री अरहंतपद, वीतराग विज्ञान।
 वरणूँ बारह भावना, जगजीवन-हित जान॥1॥

(विष्णु पद छन्द)

कहाँ गये चक्री जिन जीता, भरतखंड सारा।
 कहाँ गये वह राम-रु-लक्ष्मण, जिन रावण मारा॥
 कहाँ कृष्ण रुक्मणि सतभामा, अरु संपति सगरी।
 कहाँ गये वह रंगमहल अरु, सुवरन की नगरी॥2॥
 नहीं रहे वह लोभी कौरव जूझ मरे रन में।
 गये राज तज पांडव वनको, अग्नि लगी तन में॥
 मोह-नींद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को।
 हो दयाल उपदेश करैं गुरु, बारह भावन को॥3॥

1. अथिर भावना

सूरज चाँद छिपै निकलै ऋतु फिर फिर कर आवै।
 प्यारी आयु ऐसी बीतै, पता नहीं पावै॥
 पर्वत पतित नदी सरिता जल बहकर नहिं डटता।
 स्वास चलत यों घटै काठ ज्यों, आरे सों कटता॥4॥
 ओस-बूंद ज्यों गलै धूप में, वा अंजुलि पानी।
 छिन छिन यौवन छीन होत है क्या समझै प्रानी॥
 इंद्रजाल आकाश नगर सम जग-संपति सारी।
 अथिर रूप संसार विचारो सब नर अरु नारी॥5॥

2 अशरण भावना

काल-सिंह ने मृग-चेतन को घेरा भव वन में।
नहीं बचावन-हारा कोई यों समझो मन में॥
मंत्र यंत्र सेना धन संपत्ति, राज पाट छूटै।
वश नहीं चलता काल लुटेरा, काय नगरि लूटै ॥6॥
चक्ररत्न हलधर सा भाई, काम नहीं आया।
एक तीर के लगत कृष्ण की, विनश गई काया॥
देव धर्म गुरु शरण जगत में, और नहीं कोई।
भ्रम से फिरै भटकता चेतन, यूँ ही उमर खोई॥7॥

3 संसार भावना

जनम-मरन अरु जरा-रोग से, सदा दुःखी रहता।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव भव-परिवर्तन सहता॥
छेदन भेदन नरक पशु गति, बध बंधन सहना।
राग-उदयसे दुख सुरगति में, कहाँ सुखी रहना॥8॥
भोगि पुण्य फल हो इक इन्द्री, क्या इसमें लाली।
कुतवाली दिनचार वही फिर, खुरपा अरु जाली॥
मानुष-जन्म अनेक विपत्तिमय, कहीं न सुख देखा।
पंचमगति सुख मिलै शुभाशुभ को मेटो लेखा॥9॥

4 एकत्व भावना

जन्मै मरै अकेला चेतन, सुख-दुख का भोगी।
और किसी का क्या इक दिन यह, देह जुदी होगी ॥

कमला चलत न पैँड जाय मरघट तक परिवारा।
अपने अपने सुख कों रोवैं, पिता पुत्र दारा॥10॥
ज्यों मेले में पंथीजन मिल नेह फिरैं धरते।
ज्यों तरुवर पै रैन बसेरा पंछी आ करते॥
कोस कोई दो कोस कोई उड़ फिर थक थक हारै।
जाय अकेला हंस संग में, कोई न पर मारै ॥11॥

5 अन्यत्व भावना

मोह-रूप मृग-तृष्णा जग में, मिथ्या जल चमकै।
मृग चेतन नित भ्रम में उठ उठ, दौड़ैं थक थककै॥
जल नहीं पावै प्राण गमावै, भटक भटक मरता।
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता॥12॥
तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड़ तू ज्ञानी।
मिले अनादि यतनतैं बिछुड़ै, ज्यों पय अरु पानी॥
रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना।
जौलों पौरुष थकै न तौलों उद्यम सों चरना॥13॥

6 अशुचि भावना

तू नित पोखै यह सूखे ज्यों, धोवै त्यों मैली।
निश दिन करै उपाय देहका, रोग-दशा फैली॥
मात-पिता-रज-वीरज मिलकर, बनी देह तेरी।
मांस हाड़ नश लहू राधकी, प्रगट व्याधि घेरी॥14॥
काना पौडा पड़ा हाथ यह चूसै तो रोवै।
फलै अनंत जु धर्म ध्यानकी, भूमि-विषै बोवै ॥

केसर चंदन पुष्प सुगंधित, वस्तु देख सारी ।
देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी ॥15॥

7 आस्रव भावना

ज्यों सर-जल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मन को ।
दर्वित जीव प्रदेश गहै जब पुदगल भरमन को ॥
भावित आस्रवभाव शुभाशुभ, निशदिन चेतन को ।
पाप पुण्यके दोनों करता, कारण बंधन को ॥16॥
पन-मिथ्यात योग-पंद्रह द्वादश-अविरत जानो ।
पंचरु बीस कषाय मिले सब, सत्तावन मानो ॥
मोह-भाव की ममता टारै, पर परणत खोते ।
करै मोख का यतन निरास्रव, ज्ञानी जन होते ॥17॥

8 संवर भावना

ज्यों मोरी में डाट लगावै, तब जल रुक जाता ।
त्यों आस्रव को रोकै संवर, क्यों नहिं मन लाता ॥
पंच महाव्रत समिति गुप्तिकर वचन काय मन को ।
दशविध-धर्म परीषह-बाइस, बारह भावन को ॥
यह सब भाव सत्तावन मिलकर, आस्रव को खोते ।
सुपन दशा से जागो चेतन, कहाँ पड़े सोते ॥
भाव शुभाशुभ रहित शुद्ध-भावन-संवर भावै ।
डाँट लगत यह नाव पड़ी मझधार पार जावै ॥19॥

9 निर्जरा भावना

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पड़ै भारी ।
संवर रोकै कर्म, निर्जरा हवै सोखनहारी ॥
उदय-भोग सविपाक-समय, पक जाय आम डाली ।
दूजी है अविपाक पकावै, पालविषै माली ॥20॥
पहली सबके होय नहीं, कुछ सरै काम तेरा ।
दूजी करै जु उद्यम करकै, मिटै जगत फेरा ॥
संवर सहित करो तप प्रानी, मिलै मुक्ति रानी ।
इस दुलहिन की यही सहेली, जानै सब ज्ञानी ॥21॥

10 लोक भावना

लोक अलोक आकाश माहिं थिर, निराधार जानो ।
पुरुषरूप कर-कटी भये षट, द्रव्यन सो मानों ॥
इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादि है ।
जीव रु पुद्गल नाचै यामैं, कर्म उपाधी है ॥22॥
पाप पुण्य सों जीव जगत में, नित सुख-दुःख भरता ।
अपनी करनी आप भरै शिर, औरन के धरता ॥
मोह कर्म को नाश मेटकर, सब जग की आसा ।
निज पद में थिर होय लोक के, शीश करो बासा ॥23॥

11 बोधि-दुर्लभ भावना

दुर्लभ है निगोद से थावर, अरु त्रस गति पानी ।
नरकाया को सुरपति तरसै सो दुर्लभ प्राणी ॥
उत्तम देश सुसंगति दुर्लभ, श्रावक कुल पाना ।
दुर्लभ सम्यक दुर्लभ संयम, पंचम गुणठाना ॥24॥
दुर्लभ रत्नत्रय आराधन दीक्षा का धरना ।
दुर्लभ मुनिवर के व्रत पालन, शुद्ध भाव करना ॥
दुर्लभ से दुर्लभ है चेतन, बोधिज्ञान पावै ।
पाकर केवलज्ञान नहीं फिर, इस भव में आवै ॥25॥

12 धर्म भावना

धर्म 'अहिंसा परमो धर्मः' ही सच्चा जानो ।
जो पर को दुख दे, सुख माने, उसे पतित मानो ॥
राग द्वेष मद मोह घटा आतम रुचि प्रकटावे ।
धर्म-पोत पर चढ़ प्राणी भव-सिन्धु पार जावे ॥26॥
वीतराग सर्वज्ञ दोष बिन, श्रीजिनकी वानी ।
सप्त तत्त्व का वर्णन जा में, सबको सुखदानी ॥
इनका चिंतवन बार बार कर, श्रद्धा उर धरना ।
'मंगत' इसी जतन तैं इक दिन, भव-सागर-तरना ॥27॥
॥इति सुलतानपुर निवासी मंगतरायजी कृत बारह भावना ॥

संकट मोचन विनती

हे दीनबन्धु श्रीपति करुणानिधान जी ।
यह मेरी विथा क्यों न हरो बार क्या लगी ॥टेक॥
मालिक हो दो जहान के जिनराज आपही ।
एबो हुनर हमारा कुछ तुम से छिपा नहीं ।
वेजान में गुनाह मुझसे वन गया सही ।
ककरी के चोर को कटार मारिये नहीं ॥हो॥1॥
दुखदर्द दिल का आपसे जिसने कहा सही ।
मुश्किल कहर बहर से लिया है भुजा गही ॥
जस वेद औ पुरान में प्रमान है यही ।
आनंदकंद श्रीजिनंद देव हो तुही ॥हो॥2॥
हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती ।
गंगा में ग्राहने गही गजराजकी गती ॥
उस वक्त में पुकार लिया था तुम्हें सती ।
भय टारके उबार लिया हे कृपासती ॥हो॥3॥
पावक प्रचंड कुंड में उमंड जब रहा ।
सीता से शपथ लेने को तब रामने कहा ॥
तुम ध्यानधार जानकी पग धारती तहाँ ।
तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा ॥हो॥4॥
जब चीर द्रोपदीका दुःशासन न था गहा ।
सब ही सभा के लोग थे कहते हहा हहा ॥

उस वक्त भीर पीर में तुमने करी सहा ।
 परदा ढका सती का सुजस जगत में रहा ॥हो.॥5॥
 श्रीपाल को सागर विषैं जब सेठ गिराया ।
 उनकी रमा से रमने को आया वो बेहया ॥
 उस वक्त के संकट में सती तुमको जो ध्याया ।
 दुःख-दंद-फंद मेट के आनंद बढ़ाया ॥हो.॥6॥
 हरिषेणकी माता को जहाँ सौत सताया ।
 रथ जैनका तेरा चलै पीछै यों बताया ॥
 उस वक्त के अनशनमें सती तुमको जो ध्याया ।
 चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया ॥हो.॥7॥
 सम्यक्त्व-शुद्ध शीलवती चंदना सती ।
 जिसके न गीच लगती थी जाहिर रती रती ॥
 बेड़ी में पड़ी थी तुम्हें जब ध्यावती हती ।
 तब वीर धीर ने हरी दुःखदंदकी गती ॥हो.॥8॥
 जब अंजना सती को हुआ गर्भ उजारा ।
 तब सास ने कलंक लगा घर से निकारा ॥
 वन वर्ग के उपसर्ग में तब तुमको चितारा ।
 प्रभुभक्त व्यक्त जानिके भय देव निवारा ॥हो.॥9॥
 सोमा से कहा जो तु सती शील विशाला ।
 तो कुंभतैं निकाल भला नाग जु काला ॥
 उस वक्त तुम्हें ध्याय के सति हाथ जब डाला ।
 तत्काल ही वह नाग हुआ फूल की माला ॥हो.॥10॥

जब कुष्ठ रोग था हुआ श्रीपालराज को ।
 मैना सती ने, आपको पूजा, इलाज को ॥
 तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपाल राजको ।
 वह राजभोग भाग गया मुक्तराज को ॥हो.॥11॥
 जब सेठ सुदर्शनको मृषा दोष लगाया ।
 रानीके कहे भूपने सूली पै चढ़ाया ॥
 उस वक्त तुम्हें सेठने निज ध्यान में ध्याया ।
 सूली से उतार उसको सिंहासन पै बिठाया ॥हो.॥12॥
 जब सेठ सुधन्नाजी को वापी में गिराया ।
 ऊपर से दुष्ट फिर उसे वह मारने आया ॥
 उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपने में ध्याया ।
 तत्काल ही जंजाल से तब उसको बचाया ॥हो.॥13॥
 इक सेठ के घरमें किया दारिद्र ने डेरा ।
 भोजन का ठिकाना भि न था साँझ सबेरा ॥
 उस वक्त तुम्हें सेठने जब ध्यान में घेरा ।
 घर उसके में तब कर दिया लक्ष्मीका बसेरा ॥हो.॥14॥
 बलि वाद में मुनिराज सों जब पार न पाया ।
 तब रात को तलवार ले शठ मारने आया ॥
 मुनिराज ने निजध्यान में मन लीन लगाया ।
 उस वक्त हो प्रत्यक्ष तहाँ देव बचाया ॥हो.॥15॥
 जब राम ने हनुमंत को गढ़लंक पठाया ।
 सीता की खबर लेनेको सह सैन्य सिधाया ॥

मग बीच दो मुनिराज की लख आग में काया ।
 झट वारि मूसलधार से उपसर्ग मिटाया ॥हो॥१६॥
 जिननाथ ही को माथ नवाता था उदारा ।
 घेरे मे पड़ा था वह वज्र-कर्ण विचारा ॥
 उसवक्त तुम्हें प्रेमसे संकट में चितारा ।
 रघुवीर ने सब दुःख तहाँ तुरत निवारा ॥हो॥१७॥
 रणपाल कुंवर के पड़ी थी पांव में बेरी ।
 उस वक्त तुम्हें ध्यान में ध्याया था सबेरी ॥
 तत्काल ही सुकुमाल की सब झड़ पड़ी बेरी ।
 तुम राजकुंवर की सभी दुखदंद निवेरी ॥हो॥१८॥
 जब सेठ के नंदनको डसा नाग जु कारा ।
 उसवक्त तुम्हें पीर में धर धीर पुकारा ॥
 तत्काल ही उस बाल का विष भूरि उतारा ।
 वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा ॥हो॥१९॥
 मुनि मानतुंग को दर्ई जब भूपने पीरा ।
 ताले में किया बंद भरी लोह जँजीरा ॥
 मुनिईश ने आदीश की थुति की है गंभीरा ।
 चक्रेश्वरी तब आनिके झट दूर की पीरा ॥हो॥२०॥
 शिवकोटि ने हट था किया समन्तभद्र सों ।
 शिव पिंड की वंदन करो शंको अभद्रसों ॥
 उस वक्त स्वयंभू रचा गुरु भावभद्रसों ।
 जिनचंद्रकी प्रतिमा तहाँ प्रगटी सुभद्रसों ॥हो॥२१॥

तोते ने तुम्हें आनिके फल आम चढ़ाया ।
 मेंढ़क ले चला फूल भरा भक्तिका भाया ॥
 तुम दोनों को अभिराम स्वर्गधाम बसाया ।
 हम आपसे दातार को लख आज ही पाया ॥हो॥२२॥
 कपि श्वान सिंह नेवला अज बैल बिचारे ।
 तिर्यच जिन्हें रंच न था बोध चितारे ॥
 इत्यादिको सुर धाम दे शिवधाम में धारे ।
 हम आपसे दातारको प्रभु आज निहारे ॥हो॥२३॥
 तुम ही अनंत जंतु का भय भीर निवारा ।
 वेदों पुराण में गुरु गणधर ने उचारा ॥
 हम आपकी सरना गती में आके पुकारा ।
 तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छिताकारा ॥हो॥२४॥
 प्रभु भक्त व्यक्त भक्त जक्त मुक्तके दानी ।
 आनंद कंद वृंदको हो मुक्त के दानी ॥
 मोहि दीन जान दीनबंधु पातक भानी ।
 संसार विषम खार तार अंतर जामी ॥हो॥२५॥
 करुणानिधान बान को अब क्यों न निहारो ।
 दानी अनंतदान के दाता हो संभारो ॥
 वृषचंदनंद 'वृंद' का उपसर्ग निवारो ।
 संसार विषम खार से प्रभु पार उतारो ॥
 हे दीन-बंधु श्रीपति करुणानिधानजी ।
 अब मेरी विथा क्यों ना हरो बार क्या लगी ॥२६॥

भक्तामर स्तोत्र (भाषा)

(हेमचन्द कृत)

आदिपुरुष आदीश जिन, आदि सुविधि करतार ।

धरम-धुरंधर परम गुरु, नमों आदि अवतार ॥

सुर-नत-मुकुट रतन-छवि करें, अंतर पाप-तिमिर सब हरें ।
जिन पद बंदो मन वच काय, भव-जल-पतित- उधरन सहाय ॥1॥
श्रुत-पारग इंद्रादिक देव, जाकी थुति कीनी कर सेव ।
शब्द मनोहर अरथ विशाल, तिस प्रभु की वरनों गुन-माल ॥2॥
विबुध-वंद्य-पद में मति-हीन, हो निलज्ज थुति-मनसा कीन ।
जल-प्रतिबिंब बुद्ध को गहै, शशि-मंडल बालक ही चहै ॥3॥
गुन-समुद्र तुम गुन अविकार, कहत न सुर-गुरु पावै पार ।
प्रलय-पवन-उद्धत जल-जन्तु, जलधि तिरै को भुज बलवन्तु ॥4॥
सो मैं शक्ति-हीन थुति करूँ, भक्ति-भाव-वश कछु नहिं डरूँ ।
ज्यों मृगि निज-सुत पालन हेतु, मृगपति सन्मुख जाय अचेत ॥5॥
मैं शठ सुधी हँसन को धाम, मुझ तव भक्ति बुलावै राम ।
ज्यों पिक अंब-कली परभाव, मधु-ऋतु मधुर करै आराव ॥6॥
तुम जस जंपत जन छिनमाहिं, जनम जनम के पाप नशाहिं ।
ज्यों रवि उगै फटै तत्काल, अलिवत नील निशा-तम-जाल ॥7॥
तव प्रभावतैं कहूँ विचार, होसी यह थुति जन-मन-हार ।
ज्यों जल-कमल पत्रपै परै, मुक्ताफल की द्युति विस्तरै ॥8॥

तुम गुन-महिमा हत-दुख दोष, सो तो दूर रहे सुख-पोष ।
पाप-विनाशक है तुम नाम, कमल-विकाशी ज्यों रवि-धाम ॥9॥
नहिं अचंभ जो होहिं तुरन्त, तुमसे तुम गुण वरणत सन्त ।
जो अधीन को आप समान, करै न सो निंदित धनवान ॥10॥
इकटक जन तुमको अविलोय, अवर-विषैं रति करै न सोय ।
को करि क्षीर - जलधि जल पान, क्षार नीर पीवै मतिमान ॥11॥
प्रभु तुम वीतराग गुण-लीन, जिन परमाणु देह तुम कीन ।
हैं तितने ही ते परमाणु, यातैं तुम सम रूप न आनु ॥12॥
कहैं तुम मुख अनुपम अविकार, सुर-नर-नाग-नयन- मनहार ।
कहाँ चन्द्र-मंडल सकलंक, दिन में ढाक-पत्र सम रंक ॥13॥
पूरन चन्द्र-ज्योति छविवंत, तुम गुन तीन जगत लघन्त ।
एक नाथ त्रिभुवन आधार, तिन विचरत को करै निवार ॥14॥
जो सुर-तिय विभ्रम आरम्भ, मन न डिग्यो तुम तौ न अचंभ ।
अचल चलावै प्रलय समीर, मेरु- शिखर डगमगै न धीर ॥15॥
धूमरहित बाती गत नेह, परकाशै त्रिभुवन - घर एह ।
बात - गम्य नाहीं परचण्ड, अपरदीप तुम बलो अखंड ॥16॥
छिपहु न लुपहु राहुकी छांहि, जग परकाशक हो छिनमाहि ।
घन अनवर्त दाह विनिवार, रवितैं अधिक धरो गुणसार ॥17॥
सदा उदित विदलित मनमोह, विघटित मेघ राहु अविरोह ।
तुम मुखकमल अपूरव चन्द, जगत-विकाशी जोति अमंद ॥18॥

निशदिन शशि रवि को नहिं काम, तुम मुख चन्द हरै तमधाम ।
 जो स्वभावतैं उपजै नाज, सजल मेघ तैं कौनहु काज ॥19॥
 जो सुबोध सोहै तुम माहिं, हरि हर आदिक में सो नाहिं ।
 जो द्युति महा-रतन में होय, काच-खंड पावै नहिं सोय ॥20॥
 सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया ।
 स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया ॥
 कछू न तोहि देख के जहाँ तुही विशेषिया ।
 मनोग चित्त-चोर और भूल हूँ न पेखिया ॥21॥
 अनेक पुत्रवंतिनी नितंबनी सपूत हैं ।
 न तो समान पुत्र और माततैं प्रसूत हैं ॥
 दिशा धरंत तारिका अनेक कोटि को गिनै ।
 दिनेश तेजवंत एक पूर्व ही दिशा जनै ॥22॥
 पुरान हो पुमान हो पुनीत पुण्यवान हो ।
 कहें मुनीश अंधकार-नाश को सुभान हो ॥
 महंत तोहि जानके न होय वश काल के ।
 न और मोहि मोख पंथ देय तोहि टालके ॥23॥
 अनन्त नित्य चित्त की अगम्य रम्य आदि हो ।
 असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो ॥
 महेश कामकेतु योग ईश योग ज्ञान हो ।
 अनेक एक ज्ञान रूप शुद्ध संतमान हो ॥24॥

तुही जिनेश बुद्ध है सुबुद्धि के प्रमानतैं ।
 तुही जिनेश शंकरो जगत्-त्रये विधानतैं ॥
 तुही विधात है सही सुमोख पंथ धारतैं ।
 नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थ के विचारतैं ॥25॥
 नमो करूँ जिनेश तोहि आपदा निवार हो ।
 नमो करूँ सुभूरि-भूमि - लोक के सिंगार हो ॥
 नमो करूँ भवाब्धि-नीर-राशि-शोष-हेतु हो ।
 नमो करूँ महेश तोहि मोखपंथ देतु हो ॥26॥
 तुम जिन पूरन गुन गन भरे, दोष गर्वकरि तुम परिहरे ।
 और देव-गण आश्रय पाय, स्वप्न न देखे तुम फिर आय ॥27॥
 तरु अशोक तर किरन उदार, तुम तन शोभित है अविहार ।
 मेघ निकट ज्यों तेजफुरंत, दिनकर दिपै तिमिर निहंत ॥28॥
 सिंहासन-मणि-किरण-विचित्र, तापर कंचन-वरन पवित्र ।
 तुम तन शोभित किरन विहार, ज्यों उदयाचल रवि तम-हार ॥29॥
 कुंद-पुहुप-सित - चमर दुरंत, कनक-वरन तुम तन शोभंत ।
 ज्यों सुमेरु-तट निर्मल कांति, झरना झरै नीर उमगांति ॥30॥
 ऊँचे रहौ सुर दुति लोप, तीन छत्र तुम दिपैं अगोप ।
 तीन लोक की प्रभुता कहैं, मोती-झालर सों छवि लहैं ॥31॥
 दुंदुभि-शब्द गहर गंभीर, चहुँ दिशि होय तुम्हारे धीर ।
 त्रिभुवन - जन शिव - संगम करै, मानूँ जय जय ख उच्चरै ॥32॥

मंद पवन गंधोदक इष्ट, विविध कल्पतरु पुहुप -सुवृष्ट
 देव करें विकसित दल सार, मानों द्विज-पंकति अवतार ।।33।।
 तुम तन-भामंडल जिनचन्द, सब दुतिवंत करत है मन्द।
 कोटि शंख रवि तेज छिपाय, शशि निर्मल निशि करे अछाय ।।34।।
 स्वर्ग-मोख-मारग-संकेत, परम-धरम उपदेशन हेत।
 दिव्य वचन तुम खिरें अगाध, सब भाषा-गर्भित हित साध ।।35।।
 विकसित सुवरन कमल दुति, नख दुति मिलि चमकाहिं।
 तुम पद पदवी जहँ धरो, तहँ सुर कमल रचाहिं ।।36।।
 ऐसी महिमा तुम विषै, और धरे नहिं कोय।
 सूरज में जो जोत है, नहिं तारा गण होय ।।37।।
 मद-अवलिप्त-कपोल-मूल अलि-कुल झंकारे।
 तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोध उद्धत अति धारैं ।।
 काल-वरन विकराल, कालवत सनमुख आवै।
 ऐरावत सो प्रबल सकल जन भय उपजावै ।।
 देखी गयंद न भय करै, तुम पद-महिमा लीन।
 विपति-रहित संपति-सहित वरतैं भक्त अदीन ।।38।।
 अति मद-मत्त गयंद कुंभ-थल नखन विदारै।
 मोती रक्त समेत डारि भूतल सिंगारै ।।
 बांकी दाढ़ विशाल वदन में रसना लोलै।
 भीम भयानक रूप देख जन थरहर डोलै ।।

ऐसे मृग-पति पग-तलैं जो नर आयो होय।
 शरण गये तुम चरण की बाधा करै न सोय ।।39।।
 प्रलय-पवनकर उठी आग जो तास पटन्तर।
 बमें फुलिंग शिखा उतंग पर जलैं निरन्तर ।।
 जगत समस्त निगल्ल भस्म कर देगी मानों।
 तडतडाट दव-अनल जोर चहुँ- दिशा उठनों ।।
 सो इक छिन में उपशमें नाम-नीर तुम लेत।
 होय सरोवर परिनमें विकसित कमल समेत ।।40।।
 कोकिल-कंठ-समान श्याम-तन क्रोध जलन्ता।
 रक्त-नयन फुंकार मार विष-कण उगलन्ता ।।
 फण को ऊँचा करे वेग ही सन्मुख धाया।
 तब जन होय निशंक देख फणपति को आया ।।
 जो चापै निज पगतलैं व्यापै विष न लगार।
 नाग-दमनि तुम नामकी है जिनके आधार ।।41।।
 जिस रन-माहिं भयानक रव कर रहे तुरंगम ।
 घनसम गज गरजाहिं मत्त मानों गिरि जंगम ।।
 अति कोलाहल माहिं बात जहँ नाहिं सुनीजै ।
 राजन को परचंड, देख बल धीरज छीजै ।।
 नाथ तिहारे नामतैं अघ छिनमांहि पलाय ।
 ज्यों दिनकर परकाशतैं अन्धकार विनशाय ।।42।।

मारै जहाँ गयंद कुंभ हथियार विदारै ।
 उमगै रुधिर प्रवाह वेग जलसम विस्तारै ॥
 होय तिरन असमर्थ महाजोधा बलपूरे ।
 तिस रनमें जिन तोर भक्त जे हैं नर सूरै ॥
 दुर्जय अरिकुल जीत के जय पावै निकलंक ।
 तुम पद पंकज मन बसैं ते नर सदा निशंक ॥43॥
 नक्र चक्र मगरादि मच्छकरि भय उपजावै ।
 जामैं बड़वा अग्नि दाहतैं नीर जलावै ॥
 पार न पावैं जास थाह नहिं लहिये जाकी ।
 गरजै अति गंभीर, लहर की गिनति न ताकी ॥
 सुखसों तिरैं समुद्र को, जे तुम गुन सुमराहिं ।
 लोल कलोलन के शिखर, पार यान ले जाहिं ॥44॥
 महा जलोदर रोग, भार पीड़ित नर जे हैं ।
 वात पित्त कफ कुष्ठ, आदि जो रोग गहै हैं ॥
 सोचत रहैं उदास नाहिं जीवन की आशा ।
 अति घिनावनी देह, धरै दुर्गंध निवासा ॥
 तुम-पद-पंकज - धूल को, जो लावैं निज अंग ।
 ते नीरोग शरीर लहि, छिन में होय अनंग ॥45॥
 पांव कंठतें जकर बांध सांकल अति भारी ।
 गाढ़ी बेडी पैर मांहि, जिन जाँघ बिदारी ॥
 भूख प्यास चिंता शरीर दुख जे विललाने ।
 सरन नाहिं जिन कोय भूपके बंदीखाने ॥

तुम सुमरत स्वयमेव ही बंधन सब खुल जाहिं ।
 छिन में ते संपति लहैं चिंता भय विनसाहिं ॥46॥
 महामत्त गजराज और मृगराज दवालन ।
 फणपति रण परचंड नीरनिधि रोग महाबल ॥
 बंधन ये भय आठ डरपकर मानों नाशै ।
 तुम सुमरत छिनमाहिं अभय थानक परकाशै ॥
 इस अपार संसार में शरन नाहिं प्रभु कोय ।
 यातैं तुम पदभक्त को भक्ति सहाई होय ॥47॥
 यह गुनमाल विशाल नाथ तुम गुनन सँवारी ।
 विविधवर्णमय पुहुप गूथ में भक्ति विथारी ॥
 जे नर पहिरें कंठ भावना मन में भावैं ।
 मानतुंग ते निजाधीन शिवलक्ष्मी पावैं ॥
 भाषा भक्तामर कियो, हेमराज हित हेत ।
 जे नर पढ़ैं सुभावसों, ते पावैं शिवखेत ॥48॥

श्री भक्तामर भाषा पाठ

(श्रीकमलकुमारजी शास्त्री कुमुदकृत)

भक्त अमर नत मुकुट सुमणियों, की सुप्रभा का जो भासक ।
 पापरूप अतिसघन तिमिर का, ज्ञान-दिवाकर-सा नाशक ॥
 भव-जल पतित जनों को जिसने, दिया आदि में अवलम्बन ।
 उनके चरण कमल को करते, सम्यक् बारम्बार नमन ॥1॥

सकल वाङ्मय तत्त्वबोध से, उद्भव पटुतर धी-धारी।
 उसी इन्द्र की स्तुति से है, वन्दित जग-जन मन-हारी॥
 अति आश्चर्य की स्तुति करता, उसी प्रथम जिनस्वामी की।
 जगनामी-सुखधामी तद्भव-शिवगामी अभिरामी की॥2॥
 स्तुति को तैयार हुआ हूँ, मैं निर्बुद्धि छोड़ के लाज।
 विज्ञानों से अर्चित हैं प्रभु, मंदबुद्धि की रखना लाज॥
 जल में पड़े चन्द्र-मंडल को, बालक बिना कौन मतिमान।
 सहसा उसे पकड़ने वाली, प्रबलेच्छा करता गतिमान॥3॥
 हे जिन चन्द्रकान्त से बढ़कर, तव गुण विपुल अमल अतिश्वेत।
 कह न सकें नर हे गुण-सागर, सुर-गुरु के सम बुद्धि समेत॥
 मक्र-नक्र-चक्रादि जन्तु युत, प्रलय पवन से बढ़ा अपार।
 कौन भुजाओं से समुद्र के, हो सकता है परले पार॥4॥
 वह मैं हूँ कुछ शक्ति न रखकर, भक्ति प्रेरणा से लाचार।
 करता हूँ स्तुति प्रभु तेरी, जिसे न पौर्वा-पर्य विचार॥
 निज शिशु की रक्षार्थ आत्म-बल, बिना विचारे क्या न मृगी।
 जाती है मृगपति के आगे, शिशु-सनेह में हुई रंगी॥5॥
 अल्पश्रुत हूँ श्रुतवानों से, हास्य कराने का ही धाम।
 करती है बाचाल मुझे प्रभु, भक्ति आपकी आठों याम॥
 करती मधुर गान पिक मधु में, जगजन मनहर अति अभिराम।
 उसमें हेतु सरस फल फूलों, से युत हरे-भरे तरु-आम॥6॥
 जिनवर की स्तुति करने से, चिर संचित भविजन के पाप।
 पल भर में भग जाते निश्चित, इधर-उधर अपने ही आप॥

सकल लोक में व्याप्त रात्रि का, भ्रमर सरीखा काला ध्वान्त।
 प्रातः रवि की उग्र किरण लख, हो जाता क्षण में प्राणान्त॥7॥
 मैं मतिहीन-दीन प्रभु तेरी, शुरु करूँ स्तुति अघ-हान।
 प्रभु-प्रभाव ही चित्त हरेगा, सन्तों का निश्चय से मान॥
 जैसे कमल-पत्र पर जल-कण, मोती जैसे आभावान।
 दिपते हैं फिर छिपते हैं असली मोती में है भगवान॥8॥
 दूर रहे स्तोत्र आपका, जो कि सर्वथा है निर्दोष।
 पुण्य कथा ही किन्तु आपकी, हर लेती है कल्मष-कोष॥
 प्रभा प्रफुल्लित करती रहती, सर के कमलों को भरपूर।
 फेंका करता सूर्य-किरण को, आप रहा करता है दूर॥9॥
 त्रिभुवनतिलक जगत-पति हे प्रभु सद्गुरुओं के हे गुरुवर्य।
 सद्भक्तों को निजसम करते, इसमें नहीं अधिक आश्चर्य॥
 स्वाश्रित जन को निजसम करते, धनी लोग धन धरनी से।
 नहीं करें तो उन्हें लाभ क्या? उन धनिकों की करनी से॥10॥
 हे अनिमेष विलोकनीय प्रभु, तुम्हें देखकर परम-पवित्र।
 तोषित होते कभी नहीं हैं, नयन मानवों के अन्यत्र॥
 चन्द्रकिरण सम उज्ज्वल निर्मल, क्षीरोदधि का कर जलपान।
 कालोदधि का खारा पानी, पीना चाहे कौन पुमान॥11॥
 जिन जितने जैसे अणुओं से, निर्मापित प्रभु तेरी देह।
 थे उतने वैसे अणु जग में, शांति-राग-मय निःसन्देह॥
 हे त्रिभुवन के शिरोभाग के, अद्वितीय आभूषण-रूप।
 इसीलिए तो आप सरीखा, नहीं दूसरों का है रूप॥12॥

कहाँ आपका मुख अतिसुन्दर, सुर-नर उरग नेत्रहारी।
 जिसने जीत लिये सब जग के, जितने थे उपमाधारी॥
 कहां कलंगी बंक चन्द्रमा, रंक-समान कीट-सा दीन।
 जो पलाश-सा फीका पड़ता, दिन में हो करके छबिछीन॥13॥
 तव गुण पूर्ण-शशांक कान्तिमय, कला-कलापों से बढ़के।
 तीन लोक में व्याप रहे हैं, जो कि स्वच्छता में चढ़के॥
 विचरें चाहे जहाँ कि जिनको, जगन्नाथ का एकाधार।
 कौन माई का जाया रखता, उन्हें रोकने का अधिकार॥14॥
 मद की छकी अमर ललनाएँ, प्रभु के मन में तनिक विकार।
 कर न सकी आश्चर्य कौन सा, रह जाती हैं मन को मार॥
 गिर गिर जाते प्रलय पवन से, तो फिर क्या वह मेरु-शिखर।
 हिल सकता है रंच-मात्र भी, पाकर झंझावात प्रखर॥15॥
 धूम न बत्ती तैल बिना ही, प्रकट दिखाते तीनों लोक।
 गिरि के शिखर उड़ाने वाली, बुझा न सकती मारुत झोक॥
 तिस पर सदा प्रकाशित रहते, गिनते नहीं कभी दिन-रात।
 ऐसे अनुपम आप दीप हैं, स्वपर प्रकाशक जग विख्यात॥16॥
 अस्त न होता कभी न जिसको, ग्रस पाता है राहु प्रबल।
 एक साथ बतलाने वाला, तीन लोक का ज्ञान विमल॥
 रुकता कभी प्रभाव न जिसका, बादल की पाकर के ओट।
 ऐसी गौरव-गरिमा वाले, आप अपूर्व दिवाकर कोट॥17॥
 मोह महातम दलने वाला, सदा उदित रहने वाला।
 राहु न बादल से दबता पर, सदा स्वच्छ रहने वाला॥

विश्व प्रकाशक मुखसरोज तव, अधिक कांतिमय शांतिस्वरूप।
 है अपूर्व जग का शशि मण्डल, जगत शिरोमणि शिव का भूप॥18॥
 नाथ आपका मुख जब करता, अन्धकार का सत्यानाश।
 तब दिन में रवि और रात्रि में, चन्द्रबिम्ब का विफल प्रयास॥
 धान्यखेत जब धरती तल के, पके हुये हों अतिअभिराम।
 शोर मचाते जल को लादे, हुये घनों से तब क्या काम॥19॥
 जैसा शोभित होता प्रभु का, स्वपर-प्रकाशक उत्तम ज्ञान।
 हरिहरादि देवों में वैसा, कभी नहीं हो सकता भान॥
 अति ज्योतिर्मय महारतन का, जो महत्व देखा जाता।
 क्या वह किरणाकुलित कांच में, अरे कभी लेखा जाता॥20॥
 हरिहरादि देवों का ही मैं, मानूं उत्तम अवलोकन।
 क्योंकि उन्हें देखने भर से, तुझसे तोषित होता मन॥
 है परन्तु क्या तुम्हें देखने, से हे स्वामिन् मुझको लाभ।
 जन्म जन्म में लुभा न पाते, कोई यह मेरा अमिताभ॥21॥
 सौ सौ नारी सौ सौ सुत को, जनती रहती सौ सौ ठौर।
 तुम से सुत को जनने वाली, जननी महती क्या है और?
 तारागण को सर्व दिशाएँ, धरें नहीं कोई खाली।
 पूर्व दिशा ही पूर्ण प्रतापी, दिनपति को जनने वाली॥22॥
 तुम को परम पुरुष मुनि मानें, विमल वर्ण रवि तमहारी।
 तुम्हें प्राप्त कर मृत्युञ्जय के, बन जाते जन अधिकारी॥
 तुम्हें छोड़कर अन्य न कोई, शिवपुर-पथ बतलाता है।
 किन्तु विपर्यय मार्ग बताकर, भव-भव में भटकाता है॥23॥

तुम्हें आद्य अक्षय अनन्त प्रभु, एकानेक तथा योगीश।
 ब्रह्मा ईश्वर या जगदीश्वर, विदित योग मुनिनाथ मुनीश॥
 विमल ज्ञानमय या मकरध्वज, जगन्नाथ जगपति जगदीश।
 इत्यादिक नामों कर माने, सन्त निरन्तर विभो निधीश॥24॥
 ज्ञान पूज्य है, अमर आपका, इसीलिए कहलाते बुद्ध।
 भुवनत्रय के सुख-संवर्द्धक, अतः तुम्हीं शंकर हो शुद्ध॥
 मोक्ष-मार्ग के आद्य प्रवर्तक, अतः विधाता कहे गणेश।
 तुम सम अवनी पर पुरुषोत्तम, और कौन होगा अखिलेश॥25॥
 तीन लोक के दुःख हरण करने वाले हे तुम्हें नमन।
 भूमण्डल के निर्मल-भूषण आदि जिनेश्वर तुम्हें नमन॥
 हे त्रिभुवन के अखिलेश्वर हो, तुमको बारम्बार नमन।
 भव-सागर के शोषक पोषक, भव्य जनों के तुम्हें नमन॥26॥
 गुणसमूह एकत्रित होकर, तुझमें यदि पा चुके प्रवेश।
 क्या आश्चर्य न मिल पाये हों, अन्य आश्रय उन्हें जिनेश॥
 देव कहे जाने वालों से, आश्रित होकर गर्वित दोष।
 तेरी ओर न झाँक सके वे, स्वप्नमात्र में हे गुणकोष॥27॥
 उन्नत तरु अशोक के आश्रित, निर्मल किरणोन्नत वाला।
 रूप आपका दिपता सुन्दर, तमहर मनहर छवि वाला॥
 वितरण किरण निकर तमहारक दिनकर घनके अधिक समीप।
 नीलाचल पर्वत पर होकर, नीरांजन करता ले दीप॥28॥
 मणि-मुक्ता किरणों से चित्रित, अद्भुत शोभित सिंहासन।
 कान्तिमान कंचनसा दिखता, जिस पर तव कमनीय वदन॥

उदयाचल के तुंग शिखर से, मानो सहस्र रश्मि वाला।
 किरण-जाल फैलाकर निकला, हो करने को उजियाला॥29॥
 दुरते सुन्दर चँवर विमल अति, नवल-कुन्द के पुष्प-समान।
 शोभा पाती देह आपकी, रौप्य धवल-सी आभावान॥
 कनकाचल के तुंग शृंग से, झर-झर झरता है निर्झर।
 चन्द्र-प्रभा सम उछल रही हो, मानो उसके ही तट पर॥30॥
 चन्द्र-प्रभ सम झल्लरियों से, मणि-मुक्तामय अति कमनीय।
 दीप्तिमान् शोभित होते हैं, सिर पर छत्रत्रय भवदीय॥
 ऊपर रहकर सूर्य-रश्मि का, रोक रहे हैं प्रखर-प्रताप।
 मानों वे घोषित करते हैं, त्रिभुवन के परमेश्वर आप॥31॥
 ऊँचे स्वर से करने वाली सर्व दिशाओं में गुञ्जन।
 करने वाली तीन लोक के, जन-जन का शुभ-सम्मेलन॥
 पीट रही है डंका- हो सत् धर्म - राज की हो जय-जय।
 इस प्रकार बज रही गगन में, भेरी तव यश की अक्षय॥32॥
 कल्पवृक्ष के कुसुम मनोहर, पारिजात एवं मंदार।
 गन्धोदक की मन्द वृष्टि करते हैं प्रमुदित देव उदार॥
 तथा साथ ही नभ से बहती, धीमी धीमी मन्द पवन।
 पंक्ति बांध कर बिखर रहे हों, मानों तेरे दिव्य-वचन॥33॥
 तीन लोक की सुन्दरता यदि, मूर्तिमान बन कर आवे।
 तन-भा मण्डल की छवि लखकर, तव सन्मुख शरमा जावे॥
 कोटि सूर्य के ही प्रताप सम, किन्तु नहीं कुछ भी आताप।
 जिसके द्वारा चन्द्र सुशीतल, होता निष्प्रभ अपने आप॥34॥

मोक्ष-स्वर्ग के मार्ग प्रदर्शक, प्रभुवर तेरे दिव्य-वचन।
 करा रहे हैं सत्य-धर्म के, अमर-तत्त्व का दिग्दर्शन॥
 सुनकर जग के जीव वस्तुतः, कर लेते अपना उद्धार।
 इस प्रकार परिवर्तित होते, निज-निज भाषा के अनुसार॥35॥
 जगमगात नख जिसमें शोभें, जैसे नभ में चन्द्रकिरण।
 विकसित नूतन सरसीरुह सम, हे प्रभु तेरे विमल चरण॥
 रखते जहाँ वहीं रचते हैं, स्वर्णकमल, सुरदिव्य ललाम।
 अभिनन्दन के योग्य चरण तव, भक्ति रहे उनमें अभिराम॥36॥
 धर्म-देशना के विधान में, था जिनवर का जो ऐश्वर्य।
 वैसा क्या कुछ अन्य कुदेवों, में भी दिखता है सौंदर्य॥
 जो छवि घोर-तिमिर के नाशक, रवि में है देखी जाती।
 वैसी ही क्या अतुल कान्ति, नक्षत्रों में लेखी जाती॥37॥
 लोल कपालों से झरती है, जहाँ निरन्तर मद की धार।
 होकर अति मदमत्त कि जिस पर, करते हैं भौरे गुँजार॥
 क्रोधासक्त हुआ यों हाथी, उद्धत ऐरावत सा काल।
 देख भक्त छुटकारा पाते, पाकर तब आश्रय तत्काल॥38॥
 क्षत-विक्षत कर दिये गजों के, जिसने उन्नत गण्डस्थल।
 कांतिमान् गज-मुक्ताओं से, पाट दिया हो अवनी-तल॥
 जिन भक्तों को तेरे चरणों, के गिरि की हो उन्नत ओट।
 ऐसा सिंह छलांगे भरकर, क्या उस पर कर सकता चोट॥39॥
 प्रलय काल की पवन उठाकर, जिसे बढ़ा देती सब ओर।
 फिकें फुलिंगे ऊपर तिरछे, अंगारों का भी हो जोर॥

भुवनत्रय को निगला चाहे आती हुई अग्नि भभकार।
 प्रभु के नाम- मन्त्र जल से वह बुझ जाती है उस ही बार॥40॥
 कंठ कोकिला सा अति काला क्रोधित हो फण किया विशाल।
 लाल-लाल लोचन करके यदि, झपटै नाग महा विकराल॥
 नाम रूप तब अहि-दमनी का, लिया जिन्होंने हो आश्रय।
 पग रख कर निश्शंक नाग पर, गमन करें वे नर निर्भय॥41॥
 जहाँ अश्व की और गजों की, चीत्कार सुन पड़ती घोर।
 शूरवीर नृप की सेनाएँ, रव करती हों चारों ओर॥
 वहाँ अकेला शक्तिहीन नर, जप कर सुन्दर तेरा नाम।
 सूर्यतिमिर सम शूर-सैन्य का, कर देता है काम तमाम॥42॥
 रण में भालों से वेधित गज, तन से बहता रक्त अपार।
 वीर लड़ाकू जहाँ आतुर हैं, रुधिर-नदी करने को पार॥
 भक्त तुम्हारा हो निराश तहँ, लख अरिसेना दुर्जयरूप।
 तव पादारविन्द पा आश्रय, जय पाता उपहार-स्वरूप॥43॥
 वह समुद्र कि जिसमें होवें, मच्छ मगर एवं घड़ियाल।
 तूफां लेकर उठती होवें, भयकारी लहरें उत्ताल॥
 भ्रमर-चक्र में फंसे हुये हों, बीचों बीच अगर जलयान।
 छुटकारा पा जाते दुःख से, करने वाले तेरा ध्यान॥44॥
 असहनीय उत्पन्न हुआ हो, विकट जलोदर पीड़ा भार।
 जीने की आशा छोड़ी हो, देख दशा दयनीय अपार॥
 ऐसे व्याकुल मानव पाकर, तेरी पद-रज संजीवन।
 स्वास्थ्य-लाभकर बनता उसका, कामदेव सा सुन्दर तन॥45॥

लोह-शृङ्खला से जकड़ी है, नख से सिख तक देह समस्त।
घुटने-जँघे छिले बेड़ियों, से अधीर जो है अतिव्रस्त।।
भगवन ऐसे बन्दीजन भी, तेरे नाम-मन्त्र की जाप।
जप कर गत-बन्धन हो जाते, क्षण भर में अपने ही आप।।46।।
वृषभेश्वर के गुण स्तवन का, करते निश-दिन जो चिंतन।
भय भी भयाकुलित हो उनसे, भग जाता है हे स्वामिन्।।
कुंजर-समर-सिंह-शोक-रुज, अहि दावानल कारागार।
इनके अतिभीषण दुःखों का, हो जाता क्षण में संहार।।47।।
हे प्रभु तेरे गुणोद्घान की, क्यारी से चुन दिव्य-ललाम।
गूँथी विविध वर्ण सुमनों की, गुणमाला सुन्दर अभिराम।।
श्रद्धासहित भविकजन जो भी कण्ठाभरण बनाते हैं।
मानतुंग-सम निश्चित सुन्दर, मोक्ष-लक्ष्मी पाते हैं।।48।।

सामायिक पाठ

प्रेम भाव हो सब जीवों से, गुणीजनों में हर्ष प्रभो।
करुणा स्रोत बहे दुखियों पर, दुर्जन में मध्यस्थ विभो।।1।।
वह अनन्त बल शील आत्मा, हो शरीर से भिन्न प्रभो।
ज्यों होती तलवार म्यान से, वह अनन्त बल दो मुझको।।2।।
सुख दुख बैरी बन्धु वर्ग में, काँच कनक में समता हो।
वन उपवन प्रासाद कुटी में, नहीं खेद नहिं ममता हो।।3।।
जिस सुन्दरतम पथ पर चलकर, जीते मोह मान मन्मथ।
वह सुन्दर पथ ही प्रभु मेरा, बना रहे अनुशीलन पथ।।4।।

एकेन्द्रिय आदिक प्राणी की यदि मैंने हिंसा की हो।
शुद्ध हृदय से कहता हूँ वह, निष्फल हो दुष्कृत्य विभो।।5।।
मोक्ष मार्ग प्रतिकूल प्रवर्तन जो कुछ किया कषायों से।
विपथ गमन सब कालुष मेरे, मिट जावें सद्भावों से।।6।।
चतुर वैद्य विष विक्षत करता, त्यों प्रभु मैं भी आदि उपान्त।
अपनी निन्दा आलोचन से करता हूँ पापों को शान्त।।7।।
सत्य अहिंसादिक व्रत में भी मैंने हृदय मलीन किया।
व्रत विपरीत प्रवर्तन करके शीलाचरण विलीन किया।।8।।
कभी वासना की सरिता का, गहन सलिल मुझ पर छाया।
पी पीकर विषयों की मदिरा, मुझमें पागल पन आया।।9।।
मैंने छली और मायावी, हो असत्य आचरण किया।
परनिन्दा गाली चुगली जो, मुँह पर आया वमन किया।।10।।
निरभिमान उज्ज्वल मानस हो, सदा सत्य का ध्यान रहे।
निर्मल जल की सरिता सदृश, हिय में निर्मल ज्ञान बहे।।11।।
मुनि चक्री शक्री के हिय में, जिस अनन्त का ध्यान रहे।
गाते वेद पुराण जिसे वह, परम देव मम हृदय रहे।।12।।
दर्शन ज्ञान स्वभावी जिसने, सब विकार हो वमन किये।
परम ध्यान गोचर परमात्म, परम देव मम हृदय रहे।।13।।
जो भव दुःख का विध्वंसक है, विश्व विलोकी जिसका ज्ञान।
योगी जन के ध्यान गम्य वह, वसे हृदय में देव महान।।14।।
मुक्ति मार्ग का दिग्दर्शक है, जनम मरण से परम अतीत।
निष्कलंक त्रैलोक्य दर्शी वह देव रहे मम हृदय समीप।।15।।

निखिल विश्व के वशीकरण वे, राग रहे ना द्वेष रहे।
 शुद्ध अतीन्द्रिय ज्ञान स्वभावी, परम देव मम हृदय रहे॥16॥
 देख रहा जो निखिल विश्व को, कर्म कलंक विहीन विचित्र।
 स्वच्छ विनिर्मल निर्विकार वह देव करें मम हृदय पवित्र॥17॥
 कर्म कलंक अछूत न जिसको कभी छू सके दिव्य प्रकाश।
 मोह तिमिर को भेद चला जो परमशरण मुझको वह आप्त॥18॥
 जिसकी दिव्य ज्योति के आगे, फीका पड़ता सूर्य प्रकाश।
 स्वयं ज्ञानमय स्वपर प्रकाशी, परम शरण मुझको वह आप्त॥19॥
 जिसके ज्ञान रूप दर्शन से, स्पष्ट झलकते सभी पदार्थ।
 आदि अन्त से रहित शान्त शिव, परम शरण मुझको वह आप्त॥20॥
 जैसे अग्नि जलाती तरु को, तैसे नष्ट हुए स्वयमेव।
 भव विषाद चिन्ता नहीं जिनको, परम शरण मुझको वह देव॥21॥
 तृण, चौकी, शिल, शैलशिखर नहीं, आत्म समाधि के आसन।
 संस्तर, पूजा, संघ-सम्मिलन, नहीं समाधि के साधन॥22॥
 इष्ट वियोग अनिष्ट योग में, विश्व मनाता है मातम।
 हेय सभी हैं विषय वासना, उपादेय निर्मल आतम॥23॥
 बाह्य जगत कुछ भी नहीं मेरा और न बाह्य जगत का मैं।
 यह निश्चय कर छोड़ बाह्य को, मुक्ति हेतु नित स्वस्थ रमें॥24॥
 अपनी निधि तो अपने में है, बाह्य वस्तु में व्यर्थ प्रयास।
 जग का सुख तो मृग तृष्णा है, झूठे हैं उसके पुरुषार्थ॥25॥

अक्षय है शाश्वत है आत्मा, निर्मल ज्ञान स्वभावी है।
 जो कुछ बाहर है, सब पर है, कर्माधीन विनाशी है॥26॥
 तन से जिसका ऐक्य नहीं हो, सुत, तिय, मित्रों से कैसे।
 चर्म दूर होने पर तन से, रोम समूह रहे कैसे॥27॥
 महा कष्ट पाता जो करता, पर पदार्थ, जड़-देह संयोग।
 मोक्ष महल का पथ है सीधा, जड़-चेतन का पूर्ण वियोग॥28॥
 जो संसार पतन के कारण, उन विकल्प जालों को छोड़।
 निर्विकल्प निर्द्वन्द आत्मा, फिर- फिर लीन उसी में हो॥29॥
 स्वयं किये जो कर्म शुभाशुभ, फल निश्चय ही वे देते।
 करे आप, फल देय अन्य तो स्वयं किये निष्फल होते॥30॥
 अपने कर्म सिवाय जीव को, कोई न फल देता कुछ भी।
 'पर देता है' यह विचार तज स्थिर हो, छोड़ प्रमादी बुद्धि॥31॥
 निर्मल, सत्य, शिवं सुन्दर है, अमित गति वह देव महान्।
 शाश्वत निज में अनुभव करते, पाते निर्मल पद निर्वाण॥32॥
 इन बत्तीस पदों से जो कोई, परमात्म को ध्याते हैं।
 साँची सामायिक को पाकर, भवोदधि तर जाते हैं॥33॥

सामायिक पाठ (भाषा)

1. प्रतिक्रमण कर्म

काल अनन्त भ्रम्यो जग में सहिये दुख भारी।
 जन्म मरण नित किये पाप को ह्वै अधिकारी॥
 कोटि भवांतर माहिं मिलन दुर्लभ सामायिक।
 धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुखदायक॥1॥

हे सर्वज्ञ जिनेश ! किये जे पाप जु मैं अब ।
 ते सब मन-वच-काय-योग की गुप्ति बिना लभ ॥
 आप समीप हजूर माहिं मैं खड़ो खड़ो सब ।
 दोष कहूँ सो सुनो करो नठ दुःख देहिं जब ॥2॥
 क्रोध मान मद लोभ मोह मायावशि प्राणी ।
 दुःख सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी ॥
 बिना प्रयोजन एकेन्द्रिय वि ति चउ पंचेन्द्रिय ।
 आप प्रसादहि मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय ॥3॥
 आपस में इक ठौर थापकरि जे दुःख दीने ।
 पेलि दिये पग तलैं दाबि करि प्रान हरीने ॥
 आप जगत के जीव जिते तिन सब के नायक ।
 अरज करूँ मैं सुनो दोष मेटो दुःखदायक ॥4॥
 अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय ।
 तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय ॥
 मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहु दयानिधि ।
 यह पडिकोणो कियो आदि षट्कर्म माहिं विधि ॥5॥

2. द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म

इसके आदि व अन्त में आलोचना पाठ बोलकर फिर तीसरे सामायिक कर्म का पाठ करना चाहिए ।
 जो प्रमादवशि होय विराधे जीव घनेरे ।
 तिन को जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ॥
 सो सब झूठे होउ जगत पति के परसादै ।
 जा प्रसादतै मिलै सर्व सुख दुःख न लाधै ॥6॥

मैं पापी निर्लज्ज दया करि हीन महाशठ ।
 किये पाप अघ ढेर पाप मति होय चित्त दुठ ॥
 निंदूँ हूँ मैं बार बार निज जिय को गरहूँ ।
 सब विधि धर्म उपाय पाय फिर पापहिं करहूँ ॥7॥
 दुर्लभ है नर जन्म तथा श्रावक कुल भारी ।
 सत संगति संजोग धर्म जिन श्रद्धा धारी ॥
 जिन वचनामृत धार समावर्तैं जिनवानी ।
 तोहू जीव संघारे धिक धिक धिक हम जानी ॥8॥
 इन्द्रिय लंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब ।
 अज्ञानी जिमि करै तिसि विधि हिंसक ह्वै अब ॥
 गमनागमन करन्तो जीव विराधे भोले ।
 ते सब दोष किये निंदूँ अब मन वच तोले ॥9॥
 आलोचन विधि थकी दोष लागे जु घनेरे ।
 ते सब दोष विनाश होउ तुम तैं जिन मेरे ॥
 बार-बार इस भाँति मोह मद दोष कुटिलता ।
 ईर्षादिक तैं भये निंदि ये जे भयभीता ॥10॥

3. तृतीय सामायिक भाव कर्म

सब जीवन में मेरे समता भाव जग्यो हैं ।
 सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो हैं ॥
 आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छाँड़ि करिहूँ सामायिक ।
 संजम मो कब शुद्ध होय भव भाव बधायक ॥11॥

पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति ।
 पंचहि थावर माहिं तथा त्रस जीव बसैं जित ॥
 बेइंद्रिय तिय चउ पंचेन्द्रिय माँहि जीव सब ।
 तिनतें क्षमा कराऊँ मुझ पर क्षमा करो अब ॥12॥
 इस अवसर में मेरे सब सम कंचन अरु तृण ।
 महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहिं समगण ॥
 जामन मरण समान जानि हम समता कीनी ।
 सामायिक का काल जितै यह भाव नवीनी ॥13॥
 मेरो है इक आतम तामें ममत जु कीनो ।
 और सबै सम भिन्न जानि ममता रस भीनो ॥
 मात पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सबै यह ।
 मोतैं न्यारे जानि जथारथ रूप कर्यो गह ॥14॥
 मैं अनादि जग जाल माँहि फँसि रूप न जाण्यो ।
 एकेन्द्रिय दे आदि जंतु को प्राण हराण्यो ॥
 ते सब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी ।
 भव-भव को अपराध छिमा कीज्यो कर मरजी ॥15॥

4. चतुर्थ स्तवन कर्म

नमो ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्म को ।
 सम्भव भव दुख हरण करण अभिनन्द शर्म को ॥
 सुमति सुमति दातार तार भव सिंधु पार कर ।
 पद्म प्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥16॥

श्री सुपाश्व कृत पाश नाश भव जास शुद्ध कर ।
 श्री चन्द्रप्रभ चन्द्र कान्ति सम देह कांतिधर ॥
 पुष्पदंत दमि दोष कोष भवि पोष रोषहर ।
 शीतल शीतल करण हरण भवताप दोष कर ॥17॥
 श्रेय रूप जिन श्रेय ध्येय नित सेय भव्य जन ।
 वासुपूज्य शत पूज्य वासवादिक भव भय हन ॥
 विमल विमलमति देन अन्तगत है अनन्त जिन ।
 धर्म शर्म शिवकरण शान्तिजिन शान्ति विधायिन ॥18॥
 कुंथु कुंथुमुख जीवपाल अरनाथ जाल कर ।
 मल्लि मल्ल सम मोह मल्ल मारन प्रचार धर ॥
 मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुर संघहिं नमिजिन ।
 नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ माँहि ज्ञानधन ॥19॥
 पार्श्व नाथ जिन पार्श्व उपल सम मोक्ष रमापति ।
 वर्द्धमान जिन नमूं नमूं भव दुःख कर्मकृत ॥
 या विधि मैं जिन संघ रूप चउवीस संख्यधर ।
 स्तवूं नमूं हूँ बार-बार बन्दूँ शिव सुखकर ॥20॥

5. पंचम वंदना कर्म

बन्दूँ मैं जिनवीर धीर महावीर सु सनमति ।
 वर्द्धमान अतिवीर बन्दि हूँ मन वच तन कृत ॥
 त्रिशला तनुज महेश धीश विद्यापति बन्दूँ ।
 बंदौं नित प्रति कनक रूप तनु पापनिकंदू ॥21॥

सिद्धारथ नृपनंद द्वंद, दुःख दोष मिटावन।
 दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन॥
 कुण्डलपुर करि जन्म जगत जिय आनंद कारन।
 वर्ष बहत्तर आयु पाय सब ही दुःख टारन॥22॥
 सप्त हस्त तनु तुंग भंग कृत जन्म मरण भय।
 बाल ब्रह्म मय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय॥
 दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीव घन।
 आप बसे शिवमाँहि ताहि बंदौ मन वच तन॥23॥
 जाके वंदन थकी दोष दुःख दूरहि जावै।
 जाके वंदन थकी मुक्तितय सन्मुख आवै॥
 जाके वंदन थकी वंद्य होवे सुरगन के।
 ऐसे वीर जिनेश वन्दि हूँ क्रम युग तिनके॥24॥
 सामायिक षट् कर्म माँहि वंदन यह पंचम।
 वंदो वीर जिनेन्द्र इंद्र शत वंद्य वंद्य मम॥
 जन्म मरण भय हरो करो अब शान्ति शान्तिमय।
 मैं अघ कोष सुपोष दोष को दोष विनाशय॥25॥

6. छठा कायोत्सर्ग कर्म

कायोत्सर्ग विधान करूँ अन्तिम सुखदाई।
 कायत्यजनमय होय काय सबको दुःखदाई॥
 पूरब दक्षिण नमूँ दिशा पश्चिम उत्तर में।
 जिनगृह वंदन करूँ हँरूँ भव पाप तिमिर मैं॥26॥

शिरोनति मैं करूँ नमूँ मस्तक कर धरिकैं।
 आवर्तादिक क्रिया करूँ मन वच मद हरिकैं॥
 तीन लोक जिन भवनमाँहि जिन हैं जु अकृत्रिम।
 कृत्रिम हैं द्वय अर्द्धद्वीप माहीं बंदो जिम॥27॥
 आठ कोड़ि परि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूँ।
 च्यारि शतक-पर असी एक जिन मंदिर जाणूँ॥
 व्यन्तर ज्योतिष माहिं संख्य रहिते जिन मन्दिर।
 ते सब वंदन करूँ हरहु मम पाप संघकर॥28॥
 सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक।
 सामायिक सम नाहिं और कोउ मैत्री दायक॥
 श्रावक अणुव्रत आदि अन्त सप्तम गुणथानक।
 यह आवश्यक किये होय निश्चय दुःखहानक॥29॥
 जे भवि आतम-काज-करण उद्यम के धारी।
 ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी॥
 राग रोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब।
 बुद्ध महाचन्द्र विलाय जाय तातैं कीज्यो अब॥30॥

समाधिमरण बड़ा (भाषा)

वन्दों श्री अरिहन्त परम गुरु, जो सबको सुखदाई।
 इस जग में दुःख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई॥
 अब मैं अरज करौँ प्रभु तुमसे, कर समाधि उर माहीं।
 अन्त समय में यह वर मांगो, सो दीजे जग-राई॥1॥

भव भव में तन धार नया मैं,, भव भव शुभ सँग पायो।
 भव भव में नृप रिद्धि लही मैं, मात पिता सुत थायो।।
 भव भव में तन पुरुष तनों धर, नारी हू तन लीनो।
 भव भव में मैं भयो नपुंसक, आतमसुख नहीं चीनो।।2।।
 भव भव में सुर पदवी पाई, ताके सुख अति भोगे।
 भव भव में गति नरक तनीधर, दुःख पाये विधि योगे।।
 भव भव में तिर्यञ्च योनि धर, पायो दुःख अतिभारी।
 भव भव में साधर्मी जन को, संग मिलो हितकारी।।3।।
 भव भव में जिन पूजन कीनी, दान सुपात्रहिं दीनो।
 भव भव में मैं समवसरण में, देखो जिनगुण भीनो।।
 ऐसी वस्तु मिली भव भव में, सम्यक गुण नहीं पायो।
 ना समाधि जुत मरण कियो मैं, तातें जग भरमायो।।4।।
 काल अनादि गयो जग भ्रमते, सदा कुमरणहिं कीनो।
 एक बार हू सम्यकयुत मैं, निज आतम नहीं चीनो।।
 जो निज पर को ज्ञान होय तो, मरण समय दुःख काई।
 देह विनाशी मैं निजवासी, जोति स्वरूप सदाई।।5।।
 विषय कषायन के वश होकर, देह आपनो जान्यो।
 कर मिथ्या सरधान हिये विच, आतम नाहिं पिछान्यो।।
 यों क्लेश हियधार मरणकर, चारों गति भरमायो।
 सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन ये, हिरदे में नहीं लायो।।6।।
 अब या अरज करों प्रभु सुनिये, मरण समय यह मांगो।
 रोगजनित पीड़ा मत होवे, अरु कषाय मत जागो।।

ये मुझ मरण समय दुःखदाता, इन हर साता कीजे।
 जो समाधियुत मरण होय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजे।।7।।
 यह तन सात कुधात मई है, देखत ही घिन आवे।
 चर्म लपेटी ऊपर सोहे, भीतर विष्ठा पावे।।
 अति दुर्गन्ध अपावन सों यह, मूरख प्रीति बढ़ावे।
 देह विनाशी जिय अविनाशी, नित्यस्वरूप कहावे।।8।।
 यह तन जीर्ण कुटीसम आतम, यातें प्रीति न कीजे।
 नूतन महल मिले जब भाई, तब यामें क्या छीजे।।
 मृत्यु होने से हानि कौन है, याको भय मत लावो।
 समता से जो देह तजोगे, तो शुभतन तुम पावो।।9।।
 मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसर के माहीं।
 जीरन तन से देत नयो यह, या सम काहू नाहीं।।
 या सेती इस मृत्यु समय पर, उत्सव अति ही कीजे।
 क्लेश भाव को त्याग सयाने, समता भाव धरीजे।।10।।
 जो तुम पूरब पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई।
 मृत्यु मित्र बिन कौन दिखावे, स्वर्ग सम्पदा भाई।।
 राग द्वेष को छोड़ सयाने, सात व्यसन दुःखदाई।
 अन्त समय में समता धारो, पर भव पंथ सहाई।।11।।
 कर्म महा दुठ बैरी मेरो, ता सेती दुख पावे।
 तनपिंजर में बन्द कियो मोहि, वासों कौन छुड़ावे।।
 भूख तृषा दुःख आदि अनेकन, इस ही तन में गाढ़े।
 मृत्युराज अब आय दया कर, तन पिंजरा सों काढ़े।।12।।

नाना वस्त्राभूषण मैंने, इस तन को पहराये।
 गन्ध सुगन्धी अतर लगाये, षट्स अशन कराये॥
 रात दिना मैं दास होय कर, सेव करी तन केरी।
 सो तन तेरे काम न आवे, भूल रह्यो निधि मेरी॥13॥
 मृत्युराज को शरन पाय तन, नूतन ऐसी पाऊँ ।
 जामें सम्यक रतन तीन लहि, आठों कर्म खपाऊँ॥
 देखो तन सम और कृतघ्नी, नाहिं सु या जगमाहीं।
 मृत्युसमय में ये ही परिजन, सब ही हैं दुःखदाई॥14॥
 यह सब मोह चढ़ावन हारे, जिय को दुर्गति दाता।
 इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता॥
 मृत्यु कल्पद्रुम पाय सयाने, मांगो इच्छा जेती ।
 समता धर कर मृत्यु करो तो, पावो सम्पत्ति तेती॥15॥
 चौ आराधन सहित प्राणतज, तो या पदवी पाओ।
 हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्ग मुक्ति में जावो॥
 मृत्युकल्पद्रुम सम नहिं दाता, तीनों लोक मँझारे ।
 ताको पाय क्लेश करो मत, जन्म जवाहर हारे॥16॥
 इस तन में क्या राचै जियरा, दिन-दिन जीरन हो है।
 तेज कांति बल नित्य घटत है, वा सम अपर सुको है॥
 पाँचों इन्द्री शिथिल भई अब, वास शुद्ध नहिं आवे ।
 तापर भी ममता नहिं छोड़े, समता उर नहिं लावे॥17॥
 मृत्युराज उपकारी जिय को, तन सों तोहि छुड़ावे।
 नातर या तन बन्दीगृह में, पर्यो पर्यो विललावे॥

पुद्गल के परमाणु मिलकें, पिण्डरूप तन भासी।
 या है मूरत मैं अमूरती, ज्ञानज्योति गुणखासी॥18॥
 रोग शोक आदी जो वेदन, ते सब पुद्गल लारे।
 मैं तो चेतन व्याधि बिना नित, हैं सो भाव हमारे॥
 या तन सों इस क्षेत्र सम्बन्धी, कारण आन बन्यो है।
 खान पान दे याको पोषो, अब समभाव ठन्यो है॥19॥
 मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान बिन, यह तन अपना जान्यो।
 इन्द्रीभोग गिने सुख मैंने, आपो नाहिं पिछान्यो॥
 तन विनाशतें नाश जान निज, यह अयान दुःखदाई।
 कुटुम्ब आदि को अपनो जानो, भूल अनादी छाई॥20॥
 अब निजभेद जथारथ समझो, मैं हूँ ज्योति स्वरूपी।
 उपजे विनसे सो यह पुद्गल, जानो याको रूपी॥
 इष्ट अनिष्ट जेते दुःख सुख हैं, सो सब पुद्गल लागे।
 मैं जब अपनो रूप विचारो, तब से सब दुःख भागे॥21॥
 विन समता तन नैक धरे मैं, तिन में वे दुख पायो।
 शस्त्र घात तें नेक बार मर, नाना-योनि भ्रमायो॥
 बार अनंतहिं अग्नि माहिं जर, मूवो सुमति न लायो।
 सिंह व्याघ्र अहिनैक बार मुझ, नाना दुःख दिखायो॥22॥
 विन समाधि ये दुःख लहे मैं, अब उर समता आई।
 मृत्युराज को भय नहिं मानो, देवे तन सुखदाई॥
 यातें जब लग मृत्यु न आवे, तब लग जप तप कीजे।
 जप तप बिन इस जग के माहीं, कोई भी नहिं सीजे॥23॥

स्वर्ग संपदा तप सों पावे, तपसों कर्म नसावे।
 तप ही सों शिव कामिनि पति ह्वै, या सों तप चित लावे॥
 अब मैं जानी समता बिन मुझ, कोई नाहिं सहाई।
 मात पिता सुत बांधव तिरिया, ये सबहैं दुःखदाई॥24॥
 मृत्यु समय में मोह करें ये, तातें आरत हो है।
 आरततें गति नीची पावे, यों लख मोह तज्यो है॥
 और परिग्रह जेते जग में, तिनसों प्रीति न कीजे।
 पर भव में ये संग न चालें, नाहक आरत कीजे॥25॥
 जे- जे वस्तु लखत हैं ते पर, तिनसों नेह निवारो।
 परगति में ये साथ न चालें, ऐसो भाव विचारो॥
 जो पर भव में संग चले तुझ, तिनसे प्रीतिसो कीजे।
 पञ्च पाप तज समता धारो, दान चार विधि दीजे॥26॥
 दश लक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकम्पा उर लाओ।
 षोडशकारण को नित चिन्तो, द्वादश भावना भावो॥
 चारों परवी प्रोषध कीजे, अशनरात को त्यागो।
 समता धर दुरभाव निवारो, संयम सों अनुरागो॥27॥
 अन्त समय में ये शुभ भावहिं, होवें आनि सहाई।
 स्वर्ग मोक्ष फल तोहि दिखावें, ऋद्धि देहिं अधिकाई॥
 खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उर में समता लाके।
 जा सेती गति चार दूरकर, बसो मोक्षपुर जाके॥28॥
 मन थिरता करके तुम चिंतो, चौ आराधन भाई।
 ये ही तोकों सुख की दाता, और हितू कोउ नाहीं॥

आगे बहु मुनिराज भये हैं, तिन गहि थिरता भारी।
 बहु उपसर्ग सहे शुभ भावन, आराधन उर धारी॥29॥
 तिन में कछु इक नाम कहूँ मैं, सुनो भव्य चित लाके।
 भाव सहित अनुमोदे तासे, दुर्गति होय न जाके॥
 अरु समता निज उर में आवे, भाव अधीरज जावे।
 यों निस दिन जो मुनिवर को, ध्यान हिये बिचलावे॥30॥
 धन्य धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसे धीरज धारी।
 एक श्यालिनि युगबालक युत, पांव भख्यो दुःखकारी॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु महोत्सव भारी॥31॥
 धन्य धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्री ने तन खायो।
 तों भी श्रीमुनि नेक डिगे ना, आतम सों हित लायो॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥32॥
 देखो गज मुनि के सिर ऊपर, विप्र अगनि बहुधारी।
 शीश जले जिमि लकड़ी तन को, तो भी नाहिं चिंगारी॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥33॥
 सनत्कुमार मुनि के तन में, कुष्ट-वेदना व्यापी।
 छिन्न-भिन्न तन तासों हूवो, तब चिंत्यो गुण आपी॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥34॥

श्रेणिकसुत गंगा में डूब्यो, तब जिननाम चितार्यो।
 धर सल्लेखना परिग्रह छोड़्यो, शुद्ध भाव उर धार्यो॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥35॥
 समन्तभद्र मुनिवर के तन में, छुधा-वेदना आई।
 ता दुःख में मुनि नेक न डिगियो, चिंत्यो निजगुण भाई॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥36॥
 ललित घटादिक तीस दोय मुनि, कौशांबी तट जानो।
 नदी में मुनि बहकर डूबे, सो दुःख उन नहिं मानो॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥37॥
 धर्मकोष मुनि चम्पानगरी, बाह्य ध्यान घर ठाढ़ो।
 एकमास की कर मर्यादा, तृषा-दुःख सह गाढ़ो॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥38॥
 श्रीदत्तमुनि को पूर्व जन्म का, बैरी देव सु आके।
 विक्रिय कर दुःख शीततनो सो, सह्यो साधु मन लाके॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥39॥
 वृषभसेन मुनि उष्ण शिला पर, ध्यान धर्यो मन लाई।
 सूर्यघाम अरु उष्ण पवन को, दुःख सहो अधिकाई॥

यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥40॥
 अभय घोष मुनि काकंदीपुर, महा- वेदना पाई।
 शत्रु चंड ने सब तन छेदो, दुःख दीनो अधिकाई॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥41॥
 विद्युतवर ने बहु दुख पायो, तो भी धीर न त्यागी।
 शुभभावन से प्राण तजे निज, धन्य और बड़भागी॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥42॥
 पुत्र चिलातीनामा मुनि को, वैरी ने तन घातो।
 मोटे मोटे कीट पड़े तन, तापर निज गुण रातो॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥43॥
 दंडक नामा मुनि की देही, वाणन कर अति भेदी।
 तापर नेक डिगे नहि वे मुनि कर्म महारिपु छेदी॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥44॥
 अभिनन्दन मुनि आदि पाँच सौ, घानी पेलिजु मारे।
 तौ भी श्री मुनि समताधारी, पूरब कर्म विचारै॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥45॥

चाणक-मुनि गोगृह के माँही, मूंद अगिनि पर जाल्यो।
 श्रीगुरु उर समभाव धारके, अपनो रूप सम्हाल्यो॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥46॥
 सात शतक मुनिवर ने पायो, हस्तिनापुर में जानो।
 बली विप्रकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहीं मानो॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥47॥
 लोह मयी आभूषण गढ़ के, ताते कर पहराये।
 पाँचों पाण्डव मुनि के तन में, तो भी नाहिं चिगाये॥
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
 तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु-महोत्सव भारी॥48॥
 और अनेक भये इस जग में, समतारस के स्वादी।
 वे ही हमको हों सुखदाता, हर हैं टेव प्रमादी॥
 सम्यग् दर्शन ज्ञान चरन तप, ये आराधन चारों।
 ये ही मोकों सुख के दाता, इन्हें सदा उर धारों॥ 49॥
 यों समाधि उर माहीं लावो, अपनो हित जो चाहो।
 तज ममता अरु आठों मद को, जोति-स्वरूपी ध्यावो॥
 जो कोई नित करै पयानो, ग्रामान्तर के काजे।
 सो भी शकुन विचारे नीके, शुभ के कारण साजे॥ 50॥
 मात पितादिक अरु सर्व कुटुमसों, नीको शकुन बनावे।
 हलदी धनिया पुंगी अक्षत, दूब दही फल लावे॥

एक ग्राम के कारण एते, करें शकुन शुभ सारे।
 जग परगति को करत पयानो, तउनहिं सोचे प्यारे॥51॥
 सर्वकुटुम्ब जब रोवन लागे, तोहि रुलावे सारे।
 ये अपशकुन करें सुन तोकों, तूँ यों क्यों न विचारे॥
 अब परगति को चालत विरियाँ, धर्म-ध्यान उर आनो।
 चारों आराधन आराधो, मोह तनों दुखहानो॥52॥
 होय निशल्य तजो सबदुविधा, आतमराम सुध्यावो।
 जब परगति को करहु पयानो, परम तत्त्व उर लावो॥
 मोहजाल को काट पियारे, अपनो रूप विचारो।
 मित्र मृत्यु उपकारी तेरी, यों निश्चय उर धारो॥53॥
 मृत्यु महोत्सव पाठ को, पढ़ो सुनो बुधिमान।
 सरधा धर नित सुख लहो, सूरचन्द शिवथान॥
 पंच उभय नव एक नभ, संवत सो सुखदाय।
 आश्विन श्यामा सप्तमी, कह्यो पाठ मन लाय॥54॥

समाधिमरण (भाषा)

गौतम स्वामी बन्दों नामी मरण समाधि भला है।
 मैं कब पाऊँ निश दिन ध्याऊँ गाऊँ वचन कला है॥
 देव धर्म गुरु प्रीति महा दृढ़ सप्त व्यसन नहीं जाने।
 त्याग बाइस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठाने॥1॥
 चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न विराधै।
 बनिज करै पर द्रव्य हरै नहीं छहों कर्म इति साधै॥

पूजा शास्त्र गुरुन की सेवा संयम तप चहुँ दानी ।
 पर उपकारी अल्प अहारी सामायिक विधि ज्ञानी ॥2॥
 जाप जपै तिहुँ योग धरै दृढ़ तनकी ममता टारै ।
 अन्त समय वैराग्य सम्हारै ध्यान समाधि विचारै ॥
 आग लगै अरु नाव डुबै जब धर्म विघन तब आवै ।
 चार प्रकार आहार त्यागिके मन्त्र सु-मन में ध्यावे ॥3॥
 रोग असाध्य जरा बहु देखे कारण और निहारै ।
 बात बड़ी है जो बनि आवे भार भवन को टारै ॥
 जो न बने तो घर में रहकरि सबसों होय निराला ।
 मात पिता सुत तियको सौंपै निज परिग्रह इहि काला ॥4॥
 कुछ चैत्यालय कुछ श्रावकजन कुछ दुःखिया धन देई ।
 क्षमा क्षमा सब ही सों कहिके मन की शल्य हनेई ॥
 शत्रुन सों मिल निज कर जोरै मैं बहु कीनी बुराई ।
 तुमसे प्रीतम को दुःख दीने क्षमा करो सो भाई ॥5॥
 धन धरती जो मुख सों माँगै सो सब दे संतोषै ।
 छहों कायके प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषै ॥
 ऊँच नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पै लै ।
 दूधाधारी क्रम क्रम तजि के छाछ अहार पहेलै ॥6॥
 छाछ त्यागिके पानी राखै पानी तजि संथारा ।
 भूमि माहिं थिर आसन मांडै साधर्मी ढिग प्यारा ॥
 जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवाणी पढ़िये ।
 यों कहि मौन लियो संन्यासी पंच परम पद गहिये ॥7॥

चार अराधन मनमें ध्यावै बारह भावन भावै ।
 दशलक्षण मुनि-धर्म विचारै रत्नत्रय मन ल्यावै ॥
 पैंतीस सोलह षट पन चारों दुइ इक वरन विचारै ।
 काया तेरी दुख की ढेरी ज्ञानमयी तू सारै ॥8॥
 अजर अमर निज गुणसों पूरै परमानन्द सुभावै ।
 आनन्दकन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावै ॥
 क्षुधा तृषादिक होय परीषह सहै भाव सम राखै ।
 अतीचार पाँचों सब त्यागै ज्ञान सुधारस चाखै ॥9॥
 हाड़ मांस सब सूख जाय जब धर्मलीन तन त्यागै ।
 अद्भुत पुण्य उपाय स्वर्ग-में सेज उठै ज्यों जागै ॥
 तहाँ तैं आवै शिवपद पावै विलसै सुख अनन्तो ।
 'द्यानत' यह गति होय हमारी जैन धर्म जयवन्तो ॥10॥

छहढाला

(कविवर दौलतराम जी कृत)

पहली ढाल

मंगलाचरण (सोरठा)

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता ।
 शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिकैं ॥

चौपाई

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहैं दुःख तैं भयवन्त ।
 तातैं दुःखहारी सुखकार, कहैं सीख गुरु करुणा धार ॥1॥

ताहि सुनो भवि मन थिर आन, जो चाहो अपनो कल्याण ।
 मोह महामद पियो अनादि, भूल आप को भरमत वादि ॥2॥
 तास भ्रमण की है बहु कथा, पै कछु कहूँ कही मुनि यथा ।
 काल अनन्त निगोद मँझार, बीत्यो एकेन्द्री तन धार ॥3॥
 एक स्वास में अठ-दश बार, जन्म्यो-मर्यो भर्यो दुखभार
 निकसि भूमि जल पावक भयो, पवन प्रत्येक वनस्पति थयो ॥4॥
 दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणी, त्यों पर्याय लही त्रसतणी ।
 लट पिपील अलि आदि शरीर, धर-धर मर्यो सही बहु पीर ॥5॥
 कबहुँ पंचेन्द्रिय पशु भयो, मन विन निपट अज्ञानी थयो ।
 सिंहादिक सैनी हवै क्रूर, निबल पशु हति खाये भूर ॥6॥
 कबहुँ आप भयो बलहीन, सबलनि करि खायो अति दीन ।
 छेदन-भेदन भूख-पियास, भार-वहन हिम-आतप त्रास ॥7॥
 वध-बन्धन आदिक दुःख घने, कोटि जीभ तैं जात न भने ।
 अति संक्लेश भाव तैं मर्यो, घोर श्वभ्रसागर में पर्यो ॥8॥
 तहाँ भूमि परसत दुःख इसो, बिच्छू सहस डसैं नहि तिसो ।
 तहाँ राध-श्रोणित वाहिनी, कृमि-कुल कलित-देह-दाहिनी ॥9॥
 सेमर तरु दल जुत असिपत्र, असि ज्यों देह विदारैं तत्र ।
 मेरु-समान लोह गलि जाय, ऐसी शीत उष्णता थाय ॥10॥
 तिल-तिल करें देह के खण्ड, असुर भिड़वैं दुष्ट प्रचण्ड ।
 सिंधु-नीरतैं प्यास न जाय, तो पण एक न बूँद लहाय ॥11॥

तीन लोक को नाज जु खाय, मिटै न भूख कणा न लहाय ।
 ये दुःख बहु सागर लौं सहै, करम-जोग तैं नरगति लहै ॥12॥
 जननी उदर वस्यौ नव मास, अंग-सकुचतैं पाई त्रास ।
 निकसत जे दुःख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर ॥13॥
 बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणी रत-रह्यौ ।
 अर्धमृतक सम बूढ़ापनो, कैसे रूप लखै आपनो ॥14॥
 कभी अकाम-निर्जरा करै, भवनत्रिक में सुरतन धरै ।
 विषयचाह-दावानल दह्यो, मरत विलाप करत दुःख सह्यो ॥15॥
 जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय ।
 तहँतैं चय थावर-तन धरै, यों परिवर्तन पूरे करै ॥16॥

दूसरी ढाल

(पद्धति छन्द)

ऐसे मिथ्यादृग-ज्ञान-चरण, वश भ्रमत भरत दुःख जन्म-मरण ।
 तातैं इनको तजिये सुजान, सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान ॥1॥
 जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधैं तिनमाहिं विपर्ययत्व ।
 चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप ॥2॥
 पुद्गल नभ धर्म-अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल ।
 ताकों न जान विपरीत मान, करि करै देह में निज पिछान ॥3॥
 मैं सुखी दुःखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव ।
 मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन ॥4॥

तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान ।
 रागादि प्रगट ये दुःख दैन, तिन ही को सेवत गिनत चैन ॥5॥
 शुभ-अशुभ बंध के फल मंझार, रति-अरति करै निजपदविसार ।
 आतमहित हेतु विराग-ज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान ॥6॥
 रोके न चाह निज शक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय ।
 याही प्रतीतिजुत कछुक ज्ञान, सो दुःखदायक अज्ञान जान ॥7॥
 इन जुत विषयनि में जो प्रवृत्त, ताको जानों मिथ्याचरित्त ।
 यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत सुनिये सुतेह ॥8॥
 जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषै चिर दर्शनमोह एव ।
 अन्तर रागादिक धरें जेह, बाहर धन अम्बर-तै सनेह ॥9॥
 धारें कुलिंग लहि महत भाव, ते कुगुरु जन्म-जल उपल नाव ।
 जे राग-द्वेष मल करि मलीन, वनिता गदादिजुत चिह्न चीन ॥10॥
 ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव, शठ करत न तिन भव-भ्रमण छेव ।
 रागादि भावहिंसा समेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत ॥11॥
 जे क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म, तिन सरधै जीवलहै अशर्म ।
 याकूँ गृहीत मिथ्यात्व जान, अब सुन गृहीत जो है अज्ञान ॥12॥
 एकान्तवाद-दूषित समस्त, विषयादिक पोषक अप्रशस्त ।
 कपिलादि-रचित श्रुत को अभ्यास, सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥13॥
 जो ख्याति लाभ पूजादि चाह, धरि करन विविध-विध देह-दाह ।
 आतम-अनात्म के ज्ञानहीन, जे जे करनी तन करन छीन ॥14॥

ते सब मिथ्याचरित्र त्याग, अब आतम के हित पन्थ लाग ।
 जगजाल-भ्रमण को देहु त्याग, अब 'दौलत' निज आतम सुपाग ॥ 15 ॥

तीसरी ढाल

(नरेन्द्र/जोगीरासा छन्द)

आतम को हित है सुख सो सुख, आकुलता बिन कहिये ।
 आकुलता शिव माहिं न तातैं, शिव-मग लाग्यौ चाहिये ॥
 सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन शिव-मग सो दुविध विचारो ।
 जो सत्यारथ-रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो ॥1॥
 परद्रव्यन तैं भिन्न आप में, रुचि सम्यक्त्व भला है ।
 आपरूप को जानपनो सो, सम्यग्ज्ञान कला है ॥
 आपरूप में लीन रहे थिर, सम्यक् चारित सोई ।
 अब व्यवहार मोक्ष-मग सुनिये, हेतु नियत को होई ॥2॥
 जीव अजीव तत्त्व अरु आस्रव, बन्ध रु संवर जानो ।
 निर्जर मोक्ष कहे जिन तिन को, ज्यों का त्यों सरधानो ॥
 है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानो ।
 तिनको सुन सामान्य-विशेषैं, दृढ़ प्रतीति उर आनो ॥3॥
 बहिरातम अन्तर-आतम, परमातम जीव त्रिधा है ।
 देह-जीव को एक गिनै, बहिरातम तत्त्व मुधा है ॥
 उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अन्तर आतम ज्ञानी ।
 द्विविध संग बिन शुद्ध-उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ॥4॥
 मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रती अनगारी ।
 जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों शिव-मगचारी ॥

सकल-निकल परमात्म द्वैविध, तिन में घाति निवारी ।
 श्री अरहंत सकल परमात्म, लोकालोक निहारी ॥5॥
 ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्म-मल वर्जित सिद्ध महन्ता ।
 ते हैं निकल अमल परमात्म, भोगें शर्म अनन्ता ॥
 बहिरात्मता हेय जानि तजि, अन्तर-आत्म हूजैं ।
 परमात्म को ध्याय निरन्तर, जो नित आनन्द पूजैं ॥6॥
 चेतनता बिन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं ।
 पुद्गल पंच वरन रस गन्ध दो, फरस वसू जाके हैं ॥
 जिय पुद्गल को चलन सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी ।
 तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन बिन मूर्ति निरूपी ॥7॥
 सकल द्रव्य को वास जास में, सो आकाश पिछानो ।
 नियत वर्तना निशि-दिन सो, व्यवहारकाल परिमानो ॥
 यों अजीव अब आस्रव सुनिये, मन-वच-काय त्रियोगा ।
 मिथ्या अविरति अरु कषाय, परमाद सहित उपयोगा ॥8॥
 ये ही आत्म को दुःख कारण, तातैं इनको तजिये ।
 जीव प्रदेश बँधे-विधि सों, सो बन्धन कबहुँ न सजिये ॥
 शम-दम तैं जो कर्म न आवै, सो संवर आदरिये ।
 तप-बल तैं विधि-झरन निर्जरा, ताहि सदा आचरिये ॥9॥
 सकल कर्म तैं रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी ।
 इहि विधि जो सरधा तत्वन की, सो समकित व्यवहारी ॥
 देव जिनेन्द्र, गुरु परिग्रह बिन, धर्म दयाजुत सारो ।
 ये हु मान समकित को कारण, अष्ट अंगजुत धारो ॥10॥

वसु मद टारि निवारि त्रिशठता, षट् अनायतन त्यागो ।
 शंकादिक वसु दोष बिना, संवेगादिक चित पागो ॥
 अष्ट अंग अरु दोष पच्चीसों, तिन संक्षेप हु कहिये ।
 बिन जाने तैं दोष-गुनन को, कैसे तजिये गहिये ॥11॥
 जिन-वच में शंका न धार वृष, भव-सुख-वांछा भानै ।
 मुनि-तन मलिन न देख घिनावैं, तत्त्व कुतत्त्व पिछानै ॥
 निज-गुण अरु पर-औगुण ढाँकैं, वा निज धर्म बढ़ावैं ।
 कामादिक कर वृषतैं चिगते, निज-पर को सु दिढ़ावैं ॥12॥
 धर्मी सों गौ-बच्छ प्रीति सम, कर जिन-धर्म दिपावैं ।
 इन गुन तैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतत खिपावैं ॥
 पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै ।
 मद न रूप को, मद न ज्ञान को, धन-बल को मद भानै ॥13॥
 तप को मद न मद जु प्रभुता को, करै न सो निज जानै ।
 मद धारै तो येहि दोष वसु, समकित को मल ठानै ॥
 कुगुरु कुदेव कुवृष सेवक की, नहि प्रशंस उचरै है ।
 जिन-मुनि जिन-श्रुत बिन कुगुरादिक तिन्है न नमन करै हैं ॥14॥
 दोष-रहित गुण-सहित सुधी जे, सम्यग्दर्श सजै हैं ।
 चरितमोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजै हैं ॥
 गेही पै, गृह में न रचे ज्यों, जल तैं भिन्न कमल है ।
 नगर-नारि को प्यार यथा, कादे में हेम अमल है ॥15॥
 प्रथम नरक बिन षट् भू ज्योतिष, वान भवन षँड़ नारी ।
 थावर विकल त्रय पशु में नहिं, उपजत सम्यक् धारी ॥

तीन लोक तिहुँ काल माहिं नहिं, दर्शन सो सुखकारी ।
 सकल धरम को मूल यही, इस बिन करनी दुःखकारी ॥16॥
 मोक्षमहल की परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान-चरित्रा ।
 सम्यक्त्वा न लहै सो दर्शन, धारौ भव्य पवित्रा ॥
 'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै ।
 यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहिं होवै ॥17॥

चौथी ढाल

(दोहा)

सम्यक् श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यग्ज्ञान ।
 स्व-पर अर्थ बहु धर्मजुत, जो प्रगटावन भान ॥1॥
 सम्यक् साथै ज्ञान होय, पै भिन्न अराधौ ।
 लक्षण श्रद्धा जान, दुहू में भेद अबाधौ ॥
 सम्यक् कारण जान, ज्ञान कारज है सोई ।
 युगपत् होते हू, प्रकाश दीपक तैं होई ॥2॥
 तास भेद दो हैं परोक्ष, परतछि तिन माँही ।
 मति श्रुत दोय परोक्ष, अक्ष मन तैं उपजाहीं ॥
 अवधिज्ञान मनपर्जय, दो है देश प्रतच्छा ।
 द्रव्य क्षेत्र परिमाण लिये, जानैं जिय स्वच्छा ॥3॥
 सकल द्रव्य के गुन अनन्त, परजाय अनन्ता ।
 जानै एकै काल प्रगट, केवलि भगवन्ता ॥
 ज्ञान समान न आन, जगत में सुख को कारण ।
 इह परमामृत जन्म-जरा-मृतु रोग निवारण ॥4॥

(529)

कोटि जन्म तप तपैं, ज्ञान बिन कर्म झरैं जे ।
 ज्ञानि के छिन माहिं, त्रिगुप्ति तै सहज टरैं ते ॥
 मुनिव्रत धार अनन्त बार, ग्रीवक उपजायौ ।
 पै निज आतम ज्ञान बिना, सुख लेश न पायौ ॥5॥
 तातैं जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजै ।
 संशय विभ्रम मोह त्याग, आपौ लख लीजै ॥
 यह मानुष पर्याय, सुकुल सुनिवौ जिनवानी ।
 इह विधि गयें न मिलैं, सुमणि ज्यों उदधि समानी ॥6॥
 धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवै ।
 ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै ॥
 तास ज्ञान को कारण, स्व-पर विवेक बखानो ।
 कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आनो ॥7॥
 जे पूरब शिव गये, जाहिं अरु आगे जै हैं ।
 सो सब महिमा ज्ञानतनी, मुनिनाथ कहै हैं ॥
 विषय चाह दव दाह, जगत जन अरनि दझावै ।
 तास उपाय न आन, ज्ञान घनघान बुझावै ॥8॥
 पुण्य-पाप फल माहिं, हरख बिलखौ मत भाई ।
 यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसै फिर थाई ॥
 लाख बात की बात, यहै निश्चय उर लाओ ।
 तोरि सकल जग दन्द-फन्द, निज आतम ध्याओ ॥9॥
 सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि, दृढ़ चारित लीजै ।
 एकदेश अरु सकलदेश, तसु भेद कहीजै ॥

(530)

त्रसहिंसा को त्याग, वृथा थावर न संहारै ।
 पर-वधकार कठोर निंद्य, नहिं वयन उचारै ॥10॥
 जल मृत्तिका बिन और, नाहिं कछु गहै अदत्ता ।
 निज वनिता बिन सकल, नारि सौ रहै विरत्ता ॥
 अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै ।
 दश दिशि गमन प्रमान, ठान, तसु सीम न नाखै ॥11॥
 ताहू में फिर ग्राम, गली गृह बाग बजारा ।
 गमना गमन प्रमान, ठान अन सकल निवारा ॥
 काहू की धन-हानि, किसी जय-हार न चिन्तै ।
 देय न सो उपदेश होय, अघ बनज कृषी तैं ॥12॥
 कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।
 असि धनु हल हिंसोपकरण, नहिं दे जस लाधै ॥
 राग-द्वेष करतार कथा, कबहूँ न सुनीजै ।
 औरहूँ अनरथदण्ड, हेतु अघ तिन्हैं न कीजैं ॥13॥
 धरि उर समता भाव, सदा सामायिक करिये ।
 परव चतुष्टय मांहि, पाप तजि प्रोषध धरिये ॥
 भोग और उपभोग, नियम करि ममत निवारै ।
 मुनि को भोजन देय, फिर निज करहिं अहारै ॥14॥
 बारह व्रत के अतिचार, पन पन न लगावै ।
 मरण समय संन्यास धारि, तसु दोष नशावै ॥

यों श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावै ।
 तहँतैं चय नर जन्म पाय, मुनि ह्वै शिव जावैं ॥15॥
 पाँचवीं ढाल
 मुनि सकलव्रती बड़भागी, भव-भोगन तैं वैरागी ।
 वैराग्य उपावन माई, चिन्तैं अनुप्रेक्षा भाई ॥1॥
 इन चिन्तत समसुख जागै, जिमि ज्वलन पवन के लागै ।
 जब ही जिय आतम जानै, तब ही जिय शिवसुखठानै ॥2॥
 जोवन गृह गो धन नारी, हय गय जन आज्ञाकारी ।
 इन्द्रिय-भोग छिन थाई, सुरधनु चपला चपलाई ॥3॥
 सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि काल दले ते ।
 मणि मन्त्र तन्त्र बहु होई, मरते न बचावै कोई ॥4॥
 चहुँ गति दुःख जीव भरे हैं, परिवर्तन पंच करे हैं ।
 सब विधि संसार असारा, यामें सुख नाहिं लगाया ॥5॥
 शुभ-अशुभ करम फल जेते, भोगे जिय एक हि तेते ।
 सुत दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के हैं भीरी ॥6॥
 जल-पय ज्यों जिय तन मेला, पै भिन्न-भिन्न नहिं भेला ।
 तो प्रगट जुदे धन धामा, क्यों ह्वै इक मिलि सुतरामा ॥7॥
 पल रुधिर राध मल थैली, कीकस वसादि तैं मैली ।
 नव द्वार बहै घिनकारी, अस देह करै किम यारी ॥8॥
 जो योगन की चपलाई, तातैं ह्वै आस्रव भाई ।
 आस्रव दुःखकार घनेरे, बुधिवन्त तिन्है निरवेरे ॥9॥

जिन पुण्य-पाप नहिं कीना, आतम अनुभव चित दीना ।
 तिन ही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके ॥10॥
 निज काल पाय विधि झरना, तासों निज काज न सरना ।
 तप करि जो कर्म खिपावै, सोई शिवसुख दरसावै ॥11॥
 किन हूँ न कर्यो न धरैं को, षट्द्रव्यमयी न हरै को ।
 सो लोक माहि बिन समता, दुःख सहै जीव नित भ्रमता ॥12॥
 अन्तिम ग्रीवक लों की हृद-पायो अनन्त बिरियाँ पद ।
 पर सम्यग्ज्ञान न लाधौ, दुर्लभ निज में मुनि साधौ ॥13॥
 जो भावमोह तैं न्यारे, दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ।
 सो धर्म जबै जिय धारैं, तब ही सुख अचल निहारै ॥14॥
 सो धर्म मुनिन करि धरिये, तिनकी करतूति उचरिये ।
 ताको सुनिये भवि प्रानी, अपनी अनुभूति पिछानी ॥15॥

छठीं ढाल

(हरिगीतिका)

षट्काय जीव न हनन तैं, सब विधि दरब हिंसा टरी ।
 रागादि भाव निवार तैं, हिंसा न भावित अवतरी ॥
 जिनके न लेश मृषा न जल, तृण हू बिना दीयौ गहै ।
 अठ-दश सहस्र विधि शीलधर, चिद्ब्रह्म में नित रमि रहै ॥1॥
 अन्तर चतुर्दश भेद बाहिर, संग दशधा तैं टलै ।
 परमाद तजि चौकर मही लखि, समिति ईर्या तैं चलै ॥
 जग सुहितकर सब अहितहर, श्रुति सुखद सब संशय हरैं ।
 भ्रम-रोग हर जिनके वचन, मुख-चन्द्र तैं अमृत झरैं ॥2॥

छ्यालीस दोष बिना सुकुल, श्रावक तनै घर अशन को ।
 लैं तप बढ़ावन हेत नहिं तन, पोषते तजि रसन को ॥
 शुचि ज्ञान संयम उपकरण, लखि कै गहैं लखि कै धरैं ।
 निर्जन्तु थान विलोक तन मल, मूत्र श्लेषम परिहरैं ॥3॥
 सम्यक् प्रकार निरोध मन-वच-काय आतम ध्यावते ।
 तिन सुथिर-मुद्रा देखि मृगगण, उपल खाज खुजावते ॥
 रस रूप गन्ध तथा फरस अरु, शब्द शुभ असुहावने ।
 तिनमें न राग विरोध, पंचेन्द्रिय जयन पद पावने ॥4॥
 समता सम्हारैं थुति उचारैं, वन्दना जिनदेव को ।
 नित करैं, श्रुति-रति करैं प्रतिक्रम, तजैं तन अहमेव को ॥
 जिनके न न्हौन न दन्तधोवन, लेश अम्बर आवरन ।
 भू माहिं पिछली रयनि में, कछु शयन एकाशन करन ॥5॥
 इक बार दिन में लैं अहार, खड़े अलप निज-पान में ।
 कचलौच करत न डरत परीषह, सों लगे निज-ध्यान में ॥
 अरि-मित्र महल-मसान कंचन, काँच निन्दन-थुतिकरण ।
 अर्घावतारन असि-प्रहारन में, सदा समता धरन ॥6॥
 तप तपैं द्वादश, धरैं वृष दश, रत्नत्रय सेवैं सदा ।
 मुनि साथ में वा एक विचरैं, चहैं नहिं भव-सुख कदा ॥
 यों है सकल संयम चरित, सुनिये स्वरूपाचरन अब ।
 जिस होत प्रगटे आपनी निधि, मिटै पर की प्रवृत्ति सब ॥7॥
 जिन परम पैनी सुबुधि छैनी, डारि अन्तर भेदिया ।
 वरणादि अरु रागादितैं, निज भाव को न्यारा किया ॥

निजमाहिं निज के हेतु निज कर, आपको आपै गह्यो।
 गुण-गुणी ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय, मँझार कछु भेद न रह्यो॥८॥
 जहाँ ध्यान-ध्याता-ध्येय को, न विकल्प वच-भेद न जहाँ।
 चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहाँ॥
 तीनों अभिन्न अखिन्न शुध, उपयोग की निश्चल दसा।
 प्रगटी जहाँ दृग ज्ञान-व्रत, ये तीनधा एकै लसा॥९॥
 परमाण-नय-निक्षेप को, न उद्योत अनुभव में दिखै।
 दृग-ज्ञान-सुख बलमय सदा, नहिं आन भाव जु मो विखै॥
 मैं साध्य-साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फल नितैं।
 चित् पिण्ड चण्ड अखण्ड सुगुण करण्ड च्युति पुनि कलनितै॥१०॥
 यों चिन्त्य निज में थिर भये, तिन अकथ जो आनन्द लह्यो।
 सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा, अहमिन्द्र के नाहीं कह्यो॥
 तब ही शुक्ल ध्यानाग्नि करि, चउघाति विधि कानन दह्यो।
 सब लख्यौ केवलज्ञान करि, भविलोक कों शिवमग कह्यो॥११॥
 पुनि घाति शेष अघाति विधि छिन माहिं अष्टम भू बसैं।
 वसु कर्म विनसैं सुगुण वसु, सम्यक्त्व आदिक सब लसैं॥
 संसार खार अपार पारा-वार तरि तिरहिं गये।
 अविकार अकल अरूप शुचि, चिद्रूप अविनाशी भये॥१२॥
 निज माहिं लोक अलोक, गुण-परजाय प्रतिबिम्बित भये।
 रहि हैं अनन्तानन्त काल, यथा तथा शिव परिणये॥

धनि धन्य हैं जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया।
 तिन ही अनादि भ्रमण पंच प्रकार, तजि वर सुख लिया॥१३॥
 मुख्योपचार दुभेद यों, बड़भागि रत्नत्रय धरैं।
 अरु धरेंगे ते शिव लहैं, तिन सुयश-जल जग-मल हरैं॥
 इमि जानि आलस हानि, साहस ठानि यह सिख आदरौ।
 जबलों न रोग जरा गहै, तबलों झटिति निज हित करौ॥१४॥
 यह राग-आग दहै सदा, तातैं समामृत सेइये।
 चिर भजे विषय-कषाय अब तो, त्याग निज-पद बेइये॥
 कहा रच्यो पर-पद में न तेरो पद यहै क्यों दुःख सहै।
 अब 'दौल' होउ सुखी स्व-पद रचि, दाव मत चूको यहै॥१५॥
 इक नव वसु इक वर्ष की, तीज शुक्ल वैशाख।
 कर्यो तत्त्व उपदेश यह, लिख 'बुधजन' की भाख॥
 लघु-धी तथा प्रमादतैं, शब्द-अर्थ की भूल।
 सुधी सुधार पढ़ो सदा जो पावो भव-कूल॥१६॥

दुःखहरण विनती

(शैर की लय में तथा और रागनियों में भी बनती है)
 श्रीपति जिनवर करुणायतनं, दुखहरन, तुम्हारा बाना है।
 मत मेरी बार अबार करो, मोहि देहु विमल कल्याणा है।टेक॥
 त्रैकालिक वस्तु प्रत्यक्ष लखो, तुम सों कछु बात न छाना है।
 मेरे उर आरत जो वरतैं, निहचै सब सो तुम जाना है॥

अवलोक विथा मत मौन गहो, नहिं मेरा कहीं ठिकाना है।
हो राजिव लोचन सोचविमोचन, मैं तुमसों हित ठाना है॥1॥
सब ग्रंथनि में निरग्रंथनि ने, निरधार यही गणधार कही।
जिननायक ही सब लायक हैं, सुखदायक छायक ज्ञानमही॥
यह बात हमारे कान परी, तब आन तुम्हारी सरन गही।
क्यों मेरी बार बिलंब करो, जिन नाथ कहो वह बात सही॥2॥
काहू को भोग मनोग करो, काहू को स्वर्ग-विमाना है।
काहू को नाग नरेश पती, काहू को ऋद्धि निधाना है॥
अब मो पर क्यों न कृपा करते, यह क्या अंधेर जमाना है॥
इन्साफ करो मत देर करो, सुखवृन्द भरो भगवाना है॥3॥
खल कर्म मुझे हैरान किया, तब तुम सों आन पुकारा है।
तुम ही समरत्थ न न्याय करो, तब बंदे का क्या चारा है॥
खल घालक पालक बालक का नृपनीति यही जगसारा है।
तुम नीति निपुण त्रैलोक पती, तुमही लगि दौर हमारा है॥4॥
जब से तुमसे पहिचान भई, तब से तुम ही को माना है।
तुमरे ही शासन का स्वामी, हमको शरना सरधाना है॥
जिनको तुमरी शरनागत है, तिनसौ जमराज डराना है।
यह सुजस तुम्हारे सांचे का, सब गावत वेद पुराना है॥5॥
जिसने तुमसे दिलदर्द कहा, तिसका तुमने दुःख हाना है।
अघ छोटा मोटा नाशि तुरत, सुख दिया तिन्हें मनमाना है॥

पावक सों शीतल नीर किया, औ चीर बढ़ा असमाना है।
 भोजन था जिसके पास नहीं, सो किया कुबेर समाना है॥6॥
 चिंतामणि पारस कल्पतरु, सुखदायक ये सरधाना है।
 तव दासन के सब दास यही, हमरे मन में ठहराना है॥
 तुम भक्तन को सुरइंदपदी, फिर चक्रपतीपद पाना है।
 क्या बात कहों विस्तार बड़ी, वे पावैं मुक्ति ठिकाना है॥7॥
 गति चार चुरासी लखविषैं, चिन्मूरत मेरा भटका है।
 हो दीनबंधु करुणानिधान, अबलों न मिटा वह खटका है॥
 जब जोग मिला शिवसाधन का, तब विघन कर्म ने हटका है।
 तुम विघन हमारे दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है॥8॥
 गज-ग्राह-ग्रसित उद्धार लिया, ज्यों अंजन तस्कर तारा है।
 ज्यों सागर गोपदरूप किया, मैना का संकट टारा है॥
 ज्यों सूलीतें सिंहासन औ, बेडीको काट बिडारा है।
 त्यों मेरा संकट दूर करो, प्रभु मोकूं आस तुम्हारा है॥9॥
 ज्यों फाटक टेकत पांय खुला, औ सांप सुमन कर डारा है।
 ज्यों खड्ग कुसुमका माल किया, बालकका जहर उतारा है॥
 ज्यों सेठ विपत चकचूरि पूर, घर लक्ष्मीसुख विस्तारा है।
 त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु, मोकूं आस तुम्हारा है॥10॥
 यद्यपि तुमको रागादि नहीं, यह सत्य सर्वथा जाना है।
 चिन्मूरति आप अनंतगुनी, नित शुद्धदशा शिवथाना है॥

तद्यपि भक्तन की भीरि हरो, सुख देत तिन्हें जु सुहाना है ।
 यह शक्ति अचिंत तुम्हारी का, क्या पावैं पार सयाना है ॥11॥
 दुखखंडन श्रीसुखमंडनका, तुमरा प्रन परम प्रमाना है।
 वरदान दया जस कीरत का, तिहुंलोक धुजा फहराना है॥
 कमलाधर जी ! कमलाकर जी ! करिये कमला अमलाना है।
 अव मेरि विथा अवलोकि रमापति, रंच न बार लगाना है॥12॥
 हो दीनानाथ अनाथहितू, जन दीन अनाथ पुकारी है।
 उदयागत कर्मविपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है॥
 ज्यों आप और भवि जीवनकी, तत्काल विथा निरवारी है।
 त्यों 'वृन्दावन' यह अर्ज करै, प्रभु आज हमारी बारी है॥13॥

॥ इति दुःखहरण विनती ॥

भक्तामर-महिमा

श्री भक्तामर का पाठ करो नित प्रातः भक्ति मन लाई ।
 सब संकट जायें नशाई ।
 जो ज्ञान-मान-मतवारे थे, मुनि मानतुंग से हारे थे ।
 उन चतुराई से नृपति लिया बहकाई ॥सब संकट॥1॥
 मुनि जी को नृपति बुलाया था, सैनिक जा हुक्म सुनाया था ।
 मुनि वीतराग को आज्ञा नहीं सुहाई ॥सब संकट॥2॥

उपसर्ग घोर तब आया था, बलपूर्वक पकड़ मंगाया था।
 हथकड़ी बेड़ियों ते तन दिया बंधाई ।।सब संकट.।।3।।
 मुनि काराग्रह भिजवाये थे, अड़तालिस ताले लगाये थे।
 क्रोधित नृप बाहर पहरा दिया बिठाई ।।सब संकट.।।4।।
 मुनि शान्तभाव अपनाया था, श्री आदिनाथ को ध्याया था।
 हो ध्यान-मग्न भक्तामर दिया बनाई ।।सब संकट.।।5।।
 सब बन्धन टूट गये मुनि के, ताले सब स्वयं खुले उनके।
 काराग्रह से आ बाहर दिये दिखाई ।।सब संकट.6।।
 राजा नत होकर आया था, अपराध क्षमा करवाया था।
 मुनि के चरणों में अनुपम भक्ति दिखाई ।।सब संकट.।।7।।
 जो पाठ भक्ति से करता है, नित ऋषभ-चरण चित धरता है।
 औ ऋद्धि मन्त्र का विधिवत जाप कराई ।।सब संकट.।।8।।
 भय विघ्न उपद्रव टलते हैं, विपदा के दिवस बदलते हैं।
 सब मन वाञ्छित हों पूर्ण, शान्ति छा जाई ।।सब संकट.।।9।।
 जो वीतराग आराधन हैं, आत्म उन्नति का साधन है।
 उससे प्राणी का भव बन्धन कट जाई ।।सब संकट.।।10।।
 'कौशल' सुभक्ति को पहिचानो, संसार-दृष्टि बन्धन जानो।
 लो भक्तामर से आत्म-ज्योति प्रकटाई ।।सब संकट.।।11।।

लघु प्रतिक्रमण

चिदानन्दैक - रूपाय, जिनाय परमात्मने ।
 परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ।।

अर्थ - मैं नित्य उन परम सिद्धि को प्राप्त परमात्मा को
 नमस्कार करता हूँ, जो परमात्मपद के प्रकाशन में अग्रसर हुये
 हैं, जिन्होंने अनेक रूपता में स्थित चिदानन्द प्रभु को सन्मार्ग के
 आधार स्वयं को परमात्म पद में स्थित कर जिस परमात्म पद
 को दर्शाया है मुक्ति प्राप्त की है अनेक गुणों के भण्डार हुए हैं।

हे प्रभु मैंने अब तक पांच मिथ्यात्व, बारह अविरति,
 पन्द्रह योग, पच्चीस कषाय- ये सत्तावन आस्रव के कारण हैं,
 इन्हीं के अन्तर्गत संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ मन वचन काय
 द्वारा, कृत, कारित, अनुमोदना तथा क्रोध, मान, माया, लोभ
 से 108 प्रकार नित्य ही तीन दण्ड, त्रिशल्य, तीन वर्ग,
 राजकथा, चोरकथा, स्त्रीकथा, भोजनकथा में अपने को अनादि
 मिथ्या अज्ञान मोहवश परिणमाया, परिणमाता रहता हूँ और
 जब तक सद्बोधि की प्राप्ति नहीं हुई परिणमाता रहूँगा, ऐसी
 दशा में अब मैंने जिनवाणी द्वारा सत समागम से जो उपलब्धि
 प्राप्त की है उससे ऊपर कथित आस्रव में जो पाप लगा हो वह
 सब मिथ्या हो मैं पश्चात्ताप करता हूँ।

मैंने भूल से मिथ्यात्ववश अज्ञानदशा में जो, इतरनिगोद

सात लाख, नित्यनिगोद सात लाख, पृथ्वीकायिक सात लाख, जलकायिक सात लाख, अग्निकायिक सात लाख, वायुकायिक सात लाख, वनस्पतिकायिक दस लाख, दो इन्द्रिय दो लाख, तीन इन्द्रिय दो लाख, चार इन्द्रिय दो लाख, पंचेन्द्रिय पशु चार लाख, मनुष्य गति के चौदह लाख एवं देव गति के चार लाख, नरक गति के चार लाख ये सब जाति चौरासी लाख योनि हैं। माता पक्ष पिता पक्ष एक सौ साढ़े निन्यानवे कोडा कोडी कुल, सूक्ष्म-बादर पर्याप्त-अपर्याप्त लब्धि अपर्याप्त आदि जीवों की विराधना की हो तथा इन पर राग द्वेष द्वारा जो पाप लगा हो वह सब मिथ्या होवे मैं पश्चात्ताप करता हूँ।

हे भगवन्! मेरे चार आर्त्त ध्यान, चार रौद्र ध्यान का पाप लगा हो, अनाचार हुआ हो, तथा त्रस जीवों की विराधना की हो, सप्त व्यसन सेवन किये हों, सप्त भयों के त्याग में अतिचार लगे हो, अष्टमूलगुणव्रत में अतिचार लगे हों, दस प्रकार का बहिरंग परिग्रह, चौदह प्रकार का अंतरंग परिग्रह सम्बन्धी पाप किया हो। पन्द्रह प्रमाद के वशीभूत होकर बारह व्रतों के पाँच-पाँच अतिचार इस प्रकार साठ अतिचारों में, पानी छानने में, जीवानी यथास्थान न पहुँचाने में, जो भी पाप लगाया हो यह सब मिथ्या होवे, मैं पश्चात्ताप करता हूँ।

हे भगवन्! मेरे रौद्र परिणाम हुये हो, दुश्चिन्तन किया हो, बोलने में, चलने में, हिलने में, सोने में, करवट लेने में, मार्ग

में ठहरने में, बिना देखे गमन करने में, मेरे मन, वचन, काय द्वारा जो पाप, बिना समझ से, समझ से, लगा हो वह सब पाप मिथ्या हो, मैं पश्चात्ताप करता हूँ।

हे भगवन्! मैंने सूक्ष्म अथवा बादर कोई भी जीव पैर तले, करवट में बैठने उठने, चलने-फिरने इत्यादि आरंभ के द्वारा रसोई व्यापार इत्यादि आरंभ में सताये हों, भय को पहुँचाये हों, मरण को प्राप्त हुवे हों, दुःख को अनुभव करते हों, छेदन भेदन को मन वचन काय द्वारा जाने बेजाने में दुःख को ज्ञात करते हों, यह सब दोष मिथ्या हो मैं पश्चात्ताप करता हूँ।

मैं सर्व जिनेन्द्रों की वन्दना करता हूँ, चौबीस जिन, भूत भविष्य, वर्तमान, बीस तीर्थकर, सिद्धक्षेत्र, कल्याणक्षेत्र, अतिशयक्षेत्र, कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्यालय की, जिनमन्दिरों की, जिन चैत्यालयों की, वन्दना करता हूँ। मैंने सर्व मुनि आर्यिका श्रावक श्राविका, 11 प्रतिमाओं में स्थित साधर्मी बन्धुओं की बिना समझे अनुभवी संसारी भव्य जीवों की जो निन्दा की हो, कटु वचन कहे हों, आघात पहुँचाया हो, विनय न की हो तथा अन्य जीवों की निन्दा की हो तो, वह सब पाप मिथ्या हो, मैं पश्चात्ताप करता हूँ।

प्रभु मैंने निर्माल्य द्रव्य का उपयोग किया हो, सामायिक के बत्तीस प्रकार के दोष लगाये हों, जिन मन्दिर में पाँच इन्द्रियों के विषय व मन के द्वारा, विषयों में प्रवृत्ति की हो, भगवत

पूजन में जो प्रमाद किया हो, मैंने राग से, द्वेष से, मान से, माया से, खेल-तमाशे में, नाटक ग्रहों में, नृत्यगान आदि सभा सोसायटियों में, पिकचर में गृहित अगृहित मिथ्या द्वारा जो कर्म नोकर्म से संग्रहीत किये हों व जो भाव दूसरों के प्रति अहित के हुये हों वह सब मिथ्या हों मैं पश्चात्ताप करता हूँ।

मेरा समस्त जीवों के प्रति मैत्री भाव रहे, सब जीव मुझे क्षमा प्रदान करें, मेरा क्षमा भाव बने, कर्मक्षय के उपाय का प्रयत्न करूँ, मेरा समाधिमरण हो, चारों गतियों में मेरे भाव निर्मल रहें, यही प्रार्थना है।

मुझे निरन्तर शास्त्राभ्यास की प्राप्ति हो, सज्जन समागम का लाभ मिले, दोषों के कहने में मौन रहूँ, अपने दोषों को त्यागने व प्रायश्चित्त के भाव हों, परोपकार, मिष्टवचन, प्रतिज्ञायों पर दृढ़ रहूँ, चारों दान के भाव बनें, हे भगवन्! जब तक मेरा भव-भ्रमण न छूटे आपकी शान्त मुद्रा व आपके कर्मक्षय के प्रयास, अतीन्द्रिय सुख की प्राप्ति का लक्ष्य, आपके हितकारी वचन, वीतराग परिणति केवलज्ञान द्वारा आत्महित का मनन मुझे गति-गति में प्राप्त हो यह अंतिम निवेदन है, मेरा हृदय आपके चरणों में लीन रहे, शीघ्र भव पार होऊँ। यही मेरी आपसे प्रार्थना है।

॥ इति लघु प्रतिक्रमणम् ॥

श्री बाहुबली स्वामी की आरती

श्री बाहुबली की आरती उतारो मिलके,

उतारो मिलके छबि निहारो मिलके, श्री.....

ऋषभदेव पितु मात सुनन्दा, भ्रात भरत दोऊ सूरज चन्दा,
प्रेम की वर्षा दिन रैन करते थे, चारों के चारों मिलके, श्री.....
सवा पंच शत धनु की काया, जिसमें जग का तेज समाया,
बाहुबली जी की इस मोहनी मूरत पे, तन मन वारो मिलके, श्री.....
शस्त्र शास्त्र विद्या परवीणा, दोउ सुत को पितु नृप कर दीना,
आदीश्वर बोले मैं वन चला, पुत्रों दोउ राज संभालो मिलके श्री.....
चक्रवर्ती पर जय जब पायी, कर्म विजय की मन तब आयी,
नश्वर माया को पाकर भी क्या होगा, ये तनिक विचारो मिलके, श्री.....
वृक्ष जान तन चढ गई बेलें, सर्पादिक चरणों में खेलें,
ध्यान में डूबे हैं प्रभु ध्यान में डूबे हैं, इन्हें पुकारो मिलके, श्री.....
धीर वीर बाहुबली स्वामी, पिता के पूर्व भये, शिवगामी
ऐसे त्यागी का, ऐसे महायोगी का, नाम उचारो मिलके
श्री बाहुबली की आरती उतारो मिलके ॥

आरती श्री महावीर स्वामी की

ॐ जय महावीर प्रभो, स्वामी जय महावीर प्रभो।
कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानन्द विभो॥ॐ जय॥
सिद्धार्थ घर जन्मे, वैभव था भारी, स्वामी वैभव था भारी।
बाल ब्रह्मचारी व्रत पाल्यो, तप धारी॥ॐ जय॥
आत्मज्ञान विरागी, समदृष्टि धारी। स्वामी समदृष्टि धारी
माया मोह विनाशक, ज्ञान ज्योति जारी॥ॐ जय॥
जग में पाठ अहिंसा, आप ही बिस्तार्यो। स्वामी आपही विस्तार्यो
हिंसा पाप मिटाकर, सुधर्म परिचार्यो॥ॐ जय॥
यह विधि चाँदनपुर में, अतिशय दर्शायो। स्वामी अतिशय दर्शायो
ग्वाल मनोरथ पूर्यो, दूध गाय पायो॥ॐ जय॥
प्राणदान मन्त्री को, तुमने प्रभु दीना। स्वामी तुमने प्रभु दीना
मन्दिर तीन शिखर का, निर्मित है कीना॥ॐ जय॥
जयपुर नृप भी तेरे, अतिशय के सेवी। स्वामी अतिशय के सेवी
एक ग्राम तिन दीनों, सेवा हित यह भी॥ॐ जय॥
जो कोई तेरे दर पर, इच्छा कर आवे। स्वामी इच्छा कर आवे
धन सुत सब कुछ पावे, संकट मिट जावै॥ॐ जय॥
निश दिन प्रभु मन्दिर में, जगमग ज्योति जरै।
स्वामी जगमग ज्योति जरै।
हरि प्रसाद चरणों में, आनन्दमोद भरै॥ॐ जय॥

आरती श्री पार्श्वनाथ जी

ॐ जय पारस देवा, प्रभु जय पारस देवा।
सुर नर मुनि जन तुम चरनन की, करते नित सेवा॥
ॐ जय पारस देवा.....
पौषवदी ग्यारसि काशी में, आनन्द अति भारी।
अश्वसेन घर वामा के उर, लीनों अवतारी॥
ॐ जय पारस देवा.....
श्याम वर्ण नव हस्त काय पग, उरग लखन सोहे।
सुरकृत अति अनुपम पट भूषण, सबका मन मोहे॥
ॐ जय पारस देवा.....
जलते देखे नाग नागिन को, मन्त्र नवकार दिया।
हरा कमठ का मान ज्ञान का, भान प्रकाश किया॥
ॐ जय पारस देवा.....
मात पिता तुम स्वामी मेरे, आश करूँ किसकी।
तुम बिन दूजा और न कोई, शरण गहूँ जिसकी॥
ॐ जय पारस देवा.....
तुम परमात्म, तुम अध्यात्म तुम अन्तर्यामी।
स्वर्ग मोक्ष पदवी के दाता, त्रिभुवन के स्वामी॥
ॐ जय पारस देवा.....
दीन बन्धु दुःख हरण जिनेश्वर, तुम ही हो मेरे।
दो शिवपुर का वास दास यह, द्वार खड़ा तेरे॥
ॐ जय पारस देवा.....

विषय विकार मिटाओ मन का, अर्ज सुनो दाता।
सेवक द्वय कर जोड़ प्रभु के, चरणों चित्त लाता।।

ॐ जय पारस देवा.....

आरती श्री शांतिनाथ जी

ॐ जय जिनवर देवा, प्रभु जय जिनवर देवा।।टेक।।
शांति विधाता शिव सुखदाता शांतिनाथ देवा।।
ऐरा देवी धन्य जगत में, जिस उर आन बसे।
विश्वसेन कुल नभ में मानों पूनम चन्द्र लसे।।ॐ जय ..
कृष्ण चतुर्दशी जेठ मास की आनन्द करतारी।
हस्तिनापुर में जन्म महोत्सव ठाठ रचे भारी।।ॐ जय ..
बाल्य काल की लीला अद्भुत, सुरनर मन भाई।
न्याय नीति से राज्य कियो चिर सबको सुखदायी।।ॐ जय ..
पञ्चम चक्री काम द्वादशम सोलम तीर्थकर।
त्रय पदधारी तुमही मुरारी ब्रह्मा शिव शंकर।।ॐ जय ..
भवतन भोग समझ क्षणभंगुर मुनि व्रतधार लिए।
षट् खण्ड नवनिधि रतन चतुर्दश तृणवत् छोड़ दिये।।ॐ जय ..
दुद्धर तपकर कर्म निवारे केवल ज्ञान लहा।
दे उपदेश भविक जन बोधे ये उपकार किया।।ॐ जय ..
शांतिनाथ है नाम तिहारा सब जग शांति करो।
अरज करे 'शिवराम' चरण में भव आताप हरो।।ॐ जय ..

आरती श्री चन्द्रप्रभ जी

म्हारा चन्द्रप्रभु जी की सुन्दर मूरत म्हारे मन भाई जी।
सावन सुदी दशमी तिथि आई प्रकट त्रिभुवन राई जी।।
अलवर प्रान्त में नगर तिजारा दरशे देहरे मांही जी।
सीता सती ने तुमको ध्याया, अग्नि में कमल रचाया जी।।
मैनासती ने तुमको ध्याया, पति का कष्ट हटाया जी।
सोमा सती ने तुमको ध्याया, नाग का हार बनाया जी।।
मानतुंग मुनि ने तुमको ध्याया, तालों को तोड़ भगाया जी।
जो भी दुखिया दर पर आया, उसका कष्ट मिटाया जी।।
अंजन चोर ने तुमको ध्याया, सूली से अधर उठाया जी।
समोसरण में जो कोई आया, उसको पार लगाया जी।।
ठाड़ो सेवक अर्ज करे है, जामन-मरण मिटाओ जी।
नवयुवक मण्डल तुमको ध्यावे बेड़ा पार लगाओ जी।।

आरती श्री पद्मप्रभ जी

आरती श्री जिनपद्म तुम्हारी। प्रगट हुये तुम अतिशय धारी।।
तिथि वैशाख पंचमी आई। जब तुम दर्श दिये जिनराई।।आ.।।
धरन भूप के सुत कहलाये। सुसमा मात उदर प्रगटाये।।आ.।।
कौशाम्बी भयो जन्म कल्याणा। सुरपति ताण्डव निरत रचाना।।आ.।।
काम क्रोध मोहादिक मारे। मान कषाय तजे तुम सारे।।आ.।।
जग का जो अज्ञान अंधियारा। ज्ञान भाव से किया उजियारा।।आ.।।
जो यह आरती करे करावे। पूरन 'नहिं' भय रोग सतावै।।आ.।।

श्री सिद्धचक्र पाठ

श्री सिद्धचक्र का पाठ करो, दिन आठ ठाठ से प्राणी,
फल पायो मैना रानी ।।टेक।।
मैना सुन्दरि इक नारी थी, कोढ़ी पति लखि दुखियारी थी।
नहिं पड़े चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी, फल पायो मैनारानी ।।
जो पति का कष्ट मिटाऊंगी, तो उभय लोक सुख पाऊंगी।
नहिं अजा गलस्तन वत निष्फल जिन्दगानी, फल पायो मैनारानी ।।
एक दिवस गई जिन मन्दिर में, दर्शन करि अति हर्षी उर में।
फिर लखे साधु निर्ग्रन्थ दिगम्बर ज्ञानी, फल पायो मैना रानी ।।
बैठी कर मुनिको नमस्कार, निज निन्दा करती बार बार।
भर अश्रु नयन कही मुनिसों दुखद कहानी, फल पायो मैना रानी ।।
बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो, श्री सिद्धचक्र का पाठ करो।
नहिं रहे कुष्ट की तन में नाम निशानी, फल पायो मैना रानी ।।
सुन साधु वचन हर्षी मैना, नहिं होय झूठ मुनि के बैना।
करके श्रद्धा श्री सिद्धचक्र की ठानी, फल पायो मैना रानी ।।
जब पर्व अठाई आया है, उत्सवयुत पाठ कराया है।
सबके तन छिड़का यन्त्र न्हवन का पानी, फल पायो मैना रानी ।।
गन्धोदक छिड़कत वसु दिन में, नहिं रहा कुष्ट किंचित तन में।
भई सातशतक की काया स्वर्ण समानी, फल पायो मैना रानी ।।
भव भोग भोगि योगेश भये, श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये।
दूजे भव मैना पावें शिव रजधानी, फल पायो मैनारानी ।।

जो पाठ करै मन वच तन से, वे छूटि जाय भव बन्धन से।
'मक्खन' मत करो विकल्प कहे जिनवाणी, फल पायो मैना रानी ।।

आरती श्री वर्द्धमान जी की

करो आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की ।।टेक।।
राग-बिना सब जगजन तारे, द्वेष बिना सब कर्म विदारे ।।
करो आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की ।।
शील-धुरंधर शिव-तिय भोगी, मन-वच-काय न कहिये योगी ।
करो आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की ।
रतनत्रय निधि परिग्रह-हारी, ज्ञान सुधा भोजनव्रत धारी ।।
करो आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की ।
लोक अलोक व्यापै निजमाहीं, सुखमय इन्द्रिय सुखदुःख नाही ।।
करो आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की ।
पंचकल्याणकपूज्य विरागी, विमल दिगम्बर अम्बर त्यागी ।।
करो आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की ।
गुनमनि-भूषन भूषित स्वामी, जगत उदास जगन्तर स्वामी ।।
करो आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की ।
कहै कहाँ लौ तुम सब जानौ, 'द्यानत' की अभिलाष प्रमानौ ।
करो आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की ।।

आरती - पंच परमेष्ठी

इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ।
पहली आरती श्री जिनराजा, भव-दधि पार उतार जिहाजा ।
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ॥
दूसरी आरति सिद्धन केरी, सुमरन करत मिटै भव फेरी ।
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ॥
तीसरी आरति सूर मुनीन्दा, जनम-मरण दुख दूर करीन्दा ।
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ॥
चौथी आरति श्री उवज्झाया, दर्शन देखत पाप पलाया ।
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ॥
पाँचवीं आरति साधु तिहारी, कुमति-विनाशन शिव अधिकारी ।
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ॥
छठ्ठी आरति श्री जिनवाणी, 'द्यानत' सुरग-मुक्ति सुख दानी ।
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ॥
संध्या करके आरति कीजे, अपना जनम सफल कर लीजे ।
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ॥
सोने का दीप कपूर की बाती, जग मग ज्योति जले सारी वाती ।
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजे ॥

आरती आचार्य श्रीविद्यासागर जी की

विद्यासागर की गुण आगर की शुभ मंगलदीप सजायके ।
मैं आज उताँरूँ आरतियाँ..... । 1 ।
मल्लप्पा श्री श्रीमती के गर्भ विषै गुरु आये-2
ग्राम सदलगा जनम लियो है सब जन मंगल गाये ।
गुरु जी सब जन मंगल गाये,
न रागी की, न द्वेषी की, शुभ मंगल दीप सजायके ।
मैं आज उताँरूँ आरतियाँ..... । 2 ।
गुरुवर पंच महाव्रत धारी, आतम ब्रह्म विहारी ।
खड्गधार शिव पथ पर चलकर, शिथिलाचार निवारी ॥
गुरु जी शिथिलाचार निवारी,
गृह त्यागी की वैरागी की ले दीप सुमन का थाल रे
मैं आज उताँरूँ आरतियाँ..... । 3 ।
गुरुवर आज नयन से लखकर, आलौकिक सुख पाया ।
भक्ति भाव से आरति करके, फूला नहीं समाया ॥
गुरु जी फूला नहीं समाया,
ऐसे मुनिवर की, ऐसे ऋषिवर की, हो वन्दन बारम्बार हो ।
मैं आज उताँरूँ आरतियाँ..... । 3 ।

जाप्य-मन्त्र

सुख शान्ति हेतु प्रतिदिन जाप करें

- रविवार को - ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः॥
सोमवार को - ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः॥
मंगलवार को - ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः॥
बुधवार को - ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय नमः॥
गुरुवार को - ॐ ह्रीं सुरगुरुदोषनिवारणाय अष्टजिनेन्द्राय नमः॥
शुक्रवार को - ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय नमः॥
शनिवार को - ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय नमः॥

मनोवाँछित हेतु जाप

ॐ ह्रीं श्रीं अ सि आ उ सा मम सर्वविघ्न शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा॥

सर्वशान्ति हेतु जाप

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय मम शान्तिकराय सर्वोपद्रवशान्तिं कुरु कुरु ह्रीं नमः।

इन्द्रध्वजविधान का जाप्य-मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थ- सर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।

रत्नत्रय जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं श्री सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र्येभ्यो नमः।

दशलक्षण जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल-समुद्गताय- उत्तमक्षमा-धर्मांगाय नमः।

अथवा :- ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा-धर्मांगाय नमः

इसी प्रकार 'उत्तममार्दव' आदि धर्मों का मन्त्र जापना चाहिये।

षोडशकारण जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशद्भ्यादि षोडशकारणेभ्यो नमः।

नन्दीश्वर व्रत (अष्टाह्निक व्रत) जाप्य मन्त्र

1. ॐ ह्रीं नन्दीश्वर-सञ्ज्ञाय नमः। 2. ॐ ह्रीं अष्टमहाविभूति-सञ्ज्ञाय नमः। 3. ॐ ह्रीं त्रिलोकसार-सञ्ज्ञाय नमः। 4. ॐ ह्रीं चतुर्मुख- सञ्ज्ञाय नमः। 5. ॐ ह्रीं पंचमहालक्षण-सञ्ज्ञाय नमः। 6. ॐ ह्रीं स्वर्गसोपान- सञ्ज्ञाय नमः। 7. ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राय नमः। 8. ॐ ह्रीं इन्द्रध्वज-सञ्ज्ञाय नमः। ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वर-द्वीपस्थ द्विपञ्चाशज् जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो नमः।

पुष्पांजलि व्रत जाप्य मन्त्र - ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धि अशीति-जिनालयेभ्यो नमः।

रोहिणी व्रत जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः।

रोग नाशक मन्त्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कलिकुण्डदण्डस्वामिने नमः, आरोग्य-परमैश्वर्यं कुरु कुरु स्वाहा।

यह मन्त्र श्री पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा के सामने शुद्ध भाव और क्रियापूर्वक 108 बार जपना चाहिये।

मंगलदायक मन्त्र

ॐ ह्रीं वरे सुवरे अ सि आ उ सा नमः।

एकान्त में प्रतिदिन 108 बार धूप के साथ, शुद्ध भावपूर्वक जपें।

ऐश्वर्यदायक मन्त्र

ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः स्वाहा।

सूर्योदय के समय पूर्व दिशा में मुख करके प्रतिदिन 108 बार शुद्ध भाव से जपें।

सर्वसिद्धिदायक मन्त्र

ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं अर्हं श्रीं वृषभनाथतीर्थकराय नमः।

समस्त कार्यों की सिद्धि के लिए प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक 108 बार जपना चाहिये।

सर्वग्रह शान्ति मन्त्र

ॐ हां ह्रीं हूं हौं हः अ सि आ उ सा सर्व-ग्रहशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

रोग निवारक मन्त्र

ॐ ह्रीं सकल-रोगहराय श्री सन्मतिदेवाय नमः।

शान्तिकारक मन्त्र

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकश्रीशान्तिनाथाय नमः।

ऋषि-मण्डल जाप्य मन्त्र

ॐ हां ह्रीं हुं हूं हें हैं हौं हः अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शन-ज्ञान चारित्र्येभ्यो ह्रीं नमः।

सिद्धचक्र विधान के समय का जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः स्वाहा।

त्रैलोक्य मण्डल विधान का जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं अनाहत-विद्याधिपाय त्रैलोक्यनाथाय नमः सर्वग्रहशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

लघु शान्ति मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

वेदी प्रतिष्ठा कलशारोहण तथा बिम्बस्थापन के समय का जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहत विद्यायै नमो अरिहंताणं ह्रीं सर्वग्रहशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

(555)

रविव्रत जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं नमो भगवते चिन्तामणि-पार्श्वनाथ सप्तफणमंडिताय श्री धरणेन्द्र-पद्मावती सहिताय मम ऋद्धिं सिद्धिं वृद्धिं सौख्यं कुरु कुरु स्वाहा।

रविव्रत लघु जाप्य मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चिन्तामणिपार्श्वनाथाय नमः

मनोरथ सिद्धिदायक मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमः।

भारत के प्रमुख जैन तीर्थ-क्षेत्र

(झारखण्ड-बिहार प्रान्त)

सिद्ध क्षेत्र सम्मेद शिखर :- ईस्टर्न रेलवे के पारसनाथ अथवा गिरीडीह स्टेशन से पहाड़ की तलहटी मधुवन तक क्रमशः 14 और 18 मील है। इस क्षेत्र से 20 तीर्थंकर एवं असंख्यात मुनि मोक्ष गये हैं। पहाड़ की चढ़ाई-उतराई तथा यात्रा करीबन 18 मील है। पारसनाथ हिल और गिरीडीह से मोटर शिखरजी के लिए मिलती है।

सिद्ध क्षेत्र चम्पापुर :- बिहार प्रान्त में भागलपुर स्टेशन। यहाँ से वासुपूज्य स्वामी मोक्ष गये हैं।

सिद्ध क्षेत्र पावापुरी :- बिहार प्रान्त में स्टेशन बिहार शरीफ से 12 मील। नवादा से मोटर भी जाती है। यहाँ से महावीर स्वामी कार्तिक कृष्णामावस्या को मोक्ष गए हैं। यहाँ का जल मन्दिर दर्शनीय है। उसी में भगवान के चरणचिह्न स्थापित हैं।

(556)

सिद्ध क्षेत्र गुणावा :- पटना सिटी से गुलजारबाग स्टेशन के पास एक छोटी-सी टोकरी पर चरण पादुकाएँ स्थापित हैं। यहाँ से सेठ सुदर्शन मोक्ष गये हैं।

सिद्ध क्षेत्र राजगृही :- बिहार प्रान्त में स्टेशन राजगिरि कुण्ड से 4 मील अथवा बिहार शरीफ से 24 मील। यहाँ विपुलाचल, सोनागिरि, रत्नागिरि, उदयगिरि, वैभारगिरि ये पँच पहाड़ियाँ प्रसिद्ध हैं। इन पर 23 तीर्थकरों का समवशरण आया था तथा कई मुनि मोक्ष भी गए हैं। (यह राजा श्रेणिक की राजधानी थी)।

कुण्डलपुर :- राजगृही के पास नालंदा स्टेशन से 3 मील। यह भगवान महावीर का जन्मस्थान माना जाता है।

कुलुआ पहाड़:- यह पहाड़ जंगल में है। गया से जाया जाता है। इसकी चढ़ाई 2 मील है। इस पहाड़ पर 10वें तीर्थकर शीतलनाथ जी ने तप करके केवलज्ञान प्राप्त किया था।

(उड़ीसा प्रान्त)

सिद्ध क्षेत्र खण्डगिरि :- उड़ीसा प्रान्त में भुवनेश्वर स्टेशन से 4 मील पर खण्डगिरि और उदयगिरि नाम की दो पहाड़ियाँ हैं। यहीं से कलिंग देश के 500 मुनि मोक्ष गए हैं।

(उत्तर प्रदेश)

सिद्ध क्षेत्र चौरासी :- मथुरा शहर से डेढ़ मील। यहाँ से जम्बू स्वामी मोक्ष गए हैं।

वाराणसी :- इस नगर में भदौनीघाट सातवें तीर्थकर भगवान् सुपार्श्वनाथ का जन्म स्थान है। भेलुपुर में तेईसवें तीर्थकर भगवान् पार्श्वनाथ की जन्मभूमि है। शहर में अन्य कई मन्दिर दर्शनीय हैं।

सिंहपुरी :- बनारस से 7 मील। यहाँ श्रेयांसनाथ भगवान् के गर्भ, जन्म, तप ये तीन कल्याणक हुए।

चन्द्रपुरी :- बनारस से 13 मील अथवा सारनाथ से 7 मील पर गंगा किनारे। यहाँ पर चन्द्रप्रभु भगवान का जन्म हुआ था।

प्रयाग :- यहाँ त्रिवेणी संगम के पास एक पुराना किला है। किले के भीतर जमीन के अन्दर एक अक्षय वट (बड़ का पेड़) है। कहते हैं कि श्री ऋषभनाथ ने यहाँ तप किया था।

अयोध्या :- आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ, अनन्तनाथ भगवान् का जन्म स्थान है।

रत्नपुरी :- फैजाबाद जिले में सोहावल स्टेशन से डेढ़ मील पर स्थित है यहाँ पर धर्मनाथ स्वामी के चार कल्याणक हुए हैं।

श्रावस्ती :- बहराइच से 29 मील। यह भगवान् सम्भवनाथ की पवित्र जन्मभूमि है और यहीं उनके चार कल्याणक हुए हैं।

कौशाम्बी :- प्रयाग से 32 मील पर फफौसा ग्राम के पास। यहाँ पर पद्मप्रभ स्वामी के चार कल्याणक हुए हैं।

कम्पिला :- कानपुर कासगंज लाइन पर। कायमगंज स्टेशन से 8 मील। यहाँ विमलनाथ स्वामी के चार कल्याणक हुए हैं।

अहिच्छत्र :- बरेली अलीगढ़ लाइन पर आमला स्टेशन से 8 मील, रामनगर गाँव से लगा हुआ यह क्षेत्र है। इस क्षेत्र पर तपस्या करते हुए भगवान् पार्श्वनाथ के ऊपर कमठ के जीव ने घोर उपसर्ग किया था और उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई थी।

हस्तिनापुर :- मेरठ से 22 मील। शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और अरनाथ तीर्थकरों के गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान कल्याणक हुए हैं। तथा आदिनाथ भगवान का प्रथम आहार हुआ था।

शौरीपुर :- शिकोहाबाद से 10 मील बटेश्वर ग्राम है। यहाँ पर नेमिनाथ स्वामी के गर्भ और जन्म ये दो कल्याणक हुए हैं।

देवगढ़ :- ललितपुर के निकट (जाखलौन स्टेशन से 8 मील दूरी पर) है। भगवान् शान्तिनाथ की 12 फीट उत्तुंग विशाल प्रतिमा, 8 मानस्तम्भ हैं तथा कई कलापूर्ण सुन्दर प्राचीन मन्दिर हैं।

आहार जी :- ललितपुर स्टेशन से 36 मील टीकमगढ़ है, वहाँ से 12 मील पूर्व में यह क्षेत्र स्थित है। यहाँ पर 18 फुट उत्तुंग भगवान् शान्तिनाथ की सर्वोत्तम प्रतिमा तथा विशाल संग्रहालय है।

(मध्य प्रदेश)

सिद्ध क्षेत्र सोनागिरि :- ग्वालियर झांसी लाइन पर सोनागिरि स्टेशन से 2 मील श्रमणाचल पर्वत है। पहाड़ पर 77 दिगम्बर जैन मन्दिर हैं। यहाँ से नंगानगकुमार आदि साढ़े पाँच करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

सिद्ध क्षेत्र द्रौणगिरि :- मध्य प्रदेश में सेंधपा नामक गाँव है। छतरपुर से बड़ा मलहरा होते हुए सीधी बसें द्रौणगिरि जाती हैं। निकटवर्ती स्टेशन सागर तथा हरपालपुर है। यहाँ से गुरुदत्तादि मुनि मोक्ष गये हैं।

सिद्ध क्षेत्र नैनागिरि :- सैन्ट्रल रेलवे के सागर स्टेशन से 30 मील। सागर से मोटर दलपतपुर होते हुए सीधे जाती है वहाँ से 7 मील है। यहाँ से वरदत्तादि मुनि मोक्ष गये हैं। इसे रेशंदीगिरि भी कहते हैं।

सिद्ध क्षेत्र कुण्डलपुर :- सैन्ट्रल रेलवे की कटनी-बीना लाइन पर दमोह स्टेशन से 24 मील बड़े बाबा के नाम से प्रसिद्ध भगवान् ऋषभदेव की मनोज्ञ मूर्ति के माहात्म्य के सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियाँ हैं। कुल 59 मन्दिर हैं। यहाँ से अन्तिम केवली श्रीधर स्वामी मोक्ष गये।

सिद्ध क्षेत्र मुक्तागिरि :- मध्यप्रान्त के एलिचपुर स्टेशन से 12 मील पहाड़ी जंगल में है यहाँ से साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष गए।

सिद्ध क्षेत्र सिद्धवरकूट :- इन्दौर से खंडवा लाइन पर मौरटक्का नामक स्टेशन से ओंकारेश्वर होते हुए अथवा सनावद से 6 मील पर है। यहाँ से दो चक्रवर्ती, 10 कामदेव एवं साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

सिद्ध क्षेत्र बड़वानी :- बड़वानी स्टेशन से 5 मील पहाड़ पर यह क्षेत्र है। यहाँ के चूलगिरि पर्वत से इन्द्रजीत और कुम्भकर्ण मुनि मोक्ष गये हैं।

पपौरा :- ललितपुर से 36 मील और टीकमगढ़ से 7 मील है। चारों ओर कोट बना है। यहाँ लगभग 90 मन्दिर हैं। कार्तिक सुदी 14 को मेला भरता है।

चन्देरी :- ललितपुर से 24 मील। वहाँ से मोटर जाती है। यहाँ की चौबीसी भारतवर्ष में प्रसिद्ध है।

पचराई :- चन्देरी से 24 मील खनियाधाना स्थान है। वहाँ से 8 मील पर चराई गाँव है। यहाँ पर 28 जिन मन्दिर हैं।

थूबौन :- चन्देरी से 8 मील। यहाँ 25 मन्दिर हैं। भगवान् शान्तिनाथ की 20 फुट उत्तुंग मूर्ति अपनी विशालता के लिये प्रसिद्ध है।

खजुराहो :- मध्य प्रदेश में छतरपुर से 7 मील। यह एक विश्व प्रसिद्ध पर्यटक केन्द्र है। 31 दिगम्बर जैन मन्दिर हैं। यहाँ के प्राचीन मन्दिरों की निर्माण कला दर्शनीय है।

मकसी पार्श्वनाथ :- सैन्ट्रल रेलवे की भोपाल उज्जैन शाखा में इस नाम का स्टेशन है यहाँ से 1 मील पर एक प्राचीन जैन मन्दिर है। उसमें पार्श्वनाथ की बड़ी मनोज्ञ प्रतिमा है।

(राजस्थान)

श्री महावीरजी :- पश्चिमी रेलवे के नागदा मथुरा लाइन पर श्रीमहावीरजी स्टेशन है। यहाँ से 4 मील पर क्षेत्र है। भगवान् महावीर की अति मनोज्ञ प्रतिमा पास के ही एक टीले के अन्दर से निकली थी।

चाँदखेड़ी :- कोटा के निकट खानपुर नाम का एक प्राचीन नगर है। खानपुर में 2 फर्लांग की दूरी पर चाँदखेड़ी नाम की पुरानी बस्ती है। यहाँ भूगर्भ में एक अति विशाल जैन मन्दिर है एवं अनेक विशाल जैन प्रतिमाएँ हैं।

पद्मपुरी :- स्टेशन श्योदासपुर। भगवान् पद्मप्रभु की अतिशय पूर्ण भव्य और मनोज्ञ प्रतिमा के अतिशय के कारण इस क्षेत्र का पद्मपुरी नाम पड़ा है। जयपुर से सीधे बस जाती है।

केशरियानाथ :- उदयपुर स्टेशन से 40 मील पर। यहाँ ऋषभदेव स्वामी का विशाल मन्दिर है। यहाँ भारत के सभी तीर्थों से अधिक केशर भगवान् को चढ़ती है। इसी से इसका नाम केशरियानाथ है।

(गुजरात)

सिद्धक्षेत्र तारंगा :- गुजरात में स्टेशन तारंगा हिल से 3 मील दूर पहाड़ पर यह क्षेत्र है। यहाँ से वरदत्तादि साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष गए हैं।

सिद्ध क्षेत्र गिरिनार :- काठियावाड़ में जूनागढ़ स्टेशन से 4-5 मील की दूरी पर गिरिनार पर्वत की तलहटी है। पहाड़ पर 7000 सीढ़ियों का चढ़ाव है। यहाँ से नेमिनाथ स्वामी तथा 72 करोड़ सात सौ मुनि मोक्ष गए हैं।

सिद्ध क्षेत्र शत्रुञ्जय :- पालीताना स्टेशन से 2 मील पर। यहाँ से युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन तथा 8 करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

सिद्ध क्षेत्र पावागढ़ :- बड़ौदा से 28 मील की दूरी पर यह क्षेत्र है। यहाँ से लव, कुश आदि पांच करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

(महाराष्ट्र)

सिद्ध क्षेत्र माँगीतुंगी :- मनमाड़ स्टेशन से 7 मील पर घने जंगल में पहाड़ पर यह क्षेत्र है। यहाँ से रामचन्द्र, सुग्रीव, गवय, गवाक्ष, नील आदि 99 करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

सिद्ध क्षेत्र गजपन्था :- नासिकरोड स्टेशन से 9 मील नसखल ग्राम के पास। यहाँ से बलभद्र आदि आठ करोड़ मुनि मोक्ष गये।

सिद्ध क्षेत्र कुंथलगिरि :- वासी टाउन रेलवे स्टेशन से 21 मील दूरी पर। यहाँ से देशभूषण, कुलभूषण मुनि मोक्ष गये हैं।

अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ :- सैन्ट्रल रेलवे के अकोला (बरार) स्टेशन महाराष्ट्र से लगभग 40 मील पर शिवपुर नाम का गाँव है। गाँव के मध्य धर्मशालाओं के बीच में एक बहुत बड़ा प्राचीन विशाल दुर्गजिला जैन मन्दिर है। नीचे की मंजिल में एक श्याम-वर्ण ढाई फुट ऊँची पार्श्वनाथ जी की प्राचीन प्रतिमा है। जो वेदी के ऊपर अधर में विराजमान है।

रामटेक :- यह स्थान नागपुर से 24 मील है। यहाँ दि. जैनों के आठ मन्दिर हैं, जिनमें से एक प्राचीन मन्दिर में सोलहवें तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ जी की 15 फीट ऊँची मनोज्ञ प्रतिमा है।

(कर्नाटक)

श्रवणबेलगोला :- हासन जिले के अन्तर्गत यह क्षेत्र है। हासन, आरसीकेरे, यशवन्तपुर, बैंगलोर तक रेल लाईन है। आरसीकेरे से चण्णराय पट्टन और चण्णराय पट्टन से हर पांच मिनट में बस सेवा, प्रातः पांच से उपलब्ध रहती है। हासन से भी बस सेवा उपलब्ध रहती है। यशवन्तपुर और बैंगलोर से बस और टैक्सी हर समय उपलब्ध रहती हैं। श्रवणबेलगोला में चन्द्रगिरी और विंध्यगिरि नाम की दो पहाड़ियाँ पास-पास हैं। पहाड़ पर 57 फीट ऊँची बाहुबली की प्रतिमा विराजमान है। 12 वर्ष बाद महामस्तकाभिषेक होता है।

मूडबद्री :- कारकल से दस मील पर एक अच्छा कस्बा है। यहाँ 18 मन्दिर हैं। यहां के मन्दिरों में हीरा, पन्ना, पुखराज, मूंगा, नीलम की मूर्तियाँ हैं।

संक्षिप्त सूतक विधि

सूतक में देव शास्त्र गुरु का पूजन प्रक्षालादिक तथा मंदिर जी की जाप वस्त्रादिको स्पर्श नहीं करना चाहिये । सूतक का समय पूर्ण होने के बाद पूजनादि करके पात्रदानादि करना चाहिये ।

1. जन्म का सूतक दश दिन तक माना जाता है ।
2. यदि स्त्री का गर्भपात (पाँचवें छठे महीने में) हो तो जितने महीने का गर्भपात हो उतने दिन का सूतक माना जाता है ।
3. प्रसूति स्त्री को 45 दिन का सूतक होता है, कहीं-कहीं चालीस दिन का भी माना जाता है । प्रसूतिस्थान एक मास तक अशुद्ध है ।
4. रजस्वला स्त्री चौथे दिन पतिके भोजनादि के लिये शुद्ध होती है, परन्तु देव पूजन, पात्रदान के लिये पाँचवें दिन शुद्ध होती है । व्यभिचारिणी स्त्री के सदा ही सूतक रहता है ।
5. मृत्यु का पातक तीन पीढ़ी तक 12 दिन का माना जाता है । चौथी पीढ़ी में छह दिन का, पाँचवीं, छठी पीढ़ी तक चार दिन का, सातवीं पीढ़ी में तीन दिन का, आठवीं पीढ़ी में एक दिन रात का, नवमीं पीढ़ी से स्नान मात्र में शुद्धता हो जाती है ।
6. जन्म तथा मृत्यु का सूतक गोत्रके मनुष्यका पाँच दिनका होता है । तीन दिन के बालक की मृत्यु का एक दिन का, आठ वर्ष के बालक की मृत्यु का तीन दिन तक का माना जाता है । इसके आगे बारह दिन का ।

7. अपने कुलके किसी गृहत्यागी का संन्यासमरण या किसी कुटुम्बी का संग्राम में मरण हो जाये तो एक दिन का पातक माना जाता है ।

8. यदि अपने कुल का कोई देशान्तर में मरण करे और 12 दिन पहले खबर सुने तो शेष दिनों का ही पातक मानना चाहिये । यदि 12 दिन पूर्ण हो गये हों तो स्नान-मात्र पातक जानना चाहिये ।

9. गौ, भैंस, घोड़ी आदि पशु अपने घर में जनै तो एक दिन का सूतक और घर के बाहर जनमें तो सूतक नहीं होता । घर में दासी तथा पुत्री के प्रसूति होय तो एक दिन, मरण हो तो तीन दिन का सूतक होता है । यदि घर से बाहर हो तो सूतक नहीं । जो कोई अपने को अग्नि आदिक में जलाकर या विष शस्त्रादि से आत्महत्या करे तो छह महीने तक का सूतक होता है । इसी प्रकार और भी विचार है सो आदिपुराण से जानना ।

10. बच्चा हुये बाद भैंस का दूध 15 दिन तक, गाय का दूध 10 दिन तक, बकरी का 8 दिन अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है । देश भेद से सूतक विधान में कुछ न्यूनादिक भी होता है, परन्तु शास्त्र की पद्धति मिलाकर ही सूतक मानना चाहिए ।

भक्ष्य पदार्थों की मर्यादा

पदार्थ	अगहन से फागुन तक शीतकाल	चैत्र से आषाढ़ तक ग्रीष्मकाल	श्रावण से कार्तिक तक वर्षाकाल
बूरा	एक माह	पन्द्रह दिन	सात दिन
दूध (दूहने के बाद) कच्चा	दो घड़ी	दो घड़ी	दो घड़ी
उबालने के बाद	चौबीस घण्टे	चौबीस घण्टे	चौबीस घण्टे
दही (गर्म दूध का)	चौबीस घण्टे	चौबीस घण्टे	चौबीस घण्टे
छाछ (बिलोते समय पानी डालें तो)	बारह घण्टे	बारह घण्टे	बारह घण्टे
बाद में पानी मिलायें तो	48 मिनट	48 मिनट	48 मिनट
कच्चे दूध के दही से बनी छाछ	अभक्ष्य	अभक्ष्य	अभक्ष्य
घी, गुड़, तेल	एक साल	एक साल	एक साल
स्वाद बिगाड़ने पर	अभक्ष्य	अभक्ष्य	अभक्ष्य
आटा बेसन, पिसे मसाले	सात दिन	पाँच दिन	तीन दिन
पिसा नमक	48 मिनट	48 मिनट	48 मिनट
खिचड़ी, रायता, कढ़ी, दाल, सब्जी	छह घण्टे	छह घण्टे	छह घण्टे
रोटी, पूड़ी, हलवा, बड़ा, कचौरी	बारह घण्टे	बारह घण्टे	बारह घण्टे
मौन वाले पकवान	चौबीस घण्टे	चौबीस घण्टे	चौबीस घण्टे
बिना पानी वाले पदार्थ	सात दिन	पाँच दिन	तीन दिन
मीठे पदार्थ मिला दही	48 मिनट	48 मिनट	48 मिनट
गुड़ मिला दही व छाछ	अभक्ष्य	अभक्ष्य	अभक्ष्य

रस चलित, स्वाद बदल गया हो, बदबूदार पदार्थ-सदैव त्याज्य है।

(565)

प्रमुख जैन पर्व

माह	पर्व	मिति
कार्तिक	महावीर निर्वाणोत्सव	कृष्ण 30 के प्रातः
कार्तिक	अष्टाह्निका व्रत	शुक्ला 8 से 15 तक
माघ	षोडशकारण व्रत	शुक्ला 1 से फागुन कृष्णा 1
माघ	दशलक्षण (पर्युषण)	शुक्ल 5 से माघ शुक्ल 14
माघ	पुष्पाञ्जलि	शुक्ला 5 से 9 तक
माघ	रत्नत्रय	शुक्ला 13 से 15 तक
माघ	ऋषभ निर्वाणोत्सव	कृष्णा 14
फाल्गुन	आष्टाह्निका व्रत	शुक्ला 8 से 15 तक
चैत्र	षोडशकारण	कृष्ण 1 से वैशाख कृष्ण 1
चैत्र	दशलक्षण	शुक्ला 5 से 14 तक
चैत्र	पुष्पाञ्जलि	शुक्ला 5 से 9 तक
चैत्र	रत्नत्रय	शुक्ला 13 से 15 तक
चैत्र	महावीर जयन्ती	शुक्ला 13
वैशाख	अक्षयतृतीया	शुक्ला 3
ज्येष्ठ	श्रुतपंचमी	शुक्ला 5
आषाढ़	आष्टाह्निका व्रत	शुक्ला 8 से 15 तक
श्रावण	वीर-शासन जयन्ती	कृष्णा 1
श्रावण	रक्षाबन्धन	शुक्ला 15
भाद्रपद	षोडशकारण	कृष्ण 1 से आसौज कृष्णा 1
भाद्रपद	दशलक्षण	शुक्ला 5 से 14
भाद्रपद	पुष्पाञ्जलि	शुक्ला 5 से 9
भाद्रपद	रत्नत्रय	शुक्ला 13 से 15
भाद्रपद	लब्धिविधान	शुक्ला 1
भाद्रपद	रोटतीज	शुक्ला 3
भाद्रपद	शील-सप्तमी	शुक्ला 7
भाद्रपद	सुगंधदशमी	शुक्ला 10
भाद्रपद	अनन्तव्रत	शुक्ला 11
भाद्रपद	अनन्तचौदस	शुक्ला 14
आश्विन	क्षमावणी	कृष्णा 1

(566)

आचार्य-वन्दना

श्री सिद्ध भक्ति

अथ पौर्वाह्णिक (अपराह्णिक) आचार्य वन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानु-
क्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीसिद्ध भक्तिकार्योत्सर्ग
करोम्यहम् ।

सम्मत्त- णाण- दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं
अगुरु-लघु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होति सिद्धाणं ।।1।।

तव सिद्धे णय-सिद्धे संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।

णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।2।।

इच्छामि भन्ते ! सिद्धभक्ति काउस्सगो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-
सम्मदंसण- सम्मचरित्त- जुत्ताणं, अट्ठविहकम्म- विप्पमुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं,
उड्ढलोय- मत्थयम्मि पर्यट्ठयाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्त-
सिद्धाणं, अतीदाणागद-वट्ठमाण - कालत्तय - सिद्धाणं, सब्ब-सिद्धाणं, णिच्चकालं
अंचेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ,
सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

श्री श्रुत भक्ति

अथ पौर्वाह्णिक (अपराह्णिक) आचार्यवन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानु-
क्रमेण सकलकर्म- क्षयार्थं, भावपूजावन्दना-स्तव-समेतं श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्ग
करोम्यहम् ।

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।

पञ्चाशदष्टौ च सहस्रसंख्य- मेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि ।।1।।

अरहंत-भासियत्थं गणहर, देवेहिं गंथियं सम्मं ।

पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाण-महोवहिं सिरसा ।।2।।

इच्छामि भन्ते ! सुदभक्ति काउस्सगो कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग-
पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्तपढमाणि ओगपुव्वगयचूलिया चैव सुत्तत्थय-
थुइ-धम्मकहाइयं णिच्चकालं अंचेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ,
कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिण-गुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

आचार्य भक्ति

अथ पौर्वाह्णिक (अपराह्णिक) आचार्य वन्दना क्रियायां
पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री आचार्यभक्ति
कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

श्रुतजलधिपारगेभ्यः, स्वपरमतविभावना-पटु-मतिभ्यः ।

सुचरित-तपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।।1।।

छत्तीसगुण-समगो, पञ्च-विहाचार-करण-संदरिसे ।

सिस्साणुग्गह- कुसले, धम्माइरिए सदा वंदे ।।2।।

गुरु- भक्ति संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरं ।

छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ।।3।।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता, ध्यानाग्नि-होत्रा-कुलाः ।

षट्कर्माभि-रतास्तपोधनधनाः, साधु-क्रियाः साधवः ।।

शील-प्रावरणा-गुणप्रहरणाश्-, चन्द्रार्कतेजोऽधिका ।

मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटनभटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ।।4।।

गुरवः पांतु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन- नायकाः ।

चारित्रार्णव-गम्भीरा, मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।।5।।

इच्छामि भन्ते ! आयरियभक्तिकाउस्सगो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण-
सम्मदंसण-सम्मचरित्त- जुत्ताणं, पंच-विहाचाराणं, आयरियाणं आयारादि-
सुदणाणोव-देसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुण- पालणरयाणं सब्बसाहूणं;
णिच्चकालं अंचेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ,
बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ अठाई रासा

प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।टेक।।
जम्बू द्वीप सुहावणो लख योजन विस्तार ।
भरतक्षेत्र दक्षिण दिशा पौदनपुर तहँ सार ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।1।।
विद्यापति विद्याधरी सोमा राणी राय ।
समकित पालै मन बचै धर्म सुनै अधिकाय
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।2।।
चारणमुनि तहाँ पारणे आये राजा गोह ।
सोमाराणी आहार दे, पुण्य बढ़ो अति नेह ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।3।।
ताहि समय नभ देवता चाले जात विमान ।
जय जय शब्द भयो घनो मुनिवर पूछ्यो ज्ञान ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।4।।
मुनिवर बोले रानि सुन नन्दीश्वर की जात ।
जे नर करहिं स्वभावसों ते पावें शिवकांत ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।5।।
ऐसो बच रानी सुनो मन में भयो अनन्द ।
नन्दीश्वर पूजा करें ध्यावें आदि जिनेन्द्र ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।6।।

कातिक फागुण साढ़ में पालें मन वच काय ।
आठ दिवस पूजा करें तीव भवांतर थाय ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।7।।
विद्यापति सुन चालियो रच्यो विमान अनूप ।
रानी बरजै राय कों तुम हो मानुष भूप ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।8।।
मानुषोत्र लंघव नहीं मानुष जेती जात ।
जिनवाणी निश्चय कही तीन भुवन विख्यात ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।9।।
सो विद्यापति ना रहो चलो नन्दीश्वर द्वीप ।
मानुषोत्र गिरसों मिलो जाय विमान महीप ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।10।।
मानुषोत्र की भेंट तें परो धरनि खिर भार ।
विद्यापति भव चूरियो देव भयो सुरसार ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।11।।
दीप नन्दीश्वर छिनक में पूजा वसु विध ठान ।
करी सु मन-वच-काय से माल लई कर मान ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।12।।
आनन्द सों घर आइयों नन्दीश्वर कर जात ।
विद्यापति को रूप धर रानी सों कहै बात ।।
प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ।।13।।

रानी बोली सुन राजा यह तो कबहुँ न होय ।
 जिनवाणी मिथ्या नहीं निश्चय मन में सोय ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥14॥
 नन्दीश्वर की माल ले राय दिखाई आय ।
 अब तू साँचों जान मोहि पूजन कर बहु भाय ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥15॥
 रानी फिर तासों कहै नर भव परसे नाहिं ।
 पश्चिम सूरज उदय हुए जिनवाणी शुचि ताहि ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥16॥
 रानीसों नृप फिर कही बावन भवन जिनाल ।
 तेरह-तेरह मैं बन्दे पूजन करि तत्काल ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥17॥
 जयमाला तहँ मो मिली आयो हूँ तुझ पास ।
 अब तू मिथ्या मान मत कर मेरा विश्वास ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥18॥
 पूरब दक्षिण में बन्दे पश्चिम उत्तर जान ।
 मैं मिथ्या नहिं भाष हूँ श्री जिनवरकी आन ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥19॥
 हे रानी तैं सच कही जिन वानी शुभ सार ।
 ढाई द्वीप न लंघई मानुष भव विस्तार ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥20॥

विद्यापति तैं सुर भयो रूप धरो शुभ सोय ।
 रानी की स्तुति करी निश्चय समकित तोय ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥21॥
 देव कहै अब रानि सुन, मानुषोत्र मिलो जाय ।
 तहँतें चय मैं सुर भयो, पूजे नन्दीश्वर पाय ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥22॥
 एक भवांतर मो रह्यो, जिन शासन परमान ।
 मिथ्याती मानें नहीं, श्रावक निश्चय आन ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥23॥
 सुर चय नर हथनापुरी, राज कियो भरपूर ।
 परिग्रह तजि संयम लियो, कर्म महागिर चूर ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥24॥
 केवल ज्ञान उपाय कर मोक्ष गये मुनि-राय ।
 शाश्वत सुख विलसे जहाँ जामनमरन मिटाय ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥25॥
 अब रानी की सुन कथा, संयम लीनो सार ।
 तपकर चयकर सुर भयो, विलसे सुख विस्तार ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥26॥
 गजपुर नगरी अवतरो, राज, करै बहुभाय ।
 सोलहकारण भाइयो, धर्म सुनो अधिकाय ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥27॥

मुनि संघाटक आइयो, माली सार जनाय ।
 राजा बन्दो भाव सों, पुण्य बढ़ो अधिकाय ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥28॥
 राजा मन वैरागियो, संयम लीनो सार ।
 आठ सहस नृप साथ ले, यह संसार असार ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥29॥
 केवलज्ञान उपाय के, दोय सहस निर्वाण ।
 दोय सहस सुख स्वर्ग के, भोगे भोग सुथान ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥30॥
 चार सहस भूलोक में, हंडे बहु संसार ।
 काल पाय शिवपुर गये, उत्तम धर्म विचार ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥31॥
 वरत अठाई जे करें, तीन जन्म परमान ।
 लोकालोक सु जान ही सिद्धारथ कुल कान ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥32॥
 भव समुद्र के तरण को, बावन नौका जान ।
 जे जिय करें सुभाव सों, जिनवर सांच बखान ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥33॥
 मन वच काया तें पढ़ें ते पावें भव पार ।
 'विनय कीर्ति' सुखसों भजे, जन्म सुफल संसार ॥
 प्राणी वरत अठाई जे करें ते पावें भवपार ॥34॥

श्री आदिनाथ बड़े बाबा जिनपूजन

हे सुखकारी अतिशयकारी, पूज्य बड़े बाबा सुखकार ।
 कुण्डलपुर पर्वत पर शोभित, जिन्हें पूजते सुर-नर-नार ॥
 पूजा को हम द्रव्य सँजोकर, करते आह्वान नत माथ ।
 हृदय कमल के उच्चासन पर, आन विराजो मेरे नाथ ॥
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः हे श्रीवृषभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर
 अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम
 सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।
 बाह्य मैल से देह मलिन है, उसको जल से सब धोते ।
 देह सजाकर सब खुश हैं पर, कर्म रोग से सब रोते ।
 जनम जरा मृति राग द्वेष को, धोने को हम सब आये ।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, शुचि जल पूजन को लाये ॥
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय
 जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 क्रोध आग है महा भयंकर, जिसमें जलते संसारी ।
 आतम वैभव जला उसी में, दुःखी भटकते नर नारी ।
 तन मन आतम शीतल करने, सभी ताप हरने आये ।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, चन्दन पूजन को लाये ॥
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय
 चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

धन बल सत्ता रूप सम्पदा, पा करके जड़ की माया।
 नश्वर जीवन में भूले हम, अक्षय आतम ना ध्याया।।
 तजकर दुःखद जगत पद सारे, प्रभु जैसे बनने आये।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, अक्षत पूजन को लाये।।
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये
 अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
 सब रोगों में महारोग है, कामदेव जिसको कहते।
 जिसके रोगी भव-भव भटके, सब दुःख संकट वे सहते।।
 तीन लोक के इस राजा पर, विजय प्राप्त करने आये।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, पुष्प समर्पण को लाये।।
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय
 पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
 क्षुधा रोग के कारण हम सब, पाप बन्ध करते जाते।
 इसकी औषध करने को हम, भक्ष्याभक्ष्य भखे जाते।।
 रोग निरन्तर बढ़ता जाता, इसे नाशने अब आये।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, शुभ नैवेद्य भेंट लाये।।
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय
 नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
 मोह तिमिर के कारण जग में, चारों ओर अंधेरा है।
 महाबली इस राजा का ही, सारे जग में डेरा है।।

ज्ञान-दीप के प्रभा पुञ्ज को, देख मोह तम नश जाये।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, दीपक पूजन को लाये।।
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय
 दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
 अच्छे बुरे सभी कर्मों ने, हमको बांधा इस जग में।
 सब जल जाता ये ना जलते, सुख-दुःख देते पग - पग में।।
 धूप सुगन्धी तब पद-रज से, कर्माष्टक झट जल जाये।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, धूप चढ़ाने को लाये।।
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय
 धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
 फल की इच्छा से इस जग के, हमने काम किये सारे।
 पाये खुशी क्षणिक फल पाकर, दुःखी हुये जब हम हारे।।
 दुःखी जगत के सब फल तजकर, मोक्ष महाफल मन भाये।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, शुभ फल पूजन को लाये।।
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये
 फलं निर्वपामीति स्वाहा।
 शुचि जल चन्दन अक्षत लाये, शुद्ध पुष्प नैवेद्य लिये।
 दीप धूप नाना फल मिश्रित, श्रेष्ठ अर्घ्य हम भेंट किये।।
 अर्घ्य चढ़ाने वाले भविजन, अनर्घपद आतम पाये।
 आज बड़े बाबा के द्वारे, अर्घ्य चढ़ाने को लाये।।
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
 अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक अर्घ

तज सर्वार्थ सिद्धि सुर आलय, दूज कृष्ण आषाढ़ रही।
मरुदेवी के गर्भ पधारे, पूज्य गर्भ कल्याण यही॥
गर्भों के कष्टों का सहना, नाथ हमारा मिट जाये।
पर्व गर्भ कल्याणक सो हम, आज मनाने को आये।
ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय बड़े बाबा
श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
चैत कृष्ण नवमी जब आयी, जन्म अयोध्या नगर लिया।
नाभिराय राजा का आँगन, और जगत सब धन्य किया॥
जन्मों के कष्टों का सहना, नाथ हमारा मिट जाये।
पर्व जन्म कल्याणक सो हम, आज मनाने को आये॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय बड़े बाबा श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
चैत कृष्ण नवमी को त्यागा, सकल परिग्रह दीक्षा ली।
तपकल्याणक पर्व मनाकर, सबने शिव की शिक्षा ली।
अटकन-भटकन का दुःख सहना, नाथ हमारा मिट जाये।
तप कल्याणक मंगलमय सो, आज मनाने को आये॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय बड़े बाबा श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
फाल्गुन कृष्णा ग्यारस तिथि को, घातिकर्म सब नशा दिये।
केवलज्ञान राज्य पाया सो, सुर नर सब मिल पर्व किये॥

अघ अज्ञान जनित दुःख सहना, नाथ हमारा मिट जाये॥

पर्व ज्ञान कल्याणक सो हम, आज मनाने को आये॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय बड़े बाबा
श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

माघ कृष्ण चौदस प्रभात में, पद्मासन से कर्म नशा।

अष्टापद से मोक्ष पधारे, हम पायें सब यही दशा।

अष्ट कर्म का बंधन सहना, नाथ हमारा मिट जाये।

पर्व मोक्ष कल्याणक सो हम, आज मनाने को आये॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय बड़े बाबा श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

नाथ बड़े बाबा बड़े, स्वामी परम दयाल।

भक्ति सहित गुणगान की, कथा करूँ जयमाल॥

मध्य-प्रदेश दमोह जिले में, कुण्डलपुर इक ग्राम रहा।

इसके दक्षिण में इक पर्वत, कुण्डलगिरि शुभधाम रहा॥

ऊपर नीचे जहाँ बहुत से, मन्दिर प्रतिमाएँ प्यारी।

बीचों-बीच बड़े बाबा की, प्रतिमा है अतिशयकारी॥1॥

अतिशय की है कथा निराली, किंवदन्ति व्यापारी की।

ऐसे पर्वत पर प्रभु आये, खुशी प्रजा तब सारी थी॥

पद्मासन प्रतिमा मनहारी, चर्चित देश विदेशों में।

तब औरंगजेब था आया, धर्म विरोधी भेषों में॥2॥

मूर्ति विरोधी उसने जैसे, घात लगायी बाबा पर।
 दूध धार बह शहद-मक्खियाँ, देखा भागा वह डरकर॥
 देखा अतिशय जब वह उसने, बना मूर्ति पूजक सच्चा।
 नहीं मूर्तियाँ अब तोड़ूँगा, नियम लिया उसने अच्छा॥3॥
 पन्ना का राजा बेघर था, राज्य हारकर वह अपना।
 मन्दिर जीर्णोद्धार कराकर, पूर्ण हुआ उसका सपना॥
 बहुत-बहुत है अतिशय प्यारे, श्रद्धा के आधार रहे।
 नाथ अनाथों के हो प्रभु तुम, सबको भव से तार रहे॥4॥
 चरण आपके तारणहारे, रोग शोक भय नाशक हैं।
 इसीलिए तो तुमको ध्याते, सच्चे योगी साधक हैं॥
 विद्यागुरुवर छोटेबाबा, पहली बार यहाँ आये।
 मन्दिर छोटा सा देखा तो, बहुत बड़ा सब बनवाये॥5॥
 उसमें बाबा जायें कैसे, सभी ओर यह चर्चा थी।
 किन्तु फूल सी उड़कर पहुँची, भक्ति-पुण्य गुरु अर्चा थी॥
 बहुत बड़ा यह अतिशय देखा, किये विहार बड़े बाबा।
 श्रद्धालु लाखों दर्शक थे, संघ सहित छोटे बाबा॥6॥
 छोटे बाबा ने उच्चासन, दिया बड़े बाबा को ज्यों।
 बड़ा संघ छोटे बाबा का, किया बड़े बाबा ने त्यों॥
 अटठावन बहिनों की दीक्षा, हुयी आर्यिका श्रेष्ठ बनीं।
 दोनों बाबा इक दूजे का, रखते हैं नित ध्यानधनीं॥7॥

ज्ञान-सिन्धु के शुभाशीष से, कुण्डलपुर जब गुरु आये।
 कृपा बड़े बाबा की पाकर, समवशरण सी छवि पाये॥
 छोटेबाबा का सपना जो, हुआ समय पाकर सच्चा।
 बहुत विरोधी होने पर भी, दिया उच्च आसन अच्छा॥8॥
 जो भी आते द्वार आपके, मन वाञ्छित फल पाते हैं।
 उभयलोक के वैभव पाकर, मुक्ति रमा पा जाते हैं॥
 सो मिलकर हम भक्त पुकारें, टेरे सुनो अब तो बाबा।
 सुव्रत धरकर तुमकों पूजें, अपने सम कर लो बाबा॥9॥

सद्गुण के भण्डार हैं, वृषभनाथ भगवान्।
 पूजा क्या जयमाल क्या, मैं बालक नादान॥
 फिर भी श्रद्धावश किया, पूजन वा जयमाल।
 उसका फल बस यह मिले, छूटे भव जंजाल॥
 ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं बड़े बाबा अर्हं नमः श्रीवृषभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये
 जयमालापूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पूज्य बड़े बाबा करे, विश्वशान्ति कल्याण।
 प्रासुक जल की धार दे, हम पूजन भगवान्॥
शान्तिधारा
 कल्पवृक्ष के पुष्पसम, पुष्पाञ्जलि पद लाय।
 सब कष्टों को मेट दो, वृषभनाथ जिनराय॥
 ॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्रीभक्तामर-विधान पूजन

अनुष्टुब् वृत्तम्

मोक्ष-सौख्यस्य कतृणां, भोक्तृणां शिवसम्पदाम्।

आह्वाननं प्रकुर्वे हं, जगच्छान्ति विधायिनाम्॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव मम हृदये अवतर
अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।

देवाधिदेवं वृषभं जिनेन्द्रं, इक्ष्वाकु-वंशस्य परं पवित्रं।

संस्थापयामीह-पुरःप्रसिद्धं, जगत्सु पूज्यं जगतां पतिं च॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ
ठः ठः इति स्थापनम्।

कल्याण-कर्ता शिव-सौख्य-भोक्ता, मुक्तेः सुदाता परमार्थयुक्तः।

यो वीतरागो गतरोषदोषः, तमादिनाथं निकटं करोमि ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव मम हृदयसमीपे
सन्निहितो भव भव वषट् इति सन्निधिकरणम्।

शार्दूलविक्रीडितछन्दः

गांगेयायमुनाहरित्सु सरिताम्, सीतानदीया तथा,

क्षीराब्धि-प्रमुखाब्धि-तीर्थ-महिता, नीरस्य हैमस्य च।

अम्भोजीय-पराग-वासित-महद्, गन्धस्य धारा सती,

देया श्रीजिन-पाद-पीठ-कमलास्याग्रे सदा पुण्यदा।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय जन्मजरामृत्यु-
विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखण्डाद्रिगिरौ भवे न गहने, ऋक्षैः सुवृक्षैर्धनैः,

श्रीखण्डेन सुगन्धिना भवभृतां, सन्ताप-विच्छेदिना।

(581)

काश्मीरप्रभवैश्च कुङ्कुमरसैः, घृष्टेन नीरेण वै,

श्रीमाहेन्द्र-नरेन्द्र-सेवितपदं, सर्वज्ञदेवं यजे॥

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय संसारताप-
विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीशाल्युद्-भवतन्दुलैः सुविलसद्, गन्धैर्जगल्लोभकैः,

श्रीदेवाब्धि-सरूप-हारधवलैः, नैत्रैः-र्मनो हारिभिः।

सौधौतै-रतिशुक्ति-जाति-मणिभिः, पुण्यस्य भागैरिव,

चन्द्रादित्यसम-प्रभं प्रभु महो, सञ्चर्चयामो वयम्।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अक्षयपदप्राप्तये
अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मन्दाराब्ज-सुवर्णजाति-कुसुमैः, सेन्द्रीय-वृक्षोद्भवै,

र्येषां गन्धविलुब्ध-मत्त-मधुपैः, प्राप्तं प्रमोदास्पदम्।

मालाभिः प्रविराजिभिः जिन विभो-देवाधिदेवस्य ते,

सञ्चर्च चरणारविन्द-युगलं, मोक्षार्थिनां मुक्तिदम्॥

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय कामवाण-
विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्यन्नं घृतपूर्ण-सर्पि-सहितं, चक्षुर्मनो-रञ्जकम्,

सु स्वादुं त्वरितोद्भवं मृदुतरं, क्षीराज्य-पक्वं परम्।

क्षुद्रोगादि-हरं सुबुद्धि-जनकं, स्वर्गापवर्गप्रदम्,

नैवेद्यं जिनपाद-पद्म-पुरतः, संस्थापयेऽहं मुदा॥

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञानादि-तमो विनाशन-करैः, कर्पूदीप्तैर्वरैः,

(582)

कार्पासस्य विवर्ति-काग्रविहितैः, दीपैः प्रभाभासुरैः ।
विद्युत्कान्ति-विशेष-संशय-करैः, कल्याण-सम्पादकैः,
कुर्यादार्ति हरार्तिकां जिन विभो पादाग्रतो युक्तितः ॥
ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय
मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीकृष्णागरु-देवतारु-जनितैः, धूमध्वजोद्-वर्तिभिः,
राकाशं प्रति-व्याप्त-धूम्र-पटलैः, आह्वानितैः षट् पदैः ।
यः शुद्धात्म-विबुद्ध-कर्म-पटलोच्छेदेन जातो जिनः,
तस्यैवक्रमपद्म-युग्म-पुरतः, सन्धूपयामो वयम् ॥
ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अष्टकर्मदहनाय
धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
नारिङ्गाम्र-कपित्थ-पूग-कदली-द्राक्षादि-जातैः फलैः,
चक्षुश्चित्त-हरैः प्रमोद-जनकैः, पापापहै-र्देहिनाम् ।
वर्णाद्यैः मधुरैः सुरेश-तरुजैः, खर्जुर-पिण्डैस्तथा,
देवाधीश-जिनेश-पाद-युगलं, सम्पूजयामि क्रमात् ॥
ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय मोक्षफलप्राप्तये
फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
नीरैश्चन्दन-तन्दुलैः सुसघनैः, पुष्पैः प्रमोदास्पदैः,
नैवेद्यै-र्नव-रत्न-दीप-निकरैः, धूमैस्तथा धूपजैः ।
अर्घं चारु-फलैश्च मुक्तिफलदं, कृत्वा जिनांगि-द्वये,
भक्त्या श्रीमुनिसोमसेन-गणिना, मोक्षो मया प्रार्थितः ॥
ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अनर्घपदप्राप्तये
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथाष्टदलकमल पूजा

1. ॐ ह्रीं विश्वविघ्नहराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥1॥
2. ॐ ह्रीं नानामरसंस्तुताय सकलरोगहराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥2॥
3. ॐ ह्रीं मत्यादिसुज्ञान-प्रकाशनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥3॥
4. ॐ ह्रीं नानादुःखसमुद्रतारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥4॥
5. ॐ ह्रीं सकलकार्यसिद्धिकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥5॥
6. ॐ ह्रीं याचितार्थ-प्रतिपादन-शक्तिसहिताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥6॥
7. ॐ ह्रीं सकलपापफलकुष्टनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥7॥
8. ॐ ह्रीं अनेक-संकट-संसार-दुःखनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥8॥

जल-कुसुम-सुगन्धै-रक्षतै-दीप-धूपैर्,
विविध-फल-निवेद्यै-रर्चयामीह देवम्।
सुर-नर-वर-ससेव्यं, दोहदानां वरेशं,
शिव-सुख-पद-धामं, प्राणिनां प्राणनाथम्॥

ॐ ह्रीं अष्टदलकमलाधिपतये श्रीवृषभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

अथ षोडशदलकमल पूजा

9. ॐ ह्रीं सकलमनोवाञ्छितफलदात्रे क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

10. ॐ ह्रीं अर्हज्जिनस्मरणजिनसम्भूताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥10॥

11. ॐ ह्रीं सकलतुष्टि-पुष्टिकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥11॥

12. ॐ ह्रीं वाञ्छितरूपफलशक्तये क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥12॥

13. ॐ ह्रीं लक्ष्मीसुखविधायकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥13॥

14. ॐ ह्रीं भूतप्रेतादिभयनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥14॥

15. ॐ ह्रीं मेरुवन्मनोबलकरणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥15॥

16. ॐ ह्रीं त्रैलोक्यलोकवशंकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥16॥

17. ॐ ह्रीं पापन्धकारनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥17॥

18. ॐ ह्रीं चन्द्रवत्सर्वलोकोद्योतनकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥18॥

19. ॐ ह्रीं सकलकालुष्यदोषनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥19॥

20. ॐ ह्रीं केवलज्ञानप्रकाशित-लोकालोक-स्वरूपाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥20॥

21. ॐ ह्रीं सर्वदोषहरशुभदर्शनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥21॥

22. ॐ ह्रीं अद्भुतगुणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।22।।

23. ॐ ह्रीं सहस्रनामाधीश्वराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।23।।

24. ॐ ह्रीं मनोवाञ्छितफलदायकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।24।।

हत्वा कर्मरिपून् बहून् कटुतरान्, प्राप्तं परं केवलं,
ज्ञानं येन जिनेन मोक्षफलदं, प्राप्तं द्रुतं धर्मजम् ।
अर्घेणात्र सुपूजयामि जिनपं, श्री सोमसेनस्त्वहं,
मुक्तिश्रीष्वभिलाषया जिन विभो देहि प्रभो वाञ्छितम् ।।
ॐ ह्रीं हृदयस्थित-षोडशदल-कमलाधिपतये श्रीवृषभदेवाय
अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ चतुर्विंशतिदलकमल

25. ॐ ह्रीं षड्दर्शनपारंगताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।25।।

26. ॐ ह्रीं नानादुःखविलीनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।26।।

27. ॐ ह्रीं सकलदोषनिर्मुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।27।।

28. ॐ ह्रीं अशोकतरु-विराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।28।।

29. ॐ ह्रीं चतुःषष्टि-चामर-प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।29।।

30. ॐ ह्रीं मणिमुक्ताखचित-सिंहासन-प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।30।।

31. ॐ ह्रीं छत्रत्रय-प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।31।।

32. ॐ ह्रीं त्रैलोक्याज्ञाविद्ययिने क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।32।।

33. ॐ ह्रीं समस्तपुष्प-जातिवृष्टि-प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।33।।

34. ॐ ह्रीं कोटि-भास्कर-प्रभा-मण्डित-भामण्डल-प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।34।।

35. ॐ ह्रीं जलधारा-पटल-गर्जित-सर्व-भाषात्मक-योजन-प्रमाण-दिव्यध्वनि-प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभ-जिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।35।।

36. ॐ ह्रीं पादन्यासे पद्मश्रीयुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥36॥

37. ॐ ह्रीं धर्मोपदेशसमये समवशरणदि-लक्ष्मी-विभूति-विराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥37॥

38. ॐ ह्रीं हस्त्यादिगर्वदुद्धर-भय-निवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥38॥

39. ॐ ह्रीं युगादिदेवनामप्रसादात् केशरि-भय-विनाशकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥39॥

40. ॐ ह्रीं संसाराग्नि-तापनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥40॥

41. ॐ ह्रीं त्वन्नाम-नाग-दमनी-शक्ति-सम्पन्नाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥41॥

42. ॐ ह्रीं संग्राममध्ये क्षेमंकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥42॥

43. ॐ ह्रीं वनगजादिभयनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥43॥

44. ॐ ह्रीं संसाराब्धि-तारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥44॥

45. ॐ ह्रीं दाहताप-जलोदराष्टदश-कुष्ट-सन्निपातादि-रोगहराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥45॥

46. ॐ ह्रीं नानाविध-कठिन-बन्धन-दूरकरणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥46॥

47. ॐ ह्रीं बहुविधविघ्न-विनाशनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥47॥

48. ॐ ह्रीं सकलकार्य-साधन-सामर्थ्याय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥48॥

नाना-विघ्नहरं प्रताप-जनकं, संसार-पार-प्रदं,
संस्तुत्यं श्रीदं करोमि सततं, श्रीसोमसेनोऽप्यहम्।
पूर्णार्घेण मुदा सुभव्यसुखदं, आदीश्वराख्या परं,
हीरापण्डित-सूपरोधवशतः, स्तोत्रस्य पूजाविधिम्॥
ॐ ह्रीं हृदयस्थिताय चतुर्विंशति-दल-कमलाधि-पतये क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

महार्घ

वर-सुगन्ध-सुतन्दुल-पुष्पकैः, प्रवर-मोदक-दीपक-धूपकैः ।
फलभरैः परमात्म-प्रदत्तकं, प्रवियजे जयदं धनदं जिनम् ।।
ॐ ह्रीं हृदयस्थिताय अष्टचत्वारिंशद्-दल-कमलाधि-पतये क्लीं
महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति
स्वाहा ।

जल-गन्धाष्टभिर्द्रव्यै-र्युगादि-पुरुषं यजे ।

सोमसेनेन संसेव्यं, तीर्थ-सागर-चर्चितम् ।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

ऋद्धि-अर्घ

1. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
2. ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
3. ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
4. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
5. ॐ ह्रीं अर्हं अणंतोहिजिणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
6. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
7. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
8. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पदानुसारीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
9. ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिन्नसौदारणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
10. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयं बुद्धीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।

11. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
12. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
13. ॐ ह्रीं अर्हं णमो ऋजुमदीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
14. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
15. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
16. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
17. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठांगमहाणिमितकुसलाणं अनर्घपदप्राप्तये
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
18. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वियणयट्ठिपत्ताणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
19. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
20. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
21. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
22. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
23. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
24. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
25. ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
26. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
27. ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्तवाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
28. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
29. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
30. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।

31. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुण-परक्कमाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
32. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबम्भचारिणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
33. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
34. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खिल्लोसहिपत्ताणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
35. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
36. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
37. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
38. ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
39. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचबलीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
40. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
41. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
42. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
43. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
44. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
45. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीण-महाणसाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
46. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्डमाणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि.स्वाहा ।
47. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धायदणाणं वड्डमाणाणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
48. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसाहुणं भयवदो महदि-महावीर-वड्डमाण-बुद्धीरिसीणं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भगवान् शान्ति-कुन्थु-अर जिनपूजन

श्रीमन् शान्ति कुन्थु अर जिनवर, तीर्थकर पदधारी ।
चक्रवर्ती सम्राट् हुए ये, कामदेव पदधारी ।।
तिहुँजग भ्रमण विनाशन हेतू, इनका यजन करूँ मैं ।
आह्वानन स्थापन करके, सन्निधिकरण करूँ मैं ।।
ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्थु-अर-तीर्थकरजिनेन्द्राः ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव
वषट् सन्निधिकरणम् ।
तीनलोक भर जाय नाथ मैं, इतना नीर पिया है ।
फिर भी तृप्ति न हुई अतः अब, जल से धार दिया है ।।
शान्ति कुन्थु अर तीर्थकर को, पूजूँ मन वच तन से ।
रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटूँ भव भव दुःख से ।।
ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्थु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय
जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
त्रिभुवन में बहु देह धरे मैं, उनसे शान्ति न पाई ।
इसी हेतु चन्दन से पूजूँ, मिले शान्ति सुखदाई ।
शान्ति कुन्थु अर तीर्थकर को, पूजूँ मन वच तन से ।
रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटूँ भव भव दुःख से ।।
ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्थु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं
निर्वपामीति स्वाहा ।
मोह शत्रु ने आत्मसौख्य मुझ, खण्ड खण्ड कर रक्खा ।
शालि पुंज से जजूँ अखण्डित, सौख्य मिले यह इच्छा ।।

शान्ति कुन्धु अर तीर्थकर को, पूजँ मन वच तन से।
 रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटँ भव भव दुःख से॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
 निर्वपामीति स्वाहा।
 कामदेव ने तीन जगत को, निज के वश्य किया है।
 उसके जेता आप अतः मै, अर्पण पुष्प किया है॥
 शान्ति कुन्धु अर तीर्थकर को, पूजँ मन वच तन से।
 रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटँ भव भव दुःख से॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं
 निर्वपामीति स्वाहा।
 काल अनादि से क्षुध व्याधी, भोजन से नहीं मिटती।
 व्यञ्जन सरस बनाकर जिनपद, अर्पण से वह नशती॥
 शान्ति कुन्धु अर तीर्थकर को, पूजँ मन वच तन से।
 रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटँ भव भव दुःख से॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं
 निर्वपामीति स्वाहा।
 मोह तिमिर ने तीन जगत को, अन्ध समान किये हैं।
 दीपक से तुम आरती करके, ज्ञान उद्योत हिये है॥
 शान्ति कुन्धु अर तीर्थकर को, पूजँ मन वच तन से।
 रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटँ भव भव दुःख से॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं
 निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म ये संग लगे हैं, इनका नाश करूँ मैं।
 तुम सन्निधि में धूप जलाकर, सुरभित धूम करूँ मैं॥
 शान्ति कुन्धु अर तीर्थकर को, पूजँ मन वच तन से।
 रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटँ भव भव दुःख से॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति
 स्वाहा।
 बहुत कुदेव नमन कर मैंने, अविनश्वर फल चाहा।
 फिर भी आश हुई नहीं पूरी, अतः आप ढिग आया॥
 शान्ति कुन्धु अर तीर्थकर को, पूजँ मन वच तन से।
 रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटँ भव भव दुःख से॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं
 निर्वपामीति स्वाहा।
 जल फल आदिक अर्घ सजाकर, स्वर्णथाल भर लाया।
 सर्वोत्तम फल पाने हेतू, अर्घ चढ़ाने आया॥
 शान्ति कुन्धु अर तीर्थकर को, पूजँ मन वच तन से।
 रत्नत्रयनिधि मिले नाथ अब, छूटँ भव भव दुःख से॥
 ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं
 निर्वपामीति स्वाहा।
 शान्ति कुन्धु अर नाथ के, चरणों में त्रय बार।
 शान्तिधारा मैं करूँ, मिले शान्ति भण्डार॥
 शान्तये शान्तिधारा।

बकुल कमल चम्पा जुही, सुरभित हरसिंगार ।
तुम पद पुष्पाञ्जलि करूँ, होवे सौख्य अपार ।
दिव्य पुष्पाञ्जलिं

तीर्थक्षेत्र को अर्घ

शान्ति कुन्धु अर नाथ के, गर्भ जन्म तप ज्ञान ।
हस्तिनागपुर में हुए, चार कल्याण महान ॥
ॐ ह्रीं हस्तिनागपुरे गर्भजन्मतपोज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीशान्ति-कुन्धु-
अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
शान्ति कुन्धु अर नाथ ने, पाया पद निर्वाण ।
श्री सम्मेदाचल जज्जू, सिद्धक्षेत्र सुखदान ॥
ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरात् निर्वाणपदप्राप्तेभ्यः श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-
जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

हस्तिनागपुरे में हुये, काश्यप गोत्र ललाम ।
नमूँ नमूँ नत शीश मैं, शान्ति कुन्धु अर नाम ॥
जय शान्तिनाथ तुम तीर्थकर, चक्री औ कामदेव जग में ।
माता ऐरावति धन्य हुई, पितु विश्वसेन भी धन्य बने ॥
भादों वदि सप्तमि गर्भ बसे, जन्मे वदि ज्येष्ठ चतुर्दशि में ।
इस ही तिथि में दीक्षा लेकर, सित पौष दशमि केवली बने ॥
शुभ ज्येष्ठ कृष्ण चौदश तिथि में, शिवपद साम्राज्य लिया उत्तम ।
इक लाख वर्ष आयू चालिस, धनु तुंग चिह्नमृग तनु स्वर्णिम ॥
हे शान्तिनाथ तीनों जग में, इक शान्ति के दाता तुम ही ।

इसलिये भव्यजन तुम पद का, आश्रय लेते रहते नित ही ॥
श्रीकुन्धुनाथ पितु सूरसेन, माँ श्रीकान्ता के पुत्र हुए ।
श्रावणवदि दशमी गर्भ बसे, वैशाख सितैकम जन्म लिये ॥
इस ही तिथि में दीक्षा लेकर, सित चैत्र तीस केवलज्ञानी ।
वैशाख सितैकम मुक्ति बसे, पैतिसं धनु तुंग देह नामी ॥
पंचानवे सहस्रवर्ष आयू, स्वर्णिम तनु छाग चिह्न प्रभु को ।
सत्रहवें तीर्थकर छट्ठे, चक्रेश्वर कामदेव तनु हो ॥
तुम पदपंकज का आश्रय ले, भविजन भववारिधि तरते हैं ।
जिन आत्मसौख्य अमृत पीकर, अविनश्वर तृप्ती लभते हैं ॥
अरनाथ सुदर्शन पिता आप, माँ ख्यात मित्रसेना जग में ।
फाल्गुन सित तीज गर्भ आये, मगसिर सित चौदश को जन्में ॥
मगसिर सित दशमी दीक्षा ले, कार्तिक सित बारस ज्ञान उदय ।
प्रभु चैत्र अमावस्या शिवपद, धनु तीस तुंग तनु सुवरणमय ॥
चौरासी सहस्रवर्ष आयू, प्रभु चिह्न मीन से जग जानें ।
हम भी तुम पद पंकज में नत, सब रोग शोग संकट हानें ॥
जय जय रत्नत्रय तीर्थकर, जय शान्ति कुन्धु अर तीर्थेश्वर ।
जय जय मंगलकर लोकोत्तम, जय शरणभूत हे परमेश्वर ॥
मैं शुद्ध बुद्ध हूँ सिद्ध सदृश, मैं गुण अनन्त के पुञ्जरूप ।
मैं नित्य निरञ्जन अविकारी, चिच्चिंतामणि चैतन्यरूप ॥
निश्चयनय से प्रभु आप सदृश, व्यवहार नयाश्रित संसारी ।
तुम भक्ती से यह शक्ति मिले, निज सम्पत्ति प्राप्त करूँ सारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं
निर्वपामीति स्वाहा।

तुम पद भक्ति प्रसाद से, मिले यही वरदान।
ज्ञानमती निधि पूर्ण हो, मिले अन्त निर्वाण॥
॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्रीषट् जिनवर पूजन

श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-
पार्श्वनाथ-महावीर स्वामी पूजन

श्रीआदिनाथ सु चन्द्र प्रभु जिन, शान्तिनाथ मनाइके,
श्रीनेमिनाथ जिनेन्द्र पारस, वीर प्रभु गुण गाइके।
पद पूजने थापन करूँ नव फूल चरण चढ़ाइके,
करि अनुग्रह मुझ दास के, हृदय विराजौ आइके॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्राः! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ
तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।
कंचन कलश मणि जड़ित ता मधि अम्बुसार भराइके।
करि जोरि शीश नवाइ चरणानि धार तीन ढराइके॥
श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती।
पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

(599)

करपूर अरु केशरि सहित चन्दन तुरत घिसवाइके।
चरचूँ चरण जिनवर तुम्हारे, नाचि गाइ बजाइके॥
श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती,
पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
बहु भान्ति के तन्दुल अनोखे लिये थाल भराइके।
प्रक्षाल प्रासुक नीर से करि भेंट भक्ति बढ़ाइके॥
श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती,
पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
निजकर सुमन ताजे विविध फूल वाटिका से लाइके।
मन मथ नशावन हेतु तुम पद नमूँ बलि बलि जाइके॥
श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती,
पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
पूड़ी पुआ पापड़ पकौड़ी, पापड़ी पगवाइके।
चटनी चमाचम चूरमा चाँदी के थाल सजाइके॥
श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती,
पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(600)

सुन्दर सुहावन दीप संवरण का सुविधि सजवाइके ।
 गौधिरत भरि करि आरती मन में अधिक हुलसाइके ।।
 श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती,
 पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती ।।
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
 तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दश विधि सुगंधी धूप निज कर कूटि शुद्ध बनाइके ।
 वसु कर्म जारन हेतु खेऊँ धूप घट में आइके ।।
 श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती,
 पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती ।।
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
 तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 बादाम किशमिश दाख दाडिम नारियल सु बजाइके ।
 फल मोक्ष पावन हेतु चरणों में चढ़ाऊँ लाइके ।।
 श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती,
 पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती ।।
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
 तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 निर्मल सुजल चन्दन सुगन्धित धवल अक्षत लाइके ।
 शुभ फूल नेवज दीप धूप सु फल सभी मिलिवाइके ।।
 श्री आदिनाथ रु चन्द्र-शान्ती नेमि पारस सनमती,
 पूजन करूँ तन मन लगाकर, पावने पंचम गती ।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
 तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 आदिनाथ चन्द्र प्रभु शान्तिनाथ प्रभु नेमि ।
 पार्श्वनाथ महावीर के चरण नमूँ धरि प्रीत ।।
 गर्भ जन्म अरु निष्क्रमण ज्ञान रु मोक्ष सिधाय ।
 पाँचों कल्याणक दिवस क्रम से कहूँ सुनाय ।।
 पंच कल्याणक अर्घ
 साढ़ दुतिया वदी, चैत्र पंचम वदी,
 भाद्र साते वदी, कातिकी छटि धवल ।
 दोज वैशाख वदी साढ़ की छटि वदी,
 गर्भकल्याण हित देव आये सकल ।।
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
 तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-
 जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चैत नौमी वदी पौष ग्यारस वदी,
 जेठ चौदस वदी, सुदी छटि सामिनी ।
 पौष एकादशीवदी, चैत तेरस सुदी,
 जन्म कल्याण की तिथि परम पावनी ।।
 ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
 तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-
 जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 चैत नौमी वदी पौह ग्यारस वदी,
 जेठ चौदस वदी, सुदी छटि सामिनी ।

पौह ग्यारस वदी, दसें अगहनवदी,
तप कल्याण की तिथि परम पावनी ।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-
जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

फाग ग्यारस वदी, फाग सातें वदी,
पोह दशमी सुदी ज्ञान कल्याण की ।
क्वार एकम सुदी, चैत चौथी वदी,
दसें वैशाख सित वीर भगवान् की ।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-
जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

माह चौदस वदी, फाग सातें सुदी,
जेठ चौदस वदी सुरनि उत्सव किया ।
साढ़ आठें सुदी, सातें सावन सुदी,
वदी कार्तिक अमावस पदम पद लिया ।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो नमः मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीशान्ति-कुन्धु-अर-तीर्थकर-
जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

जय जय जिनवर श्री आदिनाथ तुम चरणनि में नित धरूँ माथ ।
तुम तृतीय काल में भये आय शिवपुर पहुँचे मारग बताय ।।
तुम कोटि लाख सागर पचास तीरथ बरता करता प्रकाश ।

रहा शेष कोठि वाँ तुरिय काल तब चन्द्र प्रभु प्रगटे दयाल ।।
तिनि की महिमा जग में अपार किमि वरणे हम लघु बुद्धि धार ।
सोनागिर सुन्दर क्षेत्र सार तहाँ आय विराजे कई बार ।।

रहा पौन पल्य चतु काल शेष तब शान्तिनाथ जन्में जिनेश ।
भये सोलहवें देवाधिदेव पंचम चक्री अरु कामदेव ।।
एक लाख वर्ष की आयु पाय भविजन तारे शिवमग बताय ।
अब बाकी चौथा रहा काल पन असी सहत परसे सुकाल ।।

जब नेमिनाथ ने जन्म लीन द्वारिका पुरी आनन्द कीन ।
सुनि व्याह समय पशुअनि पुकार भये बाल ब्रह्मचारी उदार ।।
तजि राजमती सी सती नारि गिरनार जाय तप लिया धारि ।
जब बाकी चौथा रहा काल कुल सवा चार सौ जानि साल ।।

तब काशी नगरी के मंझार पारस प्रभु ने लीनावतार ।
प्रभु आठ वर्ष के भये आय अणु व्रत लीने मन में सिहाय ।।
जलते दो जहरी दिये तार नागेन्द्र भये सुनि वचन सार ।
उपसर्ग कमठ कीने अनेक तुम अटल रहे ना डिगे नेक ।।

लहि केवल ज्ञान कियो विहार सब कर्म काटि शिवपुर पधार ।
फिर महावीर तजि स्वर्ग थान जनमें कुण्डलपुर नगर आन ।।
अन्तिम तीर्थकर पद लहाय, पावापुर से शिवपुर सिधाय ।
कातिक की मावस प्रातकाल देवनि उत्सव कीना विशाल ।।

हे जिनवर तुम गुण नहीं पार हम क्या वरणें लघु बुद्धिधार ।
हमें और कछू की नहीं चाह संसार परि भ्रमण छूटि जाय ।।

जिमि और अनेकों दिये तारि तिमि श्रुतसागर को करो पार ।
जिनवर आदीसं प्रभु चन्द्रेसं शान्ति जिनेश्वर चक्रेसं ।
नेमी परमेसं पार्श्व जिनेशं कर्म हनेसं वीरेसं ॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीरादि षड्
तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीतराग भगवान् को जो पूजै मन लाय ।
स्वर्गों में संशय नहीं निश्चय शिवपुर जाय ॥
॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

श्रीनित्यमह समुच्चय पूजन

अरिहन्तों को नमस्कार कर, सब सिद्धों को नमन करूँ ।
आचार्यों को नमस्कार कर, उपाध्याय को नमन करूँ ॥
और लोक के सर्व साधुओं को, मैं सविनय नमन करूँ ।
नित प्रातः सामायिक करके, तत्त्व ज्ञान का यतन करूँ ॥
भाव द्रव्य ले भक्तिभाव से मैं श्री जिनमन्दिर जाऊँ ।
जिन प्रभु का प्रक्षाल करूँ मैं श्री जिनवर के गुण गाऊँ ॥
शुद्ध भाव से णमोकार जप सहस्रनाम पढ़ हर्षाऊँ ।
श्री जिनदेव नित्यमह पूजन करके नाचूँ सुख पाऊँ ॥
शान्तिपाठ पढ़ क्षमा याचना कर शब्दातम को ध्याऊँ ।
वीतराग जिन चरणों में निज प्रभु की परम शरण पाऊँ ॥
ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्राः ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव
वषट् सन्निधिकरणम् ।

निज भावों का प्रभु जल ले, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ ।
जन्म मरण का नाश करूँ मैं देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ ॥
तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ ।
सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ ॥
सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ ।
चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ ॥
ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय
जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

निज भावों का चन्दन ले, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ ।
भव ज्वाला की तपन मिटाऊँ, देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ ॥
तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ ।
सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ ॥
सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ ।
चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ ॥
ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं
निर्वपामीति स्वाहा ।

निज भावों के अक्षत ले, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ ।
पद अखण्ड अक्षय प्रगटाऊँ, देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ ॥
तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ ।
सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ ॥
सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ ।
चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ ॥

ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
निर्वपामीति स्वाहा।

निज भावों के पुष्प सजा, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ।

काम क्रोध लोभादि मिटाऊँ, देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ।।

तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ।

सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ।।

सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ।

चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ।।

ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं
निर्वपामीति स्वाहा।

निज भावों के प्रभु चरु ले, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ।

क्षुधा रोग की ज्वाल बुझाऊँ, देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ।।

तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ।

सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ।।

सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ।

चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ।।

ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

निज भावों के दीप जला, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ।

मोह तिमिर अज्ञान नशाऊँ, देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ।।

तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ।

सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ।।

सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ।

चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ।।

ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय
दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज भावों की धूप चढ़ा, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ।

अष्ट कर्म को नष्ट करूँ मैं, देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ।।

तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ।

सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ।।

सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ।

चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ।।

ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं
निर्वपामीति स्वाहा।

निज भावों के फल लेकर, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ।

उत्तम महामोक्ष फल लेकर, देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ।।

तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ।

सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ।।

सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ।

चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ।।

ॐ ह्रीं ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं
निर्वपामीति स्वाहा।

निज भावों के अर्घ बना, पाँचों परमष्ठी उर लाऊँ।

अविनाशी अनर्घपद पाऊँ, देव शास्त्र गुरु गुण गाऊँ।।

तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम जिन ध्याऊँ ।
 सर्व सिद्ध पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर ऋषि भाऊँ ॥
 सोलहकारण दशलक्षण रत्नत्रय नव सुदेव ध्याऊँ ।
 चौबीसों जिन ढाई द्वीप अतिशय निर्वाण क्षेत्र ध्याऊँ ॥
 ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति
 स्वाहा ।

जयमाला

प्रभु पूजन जिन देव की नित नव मंगल होय ।
 तीन लोक की सम्पदा भी चरणों को धोय ॥1॥
 श्री अरिहन्त सिद्ध आचार्योपाध्याय मुनिवर वन्दन ।
 देव - शास्त्र - गुरु के चरणों में सविनय बार बार नमन ॥2॥
 भरतैरावत ढाई द्वीप की, तीस चौबीसी का अर्चन ।
 विद्यमान जिन बीस विदेही, सीमन्धर आदिक वन्दन ॥3॥
 तीन लोक के कृत्रिम अकृत्रिम जिनगृह असंख्यात वन्दन ।
 सर्व सिद्धि मंगल के दाता सब सिद्धों को करूँ नमन ॥4॥
 श्रीजिन सहस्रनाम को ध्याऊँ जिनवाणी को करूँ नमन ।
 पंचमेरु के अस्सी जिन चैत्यालय को सादर वन्दन ॥5॥
 अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर बावन चैत्यालय वन्दन ।
 भव्यभावना सोलहकारण भाऊँ ऐसा करूँ यतन ॥6॥
 उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्म सदा ही करूँ नमन ।
 सम्यक् दर्शन ज्ञान चरितमय रत्नत्रय व्रत करूँ ग्रहण ॥7॥
 वृषभादिक श्री वीरजिनेश्वर के चरणों का का नित अर्चन ।

गणधर वृषभसेन गौतम को विघ्नविनाशक हेतु वन्दन ॥8॥
 बाहुबली जी भरत चक्रवर्ती अनन्तवीर्य वन्दन ।
 पंच बालयति शान्ति कुन्थु अर चक्रेश्वर जिनवर वन्दन ॥9॥
 भूत भविष्यत वर्तमान की तीनों चौबीसी वन्दन ।
 सहस्रकूट चैत्यालय वन्दूँ मानस्तम्भ जिन समवशरण ॥10॥
 गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष पाँचों कल्याणक को वन्दन ।
 तीर्थकर की जन्म भूमियों को मैं सादर करूँ नमन ॥11॥
 तीर्थ अयोध्या श्रावस्ती कौशाम्बीपुर काशी वन्दन ।
 चन्द्रपुरी काकंदी भद्रदिलपुर हस्तिनापुरी वन्दन ॥12॥
 सिंहपुरी कम्पिला रत्नपुरि मिथिला शौर्यपुरी वन्दन ।
 राजगृही चम्पापुर कुण्डलपुर वैशाली करूँ नमन ॥13॥
 जिन प्रभु समवशरण पंच कल्याणक, अतिशय क्षेत्र नमन ।
 वीतराग निर्ग्रन्थ मुनीश्वर श्री जिनवाणी को वन्दन ॥14॥
 तीर्थकर निर्वाण क्षेत्र अरु सिद्ध क्षेत्रों को वन्दन ।
 चम्पा पावा श्री गिरनार सम्मेदशिखर कैलाश नमन ॥15॥
 शत्रुञ्जय पावागढ़ तारंगागिरी तुंगीगिरी वन्दन ।
 कुन्थलगिरि गजपंथ चूलगिरि सोनागिरि को करूँ नमन ॥16॥
 कोटिशिला रेवातट पावागिरि द्रौणागिरि को वन्दन ।
 रेशंदीगिरि कुण्डलगिरि मन्दारगिरि पटना वन्दन ॥17॥
 श्रीसिद्धवरकुट गुणावा मथुरा राजगृही वन्दन ।
 मुक्तागिरि पोदनपुर आदि सिद्ध क्षेत्रों को वन्दन ॥18॥

विपुलाचल वैभार स्वर्णगिरि उदयरत्नगिरि को वन्दन।
 अहिक्षेत्र की ज्ञान भूमि को ज्ञानप्राप्ति हित करूँ नमन॥19॥
 ढाई द्वीप के सिद्ध क्षेत्र अरु अतिशय क्षेत्रों को वन्दन।
 मन वचन काया शुद्धि पूर्वक सब तीर्थों को करूँ नमन॥20॥
 कल्पद्रुम सर्वतोभद्र इन्द्रध्वज नित्यमह महापूजन।
 अष्टाह्निका आदि पर्वों पर, विविध विधान महा पूजन॥21॥
 मध्य लोक के चार शतक अट्ठावन जिन मन्दिर।
 अधोलोक के सातकरोड़ बहत्तर लाख भवन वन्दन॥22॥
 ऊर्ध्व लाख चौरासी, संतानवे सहस तेईस वन्दन।
 ज्योतिष व्यन्तर भवन असंख्यों जिन प्रतिमायें करूँ नमन॥23॥
 गौतम गणधर स्वामी सुधर्मा जम्बूस्वामी श्रीधर धन।
 श्री देशभूषण कुलभूषण इन्द्रजीत अरु कुम्भकरण॥24॥
 रामचन्द्र हनुमान नील महानील गवय गवाक्ष्य वन्दन।
 मुनि सुडील सुग्रीव आदि रावण के सुत मुनिवर वन्दन॥25॥
 वरदत्तराय अरु सागरदत्त श्री गुरुदत्तादि करूँ वन्दन।
 अर्जुन भीम युधिष्ठिर पाण्डव द्रविड देश के नृप वन्दन॥26॥
 पंच महाऋषि वरदत्तादि नंग अनंगकुमार नमन।
 स्वर्णभद्र आदिक मुनि चारों सेठ सुदर्शन को वन्दन॥27॥
 शम्भु प्रद्युम्नकुमार और अनिरुद्धकुमार आदि वन्दन।
 रामचन्द्र सुत लव मदनांकुश लाड देश के नृप वन्दन॥28॥
 पंचशतक सुत दशरथ नृप के देश कलिंग नृपति वन्दन।

बालि महाबालि मुनिस्वामी नागकुमार आदि वन्दन॥29॥
 कामदेव बलभद्र चक्रवर्ती जो मोक्ष गये वन्दन।
 भरत क्षेत्र से मुनि अनन्त निर्वाण गए सब को वन्दन॥30॥
 नव देवों को वन्दन कर शुद्धात्म को करूँ नमन।
 मोह राग रूप का अभाव कर वीतरागता करूँ ग्रहण॥31॥
 प्रभो नित्यमह पूजन करके निज स्वभाव में आ जाऊँ।
 तीन समय सामायिक साधूँ निज स्वरूप में रम जाऊँ॥32॥
 श्रीजिन पूजन का उत्तम फल सम्यक् दर्शन प्रगटाऊँ।
 ग्यारह प्रतिमा पाल साधु पद लेकर निजआत्म ध्याऊँ॥33॥
 प्रायश्चित्त विनय वैय्यावृत आलोचना हृदय लाऊँ।
 प्रतिक्रमण व्युत्सर्ग करूँ मैं दोष नाश शिवपद पाऊँ॥34॥
 उपसर्गों से भी नहीं डिगूँ परीषह जय कर समता लाऊँ।
 गुणस्थान आरोहण क्रम से श्रेणी चढ़ूँ मोक्ष पाऊँ॥35॥
 निज स्वभाव साधन के द्वारा वीतराग निज पद पाऊँ।
 श्री जिन शासन के प्रभुत्व से मोक्ष मार्ग पर बढ़ जाऊँ॥36॥
 ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति
 स्वाहा।

अनुपम पूजा नित्यमह, स्वर्ग मोक्ष दातार।

निज आत्म जो ध्यावते, हो जाते भव पार॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

ॐ ह्रीं श्री नित्यमह-समुच्चय-सर्व-जिनेन्द्रेभ्यो नमः।

श्रीत्रिजिनेन्द्र पूजन

श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरस्वामी पूजन
वन्दन करि चौबीस जिन, गणधर को सिरनाय।
तीन जिनेश्वर देव को, पूजन करूँ हरषाय।।
चन्द्रप्रभु जिनराय जी, शान्तिनाथ सुखदाय।
महावीर संकट हरण, पूजूं पद सिरनाय।।
अष्टम तीरथ नाथ तुम, चन्दा प्रभु जिनेश।
शान्तिनाथ महावीर प्रभु, काटो सकल कलेश।।
आह्वानन तुमरा करूँ, शुद्ध हृदय से आज।
मम हृदय तिष्ठो प्रभु पूर्ण होय मम काज।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थंकर-जिनेन्द्राः! अत्र
अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र
मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।
मुनि मन सम उज्ज्वल नीर, प्रासुक भरी झारी।
तुम चरनन देऊँ चढ़ाय, पाऊँ शिव नारी।।
प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।
मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थंकर-जिनेन्द्रेभ्यो
जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
उत्तम चन्दन कूँ लाय, केशर संग करूँ।
तुम चरणन देऊँ चढ़ाय, भव आताप हँरूँ।।

प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।
मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थंकर-जिनेन्द्रेभ्यो
भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
तन्दुल मुक्ता उनहार, उज्ज्वल धोय लिये।
प्रभु तुम चरनन में आय, सन्मुख पुंज दिये।।
प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।
मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थंकर-जिनेन्द्रेभ्यो
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
सुर तरु के पुष्प समान, सुन्दर फूल धरूँ।
मम काम शत्रु नशि जाय, तुम पद पूज करूँ।।
प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।
मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थंकर-जिनेन्द्रेभ्यः
कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
फेनी गुंजा पकवान, नेवज विविध करूँ।
मम क्षुधारोग नशि जाय, तुम पद पूज करूँ।।
प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।
मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थंकर-जिनेन्द्रेभ्यः
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ स्वच्छ सुमणिमय दीप, तुम पद अग्र धरूँ।

मम मोह तिमिर होय दूर, तुम पद पूज करूँ॥

प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।

मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकार-
विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णा गरु धूप बनाय, तुम पद क्षेपत हूँ।

मम काम सभी जरि जाय, तुम पद खेवत हूँ॥

प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।

मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्म-
दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ स्वच्छ सरस फल सार, सुवर्ण थाल भरूँ।

प्रभु मोक्ष प्राप्ति के हेतु, तुम पद पूज करूँ॥

प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।

मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफल-
प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल आदिक वसु विधि द्रव्य, ताकौ अर्घ करूँ।

संसार दुःख से छूटि भवि तरि मोक्ष वरूँ॥

प्रभु चन्द्र शान्ति महावीर, तुम हो सुखकारी।

मैं पूजूं चरण तुम्हारे, तुम पर बलिहारी॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो
अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक अर्घ

कृष्ण पंचमी चैत्र की, भादव सप्तम श्याम।

सुदि अषाढ़ छटि गर्भ की, पूजूं तजि सब काम।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो
गर्भकल्याणक प्राप्ताय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्ण पौष एकादशी, जेठ चतुर्दशी श्याम।

जन्म त्रयोदश चैत्र की, पूजूं तजि सब काम।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो जन्म-
कल्याणक प्राप्ताय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्ण पौष एकादशी, जेठ चतुर्दशी श्याम।

तप दशमी मगसिर बदि, पूजूं तजि सब काम।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो तपः
कल्याणक प्राप्ताय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन कृष्णा सप्तमी, पौष शुक्ल दश श्याम।

बोध दशमी वैशाख सुदि, पूजूं तजि सब काम।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो
ज्ञानकल्याणक प्राप्ताय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन शुक्ला सप्तमी, जेठ चतुर्दशी श्याम।

मोक्ष अमावस कार्तिकी, पूजूं तजि सब काम॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो मोक्ष-
कल्याणकप्राप्ताय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ति रमा के नाथ तुम, चन्द्राप्रभु भगवान ।
शान्तिनाथ, महावीर प्रभु, पायौ पद निरवान ।।
तुम गुण अकथ अपार हैं, गणधर पावै न पार ।
जयमाला वर्णन करूँ, अल्प बुद्धि अनुसार ।।

जयमाला

जय चन्द्राप्रभु जिनराज देव, मैं करूँ आपकी चरण सेव ।
जय शान्तिनाथ प्रभु जी दयाल, मम संकट मेटो हे कृपाल ।।
जय महावीर प्रभु जी महान, मैं धरूँ आपका सतत् ध्यान ।
जय तीर्थकर देवाधिदेव, हम करत आपकी चरण सेव ।।
जय पंच कल्याणक प्राप्तनाथ, हम नमत सदा जुग जोडि हाथ ।
जय चन्द्र नगर गजपुर महान, अर कुण्डलपुर प्रभु जन्म थान ।।
जहाँ आये चतुर्निकाय देव, करें मात की चरण सेव ।
फिर गृह प्रसूत में शची जाय, माता कूँ सुख निद्रा सुलाय ।।
तुम गोद माँहि ले हर्ष पाय, तब सुरपति को दियौ सौँप आय ।
हरि निरखत जब नहीं तृप्ति पाय, लियो क्षीरोदधि से जल मंगाय ।।
इक सहस्र कलश अरु आठ जान, तुम ऊपर ढारे प्रभु महान ।
फिर लाय मात की गोददीन, तब ताण्डव नृत्य सुरराज कीन ।।
जय चन्द्र शीत प्रभु राज पाय, मन वांछित सुख भोगे अघाय ।
प्रभु वीर रहे जग तै उदास, भव भोगों के नहीं गये पास ।।
फिर भोग भोगि सब अथिरे जान, तुम त्याग दिये तृण के समान ।
फिर घोर तपस्या आप कीन, तब कर्म घातिया नाश कीन ।।

तुम केवल लक्ष्मी प्राप्त कीन, तब वृष उपदेश दियो प्रवीन ।
फिर योगनिरोध अघाति हान, सम्मेद थकी लियो मुक्ति थान ।।
सम्मेद शिखर पर ललित कूट, तहाँ से विधि फन्दा गये छूट ।
जय कूट प्रभास बनो महान, श्री शान्तिनाथ का मुक्ति थान ।।
जय पावापुर सरवर महान, श्री वीर प्रभु का मुक्ति थान ।
भवि भाव सहित वन्दे जो कोय, तिर्यञ्च नरक गति तजै दोय ।।
तुम पद पूजत होय विघ्न दूर, संसार दुःख सब होय चूर ।
जय चन्द्र जिनेश्वर शान्तिनाथ, महावीर त्रिभुवन स्वामी ।
तुम पूज रचाई हिय हुलसाई, शिव सुख हमको देउ स्वामी ।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीरादि त्रयः तीर्थकर-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपद-
प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री तीन जिनराज की, पूजन करि हरषाय ।
नित प्रति जो पूजन करै, मन वांछित फल पाय ।।
॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥